स्वर्गवासी साधुचरित श्रीमान् डालचन्दजी सिंघी

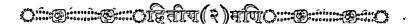


जन्म वि. सं. १९२१, मार्ग वदि ६

स्वर्गवास वि. सं. १९८४, पोप मुदि ६

पद्माकर . २६	पुलकेशी ं ३६	बहुअ ७८
पन्नानन्द [काव्य, श्रंथ] ७६	पुष्करिणी २६	बहुया [चाचरीयाक] ७८
पर्यधावली १३६	पुष्कछावतीविजय ६९	वनास नदी ४९
परकायप्रवेशविद्या ८२	युष्पाभरण २४	व(ध ?) म्धुराज ५१
परसहंस १०६	पुष्फचूळा ४३	वपमहस्रि ९८, ९९
परमहीं ९०	पूनड [साधु] ५०	वर्षर [वेताल] १, १३४
परमार [वंश] १२, २३, २५, ४३,	पूर्णचन्द्र २६	वर्वरक २३
४४, १२८	पूरा ७२	विछ [राजा] ८२, ९७, १०२
परिमल २०	पृथिवीस्थान [पत्तन] ९१	त्रहडाइच १३५
पत्यपुर ९५	पृथ्वीराज ८६, ८९, १३५	बहुरूपिणी [बिद्या] ११५
पहींग्राम ८२	पेटलाउद्र ६७	व्रह्मक्षत्रिय १५
पहुविराय, पहुवीस (पृथ्वीराज) ८६	पेथू २५	त्रह्मा ७४, ८७
	पेथृहर २५	वाकरी [वेश्या] १०३
पारिलेपुत्र } [पत्तन] ९२ पारिलेपुर }	पेरोज १३५	याण [कवि] १५, ७४
पाणिनि १३१	पोतनपुर १०८	वापड [राजपुत्र] ५१
पाण्डव १०८	प्रतापमल ३८, ३९, ४३, १२३	वालचन्द्र ४९
पातसाहि ८३, ८७, १३५	प्रतापसिंह ८६, ८७	चालध्यका ४१
पाताक ८२	प्रतिष्टानपत्तन ११	वालभारत ७८
पादलिस(°सकपुर) ६३,९१	प्रतिष्टानपुर ९४, ११६	यालहंसस्रि ७६
पादलिस स्रि ९१-९४	प्रतिमाणा ९२	यावन २४
पाद्रदेवता २१	प्रथिमराज ८७	बाहडदेव ३२, ३९, ४०, ४६,
पापक्षय [हार] ४०, ४१	प्रद्योतनसूरि १०७	923, 928, 926
पारस [श्राद्ध] ३१	मफुछ [श्रेष्टी] ९२	याहुक [शल्यहस्त] २८
पाराचि [भूमि] १३३	प्रभास [तीर्थं] ६१, ६५, ११२, १२३	बाहुडदेव २८
पारूथक } [द्रम्म] ५१	प्रश्नप्रकाश [प्रन्थ] ९४	
· ·	प्रवहादनपुर ४३, ६७	बाहुछोडपुर १३३ बीजछिभा ३५
पार्वती २१	प्राकृत [भाषा] ६, ९२, ११२	The state of the s
पार्श्व [नाथ, जिन] ६८, ८३, ९१, ९६,	प्राग्वाट [वंश] २६, ४३, ५२, ५३,	बुद्धि [योगिनी] ३६
900	६२, ६८, १०१	बुद्धिसागरस्रि ९५
पार्श्वचन्द्र २६	प्राचीमाधव ४४	गृहद्गच्छ २६, १०३
पार्श्वतीर्थे ३१	प्रियंगुमक्षरी ११६	बृहस्पति २९९२
पार्श्वनाथचेत्य ६०,९५	वियमछेक [तीर्थ] ६ १	बोटिक ४१
पार्श्वनाथप्रतिमा ९१	प्रेमलदेवी ३८	वोसरिक } ३९
पार्श्वनाथविम्ब १०	फ	योसरी ∫ ३२ घोहित्थ [वंश] ३२
पार्श्वमूर्ति ७०		
पाछित्तय [स्रि] - ९५	फणिपति ५८ फत २४	
पालीताणकं ६५	****	१०६, १३० ब्रह्मदेवकुछ २४
पासिल [श्रावक] ३०		
पाहिणी ३७	1.01	भ
पिप्पलाचार्य ७५	6,1	भक्तामरस्तव १६
पुंउरीक ६६, ७०	व	भहमात्र १, ५, ७, ११६
पुण्डरीकिणी [नगरी] ६९	वडली ७९	भद्रवाहु ९१
पुण्यसार ९७	वकुळादेवी १२३	भद्रेश्वर ७०
पुरन्दर २९	वङ्गालदेश ८८	भयहरस्तव १६

सिंघी जैन अन्यमाला





प्रवन्धचिन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्धसंग्रह

```
५५, ३०, ७३ - कीतिसब
                                                                          गुणचन्द्र [दिहान्]
इजेतेर [प्रासद]
                                                                     92
                               و و
                                     ङ्कारण [देश]
                                                                          गूड महाकाल-प्रासाद
इर्षेसागर [तहाय]
                                                                     60
                                                                                                    ए (हिं) ए
कर्णाट दिशा । ६९, ४४, ६६, ७४, ९५ । इन्होस्स-प्रासाद
                                                                     35
                                                                          सूईर
                                                                                       ीरे, रेपे, ४८, र्पे, ६५
इर्लाटेश
                                     कुन्वल सम्हल
                                                                          ु, गोपाछ
                               7, 24,
                                                              998, 994
                                                                                                          Y$
                                                                              देश
इर्गोइसी
                  ५५, ५६, ६६, ८३
                                     ङ्वर
                                                                     35
                                                                                        १२, १४, १६, २१, २८,
                                     हमरनरिन्द ( निरेन्द्र ) हिनारनाह्ये ८,७८
क्षोङ्ड [हेद्दर्ज]
                           યુદ્ધ, યુદ્
                                                                                        ३१, ३२, ४५, ४३, ५३,
क्लेंइर
                               ખુખ
                                     <del>इनारदेवी</del>
                                                                    30
                                                                                             76, 55, 58, 56
कर्र [किवि]
                               50
                                     ङ्गारदेवीसर
                                                                   705
                                                                              घरेत्री
                                                                                                 99, 84, 68
क्तेरहाते [प्रत्यादेशेव]
                               ३्ड
                                     कुनारपाक
                                                   ४६-४९, ८९, ८६-९०,
                                                                              नाघ
                                                                                                          35
क्छविणि [नरो]
                                                       52, 58, 54, 50. 11
                                                                              चुपति
                               6 D
                                                                                                          ३0
                                                       १०१, १२६, १२८
इस्हरहानन [हत्ती]
                               70
                                                                              सप्डल
                                                                                                          इ्२
                                     हुनारविहार [प्रासाद] ८९, ९३, ९२, ९६
                                                                         गूर्जराघोधर
क्लिकालसके [क्रिक]
                              १२६
                                                                                                          ७३
                                     कुनारसम्भव [काल्य]
                                                                         गूर्डरेक्टर
                                                                                                     98, 48
क्टिङ [देश]
                               3,9
                                     ङ्खरचन्द्र [पण्डित, बारी]
                                                                          गोदावरी [नदी]
                                                               ६६–६६
                               33
                                                                                                       9, 33
क्ल्यागक्दक
                                                                          गोलानई (गोदावरी नदी)
                                     कुरकुहा देवी
ङ्खागद्रपदेख
                                                                    ξs
                                                                                                         38
                              303
                                                                          गोवईन [राजा]
                                     क्त्रचन्द्र [पाण्डत]
                                                                    ३२
                                                                                                        999
क्रदियानद्य [-विरद् ]
                               55
                                                                          गोदिन्द
                                                                   333
                                                                                                       5, 24
                                     ङ्घनदुर
<u>चंत्र</u>होल
                               30
                                                                          गोविन्दाचार्प
                                                                   398
                                                                                                          २८
<del>इं</del>त
                              754
                                     <u>िरग</u>
                                                                          गोड [देश]
                                     देशव
                                                                    63
                                                                                               २२, ७३, ११२
                           ३२. ३३ ,
काक्र [प्राप्त]
                                     इंहास
                                                                    63
                                                                          गाँडदेशीय
काक्छ [पण्डित]
                               33
                                                                                                         30
                               २७ | कोछरदा [देदी]
                                                                          गौरी
                                                                    21,24
                                                                                                   १०३, १२३
<u>ञाङ्</u>ख्यदीर्घ
                                     कोरकालावल [विरद्]
                                                                   395
                                                                                          च
            [इग्लेक्]
                         १०३,१०८
                                     कोहादुर
                                                                    $0
                                                                          च्डलिग [ह्खो]
                                                                                                         20
कातन [क्याकरण]
                                     कोत्या [गूडराइदार]
                                                                    28
                                                                          चिड्डा
                               E 9
                                                                                                         38
                                     क्रोशल [देश]
                                                                    £ 3
                                                                          चरिडका-प्रासाद
कालाचिती
                               २३
                                                                                              ४४, ६० (हि०)
                                    केइ(ह)णक [देस]
                                                           ₹9, ८०, ८८,
                                                                          चन्द्रनाचार्य
कानीन [सुनि]
                               ¥₹
                                                                                                         85
                                                              ९५, १९८ | चन्द्रनायदेव
कान्द्री [हरी]
                                                                                                         २०
                   वर्ष, १९९, १२०
                                     कैत्की [सेलय]
                                                                    ९६ ' चन्द्रमम [दिन]
                                                                                                        707
कान्यहि [तापत्त]
                               35
                                    कारदेखर
                                                                    १२ : चन्द्रप्रमदिन्द
                                                                                                   906 305
कान्हडदेद
                               32
                                     झरणङ
                                                                   ११० ' चन्द्रमसूरि
कान्ह् [व्यवहारी]
                                                                                                           5
                               ₹5
                                     ह्मराज
                                                                १४, १५ , चन्द्रहेखा [राह्ये]
कारिङ [दर्रेन]
                                                                                                        320
                               ξĘ
                                                                        ् चन्द्रावती [नगरी]
                                                    रव
कानन्दकीय [नोदिशास्त्र]
                                                                                                        707
                               22
                                    खंगार [आनोरराणक]
                                                                ५४. ७६ : चन्या [नयसी]
                               3.0
कान्द्रता
                                                                                                         33
कानिततीये
                                     खण्डमगरित [कान्य]
                             335
                                                                    2.3
                                                                          चर्डराज्य
                                                                                                         38
काल्नेरदीय
                        ६० (हि०)
                                     खेडा निहास्थान ।
                                                                   १०६ चाङ्गदेव
                                                                                                         ८३
इास्तेद
                                                                          चाचिग
                             चु च्
                                                     7
                                                                                                         ८३
कारिका [देही]
                                                                   ११८ चिनिजेश्वर-प्राक्षाद
                                ४ । गयनगासिनी [दिदा]
                                                                                                         ₹ 0
कार्टिशस [क्षेत्र]
                    રૂ, ૪, ૪, ૧૦૬
                                     गङ्ग [नरो]
                                                         उथ, २०४, १२३ । चागस्य
                                                                                                         इंख
काहिन्दो [नदी]
                                                                    ३३ | चान्द्र [ब्याकरण]
                                                                                                         ŞŢ
                               3.3
                                     गाङ्ग्य
                                                                    ९७ वारोल्ड वंस
काराहद [नगर]
                               ₹ 3
                                     गाडर [सरघः]
                                                                                                १२, १५, १६
कारे [नगरी]
                 ३६, ५०, ७४, ८६, साधाकोश [गापाहतरादीलेप]
                                                                    २० , बाह्यण्डराज [बाबोत्बरवंशीय]
                                                                                                         934
                                                                   १२२ : [चाहक्यवंशीय]
                                     निहिन्गर
                                                                                                     35, 20
                             333
क्इनीर [देश]
                        ६० (डि०) , लोरेनार
                                                                    ६५ . . [राष्ट्रक्टान्दपी]
                                                                                                         36
कीर [रेक]
                               ६५ . गुडकार्त्रम [हुसह]
                                                                   २०२ | चाह्यण्डा [गोत्रजा देदो]
                                                                                                         ८३
```

सिंघी जैन ग्रन्थमाल

जैन आगिसक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, कथारमक - इत्यादि विविधविषयगुरिफत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राचीनगूर्जर, राजस्थानी आदि भाषानिवद्ध यहु उपयुक्त पुरातनवास्त्रय तथा नवीन संशोधनारमक साहित्यप्रकाशिनी जैन प्रन्थाविष्ठ ।

करकतानिवासी सर्गस श्रीमद् डालचन्दजी सिंघी की पुण्यस्यतिनिमित्त तस्यपुत्र श्रीमान् वहादुरसिंहजी सिंघी कर्तृक

संस्थापित तथा प्रकाशित

सम्पादक तथा सञ्चालक

जिनविजय मुनि

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ, शान्तिनिकेतन

सम्मान्य समासद-भाण्टारकर प्राच्यिवद्या संशोधन मन्दिर पूना, तथा गृजरात साहित्यसमा अहमदाबाद; मृतपूर्वाचार्य-गृजरात पुरातत्त्वमन्दिर अहमदाबाद; जैन बाड्मयाध्यापक विश्वमारती, शान्तिनिकेतन; संस्टत, प्राकृत, पाठी, प्राचीनगूर्जर आदि अनेकानेक ग्रंथ संशोधक-सम्पादक।

यन्थांक २

प्राप्तिस्थान

संचालक-सिंघी जैन ग्रन्थमाला

भारतीनिवास, नं०.१८, । सिंघीसदन, ४८, गरियाहाट रोड, अहमदाबाद (गृजरात). वालीगंज, कलकत्ता.

चारण [जाति] ५८, ९२, ९३	जिनधर्म ३७, ६३	ं , त्रिपुरुप [प्रासाद, धर्मस्थान] १७, १८,
चाहड [उदयनपुत्र, राजघरह] ९४	जिनप्रासाद १२३	43, 49, 69
चाहड [सचिव] ९८	जिनपूजा १२४	त्रिभुवनपाल ७७
चाहरुकुमार ७९	जिनविस्य ९७, १२०	त्रिभुवनपालविहार ८७
चाहुमान [वंश] १०२	जिनशासन १२, ३७, ३९, ६८, ७८,	त्रिपष्टिशलाकापुरुषचरित्र ८६, १२८
चित्र ९९	ري العربي ال العربي العربي العرب	त्रैलोक्यपाद १२३
चित्रकसिद्धि [विद्या] १०८	जिनेन्द्रव्याकरण ६०	थ
चित्रकृटपट्टिका ८०	जीमूतवाहन १०३	•
चिन्तामणि (गणेश) १२१	जेसल [जयसिंह, सिद्धराज] ५८, ६५,	थाहड (१) [बाहड, टिप्पणी] ६९
चृहामणि प्रन्थ (अर्हन्तश्री) ३९	હવ	द
चेदि [देश] ३१	जैत्रमृगारि [जयसिंह ,,] ७५	दक्षिण [देश] ९५
चोढ[देश] ३१,१११	जैत्रसिंह [तेजःपालपुत्र] १०५	दक्षिणापथ २२
• •	जैन [दर्शन, धर्म, मत] ८, १३, ३६,	दण्डक [राजपुत्र] १५
चौलुक्य [वंश] ६१, ६८, ७३, ५९-	४४, ६३, ९४, ९७, १०७	दण्डाहि [देश ?] ५३
८१, १२६, १२७	जैनप्रासाद २८, ६१, ६२,	दघीचि [ऋषि] १०३, ११५
चोलुस्यचक्रवर्ती २५, ७९०, ८०	जैनमुनि १०, ९९, १०७, ११९	दिरद्भपुत्रक ५
छ	जेनविचारश्रन्थ ३७	दशर्थ २४
छत्रशिला ९३	जैनागम ८२	दशवैकालिक [सूत्र] ३६
छाला [प्राम] ६९	जैनाचार्य १२, १०७, ११८	दससिरु (दशशिरस्, रावण) २३
छित्तप [कवि] ४०	जैनालय ३८	दहसुहु (दशसुख ,,) २८
ज	जोगराज १४	दान्ता [श्रेष्टी] ५
जडणानङ्गे [यमुनानदी] ११	ज्ञानसागर [मुनि] १०	दामर [सान्धिवित्रहिक] ३०-३२,
जगब्ह्मम्पण [विरद]		३४, ५१, ५२
जगहेच ११४, ११५, ११६	झाला [चाति]	दिगम्बर (दिग्वासस्) ३२,६६-६८,११४,
जम्बृद्दीप ६६	झोलकाविहार ९३	१२२-१२३
जयकेशी [राजा] ५४, ७४		दुर्लभराज २०
old and E district	ਤ (दुर्लभसर २०
जयचन्द्र ५४, ११३ जयतलदेवी ९८, १०४	डामर (दामर) [सान्धिविष्रहिक] ३०,	दूहाविद्या ९२
MAKINAA	३१, ३३, ३४	देउलवाहर ६५
जयदेव [पण्डित] ९६, १०६ ,, [जयसिंह, सिद्धराज] ६०	डाहरू [देश] ४९, ६४, ९२	देमति [राज्ञी] ४९
जयदेव-भवन ६० (टि॰)	ढ	देवचन्द्र [सूरि] ६० (टि०), ८३, ९३ देवराज [पटकिल]
e c	ढङ्क [पर्वत]	datial [15,11.1.]
जयन्त १९ जयन्ती [देवी]	डिह्नी [नगरी]	देवसूरि }[वारी] ६६,६७,६९ देवाचार्य }
जयमङ्गल [स्री] ६३	त	देवादित्य १०६
जयसिंह [सिद्धराज] ५५, ६०, ७१, ७६	तापमी दिक्षा ११	द्वारवती [नगरी] १२०
	तारङ्गदुर्ग ९६	ह्याश्रय [महाकान्य] ६१
धार १ ५ म १	तिलकमक्षरी [कथा] ४९	ध
जाद्वलक	तिलङ्ग [देश] १७, २२, ३१	# P P P P P P P P P P P P P P P P P P P
९६	ਰੁङ्ग [ਜ਼ੁਮਟ] ੧੧৩	· •
जासदस्य	तरुष्क ९७, ११४, ११७, ११८	
जालन्धर [५२१]	नेजलपर १००	
जावालपुर ११४	तेजःपाल ९८, ९९, १०३-५	
जाह्नवा ६२ ८९	तैलिपदेव [राजा] १७, २२, २३, ३१	धरणिम १०५ धरणेन्द्र १२०
ाजन १०१	त्रिपुरी १३	वरणन्द
जिनव्त्तसूरि		

प्रवन्धचिन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्ध संग्रह

भवन्धिचिन्तामणिप्रन्थगत प्रवन्धोंके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रवन्धोंका विशिष्ट संग्रह ।

सम्पादक

जिनविजय मुनि

मूल पाठ

विशेषनामानुक्रम-पद्मानुक्रमणिकादियुक्त

प्रकाशन-कर्ता

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ

'कलक कत्ता

SINGHI JAINA SERIES

A COLLECTION OF CRITICAL EDITIONS OF MOST IMPORTANT CANONICAL, PHILOSOPHICAL,
HISTORICAL, LITERARY, NARRATIVE ETC. WORKS OF JAINA LITERATURE
IN PRÄKRIT, SANSKRIT, APABHRAMSA AND OLD VERNACULAR
LANGUAGES, AND STUDIES BY COMPETENT
RESEARCH SCHOLARS.

FOUNDED AND PUBLISHED

nv

ŚRĪMĀN BAHĀDUR SINGHJĪ SINGHĪ OF CALCUTTA

IN MEMORY OF HIS LATE FATHER

ŚRĪ DĀLCANDJĪ SINGHĪ.

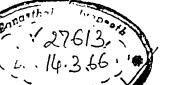
GENERAL EDITOR

JINAVIJAYA MUNI

Adhisthātā: Singhī jaina jñānapītha, sāntiniketan.

HONORARY MEMBER OF THE BHANDARKAR ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE OF POONA AND GUJRAT SAHITYA SABHA OF AHMEDABAD; FORMERLY PRINCIPAL OF GUJRAT PURATATTVAMANDIR OF AHMEDABAD; ÉDITOR OF MANY SANSKRIT, PRAKRIT, PALI, APABHRAMSA,

AND OLD GUJRATI WORKS.



NUMBER 2

TO BE HAD FROM

SAÑCĀLAKA, SIŅGHĪ JAINA GRANTHAMĀLĀ

BHARATINIVAS, ELLIS BRIDGE AHMEDABAD. (GUJRAT)



SINGHI SADAN, 48, GARIYAHAT ROAD, BALLYGUNGE, CALCUTTA

PURATANA PRABANDHA SANGRAHA

A COLLECTION OF MANY OLD PRABANDHAS SIMILAR AND ANALOGOUS TO THE MATTER IN THE PRABANDHACINTAMANI; INDICES OF THE VERSES AND PROPER NAMES; A SHORT INTRODUCTION IN HINDI DESCRIBING THE MSS. AND MATERIALS USED IN PREPARING THIS PART, ALONG WITH PLATES.

JINAVIJAYA MUNI

SINGHI PROFESSOR OF JAINA CULTURE AT VISVABHĀRATĪ

ORIGINAL TEXT

- I. IN SANSKRIT AND PRAKRIT WITH INDICES OF THE VERSES AND
- II. AN INDEX OF PROPER NAMES OF PRABANDHACINTAMANI.

THE ADHISTHĀTĀ-SINGHĪ JAINA JÑĀNAPĪTHA CALCUTTA.

V. E. 1992] . . First edition, One Thousand Copies.

प्रवन्धचिन्तामणि ग्रन्थकी प्रस्तुत आवृत्तिका संकलन ।

इस यन्थका संकलन और प्रकाशन निम्न प्रकार, ५ भागोंमें, पूर्ण होगा।

- (?) प्रथम भाग. भिन्न भिन्न प्रतियंकि आधार पर संगोधित-विविध पाठान्तर समवेत-मूलप्रन्थ; १ परिशिष्ट; मूलप्रन्य और परिशिष्टमें आये हुये संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषामय पद्योंकी अकारादिकमानुसार सूचि; पाठ संशोधनके छिये काममें लाई गई पुरातन प्रतियोंका सचित्र वर्णन।
- (२) द्वितीय भाग. प्रयन्धिचन्तामणिगत प्रयन्धोंके साथ सम्यन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रयन्धोंका संग्रह; पद्यानुक्रमसूचि; विशेष नामानुक्रम; संक्षिप्त प्रस्तावना और प्रयन्ध संग्रहोंकी मूल प्रतियोंका सचित्र परिचय ।
- (३) तृतीय भाग. पहले और दूसरे भागका संपूर्ण हिंदी भापान्तर।
- (४) चतुर्थ भाग. प्रयन्धिचन्तामिणवर्णित व्यक्तियोंके साथ सम्बन्ध रखनेवाले शिलालेख, ताम्रपत्र, पुस्तकप्रशस्ति आदि जितने समकालीन साधन और ऐतिहा प्रमाण उपलब्ध होते हैं उनका एकत्र संग्रह और तलिरचायक उपयुक्त विस्तृत विवेचन; प्राक्कालीन और पश्चात्कालीन अन्यान्य ग्रन्थोंमें उपलब्ध प्रमाणभूत प्रकरणों, उद्घेखों और अवतरणोंका संग्रह; कुछ शिलालेख, ताम्रपत्र और प्राचीन ताडपत्रोंके चित्र ।
- (५) पञ्चम भाग. प्रयन्धिचन्तामणिप्रधित सब वार्तोका विवेचन करनेवाली विस्तृत प्रस्तावना-जिसमें तत्कालीन ऐतिहासिक, भागोलिक, सामाजिक, धार्मिक और राजकीय परिस्थितिका सविशेष ऊहापोह और सिंहावलोकन किया जायगा। अनेक प्राचीन मंदिर, मूर्तियां इत्यादिके चित्र भी दिये जायँगे।

THE SCHEME OF THE WORK OF PRABANDHACINTAMANI

The work will be completed in five parts.]

- Part I. A critical Edition of the original Text in Sanskrit with various readings based on the most reliable MSS.; An Appendix; An alphabetical Index of all Sanskrit, Präkrit and Apabhraméa verses occurring in the text and the appendix; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used for the construction of the text along with plates.
- Part II. A collection of many old Prabandhas similar and analogous to the matter in the Prabandhacintāmaṇi; Indices of the verses, and proper names; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used in preparing this Part, along with plates.
- Part III. A complete Hindi Translation of Parts I and II.
- Part IV. A collection of epigraphical records, viz. stone inscriptions, copper plates, colophons and Praśastis from the contemporary MSS.; all available historical data dealing with the Persons described or referred to in the Prabandhacintāmaṇi along with a critical account in Hindi of the above, as also many plates. and A collection of authoritative references and quotations from other works.
- Part V. An elaborate general Introduction surveying the historical, geographical, social, political and religious conditions of that period; with plates.

॥ सिंघीजैनयन्थमालासंस्थापकप्रशस्तिः॥

सित वङ्गाभिषे देशे सुप्रसिद्धा मनोरमा । मुर्शिदावाद इत्याख्या पुरी वेभवशािलनी ॥
निवसन्त्यनेके तत्र जेना ऊकेशवंशजाः । धनाढ्या नृपसदशा धर्मकर्मपरायणाः ॥
श्रीडालचन्द इत्यासीत् तेप्वेको वहुभाग्यवान् । साधुवत् सचिति यः सिंधीकुलप्रमाकरः ॥
वाल्य एवागतो यो हि कर्तुं व्यापारिवस्तृतिम् । किलकातामहापुर्यो धृतधर्मार्थनिश्रयः ॥
कुशाग्रया खद्धद्व्यंव सद्द्न्या च सुनिष्ठया । उपार्ज्यं विपुलां लक्ष्मीं जातो कोट्यधिपो हि सः ॥
तस्य मन्नुकुमारीति सन्नारीकुलमण्डना । पतिवता प्रिया जाता शीलसाभाग्यभूपणा ॥
श्रीवहादुरसिंहाख्यः सद्दुणी सुपुत्रस्तयोः । अस्त्येप सुकृती दानी धर्मप्रियो धियां निधिः ॥
प्राप्ता पुण्यवताऽनेन प्रिया तिलकसुन्दरी । यस्याः साभाग्यदीपेन प्रदीष्तं यद्वृहाङ्गणम् ॥
श्रीमान् राजेन्द्रसिंहोऽस्ति ज्येष्ठपुत्रः सुशिक्षितः । यः सर्वकार्यदक्षत्वात् वाहुर्यस्य हि दक्षिणः ॥
नरन्द्रसिंह इत्याख्यस्तेजस्वी मध्यमः सुतः । स्नुर्विरेन्द्रसिंहश्च किष्ठः सोम्यदर्शनः ॥
सन्ति त्रयोऽपि सत्पुत्रा आप्तभक्तिपरायणाः । विनीताः सरला भव्याः पितुर्मार्गानुगामिनः ॥
अन्येऽपि वहवश्रास्य सन्ति स्वस्नादिवान्यवाः । धर्नर्जनः समृद्धोऽयं ततो राजेव राजते ॥

अन्यच-

सरखलां सदासक्तो भृत्वा लक्ष्मीप्रियोऽप्ययम् । तत्राप्येप सदाचारी तिचत्रं विदुपां खलु ॥ न गर्वो नाप्यहंकारो न विलासो न दुफ्कृतिः । दृश्यतेऽस्य ग्रहे कापि सतां तद् विस्मयास्पदम् ॥ भक्तो गुरुजनानां यो विनीतः सज्जनान् प्रति । वन्धुजनेऽनुरक्तोऽस्ति प्रीतः पोप्यगणेष्वि ॥ देश-कालस्थितिज्ञोऽयं विद्या-विज्ञानपृज्ञकः । इतिहासादिसाहित्य-संस्कृति-सत्कलप्रियः ॥ समुन्नत्यं समाजस्य धर्मस्थोत्कर्पहृतवे । प्रचारार्थं सुशिक्षाया व्ययत्येप धनं घनम् ॥ गत्वा सभा-सित्यादाँ भृत्वाऽध्यक्षपदाद्वितः । दत्त्वा दानं यथायोग्यं प्रोत्साह्यति कर्मठान् ॥ एवं धनेन देहेन ज्ञानेन शुभिनष्ठया । करोत्ययं यथाशक्ति सत्कर्माणि सदाशयः ॥ जयान्यदा प्रसङ्गेन स्वित्तुः स्पृतिहेतवे । कर्तुं किष्टिद् विशिष्टं यः कार्यं मनस्यचिन्तयत् ॥ पृज्यः पिता सदैवासीत् सम्यग्-ज्ञानरुचिः परम् । तस्मात्तज्ञानगृद्धार्थं यतनीयं मया वरम् ॥ विचार्यंवं स्वयं चित्ते पुनः प्राप्य सुसम्मतिम् । श्रद्धास्पद्खिमत्राणां विदुपां चापि तादशाम् ॥ जनज्ञानप्रसारार्थं स्थाने शान्तिनिकेतने । सिंघीपदाद्वितं जनज्ञानपीठमतीष्ठिपत् ॥ श्रीजिनविजयो विज्ञो तस्याधिष्ठातृसत्पदम् । स्वीकर्तुं प्रार्थतोऽनेन शास्रोद्धारामिलपिणा ॥ अस्य साजन्य-साहार्द-स्वर्योदार्यादिसद्धणः । वशीभृत्याति सुदा येन स्वीकृतं तत्पदं वरम् ॥ तस्यव श्ररणां प्राप्य श्रीसिंघीकुलकेतुना । स्विपतृश्रयसे चपा ग्रन्थमाला प्रकाश्यते ॥ विद्वज्ञनकृताल्हादा सचिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दित्वयं लोके जिनविजयभारती ॥

॥ सिंघीजैनयन्थमालासम्पादकप्रशस्तिः॥

स्वस्ति श्रीमद्पाटाख्यो देशो भारतिवश्चतः । स्पाहेठीति सन्नाम्नी पुरिका तत्र सुस्थिता ॥
सदाचार-विचाराभ्यां प्राचीननृपतेः समः । श्रीमचतुरसिंहोऽत्र राठोडान्वयभूमिपः ॥
तत्र श्रीवृद्धिसिंहोऽभृत् राजपुत्रः प्रसिद्धिमान् । क्षात्रधर्मधनो यश्च परमारकुलाग्रणीः ॥
मुद्ध-भोजमुखा भूपा जाता यस्मिन्महाकुठे । किं वर्ण्यते कुलीनत्वं तत्कुलजातजन्मनः ॥
पत्नी राजकुमारीति तस्याभृद् गुणसंहिता । चातुर्य-स्प-लावण्य-सुवाक्सोजन्यभूषिता ॥
क्षत्रियाणीप्रभापूर्णां शोर्यदीप्तमुखाकृतिम् । यां दृष्ट्वेव जनो मेने राजन्यकुलजा त्वियम् ॥
सृद्धाः किसनसिंहाख्यो जातस्तयोरित प्रियः । रणमल इति ह्यन्यद् यन्नाम जननीकृतम् ॥
श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूज्यो यतीश्वरः । ज्योतिभपज्यविद्यानां पारगामी जनप्रियः ॥
श्रीदेवीहंसनामात्रप्रस्य महामतेः । स चासीद् वृद्धिसिंहस्य प्रीति-श्रद्धास्पदं परम् ॥
तेनाथाप्रतिमप्रमणा स तत्सृतुः स्वसन्निधी । रक्षितः, शिक्षितः सम्यक्, कृतो जनमतानुगः ॥
दोर्भाग्यात्तिच्छशोर्वाल्ये गुरु-तातौ दिवंगतौ । विमृदेन ततस्तेन त्यक्तं सर्वं गृहादिकम् ॥

तथा च-

परिभ्रम्याथ देशेषु संसेव्य च वहून् नरान्। दीक्षितो मुण्डितो भूत्वा कृत्वाऽऽचारान् सुदुष्करान्॥ ज्ञातान्यनेकशास्त्राणि नानाधर्ममतानि च । मध्यस्यवृत्तिना तेन तत्त्वातत्त्वगवेषिणा ॥ अधीता विविधा भाषा भारतीया युरोपजाः । अनेका लिपयोऽप्येवं प्रत-नूतनकालिकाः ।। येन प्रकाशिता नेका ग्रन्था विद्वत्प्रशंसिताः । लिखिता वहवी लेखा ऐतिहातथ्यग्रिक्तताः ॥ यो वहुभिः सुविद्वद्भिस्तन्मण्डलैश्र सत्कृतः । जातः स्वान्यसमाजेषु माननीयो मनीषिणाम् ॥ यस्य तां विश्रुति ज्ञात्वा श्रीमद्गान्धीमहात्मना । आहूतः सादरं पुण्यपत्तनात्स्वयमन्यदा ॥ पुरे चाहम्मदावादे राष्ट्रीयशिक्षणालयः । विद्यापीठ इतिख्यातः प्रतिष्ठितो यदाऽभवत् ॥ आचार्यत्वेन तत्रोचैनियुक्तो यो महात्मना । विद्वजनकृतश्चाचे पुरातत्त्वाख्यमन्दिरे ॥ वर्पाणामष्टकं यावत् सम्भूष्य तत्पदं ततः । गत्वा जर्मनराष्ट्रे यस्तत्संस्कृतिमधीतवान् ॥ तत आगत्य सँलयो राष्ट्रकार्ये च सिक्तयम् । कारावासोऽपि सम्प्राप्तः येन स्वराज्यपर्वणि ॥ क्रमात्तस्माद् विनिर्मुक्तः प्राप्तः शान्तिनिकेतने । विश्ववन्यकवीन्द्रश्रीरवीन्द्रनाथभूषिते ॥ सिंघीपदयुतं जनज्ञानपीठं यदाश्रितम् । स्थापितं तत्र सिंघीश्रीडालचन्दस्य सूनुना ॥ श्रीवहादुरसिंहेन दानवीरेण धीमता । स्मृत्यर्थं निजतातस्य जैनज्ञानप्रसारकम् ॥ प्रतिष्टितश्च यस्तस्य पदेऽधिष्ठातृसन्ज्ञके । अध्यापयन् वरान् शिष्यान् शोधयन् जैनवाद्मयम् ॥ तस्यव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंधीकुरुकेतुना । स्विपतृश्रेयसे चैपा प्रन्थमारा प्रकारयते ॥ विद्वजनकृताल्हादा सचिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दित्वयं होके जिनविजयभारती ॥

उदारात्मा क्षमामूर्तिः साधुश्रेष्ठो गुणित्रियः । यो मम परमः पूज्यो गुरुवत् , शिष्यवत्सरुः ॥ यस्य शिक्षात्रसादेन त्राप्ता मया विशिष्टदक् । यया दृष्टो अन्थराशिरीदक् पौरातनो महान् ॥ सुगृहीतनाम्नस्तस्य प्रवर्तकशिरोमणेः । कान्तिविजयपादस्य पावने करपङ्कजे ॥ अनन्यभक्तिभावेन विनम्रशिरस् मया । पुरातनप्रवन्धानां संग्रहोऽयं समर्प्यते ॥



पुरातनप्रवन्ध्रसंयहविषयानुक्रमणिका ।

			•					
	प्रास्ताविक वक्तव्य ,	2· ·				•	, -	१-२५
	प्रास्ताविक-टिप्पनीसूचितपरिशिष्टस	ग्रह				-	~-21	दे-३ <i>२</i>
٠,	. विक्रमार्कप्रवन्धाः	•					• •	- 7
	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	•	-	-	_		5 5	,
	§१ विक्रमार्कसत्त्वप्रवन्धः (B.)	••••	••••	****	****			8
	§४ दरिद्रक्रयप्रवन्धः (B. Br)	****	••••	••••	****		••••	. 국
	\S ५ वीकमद्यूतकारप्रवन्धः (${f B}$.) .	****	••••	••••	****		1101.	३
	\S ६ \cdot स्त्रीसाहसप्रवन्धः ($^{ m B}\cdot$)	**** *	••••	••••	****		****	"
	% स्त्रीचरित्रप्रवन्धः ($^{P_{\star}}$)	,,,,,	****	••••	****		****	8
	$\$$ ८ देहलक्षणप्रवन्धः ($^{ m B}$,)	**** **	••••	****	****		_****	
	९९ भनि-मनुप्रवन्धः (B. Br.)	••••	••••	-	****		•	દ્
	-	(B. G.)		••••		4175 ~	; ;
	§१२ विकाससम्बन्धे रामराज्यकथाप्रवन्ध	(B.P.G	₹.)	****	****			٠. ٤
	§१३ G. संग्रहगतं विक्रमवृत्तम्	.,,		••••	•			٠. ٩
٠,2.	§१९ सातवाहनप्रवन्धः (. P.)	••••		••••	****		-	११
ر :	···G. संग्रहे सातवाहनसम्त्रन्धि गाथा			4044	***		****	
(3),	§२० वनराजवृत्तम्. (G.)		••••	***			••••	१इ १इ
		••••	••••	••••	••••		`	
	§२२ मुझराजप्रवन्धः (P)		,	••••	••••			ः १३
	१२४ श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रवन्धः (B. Bi			· · · · · ·	****		****	१५
				••••	****		T*** /	-
	- 1 11 11 2 11 1	****	••••	****	****		****	१७
	§३१ कुलचन्द्रप्रवन्धः (B.)	••••	••••	****	****		****	१८
	§३२ पह्दर्शनप्रवन्धः (B. Br.)	. •••• '	****	****	****		••••	१९
-	§३३ नीलपटव्धप्रवन्धः (.B.)	****	••••	••••	****		••••	**
११ः	§३४ भोज-गाङ्गेययोः प्रवन्धः (B).	••••	••••	••••	••••		****	२०
१२,	§३५ भोजदेव-सुभद्राप्रवन्धः (B.).	••••	****	.: ••••	****		••••	"
ر 🕽	§३६:-G. संग्रहगतं भोजकृत्तम्	.,	·,	·	****		****	37
१३.	१४७ धाराध्वंसप्रवन्धः (В.,)	***	••••	;· ••••	44.0	:.	••••	२३
१४,	१४९ सिद्धराजौदार्यप्रवन्धाः (B.)	••••	~ ,		i	::	*****	२४

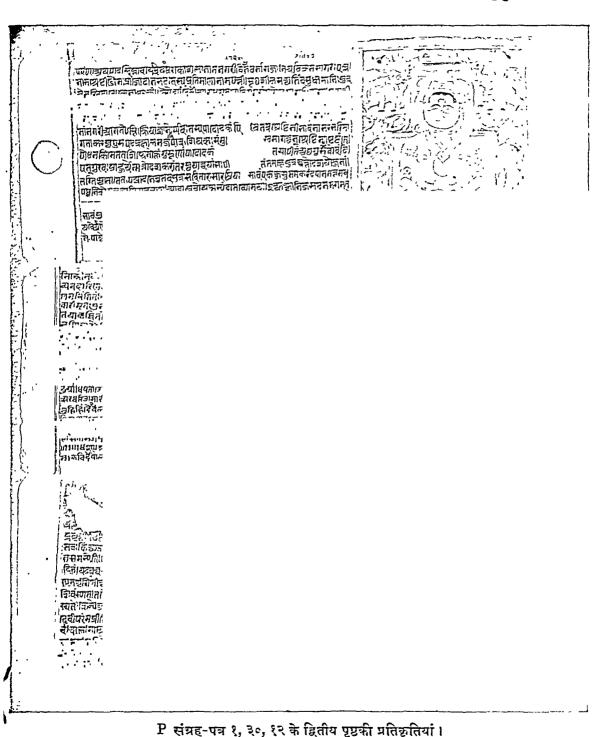
રૃષ,	९५१ मदनत्रस-जयसिंहदेवप्रीतिप्रवन्धः (B.)	••••	••••	••••	ur.	२४
१६.	९५३ श्रीदेवाचार्यप्रवन्धः (Br.)	••••	••••	••••	••••	२५
१७.	९५६ आरासणीयनेमिचैत्यप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	३०
१८.	९५७ फलवर्द्धितीर्थप्रवन्धः (P. Br.)	••••	••••	••••	****	३१
१९.	९५८ मन्त्रिसान्त्प्रवन्धः (B. Br.)	••••	••••	••••	••••	27
२०,	§५९ मन्त्रिउद्यनप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	३२
२१.	६६१ वसाहआभडम्रवन्धः (B. Br. P.)	••••	••••	••••	••••	३३
२२,	६२ मं ० सञ्जनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रवन्धः (P.)	****	••••	••••	****	३४
२३.	§६३ महं आंवाकारितगिरिनारपाजप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	"
	§६४ P. संग्रहे सोनलवाक्यानि	••••	••••	••••	••••	"
	§६५ G. संग्रहे सिद्धराजसम्त्रनिधवृत्तम्,	••••	••••	••••	****	३५
	९७४ .G. संग्रहे हेमचन्द्रस्रिसंविन्धवृत्तम्	••••	••••	••••	••••	३७
२४.	९७९ कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	"
२५.	§८१ राणक आम्बडप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	३९
२६.	§८३ कुमारपालकारितामारिप्रवन्धः (B. P.)	••••	••••	••••	••••	88
२७.	९८४ कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रवन्धः (B.)	••••	••••	••••	••••	४२
२८.	९८६ क़ुमारपालपूर्वभवप्रवन्धः (B.)	••••	••••	****	••••	88
२९,	§८७ द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रयन्धः (Br.)	••••	••••	••••	••••	~99
	९८८ G. संग्रहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्	••••	••••	••••	••••	४५
३०,	११०४ अजयपालप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	****	80
	११०६ G. संग्रहगतं अजयपालवृत्तम्	••••	••••	••••	****	86
३१.	११०८ धर्मस्येये सञ्जनदण्डपतिप्रवन्धः (B.)	••••	••••	••••	••••	४९
३२,	§१०९ मित्रयशोवीरप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	"
	G. संग्रहे यशोवीरोहेखः	••••	••••	••••	••••	५१
	§११२ विमलवसतिकाप्रवन्धः (B.)	••••	••••	****	••••	"
		••••	••••	••••	••••	५२
३५,	१११५ वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः (B. Br. P. P.		••••	****	****	५३
	११४९ P. संग्रहे वस्तुपाल-तेजःपालविशेपवर्णनम्		••••	••••	••••	६९
	B. संग्रहे ,, ,, सम्विन्धकाच्यानि	••••	••••	••••	••••	७१
	११५८ G. संग्रहगतं ,, ,, ,, वृत्तम्	••••	****	••••		৬३
	९१७६ ,, ,, वीरधवलवृत्तम्.		••••	••••	****	७८
	१९७७ ,, ,, नीसलदेववृत्तम्	****	••••	••••	••••	"

३६,	§१८८	विश्वासघातकविषये नन्दपुत्रप्रवन्धः	(B.)	••••	••••	••••	****	હેશ
	१८९	G. संग्रहे नन्दनृपोल्लेख	••••	****	****	••••	••••	८२
રૂ ૭,	§१९०	वलभीभङ्गप्रवन्धः (_. P.)	****	****	••••	••••	••••	८२
	§१९३	G. संग्रहे वलभीभङ्गवृत्तम्	••••	****	••••	****	••••	૮ર
३८.	§१९६	श्रीमाताप्रवन्यः	••••	••••	••••	****	••••	<8
	§१९७	G. संग्रहगतं श्रीमातावृत्तम्	••••		••••	••••	••••	**
३९.	§१९८	जगद्देवप्रवन्धः (G.)	••••	••••	••••	****	••••	८५
So.	§१९९	पृथ्वीराजप्रवन्धः (B. P.)	••••	****	••••	••••	••••	८६
	§२०१	G. संग्रहे पृथ्वीराजविपयकवृत्तम्	****	****	••••	••••	••••	୯୬
४१.	§२०२	जयचन्द्रप्रवन्धः	****	••••	••••	••••	••••	૮૮
	§२०६	G. संग्रहे जयचन्द्रनृपवृत्तम्	****	****	••••	••••	••••	९०
४२.	§२०७	वराहमिहिरवृत्तम्	****	••••	••••	••••	••••	**
४३,	§२०८	नागार्ज्जनप्रवन्धः	****	****	••••	••••	••••	९१
88.	§२१०	पादलिप्तसूरिप्रवन्धः (^{B.})	••••	••••	••••	••••	****	९२
		G. संग्रहे पादलिप्तस्रिच्चित्तम्	••••	••••	****	••••	••••	९४
४५.	§२१४	अभयदेवसूरिप्रवन्धः (B. Br.)	****	••••	••••	••••	९५
४६.	§२१६	वाग्भटवैद्यवृत्तम्. (^G .)	••••	••••	••••	••••	••••	९६
80,	§२१९	रैवततीर्थप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	***	९७
		देव्यम्बाप्रवन्धः (B. Br.)	••••	••••	••••	••••	****	27
४९.	§२२१	उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवन्धः (P	.)	••••	****	••••	••••	९८
40.	§२२२	वज्रस्वामिकारितशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्ध	ą; (P.)	****	****	••••	९९
५१.	§२२४	कपर्दियक्ष-जावडिप्रवन्धः (${ m B}_{ m R}$.)	•	****	****	••••	१००
५२.	§२२५	लाखणराउलप्रवन्धः (B. P.)	••••	****	****	****	****	१०१
५३.	§२२८	चित्रक्रुटोत्पत्तिप्रवन्धः (P.))	****	****	••••	••••	••••	१०३
48.	§२२९	श्रीहरिभद्रसूरिप्रवन्धः ($^{ m B}$)	****	••••	••••	••••	••••	"
ધ્ધ,	§२३१	सिद्धर्षिप्रवन्धः ($^{ m B.~B_{R.}}$)	****	••••	****	****	••••	१०५
५६,	§२३२	शान्तिस्तवप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	••••	१०७
40,	§२३३	न्याये यशोवर्मनृपप्रवन्धः (B. B	R. P.)	••••	••••	****	****	11
46.	§२३४	अम्बुचीचनृपप्रवन्धः (B. Br.	P.)	••••		****	••••	१०८
५ ९.	§२३५	विधिविषये उदाहरणम्. (P.)	••••	••••	••••	••••	••••	१०९
ξo,	§२३६	परोपकारविषये उदाहरणम्, (P.)	••••	****	3400	••••	११०
६१,	§२३७	उद्यमविषये उदाहरणम्. (P.)	****	****	••••	****	****	22

६२.	§२३८	दानविषये उदाहरणम्. (Р.)	••••		****,	223
ફ ર,	§२३९	कर्णवाराविषये उदाहरणम्. (P.)	···· _ ,	••••	ā i	**
٠,	§288	G. संग्रह्मता अवशिष्टा प्रवन्धाः	• • • •	••••	११२-	-११५
		परिशिष्टम् –प्रवन्थचिन्तामणिगुम्फितकतिपयप्रवन्थसंक्षेपः	••••	****	११६	-१३४
		G. संज्ञकसंग्रहस्थान्ते पातसाहिनामाविः	,,,,		*****	
		P. संज्ञकसंग्रहस्यान्तिमोह्नेखः	••••	••••	••••	१३६
पुरातन	प्रवन्ध	संग्रहस्य अकाराद्यनुक्रमेण पद्यानुक्रमणिका			१३८	-ફર્પેઇ
पुरातन	प्रवन्धं	संग्रहान्तर्गतविशेषनाम्नां सूचिः			<i>१84-</i>	१५५
प्रवन्ध	चिन्ता	मणित्रन्थान्तर्गतविशेषनाम्नां सूचिः	-		•	१-८

पु रा त न प्रबन्ध सङ्ग्रह

प्रास्ताविक वक्तव्य



प्रास्ताविक वक्तव्य ।

=:ccccccc==

§१. प्रवन्धचिन्तामणिसम्बद्ध पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रह

रातन-प्रवन्ध-सङ्ग्रह नामका यह प्रन्थ प्रवन्धचिन्तामणिके द्वितीय भागके रूपमें प्रकाशित किया जा रहा है, इसिलये इसका पूरा नाम हमने 'प्रवन्धचिन्तामणिसम्बद्ध-पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रह' ऐसा रखा है।

प्रवन्धचिन्तामणिके सम्पादन करनेका जवसे हमने सङ्कल्प किया, तभीसे उसके साथ सम्वन्ध रखनेवाली, साहित्यिक और ऐतिहासिक, सब प्रकारकी यथापाप्य साधन-सामग्रीके सङ्कालेत करनेका प्रयत्न शुरू किया। भिन्न भिन्न प्रकारके और भिन्न भिन्न विपयके जैन प्रन्थोंका अवलोकन करते हुए, हमने देखा कि कई उपदेशात्मक और कथात्मक प्रन्थोंमें भी इस विपयकी कितनी ही सामग्री छुपी हुई पडी है। कई यन्य, जिनका मुख्य विपय तो है आचारप्रतिपादक, लेकिन उनमें भी, इस प्रकारकी कुछ इतिहासोपयोगी वातें लिखी हुई मालूम दीं। इसलिये हमने सोचा कि यदि यह सब सामग्री, चाहे उसमें कुछ अधिक विशेषता या नवीनता न भी हो, उन उन प्रन्थोंमें से चुन चुन कर एकत्रित की जाय और उसे एक संग्रहके रूपमें प्रकट कर दी जाय, तो इस विपयके विद्वानों और विद्यार्थिओं-दोनोंको संशोधनादि कार्य करनेमें वहुत कुछ सरछता और नवीनता प्राप्त हो सकेगी। इस विचारसे प्रेरित होकर, हमने उन उन प्रन्थोंमेंसे इस सामग्रीको, एक एक करके चुनना ग्रुरू किया। हमारी पूर्व कल्पना थी कि इस सामग्रीको, प्रवन्धचिन्तामणिके परिशिष्टके रूपमें, उसी ग्रन्थके अन्तमें, दे दी जायगी। लेकिन एकत्रित करते करते हमें वह सामग्री इतनी विस्तृत मालूम देने लगी कि जिससे उसको, प्रवन्धचिन्तामणि ही जितने वडे, अलग प्रन्थ के रूपमें, दूसरे भागके तौर पर, निकालनेका निश्चय करना पडा। उस निश्चयानुसार, प्रस्तुत द्वितीय भाग उस सामग्रीसे समलङ्कृत होता; लेकिन पाठक देखेंगे कि इसमें वह सामग्री भी नहीं है। इसमें जो सामग्री उपस्थित की जा रही है वह उससे भिन्न संग्रह यन्थों में की है; और वह सामग्री, अव इसके वादके यन्थमें, तीसरे भागमें, प्रकाशित होगी। ऐसा होनेमें कारण यह है कि-ज्यों ज्यों हम इस विपयमें अधिक खोज करते गये त्यों त्यों हमें कुछ और भी अधिक उपयुक्त और खतंत्र प्रन्थात्मक कितनीक सामग्री प्राप्त होने लगी। पाटण, पूना, भावनगर, अहमदावाद, राजकोट वगेरह स्थानोंसे हमें कुछ ऐसे पुराने बन्ध मिल आये, जो खास कर प्रवन्धचिन्तामणि-ही-के ढंगके खतंत्र संग्रहरूप मालूम दिये, लेकिन जिनमें कर्ता वगैरहका कोई उहेल नहीं पाया गया। इनमें कोई कोई संग्रह तो वहुत पुरातन माॡ्म दिये-शायद प्रवन्धचिन्तामणिकी रचनासे भी पुरातन । जव हमने इन संग्रहोंका परस्पर मिलान करके देखा तो, इनमें कुछ प्रकरण तो ऐसे मिले जो एक दूसरे संप्रहके साथ शब्दशः साम्य रखते हैं । कई प्रकरण परस्पर न्यूनाधिक वर्णनवाले मालूम दिये । कोई प्रकरण किसीमें कुछ पाठ-फेर वाला है, तो कोई किसीमें कुछ भापा-भेद वाला है। और, कितनेएक प्रकरण एक दूसरेसे सर्वथा मिन्न भी हैं और नवीन भी हैं। इनमें कोई कोई प्रकरण ऐसे भी दिखाई दिये जो प्रवन्धचिन्तामणिगत उस प्रकरणके साथ सर्वथा एकता रखते हैं। कुछ प्रकरण ऐसे हैं जो प्र० चिं० में तो नहीं हैं लेकिन प्रवन्धकोशमें हैं। और कोई कोई प्रकरण प्र० चिं० या प्र० को० की पूर्तिके लिये ही लिखे गये हों ऐसे मालूम देते हैं।

इस प्रकारके इन संप्रहोंमेंसे, हमने कुछ पूर्ण और कुछ अपूर्ण ऐसे समूचे ५ संप्रहोंका प्रस्तुत प्रन्थके लिये, पृथक् तारण किया है। इनमेंके प्रायः बहुतसे प्रवन्धों या प्रकरणोंका सम्वन्ध, किसी-न-किसी रूपमें प्र० चिं० के माथ है। जो कुछ थोडेसे प्रकरण ऐसे भी हैं जिनका सीधा सम्बन्ध उक्त प्रन्थके साथ नहीं है, तथापि उनका रंगढंग और पु॰ प्र॰ प्रस्ता॰ १ विषय-वर्णन उसी प्रकारका है। इसिलये हमने उनको भी, अलग न निकालकर उनके सजातीय प्रकरणोंके साथ, इस संप्रहमें शामिल ही रखना उपयुक्त समझा है। इनमेंसे कुछ तो ऐतिहासिक प्रकरण हैं, जो, चाहे जिस दृष्टिसे महत्त्वके ही गिने जाते हैं; और कुछ लोककथात्मक हैं जिनका विशेषत्व, हमारे देशके प्राचीन सामाजिक संस्कार और लाकिक व्यवहारकी दृष्टिसे, अवश्य ही अनुशीलनीय है।

§२. संग्रह ग्रन्थोंका सामान्य परिचय

पाठक देखेंगे कि, प्रस्तुत प्रनथके, प्रथम पृष्ट पर, शिरोलेखके नीचे ही चतुष्कोण रेखाके भीतर

[P. B. Br. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेभ्यः सङ्गृहीतः]

ऐसी पंक्ति हमने िल्खी हैं। इसका अर्थ यह है कि-इस पुरातनप्रवन्धसंग्रहमें जितने प्रवन्ध या प्रकरण हैं, वे, जिनको हमने P. B. Br. G. Ps. ऐसी संज्ञा दी है उन पुराने लिखे हुए संग्रह ग्रन्थों परसे सङ्कलित किये गये हैं। इन संग्रहोंमें ये सब प्रकरण या प्रवन्य, उस कममें नहीं लिखे हुए हैं जिसमें हमने उन्हें यहां छपवाया है। यहां पर जो इनका क्रम दिया गया है वह प्रवन्धिचन्तामणिके अनुसरणके रूपमें है। प्र० चि० में जो प्रवन्ध या प्रकरण जिस क्रममें आया है उसी कममें हमने इन प्रकरणोंको मुद्रित किया है। यह भी ध्यानमें रहे कि ये सब प्रकरण सभी संग्रहोंमें नहीं मिलते। कोई प्रकरण किसी संग्रहमें मिलता है तो कोई किसीमें। कोई कोई प्रकरण एकाधिक संग्रहमें मी मिलता है। एवं कोई प्रकरण एक संग्रहमें एक ढंगसे लिखा हुआ मिलता है तो दूसरे संग्रहमें दूसरे ढंगसे। इस प्रकार इन ५ संग्रहोंमें परस्पर जितनी समानता है उतनी ही विभिन्नता भी है। एक हिसाबसे ये न एक-कर्न्टक हैं, न एक-कालिक हैं, न एक-किस हैं। तथापि हैं ये सब समान-उदेशक और समान-विपयक। इनमें से कीन प्रकरण, किस संग्रहमें मिलता है उसका ज्ञापन करानेके लिये, प्रत्येक प्रकरणके शिरोलेखके साथ, P. B. G. आदि तत्तत् संग्रहम निवंशक सद्देताक्षर दे दिया है। एकाधिक संग्रहमें जो कोई प्रकरण मिला और यदि उसमें कुछ पाठ-भेद प्राप्त हुआ तो उसे हमने या तो पाद-टिप्पनीमें उद्धत कर दिया है, या प्रचलित पंक्ति-ही-में, चतुष्कोण रेखावृत करके, प्रक्षित कर दिया है। अर्थानुसन्धानका ठीक विचार कर, जहां जैसा उचित माल्यम दिया वहां वैसा किया गया है। \$. संग्रह ग्रन्थोंका विदेशप परिचय

(१) P संज्ञक संग्रह — संघके भण्डारके नामसे पहचाने जानेवाले पाटणके प्रसिद्ध जैन प्रन्थागारमेंसे प्राप्त ३० पत्रोंका यह एक वहुत जीर्ण-शीर्ण प्रन्थ है। वर्तमानमें, इसकी प्राप्ति हमें, विद्याविलासी साहिलोपासक मुनिवर श्रीपुण्यविजयजीके द्वारा हुई है इसलिये इसका संकेत हमने, पाटण और पुण्यविजयजी होनोंकी स्मृतिमें, P अक्षरसे किया है। इस प्रतिका दर्शन सबसे पहले हमको कोई सन् १९१४ – १५ में हुआ था जब हमने पाटणके उक्त भण्डारके सब प्रन्थोंका, एक एक करके, सूक्ष्म अवलोकन किया था और प्रशस्ति आदि ऐतिहासिक साधनोंके, सर्व प्रथम, टिप्पन करने ग्रुरू किये थे। यह प्रति उस समय, उक्त भण्डारमें यों ही अनुहिखित-सी और अज्ञात-सी पढी थी। हमने इस पर रेपर वगैरह चढाकर और उस पर प्रवन्धसंग्रह ऐसा नाम लिख कर व्यवस्थित रूपसे रख दिया। तब हमें यह रायाल नहीं था कि भविष्यमें, किसी दिन, इस प्रवन्धसंग्रहका हमारे ही हाथसे, ऐसा समुद्धार होगा। हमें इसकी स्मृति भी नहीं रही। पीछेसे, जब हमने इस सिंची जैन प्रन्थमालाका प्रारम्भ किया और उसमें प्रवन्धचिन्ता-मणि-ही-को पहले हाथमें लिया तब, हमारी प्रार्थना पर उक्त मुनि श्रीपुण्यविजयजीने और और प्रन्थोंके साथ इस संग्रहको भी भेज दिया, जिसकी प्राप्ति हमें एक बहुमूल्य रत्नके जितनी ग्रीतिकर प्रतीत हुई। इस संग्रहको मुख्य रख कर ही हमने इस प्रसावित संग्रहका संकलन करना आरंभ किया।

इस प्रतिके कुल ३० पन्ने हैं। पहले पन्नेकी पहली पृंठी विना लिखी—कोरी रखी गई है। दूसरी पृंठीके दाहिने भागपर ३र्दे इंच चाटाई आर ४३ इंच लंबाई वाला, जिनप्रतिमाका एक बहुरंगी चित्र आलेखित है। पाठकोंको इस चित्रके दर्शनका प्रत्यक्ष लाभ हो इसलिये हमने, पन्नेके अतिरिक्त, चित्रकी पूरी नापका भी एक हाफ्टोन च्लॉक अलग वनवा कर उसकी छवी इसके साथ दे दी है। तदुपरान्त, १ ले, १२ वें और अन्तिम ३० वें पन्नेकी द्वितीय पृष्ठि (पूंठी) के चित्र भी हम साथमें दे रहे हैं जिससे इस प्रतिके अक्षर, पंक्ति और लिखावट आदिकी. पाठकोंको प्रत्यक्षवत्, ठीक ठीक कल्पना हो सके। प्रतिके पन्नोंकी छंवाई प्रायः १२ इंच और चौडाई ४३ इंच है। पंक्तियों और अक्षरोंका परिमाण सब पत्रोंमें एक-सा नहीं है। किसी पृष्ठ पर १३ पंक्तियां, किसी पर १४, किसी पर १५ और किसी किसी पर १९-२० तक हैं। अन्तिम पृष्टपर लिपिकर्ताने जो अपनी परिचायक पंक्ति लिखी है उसे हमने बन्थान्तमें, पृष्ठ १३६ पर, मुद्रित कर दिया है। इस पंक्तिके लेखसे माल्स होता है कि-'संवत् १५२८ वें वर्षके मार्गसिर मासकी १४ - विद या सुदि सो नहीं लिखा - सोमवारके दिन, कोरण्ट गच्छके सावदेव स्रिके शिष्य मुनि गुणवर्धनने, मुनि उदयराजके लिये इसकी प्रतिलिपी की'। लेकिन प्रतिका सायन्त अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि यह पूरी प्रति मुनि गुणवर्धनकी लिखी हुई नहीं है। इसकी लिखावट दो तीन तरहकी माळूम दे रही है। प्रथम पत्रसे लेकर १५ वें पत्रके प्रारम्भकी दो पंक्तियों तककी लिखावट किसी दूसरेके हाथकी है - और फिर उसमें भी दो तरहकी कलम माल्म देती है- और उससे आगेकी सव लिखावट मुनि गुणवर्धनके हाथकी है। प्रतिका लेख कुछ अन्यविश्वत और अगुद्धप्राय है। कहीं कहीं त्रुटित भी है। कई सलों पर लिपिकतीने अक्षरों तथा पंक्तियोंकी पूर्तिके लिये '.....'इस प्रकारकी अक्षरशून्य कोरी जगह रख छोडी है। ७ वें पन्नेकी दूसरी पृष्ठि पर तो पूरी ४-५ पंक्तियां ही इस प्रकार खाली रखी हुई हैं। इससे दो वातें सूचित होती हैं - एक तो यह कि यह पूरी प्रति एक साथ और एक हाथसे नहीं लिखी गई; इसका प्रारंभ किसी दूसरेने किया और समापन किसी दूसरेके हाथसे हुआ। दूसरी वात यह है कि इसका मूल आदर्श भी कोई एक ही संग्रह न होकर जुदा जुदा दो तीन संग्रह होने चाहिए। सिवा इसके, मूल आदर्शीमेंसे कोई प्रति ऐसी भी माछ्म देती है जो त्रुटित या खण्डित हो । ऐसा होना यह ज्ञात कराता है कि वह प्रति तालपत्रात्मक होनी चाहिए और उसका कुछ अंश नष्ट-भ्रष्ट और कोई पत्र विछप्त हो गया होना चाहिए। तालपत्र लिखित पुरातन वन्थोंमें प्रायः ऐसा होता रहता है। उनके उद्धार खरूप, जो पीछेसे कागज पर प्रन्थ लिखे गये, उनमें ऐसे खण्डित या ब्रुटित भागकी सूचना करनेवाले अनेक रिक्त स्थान, जिस उस प्रन्थमें देखे जाते हैं। इसके उपरान्त, यह प्रति भी वहुत जीर्ण दशाको प्राप्त हो गई है और प्रायः प्रलेक पन्नेका, वार्ये ओरका, ऊपरका कुछ हिस्सा, जो या तो आगसे कुछ जल गया हो या पानीसे कुछ सड गया हो, नष्ट हो रहा है। इससे हमको तत्तत् स्थलोंपर कुछ अक्षर या शब्द और भी अधिक छोड देने पडे हैं। पृष्ठ ११.१४.३४.३५.४९.४८.५० आदि पर जो पंक्तियोंके वीच वीचमें '......ंऐसे अक्षरच्युत विंदुमात्र वाले पंक्लंश रखे गये हैं वे इसी वातके सूचक हैं। इस प्रतिका आयुष्य अव वहुत नहीं है। इसके लिखनेमें जो स्याही प्रयुक्त हुई है उसमें क्षारकी मात्रा वहुत अधिक होनेसे वह कागजको पूरी तरह स्ना गई है। जितनी दफह इसे हाथ लगाया जाता है उतनी ही दफह इसके कागजके दुकडे खिरते जाते हैं और पन्ने टूटते जाते हैं। सिर्फ प्रारम्भके ५-७ पन्ने कुछ ठीक हालतमें हैं; पिछले पन्नोंकी स्थिति उत्तरोत्तर खराव हो रही है। §४. ₽ संग्रहका आन्तर परिचय

हम ऊपर लिख आये हैं कि, प्रस्तुत प्रन्थमें प्रवन्धों या प्रकरणोंका जो कम दिया गया है वह मूल संप्रहोंके कममें नहीं है। यहां पर हमने उनको प्र० चिं० के कममें मुद्रित किया है। मूल संप्रहोंमें, वे, इससे भिन्न रूपमें, आगे पीछे, लिखे हुए हैं। प्रस्तावित संप्रहका कम कैसा है, और कौन प्रकरण किस पत्रेमें, कहांसे प्रारंभ होता है और कहां समाप्त होता है, इसका दिग्दर्शन करानेवाली सूची नीचे दी जाती है जिससे संप्रहगत प्रवन्धकम, और उसका आन्तरिक परिचय भी, पाठकोंको ठीक ठीक हो जायगा।

${f P}$ संदक्त प्रतिमें हिखित प्रकरणानुक्रम			प्रस्तुत यन्थमें मुद्रित-क्रम			
	प्रयन्थनाम		पत्र. पृष्टि. पंक्ति	प्रवन्ध	ांक प्रकरणांक	् पृष्टांक
१ :	'पादलिप्ताचार्य प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	รร ร รร. ระ	0	•	•
ર્ '	र्वस्थावक प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	રૂ૧૧૪ ५૨ દ	•	•	•
Ş	उज्जयन्तर्तार्थआत्मकरण प्र०	∫ प्रा॰ (स॰	५२ ६ ६११२	86	§ २२१	?८- ??
S	मुञ्जराज प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	६११२ ७२ ६	Ġ,	§ २२–§ २३	१३–१५:
Ġ,	अमारिविपये कुमारपाल प्र०	{ प्रा॰ स॰	७२ ७ ८३ ५	२६	₹ ⋝ {	४१–४२
e,	राणकआंवड प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	८१ ५ ९२ ७	२५	१८१ - १८१	₹ ९ −४१
૭	रामराज्योपरि कथा [†]	{ प्रा॰ { स॰	९२ ७ १०१ ७	*† १	११२	८-९
e-0'	रैवततीर्थोद्धार तथा पाज प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	303 v 30390	२२– २३	<i>६३—५६३</i>	₹४
१०	आरासणसत्कनेमिचेत्य प्र०	{ प्रा॰ { स॰	१०२१० १११ ७	१७	§ ५६	३०–३१
११	रेंचततीर्थ प्रयन्ध	{ प्रा° { स°	999 ७ 99२ ३	४७	§ २१ ९	60
१२	फलवर्द्धिकातीर्थ प्रवन्ध [‡]	{ प्रा॰ { स॰	११२ ३ ११२ ९	१८	§ ५७	३१
१३	पृथ्वीराज प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	่งงงง งงง ง	४०	<i>११९८-५२</i> ००	८६–८७
१४	जयचन्द् प्रयन्ध	{ प्रा॰ { स॰	૧૨૨ ૬ ૧૪૧ ૯	४१	§ २०२–§ २०५	66-90
१५	शञ्जुयोद्धार प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	१४१ ८ १५१ २	५०	§ २२२–§ २२३	६०ं-१००
१६	मंत्रियशोवीर प्रवन्ध	{ प्रा∘ { स∘	૧५૧ ર ૧૬૧ ૭	३२	<i>११०९-११०</i>	४९–५१
१७	सातवाहन प्रवन्ध	{ प्रा॰ { सु॰	૧૬૧ ૯ ૧૬૨ ૬	२	§ १ ०	??
১১	ज्ञान्तिस्तव प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	૧૬૨ ૭ ૧૭૧ ૨	५६	§ २३२	१०७

[&]quot; ये दोनों प्रयन्ध, राजशेरार स्रिके प्रयन्धकोशमें के हैं। पिछ्छे प्रयन्धके अन्तमें उद्वेख है कि 'रत्नश्रावकप्रयन्धो विसर्जिताः (तः?) श्रीराजशेखरस्र्रिभिर्मछधारिगच्छीयैर्विरचितः।' प्रयन्धकोशमें आ जानेसे अर्थात् ही हमने इनको प्रस्तुत प्रन्थमें स्थान देना सनावर्यक समझा।

इसके बाद वे दो तीन पंक्तियां लिखी हुई हैं, जो प्रस्तुत संप्रहमें, विक्रमप्रवन्धके § १० वें प्रकरणमें हमने (प्रष्ट ५, पंक्ति १९-२३) दीं हैं। इसमें प्रारम्भकी पंक्ति 'अन्यदा एकं पण्डितं द्विजं कणावचयं कुर्वाणं विक्रमादित्यः प्राह-।' इस प्रकार हैं; और दोनों गायाओं में इस्तर योजसा पाट-मेद भी नजर भाता है। इस प्रतिमें ये गाथाएं इस प्रकार हैं—

निअउअरपूरणिम असमत्था किं च तेहिं जापहिं। सुसमत्था जे न परोवयारिणो तेह(हिं)वि न किंचि॥१॥ तेह(हिं)वि न किंचि भणिए विक्रमराएण देवदेवेण। दिन्नं मार्यगसयं एगा कोडी हिरण्णस्स ॥२॥

[†] इस कथाके बाद, तिदराजकी स्तुतिविषयक निम्नलिखित सुप्रसिद्ध श्लोक लिखा हुआ है-

महालयो महायात्रा महास्थानं महासरः। यत्कृतं सिद्धराजेन क्रियते तन्न केनचित्॥१॥

^{ैं।} विक्रमके साथ सम्बन्ध ररानेवाले, जितने प्रकरण हमको इन संप्रहोंमें मिले, उन सबको हमने, इस प्रन्थमें, 'विक्रमप्रवन्ध' ऐया एक मुख्य किरोलेख दे कर, उसके भवान्तर प्रकरणोंके रूपमें सङ्गलित किया है। इसलिये यह 'रामराज्योपरि कथा'वाला प्रस्तुत प्रतिनियाप्रकरणभी, इस १ संख्याबाले सुख्य प्रवन्धके अन्तर्गत एक प्रकरण-राण्ड है। ऐसा ही आने भी वस्तुवाल आदिके प्रवन्धमें समझना चाहिए।

र्प प्रमन्थके बाद, एक वह खोक लिया हुआ है जिसमें, तिद्धराजने देवस्रिके कथनसे तिद्धपुरमें, एक चतुर्द्धारवाले जैन मन्दिरके मनपानेरा टोरा है। प्रस्तुत प्रन्यमें, वह शोक (फमीक ९६) पृष्ठ ३० पर, सुद्रित है।

१९	राबुज्जय माहात्म्य प्रवन्ध्र्॥ जिल्लाहरू	{ प्रा॰ { स॰	• १७१ ३ २०११४	* ३ ५	<i>११२२-</i> १४८	५८-६९
२०	[वस्तुपाल प्रवन्यान्तर्गत उत्तर भागां] ऌ्णिगवसही प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	२०११४ २०११८	· ×	×	५३ ^९
२१	मयूर सर्प प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	२०११८ २०२ ५	•	•	•
२२	मंत्रि उद्यन प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	२०२ ५ २११ ६	२०	१५०,–१ <i>६</i> ०	इ२
२३	वसाह आभड प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	ર૧૧ ધ ર૧૨ ર	२१	§ <i>६</i> १	इइ
२४	श्रीमाता प्रवन्ध	∫ प्रा॰ {स॰	२१२ २ २१२२०	३८	§ १९ ६	ሪያ
२५-	२६ तारणगढप्रासाद्रक्षण तथा	{ प्रा॰ { स॰	२१२२० २२२ ९	३०	§१०४- <u></u> ६१०५	১ %–68
	अजयपाल प्रवन्ध [ः]					
२७	वस्तुपाल प्रवन्ध					
	[१] आशाराज प्रवन्ध ^३	{ प्रा॰ { स॰	२२२ <i>.</i> १२ २२२१७	×	×	५३
	[२] वस्तुपाल प्रवन्धान्तर्गत पूर्वे भाग ⁴	{ प्रा॰ { स॰	२२२१८ २४२ ७	३५	<i>११७–</i> ११२२	५४-५८
	[३] वस्तुपाल प्रवन्धगत परिशिष्टात्मक अन्तिम वर्णन ⁵	त- { प्रा ॰ स॰	२४२ ७ २५११८	55	§ <i>१४९–</i> § <i>१५७</i>	६९–७१
२८	विधिविपयक उदाहरण	{ प्रा॰ { स॰	२५२ १ २६१ ७	५९	§ २ इं८	१०९–११०
२९	स्त्रीचरित्र प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	२६१ ७ २६२ २	१	e §	8
	[विक्रमचरित्रान्तर्गत]					

| इस प्रवन्धका समावेश वस्तुपाल प्रवन्धके अन्तर्गत होता है। यह इस जगह विना किसी पूर्वसंवन्धके यों ही ग्रह होता है। इसका आदि वाक्य 'श्रीशात्रुक्षयमाहात्म्यं लिख्यते' ऐसा है और उसके वाद, फिर वे सव पद्य लिखे हैं जो इस संग्रहमें १५७ से लेकर १६५ तकके कमांकमें दिये हुए हैं। इसके वाद, उसीके आगेके § १२३ वें प्रकरणवाला वर्णन चाल होता है जो आखिरमें § १४८ वें प्रकरणकें साथ, समाप्त होता है। यह एक प्रकारसे वस्तुपालप्रवन्धका उत्तरभाग है। पूर्वभाग आगे जा कर लिखा है, जो २७ वें प्रवन्धमें मिलता है।

¶ यह प्रवन्ध इस P संग्रहके अतिरिक्त Be संग्रहमें भी लिखा हुआ है, और वह कुछ जरा विस्तृत रूपमें है; इसलिये हमने प्रस्तुत श्रंथमें, उसीको मुख्य स्थान दिया है और इस प्रतिवाले प्रवन्धको उसकी पाद-टिप्पनीके रूपमें उद्धृत कर दिया है।-देखो पृष्ठ ५३ परकी पहली टिप्पनी।

1 इस प्रवन्धको हमने छोड दिया है। एक तो इसका सम्बन्ध, यों ही प्रवन्धिचन्तामणिगत विवयके साथ नहीं है; और दूसरा कारण यह है कि, प्रस्तुत प्रतिका वह पन्ना जिसमें यह प्रवन्ध लिखा हुआ है, एक किनारे पर इतना खिर गया है कि जिससे इसका पाठोद्वार करना सर्वथा अशक्य-सा हो गया है।

2 प्रतिमें तारणगढपासाद्रक्षणप्रवन्ध तथा अजयपालप्रवन्ध ये दोनों प्रकरण जुदा जुदा प्रवन्ध करके लिखे हैं। हमने इनको एक ही 'अजयपालप्रवन्ध' के शीर्षकके नीचे दो जुदा जुदा प्रकरणोंके रूपमें मुद्रित किये हैं।

3 'आशराजप्रवन्ध' वस्तुपाल प्रवन्ध-ही-का आदिम भाग होनेसे हमने इसे, उसी प्रवन्धके अन्तर्गत § ११६ वें अंकवाले प्रकरणके तौर पर रख दिया है। यह प्रकरण, इस प्रतिके सिवा Ba और Ps संज्ञक संग्रहोंमें भी मिलता है और वह कुछ विशेष स्पष्टतावाला है इस लिये हमने मुख्य स्थान उसको दे कर, इस प्रतिवाले उल्लेखको पाद-टिप्पनीमें प्रविष्ट कर दिया है। -देखो, वहाँ, पृष्ट ५३ परकी तीसरी टिप्पनी।

4 इसका प्रारम्भ, § ११७ वें प्रकरणके (पृष्ठ ५४, पंक्ति १२) "इतो व्याव्यक्षीयो राणक आना०" इस वाक्यसे होता है, और समाप्ति पूर्वोक्त शतुंजय माहात्म्यवाठे उल्लेखके (पृ० ५८, पंक्ति ११) पूर्ववता "तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति ।" इस वाक्यके साथ होती है।

े यह वर्णन, पृष्ठ ६९ पर सुद्रित, § १४९ वें प्रकरणके "अत्राग्नेतनः प्रवन्धः कथनीयः ।" इस वाक्यसे प्रारंभ होता है और पृष्ठ ७१ की ५ वीं पंक्तिमें मिलनेवाले "[सं०] १३०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।" इस टलेखके साथ समाप्त होता है ।

30	वलभी भंगप्रवन्य ⁶	{ प्रा॰ { सु॰	२६२ २ २ <i>э</i> १ १०	•	•		•
3.5	न्यायविषयक यशोवर्भन्यप्रवन्ध	य { प्रा॰ स॰	ર૭૧૧૦ ર૭૨ ૨	<i>७</i> ,७	§ २३२	१०७	-१०८
३२	लाखणराउल प्रयन्ध	{ प्रा॰ { स॰	२७२ ३ २८१ ९	५२	§ २२५ <u>−</u> ६ २२७) १०१-	-१०२
33	चित्रक्टोत्पत्ति प्रयन्ध	{ प्रा॰ (स़॰	२८ १ ९ २८२११	५३	§ २२८		१०३
źS	परोपकारविषयक उदाहरण	{ प्रा॰ { स॰	२८२११ २८२१८	ćo	§ २३६		११०
34,	उद्यमविपयक उदाहरण	{ प्रा॰ { स॰	२८२१८ २९१ ५	६१	§ २३७		११०
३६	दानविपयक उदाहरण	{ प्रा° स°	ર ુ૧ ધ રુષ૧૧ધ	६२	§ २३८		१११
ξO	अम्बुचीच नृप प्रवन्ध	∫ प्रा॰ (स॰	રવ…૧…૧ ષ રવ…ર… ક	6,6	§२३४		१०८
36	कुमारपालराज्यप्राप्ति प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	२९२ ४ ३०११५	२४	§ ७ <u>९</u> –§८०	३ ७-	-39
50	कर्णवाराविषयक उदाहरण	{ प्रा॰ { स॰	३०११५ ३०२११	६३	§२३९	१११-	-११२
४०	सोनलवाक्यानि'	{ श्रा॰ { स॰	३०२११ ३०२१७	•	§ ६४		३४
	पुष्पिकाछेखात्मक गाथाद्वय ^ध		•••	••	• •••	•••	१३६
	,, ,, पंक्तिद्रय°		•••	••		• • •	१३६

इस प्रकार ये ४० प्रयन्थ इस संप्रहमें संगृहीत हैं। इस सूचीके अवलोकनसे ज्ञात होता है कि प्रथमके दो प्रयन्थ, राजदोखर सूरिके प्रयन्थकोशमेंसे लिख लिये गये हैं, और ३० वां प्रयन्थ, सम्भवतः मेरुतुङ्ग सूरिके प्रयन्थिनतामणि प्रन्थमेंसे नकल किया हुआ है। इनके सिवा, कुमारपाल और विकमचरित्रके सम्बन्धवाले कुछ प्रकरण, इसमें ऐसे हैं जिनका प्रयन्थकोशगत तत्तत् प्रकरणोंके साथ बहुत घनिष्ट साम्य दिखाई देता है। विशेष करके निम्न सूचित प्रकरण तुलना करने योग्य हैं—

_	पुरातनप्रवन्धसंग्रह	प्रवन्धकोश
कुमारपालप्रवन्धान्तर्गत प्रकरण	§ ८ ३	§ ५ ८
विक्रमचरितान्तर्गत प्रकरण	§ १२	800

ये प्रकरण इन दोनों संप्रहोंमें, शब्द और अर्थ दोनों प्रकारसे, प्रायः समान प्रतीत होते हैं, लेकिन हैं ये मित्र

⁶ यह प्रयन्ध, प्रयन्धिचन्तामणिके, पृष्ठ १०७-९ पर सुद्रित, प्रकरणांक २०२-२०३ वाले इसी नामके प्रयन्धिके साथ शब्दशः भिलता है-और यहुन करके उसी प्रन्थमेंसे यह नकल किया गया है-अतः हमने इसे यहां पुनः सुद्रित करना निरर्थक समझा है।

⁷ विदराज जयसिंदिके इतिहासके साथ सम्यन्ध रखनेवाले सोनलदेवीके ये वाक्य, जो गूजरात और सीराष्ट्रमें, लोक गीतके रूपमें खूब प्रसिद्ध हैं और जिनके दान्दोंमें सिदराजके जीवनकी, घर घर गाई जानेवाली एक इतिहासानुश्चित, कलंकित कथा ओतप्रोत हो रही है, किना किसी विशेषोहेराके इस प्रतिमें, अन्तमें, लिखे हुए मिलते हैं। हमने इनको, सिद्धराजके समयके प्रकरणोंके अन्तमें, पृष्ठ ३४-पंक्ति ३० पर, एक गीण प्रकरणके टंगसे, कमांक ६ ६४ के नीचे, सुद्रित किये हैं।

S प्रस्तुत प्रन्यके प्रष्ट १३६ पर, प्रथम जो दो प्राकृत गाथाएं सुदित हैं, वे इस प्रतिमें, पत्र ३० की पहली पूंठी (प्रष्टि=पार्श्व) पर, रायसे नीचेकी पंकिमें लियी हुई हैं। पंकिके प्रारंभमें 'x' ऐसा चिह दिया हुआ है जिसका अर्थ होता है, कि यह पंकि, ऊपरकी किसी पंकिमें लियते लियते लियते एट गई अतः यहां नीचे (हांतियेमें) लिया दी गई है। लेकिन ऊपर किस जगह और कीन पंकिमें यह लिखनी रह गई इनका स्वक कोई चिह इस सारे पश्चेमें कहीं हिशाचिर नहीं होता। इसकी विशेष मीमांसा आगे चल कर की है।

⁹ इन दो पंष्पियोंमें हे, पहलीं में, कं 9४३० में खर्मवास प्राप्त करनेवाले किसी सावदेव सूरिका उक्षेत्र है। इसका पूर्वापर क्या सम्बन्ध है सो ठीरु मात्म नहीं देता। दूनरी पंष्पिमें लिपिक्तांका—जिसने इस प्रतिका कमसे कम उत्तरी हिस्सा लिख कर पूरा किया—समयादि सूचक निर्देश है। ये दोनों पंष्पियों नी प्रन्यान्तमें, पृष्ट १३६ पर सुदित हैं।

भिन्न-कर्न्न । हमारा अनुमान है, कि प्रवन्थकोशकी अपेक्षा प्रस्तुत प्रतिवाले इन प्रकरणोंकी रचना पुरातन है । राजशेखर सूरिने शायद कुछ थोडा वहुत भाषा-संस्कार करके इनको अपने प्रन्थमें सिन्निविष्ट कर लिया है । क्यों कि, प्रस्तुत संग्रहगत इन प्रकरणोंकी भाषा, अधिक लौकिक ढंगकी—परिष्कार विहीन और शिथिल सहपमें—हैं; और प्रवन्धकोशमें वह परिष्कृत और सुश्चिष्ट रूपमें है । अतः, इससे यह सूचित होता है, कि राजशेखर सूरिके पहले, किसीने, इन प्रकरणोंको, किसी प्रथमाभ्यासी विद्यार्थीके पढनेके लिये, इस प्रकारकी बहुत ही सीधी-सादी भाषामें लिखा, और फिर राजशेखर सूरिने उनमें उक्त प्रकारका कुछ संशोधन-परिमार्जन किया। प्रवन्धकोशके कर्ताने अपने पहलेकी कृतियोंमेंसे ऐसे कई प्रकरण ज्यों के लों, अथवा कुछ थोडा फेरफार कर, अपने ग्रन्थमें किस प्रकार सम्मिलत कर लिये हैं, इसकी कुछ आलोचना हमने उस प्रनथकी भूमिकामें की है ।

इसी प्रकार यदि, प्रस्तुत संग्रहके कुछ प्रकरणोंका मिलान, प्रवन्धिचन्तामणिगत उन उन प्रकरणोंके साथ किया जाय तो उनमें भी कुछ ऐसी शाब्दिक और आर्थिक समानता जरूर दिखाई देगी। यद्यपि वह समानता प्रवन्धकोशके जितनी विपुल और विशेषरूपमें नहीं है, जिससे यह स्पष्टताके साथ निर्णीत किया जा सके कि प्र० चि० के कर्ताने भी इस संग्रहके कुछ प्रकरणोंका अनुसरण किया है; तथापि उसके लिये कुछ अनुमान अवश्य किया जा सकता है। प्र० चि० प्रथित मुख्यराज प्रवन्ध, प्रस्तुत संग्रहलिखित उस प्रवन्धके साथ वहुत ही सदशता रखता है। इसी तरह कुछ और और प्रवन्धोंमें भी परस्पर कितनाक साम्य दिखाई देता है। निम्न सूचित प्रकरण इस दृष्टिसे मिलान कर देखने योग्य हैं—

प्रवन्धनाम	प्र० चिं०	प्रस्तुत यन्य
उदयन प्रवन्ध	§ ९०	<i>§</i> ५,९
रैवततीर्थोद्धार प्रवन्ध	१०७	§६२
[.] सोनलवाक्य	§ १०६	<i>६</i> ४
अंवड प्रवन्ध	७ इ५	१८१
अजयपांल प्रवन्ध	§ १७५	§ १०४

इस तुलनासे यह वात सूचित होती है कि-प्रस्तुत संप्रहमें कुछ प्रकरण या प्रवन्थ तो ऐसे हैं जो प्रवन्थचिन्तामणि या प्रवन्थकोशमेंसे लिखे हुए या उद्धृत किये हुए हैं, अतएव उनसे अर्वाचीन हैं; लेकिन कुछ प्रकरण ऐसे हैं जो उन प्रन्थोंसे भी पुरातन हो कर, उक्त प्रन्थोंके कर्ताओंने, शायद इन्हीं परसे अपने प्रकरण गुम्फित किये हों। यह वात तभी सिद्ध हो सकती है जब इसका प्रमाणभूत कोई उद्धेख इस संप्रहमें दृष्टिगोचर होता हों। प्रस्तावित प्रन्थके पृष्ट १३६ पर जो दो प्राकृत गाथाएं मुद्रित हैं वे, इस कथनके लिये, प्रमाणभूत कही जा सकतीं हैं। ये दोनों गाथाएं, इस संप्रहके ३० वें पत्रके प्रथम पृष्टमें, सबसे नीचेकी पंक्तिमें, हासियेमें लिखी हुई हैं। इसके प्रारंभमें '×' ऐसा चिन्ह दिया हुआ है जिसका मतलब होता है कि यह पंक्ति, उपर चाल् लिखानमें, लिखते समय, भूलसे छूट गई है जिससे इसको यहां पर हासियेमें लिखा गया है। लेकिन, उपर चाल् लिखानमें, यह किस जगह छूटी हुई है इसका सूचक कोई चिन्ह कहीं नहीं दिखाई देता। इससे यह निश्चिततया ज्ञात नहीं होता कि यह पंक्ति यथार्थमें किस प्रकरणके या प्रवन्धके अन्तमें होनी चाहिए; तथापि, जेसा कि इस संग्रहकी प्रथार दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इस अन्तिम पत्रके प्रथम पार्थ पर कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्ध समाप्त होता है, और उसके वाद कर्णवारा-विषयक उदाहरणभूत प्रवन्ध लिखा हुआ है। सो इस पंक्तिका स्थान, नियमानुसार, उक्त कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्धके अन्तमें होना चाहिए। परंतु, हमारा अनुमान है कि इसका वास्तविक स्थान, या तो उसके आगेके कर्णवारा प्रवन्धके अंतमें होना चाहिए या उसके वाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यस्प १०–११ प्राकृत पद्य लिखे हुए हैं उनके अन्तमें अंतमें होना चाहिए या उसके वाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यस्प १०–११ प्राकृत पद्य लिखे हुए हैं उनके अन्तमें

होना चाहिए। कहीं भी हों, लेकिन है वह पंक्ति इसी संबहके साथ सम्बन्ध रखनेवाली; इसमें कोई सन्देह नहीं है। इन गाथाओंका अर्थ है वह कि—"नागेन्द्र गच्छके आचार्य उदयप्रभ सूरिके शिष्य जिनभद्रने, मंत्री-श्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, विक्रम संवत् १२९० में, इस नाना-कथानक-प्रधान प्रवन्धावलिकी रचना की।"

इस उद्वेखसे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि प्रस्तुत संग्रहके लिपिकर्ताने जिन पुराने संग्रहों मेंसे ये सब प्रवन्थ नकल कियं उनमें 'नाना कथानक प्रधान प्रवन्धावित' नामका (या उसके सूचक वैसे ही किसी और नामका) एक संप्रह वह भी था जिसकी रचना, मंत्रीश्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, संवत् १२९० में उदयप्रभसूरिके शिष्य जिनभट्रने की थी। जिनभट्रकी इस नाना कथानकवाली प्रवन्धाविका स्वतंत्र अस्तित्व अभी तक और कहीं हमारे देखनेमें नहीं आया इससे यह पता नहीं लग सकता कि इस प्रवन्धावलिमें सब मिलाकर कितने कथानक थे और कान कान विषयके थे। प्रस्तुत संग्रहके लिपिकर्ताने, जैसा कि ऊपर दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इन प्रवन्धोंको कई भिन्न भिन्न प्रन्थोंमेंसे लिखा है और सो भी असाव्यस्त ढंगसे। इससे इसमें पुराने और नये प्रवन्धोंका एक साथ संमिश्रण हो कर उनकी एक तरहसे खिचडी वन गई है, जिससे यह जानना या निश्चय करना भी कठिन-सा हो गया है कि, इसमें उक्त गाथा-कथित जिनभद्रके रचे हुए प्रवन्ध कितने और कौन कीन हैं; तथा उसके पीछेके कितने और कीन कीन हैं?। तथापि भाषा और रचना शैलीका सूक्ष्मतया निरीक्षण करने पर इसमेंके कितनेएक प्रकरणोंका कुछ कुछ विश्रेषण या पृथकरण किया जा सकता है। पूर्वोक्त राजदीखर सूरिके रचे हुए जो पादलिप्ताचार्य और रत्नश्रावक नामके दो प्रवन्ध इसमें संगृहीत हैं उनकी तथा प्रवन्धचिन्तामणिमेंसे नकल किये नये वलभी भंग प्रयन्धकी भाषा, और और प्रयन्धोंकी भाषासे विल्कुल अलग पड जाती है। मंत्रियद्योवीर प्रवन्ध और वस्तुपाल-तेजःपाल प्रवन्ध-ये दोनों प्रकरण भी किसी दूसरेकी कृति होने चाहिए। क्यों कि इन दोनोंमें वर्णित कितनीक वस्तु-घटनाएं संवत् १२९० के पीछेकी हैं। यशोवीर प्रवन्धमें, संवत् १३१० में जलालुद्दीन सुस्तान द्वारा, मारवाड अन्तर्गत जालोरके दुर्ग सुवर्णगिरिपर किये जानेवाले आक्रमणका उक्षेय हैं; और इसी तरह, वस्तुपाल प्रवन्धमें, संवत् १३०८ में होनेवाले मंत्री तेजपालके मरणका निर्देश है। अतः ये दोनों प्रयन्य अर्थात् ही जिनभद्रके वाद की रचना है । इनके अतिरिक्त, और सब प्रवन्ध, यदि उक्त जिनभद्रकी कृतिस्प मान लिये जांय तो उसमें कोई वायक प्रमाण हमें नहीं दिखाई देता।

§ ७. Р संग्रहके कुछ महत्त्वके प्रवन्ध

इस संमहमं, कुछ प्रवन्ध, ऐतिहासिक हृष्टिसे वहे महत्त्वके हैं । पृथ्वीराजप्रवन्ध (१३), जयचन्द्रप्रवन्ध (१४), मंत्रि यशोचीरप्रवन्ध (१६), वस्तुपालतेजःपालप्रवन्ध (१९, २०, २७), मंत्रिउदयनप्रवन्ध (२२), वसाह आभडप्रवन्ध (२३), अजयपालप्रवन्ध (२५-२६) और लाग्वणराउलप्रवन्ध (३२) आदि प्रकरणोमें इतिहासोपयोगी जो सामग्री मिलती है वह वहुत ही विश्वसनीय और विशेषत्ववाली है। इसका विशेष उत्पापेद करना वहां अप्रासंगिक है। इस प्रन्थके अगले भागोंमें उसका यथेष्ट अवलोकन और आलोचन आदि करनेका हमारा मंकल्प है ही।

एम यहां पर, एक वात पर विद्वानोंका लक्ष्य आकर्षित करना चाहते हैं; और वह बात यह है कि इस संग्रह गत एथ्वीराज और जयचन्द विषयक प्रयन्थोंसे हमें यह ज्ञात हो रहा है, कि चन्दकवि रचित पृथ्वीराजरासों नागक हिन्दीके सुप्रसिद्ध महाकाव्यके कर्त्तृत्व और कालके विषयमें जो, कुछ पुराविद् विद्वानोंका यह मत है कि 'वह मन्य नम्या ही बनायटी है और १७ वी सदीके आसपासमें बना हुआ है' यह मत सर्वथा चत्य नहीं है। इस मंग्रहके उक्त प्रकरणोंमें जो ३-४ प्राञ्चन-भाषा पद्य [पृष्ट ८६, ८८, ८९ पर] उद्भृत किये हुए मिलते हैं, उनका

पता हमने एक रासोमें लगाया है और इन ४ पद्योंमें से ३ पद्य, यद्यपि विकृत रूपमें लेकिन शब्दशः, उसमें हमें मिल गये हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि चंद किव निश्चिततया एक ऐतिहासिक पुरुष था और वह दिक्षीश्वर हिंदुसम्राद पृथ्वीराजका समकालीन और उसका सम्मानित एवं राजकिव था। उसीने पृथ्वीराजके कीर्तिकला-पका वर्णन करनेके लिये देश्य प्राकृत भाषामें एक काव्यकी रचना की थी जो पृथ्वीराजरासोके नामसे प्रसिद्ध हुई। हम यहां पर, पृथ्वीराजरासोमें उपलब्ध विकृत रूपवाले इन तीनों पद्योंको, प्रस्तुत संग्रहमें प्राप्त मूल्क्षपके साथ साथ, उद्भुत करते हैं, जिससे पाठकोंको इनकी परिवर्तित-भाषा और पाठ-मिन्नताका प्रसक्ष बोध हो सकेगा।

प्रस्तृत संग्रहमें प्राप्त पद्य-पाठ।

अगहु म गिह दाहिमओं रिपुरायखयंकर, क्ह मंत्र मम ठवओं एड्ड जंत्र्य(प?)मिलि जग्गर । सह नामा सिक्खवउं जइ सिक्खिवेउं वुज्झई, जंपइ चंदवलिहु मज्झ परमक्खर सुज्झइ । पहु पहुविराय सइंभरिधणी सयंभरि सउणइ संभरिसि, कईवास विवास विसट्टविणु मिन्छवंधियद्दओं मिरिसि ॥ —पृष्ठ वही, प्यांक (२०६).

त्रिण्हि लक्ष तुपार सवल पापरीयहं जसु हय, चऊदसय मयमत्त दंति गर्जात महामय। वीसलक्ख पायक सफर फारक घणुद्धर, ब्ह्सह यह वलु यान संख कु जाण्ड तांह पर। छत्तीसलक्ष नराहिवइ विहिविनडिओं हो किम भयड, जइचंद न जाण्ड जब्हुकइ गयड कि मूड कि धरि गयड॥

—पृष्ठ ८८, पद्यांक (२८७).

पृथ्वीराजरासीमें प्राप्त पद्य-पाठ।

एक वान पहुमी नरेस कैमासह मुक्यों ।
उर उप्पर थरहून्यों बीर कर्ष्वतर चुक्यों ॥
वियो वान संघान हन्यों सोमेसर नंदन ।
गाढों करि नित्रह्यों पनिव गड्यों संमरि धन ॥
थठ छोरि न जाइ अभागरी गाड्यों गुन गृहि अग्गरी ।
इम जंपे चंद्वरहिया कहा निघट्टे इय प्रलों ॥
—रासो, पृष्ठ १४९६, प्रय २३६०

सगह मगह दाहिमों देव रिपुराइ पर्यंकर ।
क्रूरमंत जिन करों मिले जंवू वे जंगर ॥
मो सहनामा सुनौ एह परमारथ सुज्झे ।
अप्पे चंद विरद्द वियों कोइ एह न बुज्झे ॥
प्रथिराज सुनवि संभरि धनी इह संभित संभारि रिस ।
कैमास विलिष्ठ वसीठ विन म्लेच्छ वंघ वंघ्यों मरिस ॥
—रासो, पृष्ठ २१८२, पद्य ४७६.

असिय रूप तोपार सजड पप्पर सायद्द ।
सहस हस्ति चवसिट्ठ गरुअ गज्ञंत महावर ॥
पंच कोटि पाइक सुफर पारक धनुद्धर ।
जुध जुधान वर वीर तोन वंधन सद्धनमर ॥
छत्तीस सहस रन नाइवौ विही त्रिम्मान ऐसो कियौ ।
जैवंद राइ कविचंद कहि उद्धि बुद्धि के घर रियौ ॥
—रासो, एष्ठ २५०२, पव २१६.

इसमें कोई शक नहीं है कि पृथ्वीराजरासो नामका जो महाकाव्य वर्तमानमें एपलव्य है उसका बहुत वढा भाग पीछेसे बना हुआ है। उसका यह बनावटी हिस्सा इतना अधिक और विस्तृत है, और उसमें मूल रचनाका अंश इतना अल्प और वह भी इतनी विकृत दशामें है, कि साधारण विद्वानोंको तो उसके बारेमें किसी प्रकारकी कल्पना करना भी कठिन है। माल्यम पडता है कि मूल रचनाका बहुत कुछ भाग नष्ट हो गया है और जो कुछ अवशेप रहा है वह भापाकी दृष्टिसे इतना श्रष्ट हो रहा है कि उसको खोज नीकालना साधारण कार्य नहीं है। मनभर बनावटी मोतीके ढेरमेंसे मुट्टीभर सचे मोतीयोंको खोज नीकालना जैसा दुष्कर कार्य है वैसा ही इस सवालाख फोक प्रमाण-वाले बनावटी पर्योके विशाल पुंजमेंसे चंद कविके बनाये हुए हजार पांच सौ अस्त-व्यक्त पर्योको ढूंढ नीकालना

कठिन कार्य है । तथापि, जिस तरह, अनुभवी परीक्षक, परिश्रम करके, लाख झूठे मोतीयोंमें से मुद्दीभर सचे मोतीयोंको अलग छांट सकता है उसी तरह भापाशास्त्र-मर्मज्ञ विद्वान् इन लाख वनावटी क्लोकोंमें से उन अल्पसंख्य क सचे पर्योंको भी अलग नीकाल सकता है जो वास्तवमें चन्द कविके वनाये हुए हैं।

हमने इस महाकाय प्रन्थके छुछ प्रकरण, इस दृष्टिसे, बहुत मनन करके पढ़े तो हमें उसमें कई प्रकारकी भापा और रचना पद्धितका आभास हुआ। भाव और भापाकी दृष्टिसे इसमें हमें कई पद्य ऐसे अलग दिखाई दिये जैसे छासमें मक्यन दिखाई पढ़ता है। हमें यह भी अनुभव हुआ कि काञीकी नागरी प्रचारिणी सभाकी ओरसे जो इस प्रन्थका प्रकारान हुआ है वह भापा-तत्त्वकी दृष्टिसे बहुत ही श्रष्ट है। उसके संपादकोंको रासोकी प्राचीन भापाका छुछ विशेष ज्ञान रहा हों ऐसा प्रतीत नहीं हुआ। बिना प्राञ्चत, अपश्रंश और तद्भव पुरातन देश्य भापाका गहरा ज्ञान रखते हुए इस रासोका संशोधन—संपादन करना मानों इसके श्रष्ट कलेबरको और भी अधिक श्रष्ट करना है। इस प्रन्थमें हमें कई गाथाएं दृष्टिगोचर हुई जो बहुत प्राचीन हो कर शुद्ध प्राञ्चतमें बनी हुई हैं; लेकिन वे इसमें इस प्रकार श्रष्टाकारमें छपी हुई हैं जिससे शायद ही किसी विद्वान को उनके प्राचीन होनेकी या शुद्ध प्राञ्चतमय होनेकी कल्पना हो सके। यही दृशा शुद्ध संस्कृत श्रोकोंकी भी है। संपादक महाशयोंने, न तो मिन्न भिन्न प्रतियोंमें प्राप्त पाठान्तरोंको चुननेमें किसी प्रकारकी सावधानता रखी है, न खरे-खोटे पाठोंका पृथकरण करनेकी कोई चिन्ता की है; न कोई शब्दों या पदोंका व्यवस्थित संयोजन या विश्लेषण किया गया है न विभक्ति अथवा प्रत्ययका कोई नियम ध्यानमें रखा गया है। सिर्फ 'यादशं पुत्तके दृष्टं तादशं लिखितं मया।' वाली उक्तिका अनुसरण किया गया माल्यन देता है।

माल्म पडता है कि चंद कि विकी मूल कृति बहुत ही लोकप्रिय हुई और इस लिये ज्यों ज्यों समय बीतता गया त्यों त्यों उसमें पीछेसे चारण और भाट लोग अनेकानेक नये नये पद्य बनाकर मिलाते गये और उसका कलेबर बढाते गये। कण्ठानुकण्ठ प्रचार होते रहनेके कारण मूल पद्योंकी भापामें भी बहुत कुछ परिवर्तन होता गया। इसका परिणाम यह हुआ कि आज हमें चंदकी उस मूल रचनाका अस्तित्व ही विलुत-सा हो गया माल्स दे रहा है। परंतु, जैसा कि हमने ऊपर स्चित किया है, यदि कोई पुरातन-भापा-विद् विचक्षण विद्वान्, यथेष्ट साधन-सामग्रीके साथ पूरा परिश्रम करे तो इस कुडे-कर्कटके बडे ढेरमेंसे चन्द कविके उन रलस्प असली पद्योंको खोज कर नीकाल सकता है और इस तरह हिन्दी भापाके नष्ट-श्रष्ट इस महाकाव्यका प्रामाणिक पाठोद्धार कर सकता है। नागरीप्रचारिणी सभाका कर्तव्य है कि, जिस तरह पूनाका भाण्डारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट महाभारतकी संशोधित आवृत्ति तैयार कर प्रकाशित कर रहा है, उसी तरह, वह भी हिन्दी भापाके महाभारत समझे जानेवाले इस पृथ्वीराजरासोकी एक संपूर्ण संशोधित आवृत्ति प्रकाशित करनेका पुण्य कार्य करें।

१६. (२) B संज्ञक संग्रह

 ३३ पत्रोंका अभाव है। ७५ मेंसे ४२ पत्रे विद्यमान हैं। पत्रोंका नाप, प्रायः लंबाईमें १०ई इंच और चौडाईमें ४ई इंच है। प्रत्येक पृष्ठि (पार्श्व) पर १५-१५ पंक्तियां लिखी हुई हैं। अक्षर सुवाच्य और लिखान प्रायः शुद्ध है। अन्तिम भाग अप्राप्य होनेसे, यह प्रति कव लिखी गई थी इसके जाननेका कोई निश्चित साधन नहीं रहा। प्रतिकी स्थितिको देखकर अनुमानसे यह कहा जा सकता है कि कमसे कम कोई च्यार सा वर्ष पहले की यह लिखी हुई जरूर होगी।

§ ७. B संग्रहका आन्तरिक परिचय

जैसा कि ऊपर सूचित किया गया है, इस संग्रहका अन्तिम भाग अनुपलन्ध होनेसे, इसका संग्रहकर्ता या संर्क-लनकर्ता कौन है और उसका क्या समय है इत्यादि वातें जाननेका कोई उपाय नहीं हैं। वैसे ही यह भी ठीक नहीं जाना जा सकता कि इस संप्रहमें सब मिला कर ऐसे कितने प्रवन्ध या प्रकरण संगृहीत थे। जो अन्तिम पत्र (७५ वां) विद्यमान है उसमें नीलपटवधप्रवंध दिखो प्रस्तुत प्रन्थका पृष्ठ १९, प्रवन्धांक १०, प्रकरणांक §३३] समाप्त हुआ है और आगे फिर देवाचार्यप्रवन्ध प्रारंभ हुआ है। नीलपटवधप्रवन्धका क्रमांक इसमें ६६ दिया हुआ है, लेकिन, जैसा कि आगे दी हुई सूचिसे प्रतीत होता है, उसका वास्तविक क्रमांक ७० होना चाहिए। यदि, इसके आगे लिखे हुए देवाचार्यप्रवन्धके साथ ही इस संप्रहकी समाप्ति होती हों तो, इस प्रकार इसमें कमसेकम ७१ प्रवन्धोंका संग्रह होगा। इस संग्रहगत प्रवन्धोंका आकार-प्रकार देखनेसे हमारा अनुमान होता है कि, उपदेशतरंगिणी अन्थके कर्ता रतमन्दिरगणीने, महामात्य वस्तुपालके कीर्तिदान प्रवन्धोंका वर्णन करते हुए, तद्विपयक विशेष ज्ञापनके लिये जिस २४ (चतुर्विशति) प्रवन्ध अथीत् प्रवन्धकोश नाम प्रन्थके साथ, (उसके जैसे ही विपयवाले) ७२ (द्वासप्तति) प्रवन्य और ८४ (चतुरशीति) प्रवन्य नामक जिन और दो प्रन्थोंका सूचन किया है, उन्हींमें से यह एक प्रन्य हों। यदि यह अनुमान सही हों तो, कमसेकम विक्रम संवत् १५०० के पहले इसका संकलन हुआ होना चाहिए। क्यों कि रत्नमन्दिर गणीके १६ वीं शताब्दीके प्रथम पार्मे विद्यमान होनेके प्रमाण पाये जाते हैं । अतः उनके सूचित ७२ या ८४ प्रवन्धोंके संग्रह अवदय ही उनके पूर्व की रचनायें होनी चाहिए। लेकिन हमारा यह अनुमान तवतक विशेष वलवान् नहीं माना जा सकता, जवतक, कहींसे इसका समर्थक और कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता।

§ ८. इस प्रतिमें प्रवन्धोंका संप्रह-क्रम कैसा है और हमने प्रस्तुत संप्रहमें उनको किस क्रममें मुद्रित किया है, इसका क्रमपूर्वक परिचय होनेके लिये यहां पर दोनों—लिखित और मुद्रित—संप्रहोंकी पृष्ठ-पंक्ति-आदि सूचक विस्तृत सृचि दी जाती है और उसके नीचे पाद-टिप्पनीमें जो कुछ विशेष ज्ञातव्य वस्तु माल्स दी, वह भी, सूचित कर दी गई है।

^{़ *} उपदेशतरंगिणीमें यह उहेख इस प्रकार हैं—'इत्यादि श्रीवस्तुपालकीर्तिदानप्रवन्धाः शतशो यथाश्रुताः खयं वाच्याः ८४, २४, ७२ प्रवन्धेभ्यः । [यशोविजयजनप्रन्थमाला, वनारस, में मुद्रित प्रति, पृ० ७९]

[†] यद्यपि रलमन्दिर गणीने, उपदेशतरिक्षणीमें, अपना समय-सूचक कोई उहेख नहीं किया है, डेकिन इन्हींका बनाया हुआ एक भोजप्रबन्ध नामका प्रन्य है उसके अन्तमें जो प्रशस्ति पद्य है उसमें, उस प्रन्थके बननेके समय आदिका निर्देश इस प्रकार किया हुआ है−

जातः श्रीगुरुसोमसुन्दरगुरुः श्रीमत्तपागच्छपस्तत्पादाम्युजपद्पदी विजयते श्रीनन्दिरस्नो गणी । तच्छिप्योऽस्ति च रस्तमन्दिरगणिभौजप्रयन्धो न्वस्तेनाऽसा मुँनि-भूँसि-भूत-शर्राभृत् संवत्सरे निर्मितः॥

इस पर्यसे ज्ञात होता है कि वि॰ सं॰ १५९७ में रलमन्दिरगणीने भोजप्रवन्धकी रचना-पूरी की थी। सिवा, इसके उपदेशतरंगिणीकी वि॰ सं॰ १५९९ के चैत्र शु॰ के दिनकी हस्तलिखत प्रति पूनेके, भाण्डारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट में, संरक्षित राजकीय प्रन्थसंप्रहमें विद्यमान है।

B संग्रक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम			प्रस्तु	त पुस्तकमें मुद्रित क	H -
प्रयन्धनाम		पत्र. षृष्टि. पंक्ति	प्रयन्धांक	प्रक र णांक	प्रष्टांक
१-७ [विनष्ट'॥ १-७॥]		0 0 0	•	•	• .
८ श्रीपुंजराजस्तत्पुत्रीश्रीमातावृ- त्तांतः'॥ ८॥	{प्रा∘ स∘	٠٩٩٦	•	٥	٠.
९ वराहमिहरप्रवंधः ॥ ९॥	{ प्रा॰ स॰	७११२ ८१ १	•	•	•
१० नागार्जुनोत्पत्ति-स्तंभनकतीर्थाव- तारप्रवंधः ॥ १०॥	{ध्रा° स°	८३ १ ८२११	0	٥	٥
११ भर्तृहरोत्पत्तिप्रवंधः ॥ ११ ॥	{ प्रा॰ स॰	८२१२ ९११०	•	•	•
१२ वैद्यवारभटप्रवंघः ॥ १२॥	{ प्रा॰ स॰	९११० ९२१३	•	•	•
१३ पादलिप्तसृरिप्रवंधः ॥ १३ ॥	{ प्रा॰ स॰	૧૨૧૨ ૧૧૨ ૪	४४	§ २१०–§ २१२	९२–९४
१४ मानतुंगाचार्यप्रवंधः॥ १४॥	{ प्रा॰ { स॰	૧૧૨ ૪ ૧૨૨૧૧	Ę	§ २४ – § २७	१५–१६
१५	{ प्रा॰ { स॰	१२२ १२ 	•	•	•
१६ अभयदेवसूरिप्रवंधः ॥ १६॥	{ प्रा॰ स॰	985 8	४६	§ २१४–§ २१५	९५–९६

¹ प्रारंभके १ से ६ तकके पत्र अनुपलब्ध होनेसे, १ से ७ तकके प्रयन्ध विनष्ट हो गये हैं । ये विनष्ट प्रयन्ध किस किस विषयके ये इसके जाननेका कोई साधन नहीं है।

7 चंमहक्त १३ यां पत्र अनुपलन्ध होनेसे इस प्रयन्धका विशेष भाग अप्राप्य है। विद्यमान १३ वें पत्रमें इस प्रयन्धकी निम्न उद्धृत पंक्तियां प्राप्त होती हूँ—

श्रीमद्वीरगणस्वामिपादाः पांतु यदादरात् । कपायादिरिपुवातो भवेत्रागमनक्षमः ॥ १ ॥

श्रीमालं नगरं, तत्र धूमराजवंशीयो देवराजो नृपः। तत्र विणग्सुख्यः शिवनागो महाविणजः। अन्यदा श्रीधरणें-द्राराधनात् परितोषे कलिकुंडकमं सर्विसिद्धिकरं अप्रनागकुलविषहरधरणेंद्रावाप्ततन्मंत्रगर्भे धरणेंद्रस्तोत्रं चके। तद्यापि जगति विषद्रम्। तस्य पूर्णलता विया। तत्त्पुत्रो वीरः। अनेककोटिद्रव्याधिषः। पित्रा सप्त कन्याः परिणा-यितः। ततः पितरि मृते वैराग्याप्तित्यमेव श्रीवीरवंदनाय याति। अन्यदा मार्गे संजातचौरोषद्रवेन खशालकगृहं गतः। तस्य माता गुज्यर्थमायाता। शालेन हास्याचौरेर्वारविनाशे......।

8 इस प्रयन्थकी प्रारंगकी ५-६ पंकियां, विनष्ट १३ वें पत्रमें विल्लप्त हैं टेकिन Bu संग्रहमें भी यह प्रवन्ध उपलब्ध होता है इस िये उसमें इसकी पूर्त हो जाती है। विल्लप्त पत्रमें, प्रारंगकी पंक्ति छे कर, प्रस्तुत मुद्रित संग्रह [ए० ९५] की पंक्ति १४ वीमें आये हुए 'नवाहानां पृत्ति' राज्य तकका पाठ चला गया है।

² यह यत्तांत प्रयन्धिचन्तमणि गत इसी नामके प्रयन्धके साथ [हमारी आवृत्तिके पृष्ठ १०९-११०; प्रकरणांक २०४-२०५] प्रायः इन्द्राः निल्ता हुआ है। इससे संभव है, कि इसके संप्राहकने यह प्रयन्ध उसी प्रन्थमें से नकल किया हो। संभव कहनेका कारण यह हैं कि इन दोनोंने ययि पाठकी समानता प्रायः शन्द्राः मिलती हुई है, तथापि, किचित्, किंचित् प्रकारका पाठमेद भी मिलता है; और यह पाठमेद उससे प्रस्त प्रकारका है जो प्रयन्धिचन्तामणिकी अन्यान्य सब प्रतियोंमें मिलता है।

³⁻⁶ ये चारों प्रयंघ भी प्रयन्धिचन्तामणि स्थित उन्हीं नामोंके प्रयन्धोंकी प्रायः शब्दशः नकल हैं। इनका क्रम भी वैसा ही है जैसा प्र• चि॰ में है। [देराो, हमारी आयृत्तिके प्रग्नंक ११८ से १३२; जीर प्रकरणांक १२१८ से १२२४ तक] इनमें भी उसी प्रकारका कुछ पाठभेद मिलता है जो उत्तर वाली टिप्पनीमें स्चित किया गया है। प्र॰ चि॰ स्थित वराहमिहर प्रयन्धमें जो दो पद्य मिलते हैं [पद्यांक २६१-२६२] वे इस संप्रहमें नहीं हैं।

१७	ऋषिदत्ताकथानकम् ^¹ ॥ १७ ॥	{मा° स॰	१४२ ५ १६२१२	•	•	•
१८	क्रमारपालपूर्वभवप्र०॥ १८॥	{ प्रा॰ स॰	१६२ १३ १७२ २	२८	१८६	88
१९	मोरनागप्रवंधः ॥ १८*॥	{ प्रा॰ स॰	१७२ इ १७२ ६	•	•	•
२०	मदनब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीति- प्रवंधः ॥ १९ ॥	{प्रा∘ स∘	१७२ ६ १८२११	१५	§५१−§५२	२४–२५
२१	श्रीमाताप्रवंधः॥ २०॥	{ प्रा॰ स॰	१८२१२ १९११४	३८	§१९६	ሪሄ
२२	विमलवसतिकाप्रवंधः ॥ २१ ॥	{ प्रा॰ सं॰	१९१६ २०१ ६	३३	१११२-११३	५१–५२
२३	छ्णिगवसहीप्रवंघः ॥ २२ ॥	{ प्रा॰ स॰	२०१ ६ २०२ १	३४	१११४	५२ –३
२४	भोज-गांगेयप्रवंधः [॥ २३†॥]	{ प्रा॰ स॰	२०२ १ २०२१२	११	४ ह	२०
२५	भोजदेव-सुभद्राप्रवंधः ॥ २४॥	{ प्रा॰ स॰	२०२१२ २११ ५	१२	§ ३५	२०
२६	घाराध्वंसप्रवंघः॥ २५॥	{ प्रा॰ स॰	२११ ५ २१२ ११	१३	১ 8− <i>0</i> 8 §	२३–२४
२७	सिद्धराजीदार्यप्रवंधः'।	{ प्रा॰ स॰	२१२११ २२१ १	१४	§ 89-40	२४
२८	देव्यम्वाप्रवंधः॥ २५ ॥	{प्रा॰ स॰	२२१ २ २२१ ९	ያሪ	§ २२०	९७-९८
२९	विक्रमार्कसत्त्वप्रवंधः॥ २६॥	{ प्रा॰ स॰	२२१ १० २३१ ७	१ **	§ १− ₹	१–२
ξo	दरिद्रऋयप्रवंधः ॥ २७° ॥	{ प्रा॰ स॰	२३१ ७ २३२ २	"	88	२
३१	वीकमयृतकारप्रयंधः ॥ २७ ॥	{ प्रा॰ स॰	२३२ २ २४१ ९	"	§ લ	३
३२	स्त्रीसाहसप्रवंधः ॥ २८ ॥	{ प्रा॰ स॰	રૄ૧ ૧ રૄ૨ પ	"	§ ५	₹-8
३३	मनिमनुप्रयंधः ॥ २९ ॥	{ प्रा॰ स॰	२४२ ६ २४२११	8	§ ९	લ
३४	देहलक्षणप्रवंघः' ॥ ३० ॥	{ प्रा॰ स॰	२४२११ २५१ २	"	\$ &	४-५

¹ यह क्यानक पौराणिक ढंगका है। इसकी क्यायस्तुका, प्रस्तुत संप्रहके विषयके साथ किसी प्रकारका संबंध न होनेसे, हमने इसकी संप्रहके अंतर्भृत न रख कर, पृथक परिविष्टके रूपमें इसी प्रस्तावनाके अन्तमें मुद्दित कर दिया है।

² यह प्रयन्ध भी अनैतिहासिक होनेसे, इसको चाल कममें मुदित न कर, ऊपरके प्रकरणके साथ, परिविधके रूपमें दे दिया है।

^{*} प्रतिमें इस प्रयंघका कमांक भी, गलतीसे १८ ही दिया गया है। † इस प्रयंधका कमांक प्रतिमें लिखना रह गया है।

³ प्रतिभें प्रबंधका कोई नामामिधान नहीं दिया गया है। विर्फ अंतमें '॥ २४ ॥' ऐसा क्रमांक लिखा हुआ है।

⁴ प्रतिमें इस प्रवंधका भी कोई नाम निर्दिष्ट नहीं किया गया; और न खतंत्र प्रवन्धका स्चक क्रमांक ही दिया गया है। इससे प्रतिके टेराानुसार, यह प्रकरण, इसके पूर्वके धाराष्वंस प्रवंधके परिशिष्टके जैसा माछम देता है।

⁵ इसका फमांक भी गलतीसे '॥ २५ ॥' दिया गया है। ऊपर धाराध्वंसप्रवंधका भी यही अंक है।

^{**} विक्रमार्क राजाके विषयके जितने प्रकरण हैं उन सबको हमने "विक्रमार्कप्रवन्धाः" इस नामके एक ही मुख्य शिरोलेखके नीचे दे दिये हैं।

⁶ इन दोनों प्रवंधोंका भी कमांक एक-सा '॥ २० ॥ २० ॥' लिखा हुआ है ।

⁷ इस प्रबन्धके बाद वे दो पंकियां लिखी हुई हैं जो प्रस्तुत संप्रहके पृष्ठ ५ पर, प्रकरण §१० वेंमें मुदित की हुई हैं।

विक्रमपुत्र-विक्रमसेनसम्बन्धात्मकाः

	५ अभवार			_		
इंद	आद्यपुत्तलिकाप्रवंघः ॥ ३१ ॥	{ प्रा॰ स॰	રષ…૧… ષ રષ…૧…૧૨	55	§ ११ ¹	Q
इ६	द्वितीय ,, ,, [॥ ३२॥]	{ ग्रा॰ स॰	२५११२ २५२ १	55	2 55	લ્
छड़	तृतीय ,, ,, ॥३३॥	{ प्रा॰ स॰	२५२ १ २६१ ४	53	8 53	६
३८	तुर्य ,, ,, ॥३४॥	{ श्रा॰ { स॰	२६ १ ४ २७ १ ५	"	4 55	5-6
¥0,	विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथा- प्रयंघः॥ ३५॥	{प्रा∘ {स∘	२७१ ५ २७२ ६	"	§ १२	८-९
४०	विश्वासघातकविषये नन्द्रपुत्र- प्रवंधः ॥ ३६॥	{ _{प्रा} ∘ स॰	२७२ ६ २८११०	इह	§ १८८	८१
४४	उद्यननृपप्रवंधः¹ ॥ ३७ ॥	{ प्रा॰ स॰	२८११० २९१११	•‡	•	•
४२	क्रमारपालकृतामारिप्रवंधः ॥३८॥	{ प्रा॰ स॰	२९१११ २९२ ६	२६	§ ८ ३	४१–४२
४३	क्रमारपालकृततीर्थयात्रा- प्रवंधः ॥ ३९ ॥		२९२ ७ ३०२ ६	२७	§ ८४–§ ८ ५	४२–४३
४४	मंत्रिसांतृप्रवंधः ॥ ४० ॥	{ प्रा॰ सं॰	રુંર દ રૂંગ૧ છ	१९	§ ५८	३१ –३२
8૯	सज्जनदंडपतिप्रवंघः ॥ ४१ ॥	{ प्रा० स०	ર્વ…૧… છ ર્વ…૧…૧૫	₹ १	३०१ ह	४९
8६	आभडवसाहप्रवंधः॥ ४२॥	{ प्रा∘ स॰	રે૧૧૧ષ્ રે૧૧ રે	२१	§ ६१	३३
৪৩	वस्तुपालप्रवंधः'; —वस्तुपालकाव्यानि ॥ ४३ ॥	{श्र∘ स॰	३२१ ४ ४२१ ५	३५	§ ११५–§ १४८	५३–६९
૪૮	न्याये यशोवर्मनृपप्रवंधः॥४४॥	{ प्रा∘ स∘	४२१ ५ ४२११५	<i>७</i> ७	§ २३३	30-009
86	अम्बुचीचनृपप्रवंधः ॥ ४५ ॥	{ प्रा॰ स॰	४२२ १ ४२२ ९	GC	§ २३४	२०१

¹ यह प्रयम्भ, राजशेरारस्रि रचित प्रयम्भकोशमें उपलब्ध इसी नामके प्रयम्भके साथ [हमारी भावित्तके पृष्ठ ८६-८८, प्रकरणांक §१०२-६१०५] प्रायः शन्दशः मिलता है। संभव है कि प्रयम्भकोशकारने यह प्रयम्भ इसी संप्रहमें से नकल कर लिया हो। इस संभवतामें वही फारण स्चित किया जा सकता है जो जगरकी टिप्पनी नं. २ में उक्षिखित किया गया है। प्रयम्भकोशवाले पाठमें और इस संप्रहवाले पाठमें कियत हिनित ऐसा पाठमेद उपलब्ध होता है, जो मात्र किसी लिपिकर्ताका किया हुशा न हो कर किसी विद्वान संप्रहकर्ताका किया हुआ प्रतीत होता है। और इसी लिये यह पाठभेद उन पाठभेदोंसे मिल है जो प्रयम्भकोशकी अन्याम्य प्रतियोंमें उपलब्ध होते हैं।

[🙏] प्रयम्भकोशमें उपलब्ध होनेसे इस प्रयम्भको हमने प्रस्तुत संप्रहमें पुनरीदित करना उचित नहीं समझा ।

² इमका प्रारंभ 'अथ श्रीवस्तुपालप्रवंधो यथाश्रुतः।' इस वाक्यसे होता है। फिर वह पय लिखा है, जो प्रष्ट ५३ पर,

प्रस्तृत धादरीमें, पत्र २४, ३५, ३६, शीर ३७ अनुपद्य हैं। लेकिन यह प्रबंध Br. P. शीर Ps. संप्रहोंमें भी किचित् पाठमेदोंके साथ, अर एए पर्णन-भेदोंके साथ, उपलब्ध होनेसे लुटित भागकी पूर्ति उन संप्रहों परसे कर ली गई है। इसका समाप्तिवाक्य इस प्रकार है-

[ं]॥ इति श्रीवस्तुपालप्रवंधो गुरुपारंपर्याहिखितो न पुनः खद्यद्या ॥'

इस पंधिके पाद, पर्खपालकी प्रशंसावाले मे २४ पर्य लिखे हुए हैं जो पुरु ७१ से ७३ पर, पर्यांक २२२ से २४६ तक सुदित हैं।

५० ⁻ पृथ्वीराजप्रवंधः¹ ॥ ४६ ॥	{ प्रा॰ स॰	४२२ ९ 	४०	<i>१९९-५२००</i>	८६–८७
५१–५२ [विनष्ट [ः] ॥ ४७–४८ ॥]		0 0 0)	0	•	•
५३ नाहडराजप्रवंधः³ ॥ ४९ ॥	{ प्रा॰ { स॰	- ४६१ ८	•	•	•
५४ लाखणराउलप्रवंधः⁴॥ ५०॥	{ प्रा॰ { स॰	४६१ ८	५२	§ २२५–२७	१०१-०२
५५–५८ [विनष्ट [°] ॥ ५१–५४ ॥]	•	0 0 0	•	•	•
५९ कुलचंद्रप्रवंधः ॥ ५५ ॥	{ प्रा॰ स॰	५०१ ८ ५०११६	6	§ ₹ १	१८-१९
६० भोजप्रवंघः ॥ ५६ (१) ॥	{ंग्रा॰ स॰	0 0 0	•	•	•

¹ ४३, ४४, और ४५ ये ३ पत्र विल्ला हैं इस लिये यह प्रवंध इस संप्रहमें भपूर्ण ही है। मुद्रित प्रष्ट ८६ की पंक्ति १२ में 'क्ष्ट मुक्तम् । इतः'' इस राब्दके साथ, आदर्शका ४२ वां पत्र समाप्त होता है।

.....व्याहृतम्-भवान् किमपि स्परिति । तेनोक्तम्-न । तृतीयवेलायां मृतकेनोत्थाय योगिनः शिरिई छन्नम् । नाह्र्डेन स ज्वालितः । वहीं निक्षितः । स्वयं तटस्थे प्रासादे स्थितः । प्रात्यवलोक्तयति, योगी ज्वलितो न वा । तावत्स्वर्णपुरुपं द्द्र्शं । तस्य चलात् क्रमेण राज्यं प्राप । अर्वुदाद्रौ नाह्र्डतटाकं कारियत्वा गर्जनप्रतोल्याः कपाटमादाय तत्र प्रचिक्षिपे । तथा जावालिपुरे राजधानिः छता । पंडितयक्षदेवस्य मातुलिमिति भिणत्वा भिक्तं कर्तुं प्रवृत्तः । एकदा कापि कटके गतस्तत्र सर्वपरिकरो मारितः । मात्रा ग्रुद्धिमलभमानया पंडितः पृष्टः । भागिनेयस्य सारा न प्राप्यते । पं० उक्तम्-एकाकी वस्त्रं विना मध्यरात्रौ समेत्य गुकायां स्थास्यिति, तत्र चीवराण्यादाय जनः प्रेण्यः । स तत्र स्थितः । तस्य मिलितम् । वस्त्रपरिधानं कृत्वा मध्ये समायातः । मात्रा पंडितेनोक्तं कथितम् । तद्र हृष्टः । एकदा पंडितेनोक्तम्-वस्त ! असाकं योग्यं किमपि कीर्तनं कार्य । भूमिं द्र्ययत । पंडितेन भूमिर्द्शिता । तत्र नाह्डसरः कारितम् । पुनः पंडितो रुष्टः । चरणयोर्निपत्य राज्ञोक्तम्-अधुना कारियण्ये । तत्र द्र्शितायां भूमौ नाह्रवसहीति प्रासादः पं० यक्षदेवनाम्ना कारितः । एवं नमस्कारभभावाद् विपद् गता । सुवर्णपुरुषः प्राप्तः । स नाह्रडराज्ञा जावालिकुंडे निक्षिप्तः ॥ इति नाह्रडराजप्रवंधः ॥ ४९ ॥

4 मूल आद्शेंके ४७, ४८ और ४९ ये ३ पन्ने विद्यप्त हैं इसिलये इस प्रवन्धके समाप्ति-सूचक पत्रांकादि नहीं दिये गये। परंतु ४६ वें पन्नेमें जो इस प्रवन्धका अन्तिम शब्द उपलब्ध है उस परमे यह कहा जा सकता है कि अगर्छ पत्रकी पहली ही पंक्तिमें यह प्रवन्ध समाप्त हो गया होगा। यह अन्तिम शब्द 'जींद्राज' है जो मुद्रित प्रष्ठ १०२ की पंक्ति २८ में दृष्टिगोचर हो रहा है।

5 ५० वें पन्नेमें जो कुलचन्द्र प्रवन्ध उपलब्ध है उसका क्षमांक ५५ दिया हुआ है, इसलिये, जपरवाली टिप्पनीमें सूचित किये गये ४७, ४८, और ४९ इन ३ विनष्ट पन्नोंमें ५९ से ५४ तकके ४ प्रवन्ध विलुप्त हो गये हैं।

6 इस ५० वं पन्नेमं जो वर्णन विद्यमान है वह सब भोजप्रवन्ध विदयक ज्ञात होता है और उपर्युक्त कुलचन्द्र नामक प्रवन्ध मी टिसीका एक अवान्तर-सा प्रकरण है। मुख्य प्रवन्ध जो भोज उप विद्यक है उसका ३६ वां पद्य, इस ५० वें पत्रकी पहली पंक्तिमें समाप्त होता है। अन्तिम पंक्तिमें जो पद्य पूर्ण होता है उसका कमांक ६० है। इससे यह विदित होता है कि, पिछले विनष्ट ३ पनोंमें से, कमसे कम ४९ वां पत्र तो इसी भोजप्रवन्धके वर्णनसे व्याप्त होगा, और कुछ गद्य पंक्तियोंके साथ १ से ३६ तकके पद्य उसमें होंगे। शेप ४७ और ४८ इन दो पनोंमें किस किस विदयके प्रवन्ध ये उसके जाननेका कोई साधन नहीं रहा। इसी तरह यह भोजप्रवन्ध भी कितना वडा होगा, त्या अगले कीनसे पन्नेमें समाप्त हुआ होगा; उसके ज्ञानका भी कोई उपाय नहीं है। क्यों कि ५० के वाद, ७० तकके एक साथ २०, पन्ने अप्राप्य हैं। इन पन्नोंमें भोजप्रवन्धके अतिरिक्त और भी ३-४ प्रवन्ध विनष्ट हो गये हैं। ७९ वें पत्रमें जो 'सिद्धसेनदिवाकरप्रविवोध-प्रवन्ध' पूर्ण होता है उसका क्रमांक ६० दिया हुआ है।

² ऊपरवाली टिप्पनीमें स्चित किये मुतानिक यहां पर आदर्शके ३ पत्र विल्वप्त हो जानेसे पृथ्वीराजप्रवन्थके वादके दो बीर प्रवन्ध संपूर्णतः नष्ट हो गये हैं । वे प्रवन्ध किस विषयके थे इसके ज्ञानका कोई साधन नहीं है ।

³ विनष्ट पत्र ४५ में इस प्रवन्धका आदि भाग नष्ट हो जानेसे, और, इस B संप्रहके तिवा अन्य P आदि संप्रहोंमें इसकी प्राप्ति न होनेसे प्रतावित संप्रहके चाल्र कममें इसकी स्थान नहीं दिया जा सका। पत्र ४६ में इसकी सिर्फ निन्नोन्द्रत शेव पंक्तियां प्राप्त होतीं हैं।

६१-६३ [अनुपलग्ध ॥ ५७-५९ ॥]	000	•	•	0
६४ सिद्धसेनदिवाकरप्रतिवोध- प्रवंधः ॥ ६०॥	{प्रा॰ ~ ~ ~ स॰ ७११ ६	•	٥	0
६५ हरिभद्रसूरिप्रवंधः ॥ ६१ ॥	{ प्रा० ७११ ७ स० ७२११२	५४	§२२९–३०	१०३-०५
६६ सिद्धर्षिप्रवंधः'॥ ६२॥	र्रप्रा० ७२११३ स० − − −	५ ५	§ २३१	१०५-०७
६७ [विनष्ट॥६३॥]	000	•	•	•
६८ श्रीपालकविप्रवंधः ॥ ६४॥	{प्रा॰	0	•	•
६९ पड्दर्शनप्रयंधः॥ ६५॥	{ प्रा० ७५१ ९ स० ७५११४	९	§३२	१९
७० नीलपटवधप्रवंधः ॥ ६६॥	{ प्रा० ७५११४ {स० ७५२ ४	१०	§ ३३	१९
७१ देवाचार्यप्रवंधः ॥ ६७॥	र्मा० ७५२ ५ स०	१६	<i>६५३–</i> ६५५	२५–३०

¹ उपर्युहिरित टिप्पनीमें स्चित किये गये मुताविक इस प्रयन्धकी सिर्फ ५-६ पंक्तियां ही, विद्यमान पत्र ७१ में, उपलब्ध हैं; इसिटिये यह अपूर्ण प्रयन्ध प्रस्तुत संप्रहमें सम्मीलित नहीं किया गया।

तेजस्विवातसन्ये नभसि नयसि यत्रांशुपूरप्रतिष्ठाम् । असिन्तत्थाप्यमाने जननयनपथोपद्रवस्तावदास्तां सोद्धं शक्यं कथं वा वषुषि कल्लपतादोप एप त्वयैव ॥ ४॥

एकचक्षुर्विहीनोऽयं शुक्रोऽपि कविरुच्यते । चक्षुर्द्वयविहीनस्य युक्ता ते कविराजिता ॥ ५ ॥ नृपेणोक्तम्-किमपि परं पृच्छ्यताम् । भगवता समस्यापिता-'अन्ध ! कियन्ति वियन्ति भवन्ति ।'

'एकमनेकमिदं वियद्ासीन्मध्यमवाप्य घटप्रभृतीनाम् । तहत्तेषु घटादिषु नप्टेप्वन्घ ! क्रियन्ति वियन्ति भवन्ति ॥ ६॥

> पुनर्रापता-वक चट तपसे त्वं शाखिनि कापि सान्द्रे अय झटिति तटिन्याप्टिहिभस्त्वं तटानि । इह सरिस सरोजच्छन्ननीडे समंता-छिलतगतिरिदानीं रंस्यते राजहंसः॥ ७॥

भगवनुत्तारके गत्वा स्थानमार्जारयोरमेध्यं युगलान्वितं सरस्ति होमं प्रारेमे । देव्युवाच-रे ! मम द्रागरे रफोटकान् किमुत्थापयित । तेनोक्तम्-मया सप्त भवानाराधिता । पट्सु भवेषु स्तोकस्तोकमायुर्मत्वा सप्तमे पाहुन्यादायुप एवं याचिता 'यदहमजेयो भूयासं,'मयाऽत्र पत्तने श्रीदेवाचार्याणां पुरतस्तथा श्रीपालस्य पुरतो हारितम्। देव्याह-मया पत्तनं वर्जितमासीत्,कथं नु त्वमिहायातः । सनुपस्य छन्नं निःस्त्य गतः ॥ इति श्रीपालकवेः प्रवन्धः ॥६॥

4 प्रस्तुत B संप्रहमें, इस प्रवन्धनी तिर्फ वे ही ६ पंक्तियों विद्यमान हैं जो मुद्रित प्रष्ठ २६ की टिप्पनीमें दी गई हैं। आगेका भाग पहाँ है जिन्द होतानेसे राज्यित है। यह प्रवन्ध BR संप्रहमें भी, कुछ पाठमेद के साथ, उपलब्ध होता है इसिलये इसकी स्थानपूर्ति, उसी संपर्द परसे की गई है।

² ७२ के बाद ७३ बीर ७४ ये दो पत्र विद्धप्त हैं इसिलये यह प्रवन्ध भगले पत्रमें किस जगह समाप्त होता है सो भज्ञात है । इस आदर्शके तिवा Bn संप्रहमें भी यह प्रवन्ध उपलब्ध होता है इसिलये इसकी शेषपूर्ति वहीं से की गई है। इस प्रतिमें, यह प्रवन्ध, सुद्रित पृष्ठ १०६ की पंक्ति २४ में भाये हुए 'निवेदितः' शहूके साथ खण्डित होता है।

³ विद्यमान ७५ नें पत्रमें इस प्रवन्धकी नीचे सी हुईं सिर्फ अन्तिम ८ ही पंक्तियां उपलब्ध होतीं हैं। और सब विशेष भाग पिछले पिछम पत्रमें विनष्ट हो गया है, इसलिये इस त्रुटित प्रकरणको भी प्रस्तुत संप्रहके चाळ कममें स्थान नहीं दिया गया।

§९. (३) BR संज्ञक संग्रह

पाटणके सागरगच्छके उपाश्रयमें सुरक्षित यन्थ-भण्डारमेंसे हमें इस संग्रहकी प्राप्ति हुई है। भण्डारकी सूचिमें इसका नाम आशाराजाद्प्रियन्ध लिखा हुआ है। वर्तमान सूचिके मुताविक, इसका डिच्या नं० १८, और प्रति नं० ५० है। इसकी पत्रसंख्या कुछ ७ है। पत्रोंकी नाप छंबाईमें प्रायः १० इंच और चौडाईमें ४ई इंच है। इसमें सब मिला कर कोई २३ प्रवन्ध लिखे हुए हैं जिनमेंसे ५–६ प्रवन्धोंको छोडकर शेप सब प्रायः उपर्युक्त В संग्रहके साथ पूर्ण समानता रखते हैं। इस संग्रहका लिपिकती पंडित रविवर्द्धन गणि है। यद्यपि छेखकने इस प्रतिके छेखनकालकी सूचक कोई मिति आदि नहीं दी है—केवल 'लिखितं पं० रविवर्द्धनगणिभिः।' इतना लिखकर अपना नामनिर्देश मात्र किया है—तथापि इनके हाथके लिखे हुए बहुतसे ग्रंथ और पत्रादि पाटण वगैरहके भण्डारोंमें जो हमने देखे हैं और जिनमेंसे कुछ पर संवत् मिति आदिका भी उद्देख किया हुआ मिलता है, उससे इनका अस्तित्व विकमकी १८ वीं शताब्दिके पूर्व भागमें निश्चितत्या ज्ञात होता है। इस कारणसे, यह संग्रह कोई ढाई सो पौनेतीन सो वर्षका पुराना लिखा हुआ कहा जा सकता है। विशेपतया В संग्रहके साथ समानता रखनेसे, और पं० रविवर्द्धनका लिखा होनेसे इस संग्रहका संकेत हमने Ba अक्षरोंसे किया है। इसमें संग्रहित प्रवन्धोंके कमादिका सूचन करनेवाली संपूर्ण तालिका इस प्रकार है।

	-	~				
В	संद्यक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुक्रम		भर	तुत पुस्तक	में मुद्रित फ्रम	
	. प्रवन्धनाम	पत्र. पृष्टि. पंक्ति ${f B}$ र	प्रहका कर्मांक	प्रवन्धांक	प्रकर्णांक	पृष्टांक
१	· कपर्दियक्ष-जावडिप्रवन्ध	{ प्रा॰ १२ १ स॰ १२१७	•	५१	§ २२४	१००
२	आदाराजप्रवन्ध ^¹	{ प्रा० १२१७ { स० १२२१	•	३५	§११६	५३
3	†भर्तृहरोत्पत्तिप्रवन्ध	{ प्रा० १२२२ { स० २१ ३	११ -	0	•	0
8	मानतुङ्गसूरिप्रवन्ध	{ प्रा० २१ ३ { स० २१२५	१४	६	§ २४-§ २७	१५
Ģ	अभयदेवसूरिप्रवन्ध	{ प्रा॰ २१२५ स॰ २२१५	१६	४६	§ २१४-१ ५	९५
६	*मोरनागप्रवन्ध	{ प्रा० २२१५ { स० २२१८	१०	•	•	0
૭	ळ् णिगवसहीप्रवन्ध	{ प्रा० २२१८ { स० २२२५	२३	३४	§ ११४	५३
ሪ	अस्विकादेवीप्रवन्ध	{ प्रा० २२२५ { स० ३१ ३	२८	४८	§ २२०	९७
९	दरिद्रनरऋयप्रवन्ध	{ प्रा॰ ३१ ३ स॰ ३१११	३०	8	88	२
१०	्मनइ मन इति प्रवन्ध	{ प्रा० ३१११ { स० ३११४	३३	55	§ ९	Ģ
११	नागार्ज्जनप्रवन्ध	{ प्रा० ३१ १५ { स० ३२ ३	•	४३	§२०८-०९	९१
१२	महं सांतूप्रवन्ध	{ प्रा॰ ३२ ३ (स॰ ३२१२	४४	१९	§५८	३१

¹ इस प्रवन्धकी समाप्तिके वाद प्रतिमें यहां पर वे २ पद्य लिखे हुए हैं, जो प्रस्तुत पुस्तकके पृ० ३१, पद्यांक ९७-९८ के साथ मुद्रित हैं। इनमें भारासणके नेमिनाथ चैखकी प्रतिष्टाका वर्णन है।

[†] यह प्रवन्ध, प्रवन्धिचन्तामणिगत इसी नामके प्रवन्धकी प्रायः शब्दशः प्रतिकृति है इसलिये इसको प्रस्तुत संप्रहमें मुद्रित नहीं किया गया । देखो, ऊपर पृ० १२ की 3-6 वाली टिप्पनी ।

^{*} देखो, ऊपर पृ॰ १३ पर की गई इसी प्रवन्ध परकी टिप्पनी।

१३	वसाहआभडप्रवन्ध	∫ प्रा० ३२१२ { स० ३२२६	४६	२ १	<i>६६</i> १	३३
१४	न्याये यज्ञोवर्मप्रवन्ध	्रिया० हः३ ३ (स० हः३ ३	૪૮	७,७	§२३३ ·	१०७
१५	अंबुचीचप्रयन्ध	∫ प्रा० ४१ ८ { स० ४११४	४९	96	§ २३४	२०८
१६	द्यात्रिशद्विहारमतिष्टाप्रयन्ध	(प्रा० ४११९ (स० ४२ ३	•	२९	e S {	४४
१७	्रंव ण्यभद्दिप्रवन्धान्तर्गतप्रकरण	∫ प्रा० ४२ ४ } स० ४२ ९	0	•	٥	0
१८	सिद्धर्षिमवन्ध	{ प्रा० ४२१० { स० ५१ ६	६२	५ ५	§ २३१	१०५
१०	माघपण्डितप्रयन्ध	{ प्रा० ५१ ६ { स० ५२१३	•	૭	§ २८-३०	१७
२०	भोजपड्दश्निप्रयन्ध	प्रा० ५२१३ स० ५२१५	६५	9	§ ३२	१९
२१	देवाचार्यप्रयन्ध	{ प्रा० ५२१६ स० ६२२१	६७	१६	६५३-५५	२५
२२	फलवर्द्धितीर्थप्रयन्ध	{ प्रा० ६२२२ स० ६२२५	•	१८	§ ६ ७	38
२ ३.	-जिनप्रभसूरिप्रवन्ध	∫ प्रा० ७१ १ {स० ७२२०	•	٥	٥	•
§१०	.(४) G संज्ञक संग्रह	-				_

राजकोट (काठियावाड) निवासी जैन गृहस्थ श्रीयुत गोकुलदास नानजीभाई गान्धीके निजी पुस्तक संग्रहमेंसे यह प्रति हमें प्राप्त हुई है। गोकुलदास नामका सूचन करनेके विचारसे इस प्रतिका संकेत हमने G अक्षरसे किया है। इसकी पत्रसंख्या कुल १९ है, लेकिन वीचमें ८ के वादका १ पत्र विलुप्त हो गया है इसिलिये अब इसके १८ ही पत्रे विद्यमान हैं। ये पत्रे चौडाईमें १६ हैं इंच और लंबाईमें १२ हैं इंच जितने हैं। पत्रके प्रलेक पार्श्वमें १५-१६ पंक्तियां लिखी हुई हैं। लिखावट बहुत अच्छी है—अक्षर सुवाच्य और सुन्दराकार है। प्रति कहीं, कभी, पानीसे कुछ भींग गई माल्म देती है और इसिलिये किसी किसी पत्रेका कुछ कुछ हिस्सा एक दूसरे पत्रेके साथ चिपक जानेसे, कहीं कहीं कुछ अक्षर या शब्द नष्ट हो गये हैं। प्रस्तुत पुस्तकके पृष्ठ ३५ और ४५ आदिमें जो खण्डित पाठ दिया हुआ दिसाई देता है, वह इसी सवयसे है। प्रति अच्छी पुरानी है। लेकिन, खेद है कि लेखकके नामादिका कोई निर्देश नहीं गिलता। इसके अन्तमें जो पातसाहिनामाविल लिखी हुई है उससे इतना अनुमान किया जा सकता है कि, वि० सं० १४०७ के बाद, दिहीके वादशाह पैरोज (किरोजशाह) के राज्यकालमें यह लिखी गई होनी चाहिये।

यरापि, यह संग्रह एक प्रकारसे संपूर्ण ही है-आद्यन्तका कोई भाग खण्डित नहीं है, लेकिन, इसके पत्नोंपर जो गृलभृत कमांक लिखे हुए हैं उनसे स्चित होता है कि यह एक किसी वहुत वडी पोथीका एक छोटासा हिस्सा मात्र है। पत्नोंक ये मूलभृत कमांक प्रत्येक पत्नेकी दूसरी पूंठी (पृष्टि) पर, दाहिनी ओरके हासियेके मध्यभागमें, गेरूआ रंगसे रंगे हुए चंद्रक पर लिखे हुए हैं। इसमें प्रथम पत्रका यह कमांक १२६ है और अन्तिम पत्रका १४४।

[‡] मप्पभिति। एक प्रकरण इस संप्रहों लिया हुआ मिलता है लेकिन अन्यान्य संप्रहोंमें इस विपयका कोई प्रकरण गा पर्णन न होने हे हमने इसको मूल प्रन्थमें सम्मीलित नहीं किया। यप्पभिति सम्बन्धमें अनेक ऐसे छोटे वडे खतंत्र प्रवन्ध लिखे हुए भण्यारोंमें मिलते हैं, और इन सबका एक खतंत्र प्रथक् संप्रह करनेका हमारा संकल्प है। इसलिये प्रस्तुत संप्रहमें इस प्रकरणको केवल संप्रही दिखी टिप्पनीके परिशिष्ट रूपमें दे दिया है।

^{ा ि}नप्रभार्षिका सम्बन्ध प्रवन्धिनितामणि वर्णित न्यक्तियोंके साथ न होनेसे तथा विविधतीर्थवल्प नामक प्रन्य, जो इन्हींकी एक विशिष्ट एति हैं और इस प्रन्यमालों इतः पूर्व मूल हपसे प्रकाशित भी हो चुका है, उसके द्वितीय भागमें इनके विषयका समप्र साहित्य एकत्रित करनेका निर्णार है, इस तिमे, इस प्रवन्धि भी प्रन्यान्तर्गत नहीं दिया गया। परंतु संबद्धभावकी दृष्टिसे टिप्पनीके परिविष्टमें मुद्रित कर दिया गया है।

इससे ज्ञात होता है कि इस पोथीमें, इन पत्रोंके पहले, १२५ पत्रे और अवश्य थे। लेकिन जब तक वे कहींसे मिल न आवें तब तक, उन पत्रोंमें क्या लिखा हुआ था उसके जाननेका कोई उपाय नहीं है।

§११. G संग्रहका आन्तर परिचय

यह संग्रह, ऊपरके P. B. Br. संग्रहोंके जैसा कोई युसंकित या सुप्रियत ग्रन्थस्त्र नहीं है। यह एक प्रकारका, पुरानी कथा वार्ता विषयक संक्षिप्त टिप्पणोंका प्रकीर्ण संग्रह मात्र है, जो किसी विद्वानने अन्यान्य प्रन्थोंमें पढ कर या अन्य जनोंके मुखसे मुन कर निजकी स्मृतिके लिये लिख लिया है। इसमें, प्रारम्भमें जो विक्रमादित प्रवन्थ लिखा हुआ है वह एक मात्र किसी पुरातन लिखित-प्रवन्धकी अनुलिपि-ह्य है; और वाकी सब इस संग्रहके लिपिकर्ताका स्वयं किया हुआ संक्षिप्त और अञ्चवस्थित संचयन है। इसमें, विक्रमादित प्रवन्धको छोड कर कोई १३५-३६ कथा-यार्ताओंका संचय है। इसमें न किसी प्रकारका कोई कम है, न पूर्वापरका कोई सम्बन्ध है; न भापाकी संस्कारिता है, न वर्णनकी व्यवस्थितता है। एक ही व्यक्तिके विषयकी कोई वार्ता कहीं लिखी हुई है और कोई कहीं। इनको कुछ व्यवस्थित रूप देनके लिये हमने इन सबको अलग छांट छांट कर, प्रस्तुत पुस्तकमें, प्रवन्धचिन्ताम-णिगत विपयवर्णनके क्रममें संकलित की हैं। जैसे कि सिद्धराजके साथ सम्बन्ध रखनेवाली सब वार्ते सिद्धराजके वर्णनप्रसंगमें एकत्रित दे दी हैं और वस्तुपालके इतिष्टक्तके साथ सम्बन्ध रखनेवाली सव वार्ते सिद्धराजके साथ माध्यक कर दी हैं। वसे ही प्रकीर्ण या फुटकर जो दृष्टान्तादि हैं उन सबको अविद्याष्ट प्रकरणके रूपमें एक जगह संकलित कर दिया है (देखो, ष्ट. ११२ से ११५)।

् इस संप्रहमें ये सब कथा-वार्ताएं किस फममें लिखी हुई है उसका यथार्थ वोध होनेके लिये, P. B. आदि संप्रहोंकी सृचिके मुताविक इसकी संपूर्ण सृचि भी यहां पर, उसी तरह विस्तारके साथ दी जाती है।

G संक्षक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुक्रम					प्रस्तुत पुस्तकमें मुद्रित कम	
. प्रबन्धनाम		पन्न.	षृष्टि.	पंचि	प्रकरणांक	पत्रांक
†विक्रमार्कप्रयन्ध	{प्रा∘ स॰	१२६ १२७	3	3 B	§ ११	%- ८
†विक्रमादित्यप्रयन्ध्	{ प्रा∘ स॰	६२७ ६२८	3	दुष् दु०	§ १२	⟨ - °
१ जयसिंह्देवसभाक्षोभवृत्तान्त	स°	१२८	8	१२	१७२	३६
२ सभाक्षोभविषयक अन्यवृत्तान्त	स°	55	8	१६	§ २५२	११४
३ जीव-इन्द्रियसंवादद्यत्तान्त*	स°	53	Ś	2	•	0
ं ४ गूर्जरविद्वत्ताविपयक डामर-भोजसंवा	दस°	33	२	É	3	२१
५ अनुपमाकारितनन्दीश्वरप्रासादकथा	स°	"	5	११	<i>६१६५</i>	७६
६ भोजराज-सिद्धरसवर्णनवृत्तान्त	स°	33	ર	१५	१४३	२२
७ हेमसूरिमातामरणघृत्तान्त	स°	१२९	, १	8	९७ ७	₹9
८ वस्तुपाल-नोडासइद धनवर्णन	स°	73	8	१०	§ १५८	७इ
९ पृथ्वीराजमृत्युवृत्तान्त	स°	55	२	२	<i>६२०१</i>	८७
१० देवेन्द्रसृरि-क्रमारपालवृत्तान्त	स°	53	२	Ę	§ १० १	૪૭

[†] विक्रमिष्यक इन दोनों प्रयन्धोंके लिये इस संप्रहमें कमसूचक संख्यांक नहीं दिये गये हैं; इसके आगेके सब प्रकरणोंके साथ . १. २. ३. ४. आदि क्रमांक बरावर दिये हुए हैं। इससे माल्यन होता है कि ये दोनों प्रयन्थ किसी पुरातनकृतिके अनुलिपि मात्र हैं, और बाकीका सब लियान, इस संबद्धके लेयाकता निजका संकलन है।

^{ैं} इस कथाका विषय आध्यातिमक हो कर, प्रस्तुत प्रत्यके विषयके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रराता । इसलिये हमने इसको मूलमें प्रविष्ट नहीं की, लेकिन संप्रदुकी दृष्टिसे टिप्पनीके परिविष्टके रूपमें पृथक् दे सी हैं ।

११ वीसलदेवगीतिशक्षणवृत्तान्त	स॰ " २ ११	§ १ ७८	ं७९
१२ नागलदेवीगीतोपदेवावृत्तान्त	स° ,, २ १३	§ १७९	ଓଟ୍
१३ जगहूबसाहप्राप्तअश्ववृत्तान्त	स॰ १३० १ २	§ १८६	८०
१४ पृथ्वीपुरश्रेष्ठीवृत्तान्त‡	स्° ,, १ ४	٥	· . •
१५ गयणा-मयणा इन्द्रजालिकवृत्तान्त	स॰ ,, १६	§ ७०	ं ३६
१६ विक्रमरोगोत्पत्तिवर्णन	सः " १ ७	\$ १८	१०
१७ मयणहा पापघटवृत्तान्त	स° " ११०	§ ६८	. इह
१८ अभयदेवसूरिवृत्तान्त	स॰ ,, ११३	§ २४२	११२
१९ वलभी-पवनागमनवृत्तान्त	स° ", २ १	§ १९ ३	८३
२० अमरचन्द्रकविवृत्तान्त	स° " २ ८	. eo\$	96
२१ कच्छदेशीयजिणहाब्यापारीवृत्तान्त	स° " २ ११	§ २५३	११५
२२ यशोभद्रसुरिपारणावृत्तान्त	स° ", २१३	§ २५४	११५
२३ कर्णाटचपपुरुकेशिमृत्युवृत्तान्त	स॰ ", २१५	§ ६ ९	3 6.
२४ जगहूदानवृत्तान्त	स॰ १३१ १ ६	§१८७	८०
२५]	स° ,, १ ८		
२६ जगदेवदानवृत्तान्त+	स° ,, १ ११	3996	64
२७	स॰ "११३		
२८ सीनापण्डितावृत्तान्त	स॰ ,, २ १	§ ४०	२१
२९ हेमाचार्यग्रत्रज्ञिलावृत्तान्त	स॰ ,, २ २	§७८	হ্ব৩
३० भोजराजनमोविधानवृत्तान्त	स॰ ,, २ ४	§ ४ १	्रव
३१ कालीदाससमस्यापूर्तिवृत्तान्त	स॰ ,, २ ९	§ १७	१०
३२ नागलदेवी-मयणसाहारवृत्तान्त	स॰ ,, २ १६	§ १८१	<i>૭</i> ୧
३३ उदयप्रभसरखतीध्यानवृत्तानत	स॰ १३२ १ ३	§ १७ ०	७६
३४ कुमारपालराज्यप्राप्तिदाक्जनवृत्तान्त	स॰ " १ ६	§ ९०	४५
३५ कर्णमातादेमतिसृत्युवार्ता	स॰ ,, १ ७	§ ૪૯	२३
३६ भोजऋण्डलोत्कीर्णकाव्यवार्ता	स॰ ,, १९	§४२	२२
३७ हमस्याकरणकरणवत्तान्त	स॰ ,, ११४	\\	
३८ भोज-भीम-कर्णयुद्धवृत्तान्त	स॰ ,, ११७	§ ४६	२३
३९ लघुवारभटकृतौपिषेवृत्तान्त	स॰ " २ ३	§२१८	इ २ २ ९
४० वार भटजलोदररोगवृत्तान्त	स॰ " २ ६	६२१६	. ९६
४१ श्रीमातावृत्तान्त	स॰ " २ १०	§ १९७	SS

[📫] इस कथाका भी इतिहासके साथ कोई संपर्क न होनेसे, इसे भी टिप्पनीके परिशिष्टमें सुदित की है।

⁺ पदांक (२०१) के बाद जो ३ व व्यक्ति में दी गई हैं और जिनमें क्रमसे (२०२), (२०३), (२०४), के पदांक दिये हुए हैं पे ही दीन पश्चित में ये २५, २६, और २७ संस्था वासी कथायें समझनी चाहिए।

४२ वराहमिहिरवृत्तान्त	स° ,, २१३ ं.	§ २०ं७	. ९०
૪૨ [*]	स॰ ,, २ १४	•	0
४४ रामवनवासफलभक्षणवार्ता‡	स° ,, २१५	. , •	0
४५ घृतवसतिकाउत्पत्तिप्रवन्ध	स॰ १३३ १ १	§ १६६	७५
४६ हेमसूरि-वादि-शब्दच्छलवृत्तान्त	स° ,, १ ५	§ ७ ≒	ই ও
४७ यद्योधनव्यवहारिवृत्तान्त	स° ,, १ ११	§ २४३	११२
४८ मयणसाहारनासाच्छेदनवृत्तान्त	स° ,, १ १५	§ १८०	७९
४९ सारंगदेवप्रधानवृत्तान्त	स॰ ,, ११७	§ २४१	११२
५० सिद्धि-बुद्धियोगिनीवृत्तान्त	स° ,, २ २	१७१	इद
५१ सिद्धराज-सान्तृमंत्रीवृत्तान्त	स° ,, २ ११	§ ६६	\$6
५२ उन्मत्तप्रधानवृत्तान्त	स॰ ,, २ १४	६२४४	११३
५३ मित्रचतुष्कवार्ता	TO 2 25	§ २४५	११३
५४-६१ [विनष्टपत्रांक १३४ तमे नष्टा	एताः सर्वाः वार्ताः]	,	
६२ मुंज-भोज-यन्धमोक्षवृत्तान्त ×	स॰ १३५ १ ५	<i>६ इ ६</i>	२०
६३ भाग्यविपयकराजिलदृष्टान्त	स॰ १३५ १ ७	९२४ ६	११३
६४ भोजराज-दामरवृत्तान्त	स° " २ २	६ ३७	२१
६५ वाक्पतिराजकविवृत्तान्त	स° ,, २ ४	६२४०	११२
६६ रात्र्यन्धकथानक	स॰ ,, २ ९	<u>६२४७</u>	११३
६७ व्यवहारिस्रताकथानक	स° ,, २ १३	37	77
६८ चातुर्थिकज्वरवृत्तान्त	स° ,, २ १४	77	77
६९ काचमयपेटीवृत्तान्त	स° ,, २ १६	55	११४
७० राजपुत्रीकथानक	स° १३६ १ २	55	55
७१ भोजराज-खात्रपातकवृत्तान्त**	स° ,, १ ६	•	0

^{ैं} छिर्फ आधी पंक्तिमें इस ४३ वें प्रवन्धकी सूचना है। इसमें कीनसी वार्ता या कथाका सूचन है सो स्पष्ट ज्ञात नहीं होता। चो आधी पंतित लिखी हुई है वह इस प्रकार है**~**

"विवाद्यित्वा यः कन्यां ।। १ ॥ इति द्देतोर्जलिधभुक्तराजपत्नीसुतसपादलक्षद्वीपार्पणप्रवन्धः ॥ छ ॥ ४३ ॥"

. श्रीचित्रकृटपर्यते प्रथमयनवासे सीमित्रिणा यने भ्रान्त्वा वनफरान्यानीय श्रीरामदेवाग्रे मुक्तानि । तदा फरानि दृष्टा देवेन निगदितम्-

पृथिव्यामञ्जवूर्णायां वयं च फलकांक्षिणः।

सामित्रे ! नृनमसाभिः पात्रे दत्तं पुरा नहि॥ ४॥ ्र इस यतान्तका प्रारम्भका गुरू कथन, विनय पत्र १३४ में रह गया है इसलिये इसके प्रारंभमें......हेसी राण्डित भाग सूचक विदुराजि दी गई है।

सद्रान्धवाः प्रणयगर्भ [गिरश्च भृत्याः। गर्जन्ति दन्तिनियदास्तरलास्तरहा]

[🙏] प्रस्तुत प्रन्यमें उपयोगी न होनेसे इस वार्ताको भी हमने प्रन्धान्तर्गत नहीं किया । यह इस प्रकार है-

[🏄] अमयश, यह प्रतांत, मूल संप्रहमें मुदित होनेसे रह गया है, इसलिये, इसे यहां पर बद्धत कर दिया जाता है-अन्यदा श्रीभोजेन निशि साधोपरिस्थितेन निजराज्यस्य स्फार्ति विलोक्य गविंतेन प्रोक्तमिति-चेतोद्दरा युवतयः खजनोऽनुकृतः

७२ गृढमहाकालोत्पत्तिवृत्तान्त	स॰	55	۶.	११	§ १६	१०
७३+ जगदेवदानवृत्तान्त	स॰	":	8	१३	§ १९८ †· ·	८५
७७ वराहमिहिरवृत्तान्त	स॰	55	२	१	§ २०७	९०
७८ वारभटवैचवृत्तान्त	स॰	55	ર્	8	§ २१७	९६
७९ वीसलदेवचक्षुपीडावृत्तान्त	स॰	"	ર્	१०	§१८२	ं ७९
८० कुमारपाल-कालिंगीयकवृत्तान्त	स°	35	२	११	§ ९ ३	४६
८१ ,, द्विकलत्रव्यवहारिवृत्तान्त	स॰	"	२	१५	§ 9 8	55
८२ सोमेश्वरकृत वस्तुपालप्रशंसा	स°	१३७	१	Ę	§ १ ६१∧	૭૪
० 'सातवाहनसम्यन्धिगाथावृत्तान्त	स°	33	?	११	§ १९	११
८३ जलोदररोगि-आचार्यवृत्तान्त	स॰	"	१	१३	§ २४८	११४
८४ दिावतपोधनकवितावृत्तान्त	स॰	37	ξ	१६	§ १ ६	१०
८५ वस्तुपारुअन्सयात्रावृत्तान्त	स॰	55	२	२	§ १७५	૭૮
८६ कुमारपालदाकुनप्राप्तिवृत्तान्त	स॰	77	२	Ģ	\$46	४६
८७ कुमारपालराज्यनिवेशवृत्तान्त	स॰	55	२	१४	§ 9 8	5 7
८८ कुमारपाल-कडीतलारक्षवृत्तान्त	स°	८३८	8	२		४६
८९ कुलचन्द्रक्षपणक्वृत्तान्त	स॰	"	8	G	§ ३ ९	२१
९० क्रष्टरोगि-आचार्यवृत्तान्त	स°	55	१	१२	· § 286	११४
९१ साम्रद्रिकशास्त्रवेदिवृत्तान्त	स°	35	8	१४	§ १ ४	१०
९२ लाखाकफुल्लडवृत्तान्त	स॰	"	२	8	§ २ १	१२
९३ चनराजजनमृहत्तान्त	स°	55	२	१२	§ २०	"
९४ जयसिंहकृतधाराभंगवृत्तान्त	स॰	१३९	१	8	§ ६ ५	इंद
९५ ,, त्रिभुवनपालघातवृत्तान्त	स॰	"	8	છ	६७ ३	३६
. ^{९६} क्रमारपालखर्णसिद्धीच्छावृत्तान्त <i>े</i>	स°	"	8	७	§ ९ ७	४६
" सिद्धराजग्रणतुलनावृत्तान्त ∫		55	\$	ó	\$98	४७
९७ अम्याकारितपद्यावृत्तान्त	स°	"	8	<i>\$\$</i>	800	"
९८ अजयपाल-कपर्दिमंत्रीवृत्तान्तं	स॰	55	?	१३	 	४८

वारं वारं पदत्रयमिति पटयमाने दरिद्रोपहुतेनैकेन पण्डितेन खात्रपातं कुर्वता इति पिटतम्-"संमीलने नयनयोनिंखिलं न किञ्चित्।"

इत्युक्ते राजा घीरां द्त्वा प्रसादितः॥ ७१॥

⁺ गूल भादरीमें ७३, ७४ गीर ७५ ये फमाह छोट दिये गये हैं शीर ७२ के बाद ७६ का अंक दिया हुआ है। इसका फारण कुछ रामारामें नहीं भाता। क्या भूलसे ऐसा किया गया है या अन्य किसी विचारसे सो अस्पष्ट है।

[†] ए॰ ८५ पर जो जगदेव प्रयन्ध दिया हुआ है उसकी प्रथम किण्डिका मात्र ही [पंक्ति १० से १६ तक] इस कर्मांक वाळे यृत्तान्तका भाग है। शेव ३ कण्डिकार्ये जवर निर्दिष्ट २५, २६, २७, कर्मांक वाळे यृत्तान्तकी अंशभूत हैं।

र्म ए॰ ७४ परकी पंचा १८ से २६ तकका अंदा।

¹ इन गायाओंके साथ कोई कमांक नहीं दिया गया है।

[े] गृतमें इसका क्रमांक भी ९७ ही लिसा हुआ है और यह गलती आगेके सभी क्रमांकोंके साथ चलती रही है । इसी तरह आगे १०९ और ९९६ फ्रमांक भी दो दो दफा लिसे हुए हैं।

स°

स॰

स°

स°

स॰

स°

स॰

स°

स°

स°

स°१४०

15

55

स॰ १३९ २

२

२ १६

१ ११

२

O

१०

१४

१

Ę

G

Ę

Ģ

9

११

९९ आम्बङ्कृतमहिकार्जनवधवृत्तान्त

. १०३^६ हेमाचार्योक्तकुमारपालमृत्युवृत्तान्त स॰

१०० आम्यडोचारितप्रतिज्ञावृत्तान्त

१०४ क्मारपालमृत्युप्रसंगृहत्तान्त

१०६ विक्रमादिख-कार्पटिकवृत्तान्त

१०८ ख्लकृतवस्तुपालनिन्दावृत्तान्त

१०९ भोजराजप्रदत्तवैद्यग्रासवृत्तान्त

११० लघु-वृद्ध-वाग्भटवैद्यवृत्तान्त

११२ वस्तुपालमंडितचचरवृत्तान्त

१११ षड्दर्शनसम्मेलनवृत्तान्त^६

१०७ वस्तुपालदानवृत्तान्त

१०५ सोमेश्वरत्यक्तव्यासवृत्तिवृत्तान्त

१०२ राजीमतीछिंपिकावृत्तान्त

१०१ भृगुकच्छीयवालहंससूरिवृत्तान्त

४इ

75

७६

८०

ઇક

"

60

9

७४

55

२२

60

१९

૭૬

§ ९५

१९इ

१७१

§१८३

§१०२

€098

§ १८४

\$? 3

§ १६२

§१६३

§ २१८[±]

888

§३२

§१६९

११३ देपाकदत्तपुण्यवृत्तान्त	स°	१४१	8	8	§ १५ ९	ড়
११४ व्यवहारिजगडूवृत्तान्त	स°	"	१	२	§ १८५	60
११५ पुञ्जराज-श्रीमातावृत्तान्त	स°	"	१	६	§ १९७	८४
११६ पादलिस-नागार्जुनवृत्तान्त	स°	55	Ş	१०	§ २१३	९४
११७ वामनस्थलीयपण्डितवृत्तान्त	स°	55	१	१२	§ २५०	११४
११८ व्यवहारिमुख-उन्दरिकावृत्तान्त	स°	77	१	१४	§ २५ <i>१</i>	"
११९ वलभीविनाशसूचनवृत्तान्त	स°	55	२	१	§ <i>१९४–</i> ९५	/ ሪ३
१२० वस्तुपालकृतसंघामंत्रणवृत्तान्त	स°	55	२	२	§१ ६८	હર્ષ
१२१ वस्तुपाल-माणिक्यसूरिमीलनवृत्तान्त	स°	11	२	१४	§ १७२	७इ
१२२ हरिहर-मदनकविद्वयवृत्तान्त		१४२	?	8	§ १७३	૭૭
१२३ कुमारपालसन्तसभाववृत्तान्त	स°	55	१	६	§८९	૪૬
१२४ क्रमारपालसोमेश्वरदर्शनवृत्तान्त	स°	55	१	9	§ १००	૪૭
१२५ मयण्लामोचितवाहुलोडकरवृत्तान्त	स°	"	8	९	§ इ.७	इद
१२६ हेमसूरिसर्वरसवेदकवृत्तान्त	स॰	55	१	१२	§७६	30
१२७ रामकृतधान्यकुश्चरण्डावृत्तान्त	स°	99	१	१६	§ २५५	११५
१२८ पादलिप्तसूरिकृतवादिपराजयवृत्तान्त	^I स॰	"	२	Ą	§२१३	९५
3 प्रतिमं गलतीसे इसका क्रमांक दुवारा १०१ दिया ग	या है।					٠
4 पृ०९७ की पंक्ति ४ से ८ तकका अंश।						
. 5 पृ० १९ पर मुद्रित पड्दर्शनप्रवन्धका संक्षिप्त सूचन	मात्र वि	केया गय	हैं	इसलिये यह पंरि	क संप्रहमें पुनर्मुदित नहीं की गई	1
I ए॰ ९५ पर, मुद्रित पंक्ति ३ से ७ तकका अंश ।			-		aura es	-

१२९ खरतराचार्यप्रदर्शितद्यावृत्तान्त	स॰ १	४२	२	6	§ २५६	११५
१३० चारणकृतयशोवीरप्रशंसावृत्तान्त	-T-0	55		22	§ १११ ×	-५१
१३१ राज्ञीभ्रात्यबुद्धिपरीक्षावृत्तान्त	स°	55	२	१६	<i>§ २६७</i>	११५
१३९ पं० रामचन्द्रविपत्तिवृत्तान्त	स°१		8	ર	, § १०७ -	. ४९
१३३ वस्तुपालसैनिकभूणपालवृत्तान्त	स°	"	8	Q	§१६०	. ં ૭૪
१३४ सोमेश्वरकृतवस्तुपालस्तुति	स°	,, 55	8	6	§ १६१	33
१३५ वामनद्विजकृतवस्तुपालचाडावृ ०	स°	,, 55	8	१५	§ <i>१६</i> ४	. ওব
१३६ वस्तुपालकारितम्लराजहस्तच्छेदवृ०		55	२	ર	१७४	૭૭
१३७ पिप्पलाचार्यप्रदर्शितविनोददानपृ०	स°	//	ર	G'	§ १६७	७६
१३८ हरदेवचाचरीयाकवृत्तान्त	स°	,, 55	२	१२	§ १७ इ	ં ૭૮
१३९ पाटलीपुरीयनन्दन्यपृत्तान्त	स°	,, 55	२	१५	§ १८९	८२
१४० जयचन्द्रन्थवृत्तान्त	स° १	, -	१	9	६२०६	60
पातसाहिनामाविल	स°	55	२	9		१इंद
		••				

§१२. (५) Ps संज्ञक संग्रह

पाटणके संचके नामसे प्रसिद्ध प्रन्थ भण्डारमें ६ पन्नोंकी एक प्रति हमें मिली जिस पर वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्ध ऐसा नाम लिखा हुआ है। पाटणके संघका नाम सूचित करनेके लिये हमने इसका संकेत P_{S} अक्षरसे किया है। नाम मात्र देखनेसे तो ऐसा भ्रम होता है कि यह वही प्रवन्ध होगा जो राजशेखर सूरिके प्रवन्धकोपमें अन्तिम भागमें प्रथित है; क्यों कि इस प्रयन्धकी स्वतंत्र प्रतियां भी कहीं कहीं दृष्टिगोचर होती हैं। लेकिन प्रतिका प्रसक्ष अवलोकन करने पर विदित हुआ कि यह प्रवन्ध राजशेखरकृत प्रवन्धसे सर्वथा भिन्न है। उतना ही नहीं परंतु इस प्रयन्थके प्रणयिताका उद्देश तो उक्त प्रयन्थकोपगत वस्तुपाल-तेजपाल प्रयन्थमें जो जो वातें अनुहिखित रहीं हैं, खास करके उन्हींका संग्रह करनेका है। इस वातका उहेख प्रवन्धप्रणेताने स्वयं प्रकरणके प्रारम्भ-ही-में 'अथ श्रीवस्तुपालस्य २४ प्रवन्धमध्ये यन्नास्ति तद्त्र किश्चिह्यिख्यते। यह पंक्ति लिख कर किया है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि इसका प्रणयन, राजदोखरकृत प्रयन्यके पश्चात् हुआ है। इसका प्रणेता कौन है सो ज्ञात नहीं होता । प्रतिमें कहीं भी कर्ताका नामनिर्देश किया हुआ नहीं मिला । संघके भण्डारकी यह प्रति है यहुत पुरातन। ययि इसमें टिपिकर्ता वगैरहका कोई उद्देख नहीं होनेसे इसका लेखन-समय ठीक निश्चित नहीं कर सकते; तथापि इसकी खिति देखते हुए, संभवत: वि० सं० १५०० के पहले या उसके आसपास इसका समय सूचित किया जा सकता है। इस प्रयन्थके प्रणेताने, प्रयन्थगत कृतान्तोंमेंसे बहुतसे तो B और P संज्ञक पुराने संब्रहों ही परसे नकल किये माल्म देते हैं। सिर्फ कहीं कहीं कुछ वृत्तान्त या पंक्तियों में न्यूनाधिकता दृष्टिगोचर होती है।

११३. (६) परिशिष्ट

प्रस्तुत संप्रहके अन्तमें, पृष्ट ११६ से १३४ तक, प्रवन्धचिन्तामणिगुम्पितकतिपयप्रवन्धसंक्षेपः इस शिरोलेखके नीचे जो १ परिशिष्ट दिया गया है उसकी मूल प्रति हमें अहमदाबादके डेलांके उपाश्रयवाले भण्डारमेंसे प्राप्त हुई है। इसकी पत्रसंख्या ५ है। अन्तमें 'श्रीजयसिंहप्रवन्धाः।' ऐसा पुष्पिकावाक्य लिखा हुआ होनेसे भण्डारकी स्िमं 'जयसिंह्पयन्धं' के नामसे इसका निर्देश किया हुआ है। परंतु प्रतिका सायन्त अवलोकन करने पर स्पष्ट हो जाना है कि इसमें, प्रायः प्रयन्धचिन्तामणिसंकलित कितनेएक मुख्य मुख्य प्रयन्धोंका किसी विद्वान्ने संक्षिप्ती-

[×] इस किंग्डादा अन्तिम भाग,-पृ० ५१ की पंक्ति १२ से १७ तक।

करण किया है। इस संक्षेपका कर्ता कौन है सो अज्ञात है, वैसे ही प्रतिके लेखन-समयादिका सूचक भी कोई उड़ेख प्राप्त नहीं हुआ। प्रतिका रूप रंग देखते हुए अनुमान कर सकते हैं कि कोई ३००-४०० वर्ष जितनी पुरातन तो जरूर होगी। प्रतिके हांसियोंमें कई भिन्न भिन्न प्रकारके हस्ताक्षरोंमें टिप्पनादि किये हुए दृष्टिगोचर हो रहे हैं इससे ज्ञात होता है कि इसका पठन वाचन कई जिज्ञासुओंने किया है।

§ **१४. अपसंहार** के किस्तार के किस

इस प्रकार प्रस्तुत संग्रहका संकलन करनेमें हमने भिन्न भिन्न ऐसे ६ संग्रह ग्रन्थों-का सम्पूर्ण उपयोग किया है; जिनमें ५ तो स्वतंत्र प्रवन्ध-संग्रह हैं और १ प्रवन्धिचिन्तामिण-ही-के कुछ भागका स्वत्य संग्रेप मात्र है । एक Ps संग्रहको छोड कर शेप पांचों प्रतियोंके कितनेएक पत्रोंके हाफ्टोन च्लाक वनवा कर उनकी प्रतिक्रितियां इसके साथ संलग्न कर दी गई हैं जिससे पाठक प्रतियोंके वर्णनगत परिचयके साथ इनके आकार-प्रकार आदिका प्रयक्ष दर्शन भी कर सकेंगे। अन्तमें हम इन प्रतियोंके संरक्षक, और इस प्रकार यह समुद्धार करनेमें हमें पूर्ण सहातुभूति पूर्वक इनका यथेष्ट उपयोग करनेमें सुलभता प्राप्त करा देने वाले सज्जनोंके प्रति हम अपनी आदरपूर्ण कृतज्ञता प्रकट करते हैं। इनमें P प्रतिके साथ विद्वान सुनिवर श्रीपुण्यविजयजी महाराजका, तथा G प्रतिके साथ उसके संप्राहक श्रीयुत गोकुलदास नानजी भाई गान्धीका नाम निर्देश हमने ऊपर स्पष्ट कर ही दिया है। यहां पर B प्रतिके संरक्षक, स्वर्गत सुनिवर श्रीमिक्तिन विजयजीके सुशिष्य और साहित्यप्रिय सुनि श्रीजसविजयजी महाराजके प्रति हम अपना सविशेष कृतज्ञतमाव प्रकट करते हैं जिन्होंने कई वर्षों तक इस प्रतिको हमारे पास पडी रहने देनेकी उदारता वतलाई है तथा और और भी पुस्तकादि प्राप्त करने-करानेमें जो सदैव हमारे प्रति सोत्साह प्ररणा एवं प्रयत्न करने-कराते रहते हैं।

महाबीर जन्मतियि, चैत्र, सं॰ १९९३. } भारतीनिवास; अह्मद्रावाद. {

जिन विजय

. प्रास्ताविक-टिप्पनीसूचितपरिशिष्टसंग्रह

[१] В संग्रहगत ऋषिदत्ता कथानक।

रथमईनं नगरम्, राजा हैमरथः, सुयशा राज्ञी, पुत्रः कनकरथः । इतश्च कौवेरी नगरी, राजा सुन्दरपाणिः, राज्ञी वासुला, सुता रुक्मिणी । प्राप्तवरा जाता, कनकरथस्य दत्ता । ततः परिणेतुं तस्यागच्छतो देशसीम्नि आवासेषु दत्तेषु केनापि पुरुपेण इति विज्ञप्तम्—यत्, अस्य देशस्य स्वामी राजा अरिदमन इति ज्ञापयति—मम सीम्नि राजचिन्हानि सुक्ता त्वया एकािकना गन्तव्यम् । अन्यया युद्धसज्जो भव । तथा तस्य दूत[स्य] सुस्वादसं श्लोकं श्रुत्वा—

यदि मत्तोऽसि मतंगज! किममीभिरसारसरलदलनैः। हरिमनुसर खरनखरं व्यपनयति स करटकण्ड्रतिम्॥१॥

न्होकमाकर्ण्य युद्धाय समागतः ।

एयति घोडा एअ वल एअति निसिआ खग्ग । इत्थ मुणीस जाणीअइ जो निव वालइ वग्ग ॥ २ ॥ धडु घोडइ सिरु धरणिअलि अंतावलि गिद्धेहिं । महु कंतह रिणसामीअह दिन्नं तिहु खंधेहिं ॥ ३ ॥

स राजा कुमारेण जितः । आज्ञाविधायी जातः । स वर्त पालयित्वा मुक्तिं जगाम । कुमारेण श्रीनेमितीर्थ [प्रति] प्रयाणं कृतम् । एकसिन्निप सरिस आवासेषु-जातेषु वनमध्ये काञ्चित्कन्यकां दृष्टा गतां ज्ञात्वा परिश्रमन् श्रीयुगादिचैत्यं गतः । देवस्तवनानन्तरं यावत्यवायां निविष्टः, तावदेको वृद्धतपोधनः कन्यासिहतः पूजोपचारयुतो दृष्टः । कन्या कुमारं विलोक्येति चिन्तितवती—

किमिन्द्रः किम्रु वा चन्द्रः किम्रु वासौ दिवाकरः । देवः किमथवा साक्षादयं मकरकेतनः ॥ ४॥

अथवा

ः कलङ्की रजनीजानिस्तपनस्तपनः पुनः । अनङ्गस्तु मनोजन्मा तत्कोऽयं सुभगात्रणीः ॥ ५ ॥

अथ कुमारेण स नमस्कृतः । मुनिना इत्युक्तः—त्वं कस्य युतः १, केन कारणेनात्रायातः १ । कुमारस्य भट्टेन पूर्ववृत्तान्तः कियतः । कुमारेणापि मुनेः पार्थादिति प्रष्टम्—कथमत्र १, के यूयम् १, का कन्या १, कथमत्र देवगृहम् १ । कारणं कथयत । ततो मुनिना देवपूजाऽनन्तरं कुमारं निजाश्रये नीत्वा स्वचित्रमिति कथितम्—वत्स । श्रूयताम् , असिन् भरते मंत्रिवती पुरी, हरिपेणो राजा, प्रिया प्रियदर्शना, पुत्रोऽजितसेनः । कदाचित्स राजाऽश्वापहृतो वनेऽसिन् कच्छ-महाकच्छानुक्रमे कुरुपति विश्वमृति प्रणम्य उपविष्टः । आशीर्वादः प्रदत्तसेन । राजन् !

यसांशयोः खेलति क्रन्तलाली श्रियेस्तु वः स प्रथमो जिनेन्द्रः । गम्मीरसंसार्समुद्रमध्यादुन्मजतः शैवलवछरीव ॥ ६ ॥

ततोऽनन्तरं त्यणेर्नुपं विज्ञाय मुनिना पृष्टम्—कुतो यूयमेकािकनः ?, कथिमहागताः ? । तेन वृपभान्वयेन श्रीआिदनाथः भासादः कािरतः । मुनिना तस्य विपापहो मंत्रो दत्तः । ततः स राजा खपुरं गतः । तत्र समये मंगलावती पुरी, प्रिय-दर्शननरेन्द्रस्य प्रीतिमती दुहिता । केनचित् पुरुपेण राज्ञः सर्पदृष्टा कथिता । ततो हिरिपेणस्तत्र गत्वा, तां निर्विपीकृत्य परिणीय च सपुरं समायातः । कियत्यपि काले वृद्धत्वे भार्यया सह तापसी दीक्षां जग्राह । तां प्रकटगर्भा निरीक्ष्य, राजिपेम्रपालभ्य कुल्पितरन्याथमं तो त्यक्त्वाययो । तेन दुःखितो यावदास्ते तावत्युत्री जाता, राज्ञी मृता च । पश्चात्रेनाष्टवर्पाण यहपभदत्ता

सुता पालितो । ततस्तां रूपवर्ती ज्ञात्वा लोकापहारभयेनादृश्यीकरणमञ्जनं दत्तम् । सा वाला, या, हे राजकुमरं ! त्वया हृष्टा । तया च त्वं हृष्टः । परस्परानुरागतः सांप्रतं मम सुतामिमां त्वं परिणय । तेन सा ऋषिदत्ता परिणीता । ऋषिणा कुमारं प्रस्युक्तम्—अस्यास्त्वं जीवितेशवत् इति ज्ञेयं भवता ।

> युक्तोऽसि भ्रुवनभारे मा नम्नां कन्यरां कृथाः शेपः । त्वच्येकसिन् दुःखिनि सुखितानि भवन्ति भ्रुवनानि ॥ ७॥ सम्प्रति न कल्पतरवो न सिद्धयो नैव देवता वरदाः । जलदः! त्वयि विश्राम्यति जगतोऽपि हि जीवितारम्भः ॥ ८॥

मुनिः पुत्रीं प्रति शिक्षां ददाति—

रक्लाकंडयमंतोसहीभि मा खिनसु पुत्ति। अप्पाणं ।
छंदाणुवत्तणं पिअयमस्स एअं वसीकरणं ॥ ९ ॥
कुळवध्वा विधातव्यं श्वश्रुशुश्रूपणवतम् ।
देवतं हि पतिः स्त्रीणां माता तस्यापि देवतम् ॥ १० ॥
संसारभारनिन्नीहे वामा वामाङ्गवाहिनी ।
प्रसादपात्रं मोहस्य तेनैवालमलंकृता ॥ ११ ॥
अभ्युत्थानसुपागते गृहपतौ तद्भापणे नम्रता
तत्पादार्पितदृष्टिरासनिविधिसस्योपचर्या स्वयम् ।
स्रोत तत्र श्यीत तत्प्रथमतो जहाच श्र्य्यामिति
प्राच्यैः पुत्रि । निवेदिताः कुलवधूशुद्धान्तधर्माश्रमाः ॥ १२ ॥
इति शिक्षा प्रदत्ता ।
मा भः सखे च दःखे च वत्से । धर्मपराङ्मखी ।

मा भूः सुखे च दुःखे च वत्से । धर्मपराख्नुखी । धर्म एव हि जन्तूनां पिता माता सुहृत् प्रश्नः ॥ १३ ॥

पश्चान्मुनिः राजमुतं मुतां मुक्तलाप्य ख्यं नमस्कारपरः सन् अमौ प्रविष्टः । तत आत्मीयकलत्रं स्दिन्नवार्य प्रेतकृत्यं कृत्वा तत्थाने वेदी विधाय निजपुरं प्रति कुमारश्चलितः । तया मार्गे सर्वत्रापि देवतादत्तवीजैर्वक्षा रोपिताः, उद्गताश्च । प्रयाणैः पश्चाद्वहं गतौ । पित्रा मात्रा वर्द्धापनं कृतम् । मुखेन तिष्ठन्ति ।

इतश्च, राजसुता रुक्मिणी ऋषिदत्तां परिणीतां श्चला कुमारं वाञ्छती महादुः खिता योगिनीं सुल्साभिघां पर्कर्मनिरतां सपर्यास्त्यागाय रथमईनपुरे प्रेप्य तयाऽवखापिनीं विद्यां दला पुरुषवध-नरमांसभक्षणे ऋषिदत्तायाः करूंकमारोप्य श्वग्रुरपार्श्वाद् देशमध्यानिष्कासिता। सा केनापि सार्थेन सह औपधप्रभावेण पुरुपवेषं विधाय खजन्मभूमौ पैत्रिकं वनं गता। सा योगिनी खपुरं गता। तया रुक्मिण्या अप्रे सर्व निवेदितम्। ततो रुक्मिण्या पितुरप्रे ऋषिदत्तामृतवृत्तान्तं कथित्वा पाणिप्रहणार्थं कुमारस्याकारणाय विज्ञसेन जनकेन मनुष्यान् प्रेष्य सुतादानं विधाय प्रगुणितः। तैर्मनुष्येः समं पाणि ग्रहीतुं पूर्ववनं याव-कुमारः समायातः, तां पूर्वमूमिकां हृद्या ऋषिदत्तागुणान् समृत्वा मुक्तकण्ठं रोदनं विधाय यावचैत्यं गतः, तावद्विणाङ्गस्कुरणं विचार्य, अत्र किं शुभं भावि १ इति किञ्चिन्तत्यन् यावदास्ते तावत्युष्पो[प]हारहस्तः तपित्वकुमारस्त्रपथारी कोऽपि मुनिः समायातः। रूपपरावर्तेन पुष्पाणि कुमारस्य समर्प्य खयं देवपूजादिकत्यं विधाय इति चिन्तितम्—यत् एप परिणेतुं गच्छिति। ततः कुमारेण स मुनिः पृष्टः—कुत्तो यूयम् १ कथमत्र १। मुनिनोक्तम्—अत्राश्चमे पूर्व हरिषेणराज्ञिः सुतां ऋषिदत्तां कस्यापि आगतस्य राजकुमारस्य दत्ता काष्ठमक्षणं कृतवान्। असिन् शून्याश्चमेऽहं तस्य शिष्यतुल्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः। पञ्चवर्षणि वभूवः। निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तस्य शिष्यतुल्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः। पञ्चवर्षणि वभूवः। निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तस्य शिष्यतुल्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः। पञ्चवर्षणि वभूवः। निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तस्य शिष्यतुल्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः। पञ्चवर्षणि वभूवः। निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तस्य शिष्ति।

सेहाट्यभाषणपूर्व भोजनवस्ताभरणादिदानं विधाय कोवेरी प्रति तेन मुनिना समं गृहीत्वा गतः । रुक्मिणी परिणीताँ । तया रुक्मिण्या एकान्ते महासेहे जाते पतिः ऋपिदत्तावृत्तान्तः पृष्टः । तेन कथितम् –ऋपिदत्तायाः शीलगणो विनयगणो रूपगणा-दिकोऽनिर्वचनीयस्तत्र किं कथ्यते । उक्तं च—

> रूपलक्ष्मीयुपो यस्याः समस्या कामकामिनी । कर्णिका-मेनिका-नागयोपितः पदपांशवः ॥ १४ ॥ जाते तद्विरहे दैवादासी त्वमसि मे प्रिया । यत् क्षीरेण विना घृष्टिरपि प्रीतिकरी न किम् ॥ १५ ॥

तदभावे त्वं मया परिणीता । यथा पर्रसपेशलस्य भोजनस्याप्राह्या किं कथितानं न मुज्यते । तद्वचनं श्र्ला गृह-वासमवगणय्य सा रुविमणी पूर्वकारितं निजं पीरुपं सर्व कथितवती । कुमारस्तदाकण्यं महासकोपस्तामङ्कात्त्यक्त्वा, रे! पापिष्ठे! आत्मानं मां च नरके कथं क्षिपति! गच्छ, मम नेत्रादपसर । अदृष्टमुखी भव । सा रूपवती महासती कथाशेपी कृता । लोकद्वयविरुद्धमभेक्ष्य तदा मुनिस्तद्वचनं श्रुत्वा निजकल्रङ्कगमनेनातीव हृष्टः । निशान्ते राजाङ्कणे चितां कारियत्वा कुमारः काष्ठभक्षणाय श्रुश्रेण लोकेन च वार्यमाणोऽपि यावचितः, तदा सर्वलोकवचनोपरोधात्तपित्वमुनिनोक्तम्—देव! तव सेहाकृष्टा सा मृताऽपि मिलिप्यति, इति ज्ञानेन जानामि । कुमारः पृच्छति—भवद्धिः कापि सा दृष्टा ज्ञाता वा । कथं किंवा हास्यपदम्!—हित पृष्टे यमपुरे कृतान्तमन्दिरे तव प्रिया विद्यते । यदि तस्याः स्थाने ग्रहणके कोऽपि मुच्यते, तदा समेति । इत्युक्ते कुमारिधन्तातुरः तत्र को याति, कित्तिष्ठति !; इत्युक्ते मुनिनोक्तम्—देवाहं यास्यामि । यतो दुस्त्यजः सेहस्त्वया समम् । यदि भवान् ममादेशं दास्यति तदाहं यास्यामि । कुमारः पाह—मयात्रे तुम्यं जीवितव्यं हृद्यं दत्तम्, शेपं जीवितव्यं विद्यते तदपि गृहाण । तेनोक्तं पुनर्मते कार्ये यत्किच्चिद्वहं याचि (?) तिन्वपेधयितव्यं नहि । ओमित्युक्ते पतिश्चते स मुनिल्क्ष-संस्थलोकसमक्षं पटान्तरे पविष्टः । क्षणान्तरे मुक्तं पूर्वम् । हृष्टिः क्षिता । ततोऽतीव हृष्टः कुमारः । ऋपिदत्तायुतः श्रुरेण पूजितः । निजा मुता निर्भित्तिता । अकृत्यकारिणीति भणित्वा । पश्चात्ययाणकमुह्तें ऋपिदत्ताया अप्रे इति भणितम्—अहं समित्रं यममन्दिरे तत्र (व?) स्वाने मुक्ता कथं यामि गृहम् । आहं मित्रसमीपे गमिष्यामि । तदा हिस्ता प्रिया माह—देव! एतत्तर्वं जनकद्वजीपथविलसितम्। भवद्विरन्यनावधारणीयम् । एरं यथा स्विम्त्यणं प्रसादो भवति तथा कर्तव्यम् । यतः—देव! एतत्तर्वं जनकद्वजीपथविलसितम्। भवद्विरन्यनावधारणीयम् । एरं यथा स्विम्त्यणं प्रसादो भवति तथा कर्तव्यम् । यतः—

न हसंति परं न थुणंति अप्पयं विष्पिअं पि न चवंति । एसो जाण सहावो नमो नमो ताण पुरिसाण ॥ १६ ॥

पियावचनं श्रुत्वा हृष्टः । श्वशुरेण पेपितः । पियाद्वययुतो निजिपतृगृहं ययौ । ततो हेमरथो राजा निजापराधिवरुक्षो वपूमनुनीय कुमारं राज्ये संस्थाप्य भद्राचार्यपार्धे वतं गृहीत्वा मुक्तिं गतः ।

ततः कनकरथस्य पृथ्वीं पालयतः ऋषिदत्तायाः सिंहरथो जातः । हर्पपूरितस्य राज्ञः कियत्यिप गते काले गवाक्षोप-विष्टस्य मेघमण्डलं संपूर्ण हट्टा प्रचण्डपवनेन खण्डीकृतं गलितं च विज्ञाय चेतिस विरागवान् जातः संसारोपिर । इति चिन्तयिति—

> जजरइ जहा देहं खणेण तहा जोवणं विणासेइ। खणदिष्टनष्टरूवा इह इष्टसमागमा सबे॥ १७॥

म्तिपदणायाः समं यावत् रात्रो इति चिन्तयित, तावत्यभाते उद्यानपालकेन तत्रायातसूर्यागमनं कथितम् । ततः पियया सह गुरुं भणम्य देशनां श्रुत्वा पियाया राक्षसीकलक्षकारणं निष्कारणं पृष्टवान् । उक्तं च इह भरते गंगापुरे गंगदत्तराज्ञः गंगाकुक्षिसमुद्भवा गंगसेना मुताऽऽसीत् । चंद्रयशासाध्वीसमीपे मुता सम्यत्त्वसारं धर्मे प्राप्यातीव सदाचारचतुरा वसूव । कदाचित्त्रवेव पार्धे गंगाभिधा तपोधना तपस्तपति । तां लोको नमित स्तौति च । अस्याः सहशी तपःपात्रं साध्वी कापि न हश्यते जगति हित प्रशंसावाक्यं भ्रुत्वा गंगसेनाऽसहमाना लोकाप्रे इति कथयति ह्यं गंगा दम्भपरा दिवा तपः करोति रात्रौ राक्षसीव मृतकमांसं भक्षयति । अस्या नामापि न माम्यम् । सा गंगा क्षमापरा सती सर्व सहते न किमिष वदति । तदलीकदूषणेन दूषिता गंगसेना महत्तपः कृत्वा मिथ्यादुःकृतस्यादानात् मृत्वा सर्ग गता । पश्चाद् भवं भ्रान्त्वा मुहुर्मुहुः, गंगापुरे राज्ञः मृता जाता । ततो मृतिमुन्नततिर्थनाथस्य पार्थे धर्म प्राप्य सक्तपटं विकटं तपो विधाय पर्यन्तेऽनालोच्यानशनानमृत्वा ईशानेन्द्रस्य प्रिया जाता । ततः पश्चाद् हरिषेणमहीपतेः मुता जाता ऋषिदत्ताभिधाना । अस्याः स कलङ्क उदयं गतः । सा गंगा साध्वी भवान् भ्रान्ता रुक्मणीसपत्ती जाता । तेन कलंकोऽ-दािश रुक्मिण्याः । अतो भवशतैरिप कर्मभ्यो न छुत्र्यते । ततः सूरिवचनाज्ञातिस्ररणतः पूर्वभवस्तर्षं विज्ञाय राजा मुतं सिंहर्थाभिधानं राज्ये संस्थाप्य सकलत्रो न्नतमग्रहीत् । ऋषिदत्तासाध्वी मिद्दलपुरे श्रीशीतलतीर्थे[श]जन्मम्मौ केवलज्ञानं प्राप्य मुक्ति जगामः।

॥ इति ऋषिदत्ताकथानकं समाप्तम् ॥ १७ ॥

[२] B और B संग्रहस्थित मोरनागप्रवन्ध।

एकदा श्रीशञ्चंजये राजादनतरोरधः श्रीआदिनाये (Br श्री ऋषभदेवे) समवस्रते मयूर्मुखात् सर्पश्चरणाग्ने पपात । मयूरः पृष्ठिमाययो । लामी विस्मितः । वेरं दृष्ट्वा तयोर्भगवानाह—भोः । पूर्वभवाभ्यासादिहापि वैरमारव्यम् । शृणुतः—वालाकदेशमध्ये सुमाममामे दत्तः श्रेष्ठी । तस्य हो सुतौ । एकदा श्रेष्ठी अनशनं जगृहे । निर्व्यंजनं मत्वा लघुना कटाहिः कृष्टा । इतो वृद्धो श्राता आययो । तेन दृष्टा....गार्थे कलहं कृत्वा मृतौ । तत्रेव सर्पी जातौ । युद्धा मृतौ । तृतीयनरकं गतौ । तद्नु संदो जातौ । मिलितौ, युद्धा मृतौ । तद्नु सर्प-मयूरी जातौ । अत्रापि तदेवारव्यम् । ततो जातजातिस्मृती भगवता दत्तमनशनमादाय मृतौ । चतुर्थदेवलोकं गतौ ॥

॥ इति मोरनागप्रवन्धः ॥ १८॥

[३] BR संग्रहोपलब्धवप्पभहिसूरिकथाप्रकरण।

एकदा प्रेक्षणे जायमाने गुरूणां वप्पभिष्टसूरीणां पुस्तकं(?) दृष्टिस्तिमिरेणावृता वप्पभिष्टसूरिमिर्नर्त्तक्या नीलीकंचुकें दृष्टिः क्षिप्ता । आमनृपेण ज्ञातं मम मित्रस्थैतस्थामिलापोऽस्ति । अत्र किं दुष्करम् । कांठुलीमाहूय रात्रौ मम मित्रमेठे वसनीयम् । इतः सा रात्रौ छन्ना मठं गत्वा गुरूणां चरणसंवाहनं चके । गुरुमिरुक्तम्—का त्वं ?। अहं नर्तकी देवेन प्रहिता । इतो गुरुवो रोदिर्तु प्रवृत्ताः । तथा ज्ञातं दशम्यां कामावस्थायामेते । यथा—

नयनप्रीतिः प्रथमं चित्तासङ्गस्ततोऽथ सङ्करपः। निद्राच्छेदस्तनुता स्वभावन्यसम्यसमानाशः॥ उन्मादो मूर्च्छो मृतिरिसेताः स्मरदशा दशैव स्यः॥

तयोक्तम्—मयि खाधीनायां किमिति रुद्यते ?। ताभ्यामु(तैरु ?)क्तम्—अस्माकं गुरवः स्मृताः । कथं ? –शिशुत्वे गुरुणां पाश्चासप्रदेशेषु छुठनं तव पयोधरैः स्मृतम् । तदनूक्तम्—

चक्षुः संवृणु वक्षविक्षणपरं वक्षः समाच्छादय रुन्द्रि स्फूर्ज्ञद्नेकमङ्गि चतुरं श्रङ्गाररम्यं वचः । अन्ये ते नवनीतिषण्डसदृशा मर्स्या भवन्ति क्षितौ सुम्बे ! किं परिखेदितेन वपुषा पाषाणकल्पा वयम् ॥ प्रातर्नृपेण पृष्टा-

गयइ (१) वइकेरइ देव मिंह नहु केणइ परिभुत्त । निचोरइ गुज्जररिज्ञ जिम पाय पसारिव सुत्त ॥ नृपेण प्रातश्चरणयोर्छगित्वा मानिताः ।

[४] 🗛 संग्रहस्थितजिनप्रभस्रिपयन्ध*।

रारतरपक्षे श्रीजिनसिंहस्रितः श्राद्धादिभेदेन पश्चद्वयमजिन । ततः श्रीजिनसिंहस्रिरिभः पद्मावतीदेव्या राधनार्थं पण्मासान् यावदाचाम्लतपः स्मशाने गत्वा तदाराधनं चके । ततः श्रत्यक्षीभूतया पद्मावलोचे-किमर्थमाराद्धा १ । तैरुक्तम्-राद्धः प्रतिवोधशक्ति देहि । देव्योक्तम्-तव पण्मास्येवायुः । तेन किं नृपवोधशक्ता १ । तथापि वागडदेशे गच्छ । तत्र शामे दश श्रातरः सन्ति, तत्रैकस्य लघुः सप्ताष्टवार्षिकः सुतोऽस्ति, पादे किञ्चित्र्यन्तांगुलित्वेन लंघायमानः । तान् प्रतिवोध्य । तस्य च स्वत्पाराधनेनात्यहं श्रत्यक्षा भाविनी । स च नृपप्रतिवोधकः शासनप्रभावको भावीन्त्युक्ता तिरोद्धे देवी । स च सूरिः सर्वं तथा कृतवान् । तं चादिश्यत् । स्वायुः प्रान्ते तस्य चायं पद्मिष देवे योग्यतां सात्वा । ततः श्रीमहिषणसूरेः स्याद्धादमञ्जरीकर्तुः पार्थेऽधीतवान् । [स]श्रीजिनप्रमसूरिः । तस्य च यदा यदा भाणने संशयो भवित तदा वदा निद्रायमाण इव किञ्चित् विमृशति । तदा सम्यग् वुध्यते च । ततो घूर्मा(ण १)-सरस्ति तस्य नाम तावता दत्तम् । श्रीजिनप्रमसूरिस्तु कियद्प्रन्थाध्ययनानन्तरं वहुशुद्धप्रज्ञत्वेन तद्धूर्णनावसरे तमर्थ लिखति सम्यग् वुध्यते च । ततो गुरुभिस्तं तथा कुर्वन्तं दृष्टा तस्य प्रत्यक्षसरस्तती विरुदं ददे । स क्रमण म्लेच्छाधिराज पा० पीरोजादिप्रतिवोधकश्चाभूत् । तेन च साहाय्येन स्याद्धादमञ्जरीवृत्तिः स्वगुरोः कृतिरिति शोधिता । ततः "श्रीजिनप्रससूरीणां सहायोद्धित्रसार्भे"सादि तत्रशस्त्री तैन्यंसम् ॥ इति श्रीजिनप्रभसूरीणामुत्पत्तिप्रवापन्यः ॥

एकदा सभास्ये सुरत्राणे सूरिभिः समं धर्मगोष्ठीं छुर्वाणे कोपि मुलाण आगतः। तेन निजटोपिका आकाशे स्थापिता। तदा प सभासदां पमत्कारः समजि। तद्गु सुरत्राणेन सूरेर्मुखं विलोकितम्। ततः सूरिणा निजरजोहरणमुच्छाल्यं टोपिका पातिता, परं रजोहरणं नभसि स्थितम्। गुरुणोक्तम्—यस्य कस्यापि शक्तिरस्तु स पातयतु। परं केनापि नापाति। ततस्तेरेव दक्षिणकरेणात्राहि। द्वितीयदिने तेनैव सजल्कुम्भो नभसि स्थापितः। ततो गुरुणा सुरत्राणानुज्ञया रजोट्रिणेन छुट्टियत्वा घटो भगः, पानीयं तत्रेव मोदकाकारेण स्थितम्। तेन चमत्कारेण जिनशासने महती प्रभावना जाता। एकदा सुरत्राणेनोक्तम्—भोः सभ्याः! शर्करा कस्य मध्ये क्षिप्ता मिष्टा स्थात्। ततः सभ्यः स्थियोक्तं परं तन्मनिस न पमत्करोति। ततस्तेन सूरिः पृष्टः। मुलमध्ये। तेन रिक्षतः। अन्येषुः स्वमुद्रिकां स्थयं पर्यद्वपादतले संस्थाप्य सूरिं प्रति प्राह्—मम मुद्रिका गता सम्प्रति कास्ति? सूरिणोक्तम्—योगिनीपुरमध्ये। पुनः पृष्टे, राजभवनान्तः। पुनः पृष्टे, समा-मध्ये। पुनः पृष्टे पत्यद्वप्रपद्वतुष्टयमध्ये। तत एकं पत्यद्वपादमुत्पाट्यांगुल्यिपीतां। तेन स रिक्षतः।

एकदा पृष्टम्-दुनीमध्ये किं पुष्पं युद्धम् १। सभ्येः स्विधयोक्तम्-परं तत्र मनश्चमत्कारकारि । सूरिणोक्तम्-दुणिफलं युद्धम् । येन नवसंडपृष्ट्या लजा ढंक्यते । तेन हेतुना जगढंकणीति विक्दं दत्तम् । एकदा ततः सुरत्राणः समुत्थाय सूरिणा सह स्वावाससोपानकानुहंध्यमानः, एकस्मिन् सोपानके श्रीवीरिविम्नं म्लेच्छेः स्थापितमस्ति, तदुपरि सूरिणा पादो न दत्तः । सुरत्राणेनोचे-कुतोऽस्मिन् प्रस्तरे पादं न ददासि १। तेनोचे-महावीरोऽसो कथ्यते । सुरत्राणोऽवक्-यससावीद्यं नाम विक्दं धत्ते तदा कस्मान्मोनेन स्थितः । सूरिराह्-हे देव! यतः कथितं देवभ्योऽपि दानवा चलिनः स्युः । दुरपस्थापतितानां सर्वपामीद्यावस्था स्थात् । तदनु सुरत्राणेन निजनरा निष्कासनहेतवे प्रहिताः परं सहस्ररिप न निःसरित । तदनु सुरत्राणेन पृष्टः सूरिराह्-यदि स्वयमेव गत्वोत्पाद्यते तदा निस्सरित नान्यथा । तथा कृत्वाऽऽक-

^{*} एप प्रचन्धः BR सङ्ग्रहे लिखितो लब्धः । तथवैकस्मिन् अन्यकथासङ्ग्रहेऽप्युपलब्धः । अतोऽस्य पाठमेदा अपि अत्र सङ्ग्रहीताः सन्ति । 1 रविवर्दमप्रती 'देवी' नास्ति । † एतदन्तर्गता पंकिः पतिता प्राचीनादरी । 2 प्र०-अंगुलीयमर्पितम् ।

र्षितः । निजावाससम्मुखं प्रौढं जिनालयं कारयित्वा स्थापितः । पृष्टम्-भोः सूरे ! श्रीवीरः पृष्टरसन् किमप्युत्तरं दत्ते न वा । सूरिराह-सर्वं कथयति । तदन्तं, अन्ते जवनिकां वद्धा सुरत्राणनोक्तम्-अस्मित्रगरे कियन्तः सुरत्राणा जाताः १। वीरेणोक्तम्-सर्वेपां नामायूराज्यपदपालनपूर्वकं संख्यादि । तेनातीव हृष्टोऽभूत् । पुनः पृष्टम्-भवन्तः कियन्तः सन्ति ? । वीरेणोक्तम्-वयं ऋपभप्रभृतयः २४ संख्याः साः । तदनु अतिहृष्टेनं तेन पंचाशतं द्रम्माणां प्रतिदिनं भोगपुष्पादि पूरितम् । परमेतत्सर्वं सूरिध्यानवलेनैव । तस्मिन्मेले जिनालयं कारितं येन निजावासस्थितो निसं प्रणामं करोति । एंकदावसरे सूरिणा विजययत्र्रप्रभावः प्रोक्तः। तदन्ते पंचाशतद्रम्मैः स कारितः। सुरत्रोणेन पृष्टम्-कः प्रभावः १। सूरिणा कथितम्-यत्रायं यस्त्रो भवति तत्रारिः कोऽपि नायाति । ततः सुरत्राणेन निजच्छत्राधराखुर्न्यस्तः । ततो मार्जारी मुक्ता परं छत्रच्छायायां कथमपि ओतुर्नेति । अपरः प्रभावः यस देहे असी वध्यते तस्य प्रहारो न छगति। तदनु सुरत्राणेन छागमानाय्य तस्य देहे विजययन्त्रो वद्धः । यहनः खङ्गप्रहारा सुक्ताः परमेकोऽपि न छप्तः । एकदा सुरत्राणो गूर्जरघरित्री प्रति यात्राभिप्रायेण सूरि पाह-पांडे! अहं कस्यां प्रतोल्यां निस्सरिष्यामीति पृष्टे सूरिणा चिठडिकां लिखित्वा सर्वष्टतान्तयुतां गोलकान्तस्तां क्षिष्वा मुद्रां दत्त्वाऽपितो गोलकः । हे देव ! त्वया योगिनीपुरविहर्गत्वा गोलकं स्फोटयित्वा वाचनीयमिति प्रोक्तम् । सुरत्राणेन तथा कृतम् । यत् सुरत्राणः काकराख्यकोटस्य^र एकत्रिंशच्छराणि पातयित्वा निस्सरिष्यति । तेनाभिज्ञानेन स हृष्टः । सच्छायमंजरीफलश्राजिष्णीराम्रस्य तले सर्वकटकं मेलयित्वा प्रस्थानं साधितम् । तेन स्रिः प्रष्टः-भो पांडे ! कीदृशो नयनानंदकारी सहकारोऽस्ति ? । स्० सत्यमेतत् । ततः स्रिणा स वृक्षः प्रयाणद्विकं सुरत्राणोपरि छायां कुर्वन् सार्ढं चालितः । सूरिः सुरत्राणैन पृष्टः—भो पांडे ! असौ वृक्षः कस्मा-त्साईं समेति ?। सूरिणोचे-यदि सुरत्राणो विदार्हि ददाति तदा पश्चाद्वित्वा स्वस्थाने याति नान्यथा। तदनु सुरत्राणेन् विसर्जितश्रूतो निजस्याने गतः । स सूरिः कियत्प्रयाणैनीगपुरादिमार्गेण मरुखल्यां प्राप । प्रतिप्रामं तन्निवासिना-र्योऽक्षतनालिकेरकुसुममालाचन्दनादिभिः [सूरिराजं] सुरत्राणं च वर्द्धापयन्ति । स ताः सर्वा विलोक्य कंचन पार्श्वेस् नरं प्राह-एताः स्त्रियो विभूपणपट्टकूलमौक्तिकादिमिर्विवर्जिताः कथम् १ । केनापि दंडिता वानीपाते पातिता वा; येने ह-शीनिःश्रीका दृश्यते । (१) तद्गु तेन नरेणोचे-हे देव ! अयं देशो निर्द्धनः स्वभावेनैव, अन्यत्किमपि कारणं नास्ति । ततः सुरत्राणेन परोपकारियया प्रतिस्त्रियं , दीनारटङ्ककाः खर्णमयाः समुर्त्ये प्रणामं कृत्वा खगृहे प्रहिताः । एवं प्रतिप्रामं समस्तिविर्द्धनजनानामाशाः सफलयन् पत्तनं ्यावल्पूर्वरीत्या प्राप । जंघरालनगरे विहः कटकमुत्तरितम् । श्रीजिनप्रम-संरयः पंत्रन्तगरं गच्छन्तः तपापक्षश्रीसोमप्रभस्रिशालायामीयः । श्रीसोमप्रभस्रिभिस्तेषां प्रशंसा कृता । श्रीप्रभूणाः प्रभावादेव सम्प्रति श्रीजिनधर्ममाहात्म्यमित इति । तैः प्रत्युक्तम्-वयमविरताः सुरत्राणेन सार्द्ध रात्रिदिव ब्रह्ममः । सर्वदाऽस्वतन्त्राः । यूर्यं चारित्रिणः । युष्माकमाधारे 'चारित्रमस्तीति । एवंविधप्रस्तावे साधुभिः प्रतिलेखंनार्थं सिकिकी-त्तारिता। एकस्य साघोः सिक्किका मृपकैर्जग्या। तद्वचः श्रुत्वा श्रीसूरिमी रजोहरणं श्रामितम् । ततः सर्वे मृपकाः शाला [तो वहिः] निःसृत्य सूरेरमे उपविष्टाः। सूरिभिरुक्तम्-अहो आखव! एते साधवः कीटिकाया अपि विरूपं न चिन्त-यन्तिः भवद्भिः कस्माद्विनाशोऽकारि ? । पुनरुक्तम्=वयं कस्यापि विरूपं न चिन्तयामः, एवं यः कश्चिद्पराधी स तिष्टतु, अन्ये गच्छन्तु । ततस्तस्य मृपकस्य देशपट्टो दत्तः, शालान्तर्न स्थेयम् । ततः स द्वारेण निःसृत्यान्यत्र गतः । कियद्दिनानि पत्तने स्थित्वा गूर्जरत्राव्यवहारिभिः सह सुराष्ट्रां प्रति चितः । एकदा सूरिः पृष्टः-भो पांडे ! हीन्दूजनमध्ये किं तीर्थ बृहत् ?। सूरिराह-राजादनो दुग्धेन वर्पति । तद्नु पातसाहिना संघपतीभूय पूजामहाध्वजाऽऽवारिकारात्रिकादिकं कृत्वा संघेन सार्द्धं सहस्रलोकेन सूरिभिः सह त्रिःप्रदक्षिणां कृत्वा राजादनितरोरधः स्थितम् । तानता सूरेध्यानवलेन संघसहितसुरत्राणोपरि कुंकुमकेसरकपूरिमिश्रं दुग्धं राजाद्नितो ववर्ष । ततश्चमत्कृतचित्तेन सुरत्राणेन सह गिरिनारं प्रति चितः । तीर्थासन्नगतेन तेन सूरिः पृष्टः-अस्य तीर्थस्य कः प्रभावः ?। सूरिराह-अच्छेद्योऽभेद्योऽयम् । किन्तु वन्त्रमयी

¹ प्र०-कोष्टस । 2 प्र०-वदाहि । 3 प्र०-'विलिखा' नास्ति । 4 प्र०-नागपुरनगरमागेण । 5 प्र०-एतेत्पदं नास्ति ।

मृतिः। ततः सुरत्राणेन सुद्गरघाते दत्तेऽप्तिस्कृलिंगाः प्रकटीभूताः, परं न भगः। तेन प्रभावेण रिक्षितेन स्थालं टक्केंमृत्वा नेमिर्वर्द्धापितः। रात्रो केनापि म्लेच्छेन संबीः इयामलप्रतिमा एकत्र मध्ये संस्थाप्य रात्रो सुप्तम्। एवं च व्यवहारिणाममे कथितम्—यद्येते भूता रात्रो मम प्रस्यं दर्शयिष्यंति तदा छोटयिष्यामि नोचेत्सर्वाश्चर्णीकरिष्यामि। एवं
कथित्वा सुप्तः। परं कालवद्गेन कोऽपि चर्मत्कारों न दृष्टः। प्रातः श्राद्धजनेन म्लेच्छव्यतिकरं विम्वव्यतिकरं च
सुरत्राणामे निवेदितम्। सुर० स आहूतः पृष्टश्च—भो! तवामे भूतेः किमपि कथितं न वा?। तेनोक्तम्—निह निह। ततः
सुरत्राणेनोक्तम्—सर्वेभूतिर्ममामे मीनितः छता, अयं दुष्टः अस्मानिभभवति तेन त्वया शिक्षा दातव्या। ततः स धृतो
निर्धातनार्यं श्राद्धेः छच्छ्रेण मोचितः। एवं प्रकारेण गमनागमने सर्वजनाशां पूर्यन् योगिनीपुरे सूरिभिस्सह महामहोत्सवपूर्वकं प्रावीविशत् सुरत्राणः॥

॥ इति श्रीजिनप्रभस्तरीणां प्रवन्धोऽयं ॥ लिखितं पं० रविवर्द्धनगणिभिः ॥

[४] G संग्रहस्थित जीव-इन्द्रियसंवादकथा।

अन्यदा जीवसीन्द्रयेः सह विवादः । तानि भणन्ति—वयं भन्यानि, अस्मिद्धना न स्युः किञ्चन । स जीवो भणे-दृहं चारः । एवं सित जीवेनोक्तम्—यान्तु भवन्तः । गते नेत्रे । ताभ्यां विनापि श्रमणादिकाः क्रियाः कुरुते । ततः कर्णों गतो । ताभ्यां विनापि जातं सर्वम् । नाशिकापि जिह्वापि गता । स्वादं न रुभते । गतैः सर्वेरिप जीवः सर्वोनिप न्यापारान् कुरुते । ततो जीवेनोक्तम्—आयान्तु भवन्तः । अहं यामि । तथा कृतम् । जीवो वपुपो दूरे स्थित्वा स्थितः । ततः मृत इव स्थितः । वालोर्व्या (?) भणत—को गरीयान् ?। तैरुक्तम्—भवान् । एवं निर्णयः झकटकस्य । अतो जीवो नरके न क्षेप्य इन्द्रियाणां स्वार्थं साधियत्वा ॥ ३ ॥

[५] G संग्रहगत धनश्रेष्ठीकथानके।

पृथ्वीपुरे धनश्रेष्ठी। तस्य चत्वारः पुत्राः। म्रियमाणेन पित्रा शय्याधः स्थिताश्चत्वारः कलशा विभन्य समर्पिताः। तेपु रजो-ऽस्थि-भूर्ज-हेमादि विद्यते। ततः पितुर्मृतेरनन्तरं ते परस्परं विवादं कुर्वाणाः पशुपालेनैकेन वारिता एवम्-रजः सेत्रम्, अस्य पशुअश्वमनुष्यादि, भूर्जं लेख्यादि, कलाहीनः किमपि न वेत्ति सुवर्णम्।। १४।।

¹ नास्त्येतत्पदं रविवर्द्धनप्रती ।

प्रबन्धचिन्तामणिसम्बद्धः—

॥ पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहः ॥

[P. B. Br. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेभ्यः सङ्गृहीतः ।]

१. विक्रमार्क-प्रवन्धाः।

विक्रमार्कसत्त्वप्रबन्धः (B.)

- (१) अकार्षीदनृणामुर्वी विक्रमादित्यभूपतिः। स्वर्णे प्राप्ते तु है रंकस्तुरष्काकुलितां व्यधात्॥
- (२) हूणवंदो समुत्पन्नो विक्रमादित्यभूपतिः। गन्धर्वसेनतनयः पृथिवीमनृणां व्यधात्॥
- § १) उज्जयिन्यामुच्छिन्नवंशो विक्रमादित्यनामा जननीसहायोऽस्ति। तस्य भट्टमात्रो नाम मित्रम्। स एकदा द्रव्यार्जनाय मित्रेण सह जननीमापृच्छ्य चचाल। वजाकरं स्मृत्वा तदुपरि प्रस्थितः। क्रमेण रोहणाचले 5 गतस्तत्र ग्रामे रात्रौ वसितः। प्रातः खनित्रमादाय रोहणाद्रौ गतः। तत्र कौपीनमाधाय त्रिवेलं 'हा दैव' इत्युक्त्वा ललाटं करेण हत्वा वातो दीयते। अतो भट्टमात्रेण चिन्तितम्—असौ सच्चवानस्ति। अपूर्ववार्तां विना न 'हा दैव' इति वक्ष्यति। अतो भट्टमात्रेणोक्तम्—देव! उज्जयिन्या एको जनः समायातस्तेन तव मातुरनिष्ट-मुक्तम्। इति श्रुत्वा विक्रमार्केण 'हा दैव' इत्युक्त्वा करात्कुदालकः क्षिप्तस्तस्य संघातेन दिच्यं रतं प्रादुरास। विक्रमोणाक्ते मित्रेणोक्तम्—कुशलं गृहे, कोऽपि नायातः। तिर्हं कथमलीकमुक्तम् १। तदन्त इमं श्लोकं पठता 10 विक्रमार्केण करात्त्यक्तं दरे—
 - (३) धिग् रोहणगिरिं दीनदारिद्यव्रणरोहणम् । दत्ते हा दैवमित्युक्ते रह्नान्यर्थिजनाय यः ॥

इत्युक्त्वा यथागतं ययौ । पुनरुक्षियन्यामायातस्तत्र पटहो वाद्यमानः श्रुतः। कमिप नरं पत्रच्छ-को हेतुरत्र १। तेनोक्तम्-अत्र राजा विलोक्यते । कथम् १ । योऽत्र राजा भवित स रात्रौ विपद्यते । विक्रमेणोक्तम्-अहं भिविष्यामि । इत्युक्ते प्रधानै राज्ये स्थापितस्तेन सन्ध्योपिर नैवेद्यानि कारितानि । पुष्पाद्युपस्करः सकलोऽपि सजी-15 कृतः । पल्यङ्कपार्श्वे पुष्पगृहं तत्र नाना नैवेद्यानि हौकियित्वा स्वयं सङ्गमाकृष्य जात्रन्नस्ति । इतो गवाक्षविवरात् धूमो विस्तृतः । क्रमेण वर्वरो वेतालः प्रकटीभूतः । नैवेद्यं स्वेच्छ्या भुक्तवान्, विलेपनं च । पश्चातुष्टः सन् विक्रममाहूय वभापे-राजन् ! तव भक्त्याऽहं तुष्टः । तवं राज्यं कुरु । परिमयिदिने दिने देयम् । तस्तिन् गते नृपः सुप्तः । प्रातर्नृपकर्पकाः समाजग्रुः । ते नृपं जीवन्तमालोक्य हर्पकोलाहलं चक्तः । प्रधानपुरुपैर्नृपोऽभिपिक्तः । नित्यं नित्यं तावन्नवेद्यं निष्पद्यते। एकदा नृपेणोक्तो वर्व्वरः-कस्त्वम् १। तेनोक्तम्-इन्द्रसेवकः। तिर्हे मद्दाक्यादिन्दं 20 पृष्टा कल्ये वाच्यम्-यद्विक्रमस्य कियदायुः । स द्वितीयदिनेऽवादीत्-वर्ष १ शतम्, नाधिकं न न्यूनम् । तिर्हे इन्द्रपार्श्वान्मे वर्षद्वयमधिकं कुरु । तेनोक्तम्-इन्द्रेणाप्यनेनायुरिषकं न भवित । तिर्हे वर्षद्वयं न्यूनं कुरु । तद्पि न भवित । इति विमृश्य द्वितीयदिने नैवेद्यं नाकार्पात् । स क्षुधितः सन् नृपं प्राह-त्वं स्ववाक्याच्युतः । अतः शसं कुरु । शस्ते कृते नृपेण भूमौ पातयित्वा कण्ठे चरणः प्रदत्तः । तेनोक्तम्-मा मारय । तवाहं किंकरः । स्यृतेरतु समेष्यामि ॥

- §२) एकदाऽप्रिकचेतालेनोक्तम्—त्वं नारीहृद्यं चेत्सि परं चरित्रं न । एकदा नृपस्तदन्वेपणाय चलितः । किसंशिद्युरे गतः । तत्रको द्विजस्तत्सुता कुमारिकाऽस्ति । नृपेण भोजनार्थे द्विजोऽभ्यार्थितः । कुमार्या.....(अत्र कियान् पाठो म्लाद्यें पिततः प्रतिभाति)...चिन्तितम्—मृत्युरुपिश्यतः । सेवोक्ता । तव किङ्करः । मां किं मार्यिस । तयोक्तम्—तिहं अवाद्युखो भृत्वा पत । तया दिधकरम्बोऽग्रे त्यक्तः । मुखं च खरण्टितम् । जनेन पृष्टं किमिदम् ?। असी देशान्तरिको भोजनाय भणितोऽस्य ऊर्द्धं गाढं जातं अतो पूत्कृतम् । खस्ये जाते जनो गतः । तयोक्तम्—त्वं स्तीहृद्यं वेत्सि परं चरितं न वेत्सि । नृपः स्तीहृद्यपरीक्षां कृत्वा खराज्ये गतः ॥
- §३) इत एकदा नगरमध्ये दन्तकः श्रेष्ठी नृपमान्योऽस्ति । तेन गृहार्थे भूराचा । सत्रधारानाह्योक्तम्—
 ताद्दग्गृहं मण्डयत यत्र सप्तान्वयिनः खादन्ति पिवन्ति च । द्रव्यं खेच्छया दास्तामि । निमिच्छानाह्य श्रुभमुहूर्चे
 गर्जाप्रः कृतः । भव्येष्टिकासञ्चयेन भव्यकाष्ठेः कृत्वा सप्तपणः (खण्डः) प्रासादो नृपप्रासादसहृकारितः ।
 10 पूर्णे निप्पन्ने सत्रधारेककम्—एप ईदृशोऽस्ति यादृशे धनिकभाग्यात् सुवर्णपुरुषः पति । तेन सत्कृतास्ते
 सत्रधाराः । निमिच्छमहूर्चं दत्तम् । तत्र प्रवेशे प्रारव्धे राजपर्यन्तो जनो भोजितः । द्विजातीनां दानं दत्तम् ।
 तदन्ता रात्रो सप्तस्तदा 'पतामि' इति वचनमशृणोत् । चिन्तितमभिनवगृहे धृंसकः । द्वितीयवेलायामुक्तम्—पतामि ।
 तावत्परिजनं प्राह्—रे ! रे ! उत्तिष्ठत वहिनिस्सरत । एप पतिष्यति । यावदुत्तिष्ठति तावत्पतामीति श्रुत्वा
 निःसृतः । कृपितो गत्वा नृपं प्राह—देव ! तव राज्ये सत्रधारिनिमच्छश्चे सृपितः । कथम् १ । सहरपमुक्तम् । नृपेण
 15 सृत्रधाराः पृष्टाः । देवासो निर्दोप ईदृशोऽस्ति यसात्सुवर्णानरः पतिति । निमिच्छमुहूर्चे निर्दोपतोक्ता । राज्ञोक्तम्—
 कियद्रव्यं लग्नम् १ । वसित नवा । तेनोक्तम्—देव ! तृप्तोऽहम् । राज्ञा द्रव्यं दत्तम् । रात्रावारात्रिकानन्तरं तत्र
 गतः । शय्यापार्थे सङ्गमाकृप्य स्थितः । पतामीति सरत्रयमशृणोत् । पतेत्युक्तम् । सद्वाग्रे सुवर्णपुरुपः पपात ।
 प्रातर्न्वेण सर्वेणं दन्तकस्य च द्र्वितः । सपश्चाचापः स प्राह—देव ! याद्य् तव भाग्यं तव सन्त्वं च, ताद्यम् न
 कस्य । इति सुवर्णनरप्राप्तिः सन्वात् ॥ इति श्रीविक्रमार्कसच्चवन्यः ॥

20दरिद्रक्तयप्रवन्धः (B. Br.)

१४) अर्थेकदा सर्वत्र देश-देशान्तरे इयं वार्ता-यदुज्जयिन्यां सर्वं विक्रयमामोति । एकेन राज्ञोक्तम्-तदहं प्रेपिय्यामि यत् कोऽपि न लाति । तेनायोमयो दिरद्रनरः कारितः । एकसिन् करे स्र्य्यमन्यसिन् प्रमार्जनी । एवं कृत्वा व्यवहारिणोऽपितवान् । उज्जयिन्यां गतः सर्वं वस्तु विक्रीय एप दर्शनीयः । लक्षं मृल्ये वाच्यम् । यदि कोऽपि न गृह्णाति तदा नृपप्रतोल्यां शब्दं क्षिष्टा पुरस्य दोपं दत्त्वा व्यवर्त्तनीयम् । तेन तत्र गत्वा सर्व कोऽपि न गृह्णाति तदा नृपप्रतोल्यां शब्दं क्षिष्टा पुरस्य दोपं दत्त्वा व्यवर्त्तनीयम् । तेन तत्र गत्वा सर्व कोऽपि नेत्रे निर्माल्य नष्टुं प्रयुत्तः । तेनोक्तम्-लक्षं दत्त्वेष गृह्णताम् । पुर्या दोपं नानयतेति वदतोऽपि जनो द्रं गतः । तेन नृपद्वारे नीत्वा व्याहृतम्-असाकं दरिद्रनरं न कोऽपि गृह्णति । पुरद्पणं दत्त्वा यामः । नृपेणाहृतः । दरिद्रपुत्तलः समानीतः । सभाजनस्तु नेत्रे निर्मील्य स्थितः । नृपेण लक्षं दत्त्वा क्षीतः । भाष्टागारे क्षिपः। इतो रात्रेः प्रथमे यामे सप्ते पुमानेकः समेत्य नृपं प्राह—देवाहं यामि । कस्त्वम् १ । गजाधिष्टाता । कथं व्यासि १ । दरिद्रक्रयात् । यत्र दारियं तत्र गजाः क १ । तिर्हं याहि । तस्तिन्तते वित्तीये यामेऽप्येकयोक्तम्-देव ! सत्कलापयामि । का त्वम् १ । श्रीः। कथम् १-दारिय्ये क्रीते श्रीः क । मत्संघातो याति । सत्त्वरं याहि । इतस्तुरीय-यामे पुमानेत्य यभापे-देव ! मृत्कलाप्यसे । कस्त्वम् १ साहसपुमान् । नृपेणोक्तम्-त्वं मा त्रज । कथं त्वया दारियं क्रीतम् १ । यत्र तत् तत्र साहसं क १ । नृपेणोक्तम्-यदि सत्त्वमासीत्तद् क्रीतम् । येपां न, तः कथं न क्रीतम् । यदि यास्यित तदा विक्रमादित्ये मृते; इत्युक्त्वा क्षुरिका कृष्टा । तेनोक्तम्-देव ! मृतं कुरु । सकलः सार्थो मिये अति स्थितः । प्रातर्नेपण दरिद्रप्रत्तरकं सभायामानाय्य रात्रिवृत्तान्तं निवेद्य दृरिकृतः । इति दरिद्रक्रयप्रवन्धः ॥

वीकमचूतकारप्रबन्ध: (B.)

§ ५) तथैकदा नृपतिरन्धकारपटमावृत्य पुरे अमन्त्रेकां दिन्यरूपां स्त्रियं दृष्टा प्राह-देवि ! क यासि ? । तयो-क्तम् तव पार्श्वे । तेनोक्तम् चल । साऽग्रे नृपः पृष्ठे । एकसिन् प्रासादे गतौ । तत्र प्राहरिका आकृष्टखङ्गा उपविष्टाः सन्ति, परं चित्रलिखिता इव । तत्र शुनः सन्ति [तेऽ]पि तथैव । सा मध्ये प्रविष्टा, नृपोऽपि । सा तं पञ्चमभूमौ निनाय । तत्र स्नानसामग्रीं कृत्वा स्नापितो नृपः। सा तु च्छवना नृपं विश्वत्वा मध्ये पल्यङ्के 5 विवेश । नृपस्तु द्वारमागत्य ऊर्द्धीभ्य स्थितः । प्लयद्भद्वयं दृष्ट्वा सन्देहपरः कं पल्यङ्कं श्रयामि । तत्र स्त्रीयुग-मुपविष्टमित । नृषे सन्देहपरे मुख्या जगाद-रे ! कोऽयं नृपशुः समानीतः । वहिः कृष्टा कमपि नरमानय । चेटी उत्थाय नृपं विहिनिनाय । तदनु नृपेण चिन्तितम्-मां विनाऽन्यं विदग्धं कमानेष्यति । तदनु चतु-प्पथान्तर्भ्रमित । इतो वीकमो द्यूतकारी द्यूतादुत्थितः । कान्द्विकगृहे दत्ते, वहिः खित्वा द्वारमुद्धाटयेत्याह । तेनोक्तम्-कस्त्वम् १। वीकमओं इत्युक्ते स आह-कस्ते द्वारमुद्धाटयति । मम किं त्रङ्गटकं ग्रहीतुकामः १। तेनो-10 क्तम्-वाढं बुसुक्षितः । द्रच्यमप्पय, वहिः खस्यैवानं दिशा तेन किञ्चिदिपतम् । कान्दविकेनोक्तम्-कथं गृहासि १। भाजनमर्पय । तेनोक्तम्-गृहीत्वा यातुकामः । तर्हि कर्परे कृत्वा समर्प्यताम् । तेनार्पितम् । आदाय प्रपां प्रति व्रजन् तां चेटीं यान्तीं प्राह-रे! दासि क यासि १। तयोक्तम्-तवानयनाय । तिह भोज्यं गृहाण । तयोक्तम्-परित्यज । तत्रापि भविष्यति भोज्यम् । तया सह चिलतः । नृपः पृष्टे लग्नः । तत्र नीतः स्नापितश्रीवराण्य-र्पितानि भोजितश्च । नृपस्य पञ्यतस्सा तदृष्टिं वश्चयित्वा पल्यङ्के उपविष्टा । नृपे चिन्तातुरे स मध्ये प्रविश्य 15 एकसिन्पल्यङ्के उपविष्टः । सा स्त्री उत्थिता । पत्राण्यादायाग्रे कर्त्तनं कृत्वाऽर्पितवती । तेन विण्टकर्त्तनं कृत्वा पुनर्रितानि । तयोक्तम्-शयनं कुरु । स पल्यङ्के किश्चिदृष्टि दन्त्रोच्छीर्पके मस्तकं कृत्वा सुप्वाप । नृपो विस्तितः । कथमनेन खामिनी ज्ञाता, कथं पत्राण्यर्पितानि, कथमुच्छीर्पकं ज्ञातम् १। स क्रीडितुं प्रवृत्तः । नृपस्तु खस्थाने गतः । प्रातवीकमो निष्कासितः । प्रपां गत्वा सुप्तः । रात्रिवृत्तं पृच्छ्यमानोऽपि न वक्ति । नृपेण शूलोपरि प्रहितः। यदि रात्रेर्वृत्तं वक्ति तदा न क्षेप्यः। स ग्रूलोपरि नीयमानोऽस्ति। आरक्षकस्त्विति वक्ति-यन्नपो रात्रि-20 वृत्तं पृच्छत्यसौ न वक्ति । तया नार्या गवाक्षस्यया शब्दः श्रुतः। स दृष्टः । चेटीं प्राह-अरे दृष्टौ विल्वयुगं भञ्ज । तया तथाकृते तेनोक्तम्-कथयिप्यामि नृपनीतः। नृपेणानायितः। रे! कथय-मया सा चेटीति [न] व्याहृताः त्वया चेटी किमिति ज्ञाता ? । तेनोक्तम्-देव! चेटीजनस्य सुरिभवस्तुप्राप्तिः प्रस्तावे भवति । अतोऽस्याः ज्ञरी-रेऽम्लो गन्यः । अतथेटीत्युक्ता । तत्र प्राहरिकाणां किं कृतमस्ति यत्ते न श्वसन्ते ? । धूपवशात् । कथं खामिनी-चेटी-पल्यङ्को ज्ञातः ? । देव । उत्तमस्य मनुष्यस्य गृहस्य दक्षिणे भागे पल्यङ्कः स्यात् । पत्राण्यग्रं छिच्वा तवापिं-25 तानि, त्वया तु विटमपाकृत्यः तित्कम् ?। तयोक्तम् अहं तव खहृदयमपेयामि परं वहिने वाच्यम्। मया व्याह-तम्-यत् शिरो याति, परं न विच्म । ति कथं कथयसि । तैयैवोक्तम् । तया कथम् । चेटीं प्रेष्य महुष्टौ विल्वं विल्वेनाहत्य भग्नम् । अत उक्तम्-तत्कथय । पल्यङ्के उच्छीर्पकं प्रान्तो वा कथं ज्ञातः ? देव ! उच्छीर्पके चूर्णेन पादः खरिण्टितो भवति । एवं तस्य वचः श्रुत्वा राज्ञोक्तम्-द्यूतं त्यज । त्वया सदैव मत्समीपे खेयं मत्पुत्रवित् । स प्रसादपात्रं कृतः । इति वीकमद्युतकारप्रवन्धः ॥

स्त्रीसाहसप्रबन्धः (B.)

· §६) एकदा विक्रमादित्ये जननीं नन्तुं गते माता तस्याशिपं ददौ-वत्स! स्त्रीणां ते साहसं भवतु । नृपे-णोक्तम्-मातः! किमिदं साहसम् ? स्त्री तृणसमा । देव्याह-दर्शयिष्यते वत्स! प्रातः प्रतोलीद्वारे आवासान् दत्त्वा स्थेयम् । नुपस्तत्र गतः । अथ देव्या मालिन्येका पृष्टा-रे ! कोऽत्र व्यवहारी मुख्यः ? । कस्य गृहे वार्ढं गृहिणीरक्षा १। तयोक्तम्-देवि ! सोमभद्रश्रेष्टिनः । तत्र त्वं यासि १। तयोक्तम्-पुष्पाण्यादाय यामि । तस्या 35 गृहिण्याऽग्रे वाच्यम् —यद्विक्रमार्कस्त्वामिलपति । तया तत्र गत्वा निवेदितम् । तयोक्तम् —अहं सप्तमभूमेरध उत्त-तितुं न लेमे । तया देव्यग्रे व्याहृतम् । देव्या द्वितीयदिने प्रेपिता । अहं रज्ञं प्रेपिण्यामि, तत्प्रयोगेण त्वयाऽऽ-गन्तव्यम् । तया मानितम् । मालिनी पुप्पस्थाने रज्जमादाय गता । तस्या अपितः । तया स्तम्भे वद्धा विहः क्षिप्तः । देव्यादेशाद्राज्ञा गुट्टरस्य स्तम्भे वद्धः । सा भर्त्तिर सुप्ते द्वरकेण भूत्वा वहिर्गता । नृपशय्यान्ते उत्तीर्य गृणं प्राप्ता । नृपेण पृष्टा—का त्वं देवि । व्यवहारिपत्ती । राज्ञोक्तम्—सर्भद्धां नाहमभिलपामि । सा तेनैव प्रयोगण गृहं गता । सुप्तं पतिं हत्वा पुनरागता । नृपेणोक्तम्—पतिमारिकां न भेजे । तयोक्तम्—देव ! यज्ञातं तत्रान्यथा भवति । परं प्रातमें साहसमवलोकनीयम् । सा वेश्मिन गता । रज्जुं क्षित्वा प् व्यक्ते—यत् धावत, श्रेष्टी केनापि हतः । कलकले जाते जनो मिलितः । किमिदं न ज्ञायते । सा सक्तकेशा काष्टारोहणे सज्जा जाता । जनो वारयति सा तु न निवर्त्तते । इतः प्रातर्नृपस्तत्र जनाज्ज्ञात्वा तदावासे आयातः । नृपेणोक्ता—रात्रिवृत्तं तत्, 10 आधुनिकिमिदं निवर्तस्य । मद्वपुरलंकुरु । कोऽपि न ज्ञास्ति । देव ! नैतद्वक्तव्यम् । वीटकं देहि । अस्य त्रतस्ति । देवो वापनम् । सा विसर्जिता । पत्या सहाग्रो प्रविष्टा । नृपस्तु जननीं नन्तुं गतः । वत्स ! स्त्रियः साहसं तेऽस्तु । नृपेणोक्तम्—देवि ! तथ्यमिदं दृष्टम् । इति स्त्रीसाहसप्रवन्धः ।। स्त्रीचिरित्रप्रवन्धः (P.)

§७) कएटा नृपविक्रमेण देन्ये धावनाय वामपादः पूर्वमर्पितः । तयोक्तम्-यदि स्त्रीचरितं वेत्सि तदा वामं 15 पार्द प्रक्षालयामि । नृपत्तमन्वेष्टुं चचाल । मार्गे कसिंश्वित्पुरे जलहारिणीमेकां ददर्श। तया व्याहृतं कुतः समायातः ? तेनोक्तमुखयिन्याः । क यास्यसि ? नारीचरितमन्वेष्टम् । तर्हि मया सह मद्वृहे एहि, यथाऽत्रैव ज्ञापयामि । परमहं यहचिम तत्त्वया पृष्ठानुगेन वाच्यम्। नृपो गृहे नीतः । सकलेऽपि कुटुम्बे इति व्याहृतम्-एप मद्भाता वाल्यादिष मातृशाले वर्द्धितः। अधुना मम मिलनाय समायातः। राज्ञा नितः कृता । तित्रयो भगिनी-पतिरिति कृत्वा नतः । गौरवेण भोजितः । तया रात्रौ स्वपतिरुक्तः-यदावयोः सम्बन्धो जन्मावधि । परम-20 द्यतनो दिनो आतालभ्यः । एकान्ते भूत्वाऽस्य पार्श्वात्पितृगृहवार्त्तां शृणोमि सुखदुः खकरां च । दिवा वक्तमिष प्रस्ताचो नाऽभृत् । उपवरकान्तर्नृपस्य शय्या । राजा भगिनीपतिना सह वार्त्ता कृत्वा शय्यायां गतः । सा स्वयं पृथक् शय्यां कित्रा मध्ये विवेश । पत्युरग्रे प्राह—तालकं दत्त्वा स्वं समीपे गृहाण । मा जनापवादो भवतु । तेनोक्तम्-को जनापवादो मिय सित १। तयोक्तम्-एवं क्करः। तथा कृते वार्त्ताप्रसङ्गादनु तयोक्तम्-मदभिलिपतं कुरु । राज्ञोक्तम्-त्वं मे भगिनी । तयोक्तम्-कुतः १ त्वं पथिकः । को भ्राता का भगिनी । तयो(तेनो)क्तम्-25 जिह्नयोक्ता, तदहमकृत्यं [कथं] करोमि?। न विधासासि, तर्हि पश्य यद्भवति। तथा पूत्कृतम्-धावत धावत सत्वरम्। द्वारमुद्वाटयत । नृपेण विनष्टमपि सञ्चित्योक्तम्-मा मारय यत्कथयसि तत्करिष्ये । तर्ह्यधःपत श्वासस्तु न ग्राह्यः। तया पादेनाहत्यं करम्बकरोटं पूर्वधृतं त्यक्तम् । नृपवदनं खरिडतम् । तावत्पत्या द्वारमुद्वाटितम् । र्दापः कृतः । जनेन पृष्टम्-किमिद्म् ? । पापाहं किं जाने । अस्य मद्भातुः पानीयरसो जातः । उदरव्यथाऽस्य रवात्पपात । मया तु भीतया पूत्कृतम् । जलमानीय वदनं क्षालितम् । शकटिकामाधाय उदरसेकः कृतः । ²⁰ नृपस्तु श्वासमेव न गृहाति । सर्वः कोऽपि निष्कासितो मध्यात् । क्षणं सुखासिकाऽस्ति । यदि निर्जनं भवति तदा निद्रा एति । इति कृत्वा जने गते द्वारं दचोक्तम्-इदं स्त्रीचरितम् । ज्ञातं न वा १। राज्ञोक्तम् खकुलादि आगमनकारणं च । प्रातम्तिकलाप्य स्त्रियो मुद्रारतं दत्त्वा खपुरे गतः । पत्ये वृत्तान्तमावेदितवान् । तयोक्तम्-कथं वामपादमर्पयसि ? । तेनोक्तमतः परं न । इति स्त्रीचरितप्रवन्धः ॥ देहलक्षणप्रवन्धः (B.)

ⁿ⁵ १८) एकदा नृपो राजपाट्यां त्रजन् केनापि पण्डितेन दृष्टः । तं दृष्टा पण्डितः शिरःकम्पं चक्रे । नृपस्तु राजपाटी

20

कृत्वा धवलगृहे गतः । केनाप्युक्तम्-देव ! पण्डितः कोऽपि देशान्तरीयश्रतुप्पथे साम्रद्रिकशास्त्रपुस्तकानि ज्या-लयनस्ति । नृपेणाकारितः । कथं ज्वालयसि ? । देव ! मया जन्मावधि इदमेवाभ्यस्तम् । तव देहमालोक्य एपु विरक्तिर्जाता । तव देहे तछक्षणं नास्ति येन कापि भद्रवेला भवति । त्वं तु राजराजेश्वरोऽसि । राज्ञोक्तम्-पुनर्मे सर्वशरीरलक्षणान्यवलोकय । देहदर्शिते तेन विशेषतो मुखमोटनं कृतम् । नृपेण पृष्टम् । देव ! किमिद्रमु-च्यते, किमपि न पञ्यामि । पुनः किमपि गुप्तं प्रकटं वा सार । तेनोक्तम्-यदि वामकुक्षौ कर्द्वरमन्त्रं भवति तदा 5 सर्वमेवास्ति । तन ज्ञायते । देवेनोक्तम्-ज्ञास्यते । क्षुरिकां कृष्ट्वा यावद्विदारयति कुक्षिं तावत्तेन करे धृत्वोक्तम्-देव ! सर्वलक्षणानि सन्ति । कथम् १ । यदि सत्त्वमस्ति, तत्सर्वाण्यपि । देव ! भिक्षुरहम् , मद्रचसा प्रवृत्तः । उक्तं च "सर्वं सत्त्वे प्रतिष्ठितम् ।" नृपेण प्रसादं दत्त्वा विसृष्टः । इति देहलक्षणप्रवन्धः ॥ मनि-मनुप्रबन्ध: (B. Br.)

§९) एकदा विक्रमार्को भट्टमात्रं प्राह-भो ! 'मिन मनु' इति किमुच्यते । देव ! दर्शयामि । पुरोपान्ते पाद-10 मवधारयत । द्वाविष पुरो वाह्ये गतौ । तदवसरे एकः काष्टभारवाहको दृष्टः । भट्टेनोक्तम्-देव ! अस्रोपिर तव चित्तं कीद्यम् ? । न वर्यम् । स भट्टेन चोदितः -अरे! कस्ते काष्टानि लास्यति । अद्य नृपः परासुरासीत् । तेनोक्तम्-विरुक्ते जिह्वाया अद्य विशेषतो मम काष्टानि महार्घ्याणि विकेप्यन्ते । वहवी जनाः काष्ट्रमक्षणं करिप्यन्ति । अग्रे चिलतौ । अग्रे महीरीआ एकाऽभ्येति। भट्टेनोक्तम्-अये मध्ये क यासि ?। अद्य नृपः परोक्षो जातः, कस्ते दिध लासिति । तया तत्कालं गोलिका त्यक्ता । रुदितुं प्रदृत्ता । भट्टेनोक्तम्-तव नृपेण किं 15 दक्तम् । न किमिप । स पृथिन्या आधार आसीत् । भट्टेनोक्तं नृपस्य । अनेन नरेण पश्चादागतेन क्षेममुक्तम् । सा हृष्टा । नृपेण मुद्रारतं दक्ता प्रहिता । अतो मनिस मनो भवति । नृपः स्वगृहे गतः । इति मनि-मर्जु-सम्बन्धप्रवन्धः ॥

§१०) एकटा राजपाट्यां राजा व्रजन द्विजमेकं कणावचयं क्वर्गणं दृष्टा प्राह—

(४) निअउअरपूरणंमि वि असमत्था किं पि तेहिं जाएहिं।

[द्विज:-] सुसमत्था वि हु न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि॥ (५) 'तेहि वि न किं पि' भणिए विक्रमराएण देवदेवेण। दिन्नं मायंगसयं जचसुवन्नस्स दो कोडी ॥

विक्रमपुत्र-विक्रमसेनसम्बन्धप्रबन्धः (B. G.)

- §११) अथ विक्रमार्के दिवं गते विक्रमसेनकुमारस्य राज्याभिपेकसमये पुरोधसाऽऽञीर्वचः प्रोक्तम्-यन्तं 25 महाराज ! विक्रमार्कस्याधिको भावी । तदा राज्याधिष्ठात्रीभिर्देवीभिरिधष्ठिताभिः सिंहासनस्थाभिश्रतस्रुभिः पुत्तिकाभिरीपद्धसितम् । राज्ञा पृष्टाः-किमिति हस्यते ?। ताः प्रोत्तः-देव ! तेन सह साम्यमपि न घटते, क्रतोऽधिकत्वम् ? ।
- 1. आद्याह-तव पिताऽपूर्वो वार्ता श्रुत्वा[G वार्ता कथकाय]दीनारपंचशतीं ददाति । एवं श्रुत्वा खापरका -चौरेण दीनारपंचशती याचिता। [G वार्ता चैका कथिता] देव! पातालिववरं गन्धवहत्रमशानतीरेऽस्ति। तत्र 30 विवरे देवीहरिसिद्धिक्षिप्तो दीपः पतन्मया दृष्टः। तस्यानुपदिकेन मयापि झम्पा दृत्ता। पाताले दिव्यं सौधं दृष्टम् । तत्रोत्कलमाना तैलकटाहिका दृष्टा । तत्पार्थे एको नरो दृष्टः । पृष्टश्च किमर्थमिह १ । तेनोक्तम्-अत्र सौधे

¹ प्रत्यन्तरे-जानेऽसुं पापं मारयामि । तर्हि पश्यताम् । 2 प्र०-मनहं मन । 3 G खर्परकः ।

शापश्रष्टा देव्यस्ति । योऽत्र झम्पां यच्छिति स तस्या वर्षयतं पितर्भविति । अतोऽहं तिदेच्छयात्रासि । [G परं साहसं नाित्त] इत्युक्ते दीनारपंचयतीं दत्त्वा नृपोऽपि तेन खर्परदर्शितेन पथा गतस्तत्र सत्वरं कटाहिकायां झम्पां ददां । स तया नार्या जीवितः । यावत्सा राजानं वृणोति तावत्रृपेणोक्तम् असुं नरं वर, मे पूर्णिमित्युक्त्वा परोपकारं कृत्वा स्वपुरे समायातः । एवं यः परोपकारी । [G तद्धिकोऽयं कथं भावी ।]

- 5 2. द्वितीययोक्तम्-एकदा काशीतो हो द्विजो समागतो। नृपेणापूर्वं पृष्टो। ताभ्यामुक्तम्-असद्शे [G पाताल]-विवरमित । तत्रान्यो राक्षसोऽित । असदेशस्यामी यशोवर्मसौलकटाहिकायां झम्पां दत्ते [G दत्ता स्वमांसेन राक्षसस्य पारणं कारयित] स राक्षसस्तं पुनर्जावयित । प्रतिदिनं रात्रौ सप्तापवरिकाः सुवर्ण्णाः करोति । नृपस्तु प्रातर्दते । इदं श्रुत्वा तयोद्विजयोदीनारसहस्रमदात् । नृपस्तत्र गत्वा कटाहिकायां झम्पां ददौ । राक्षसेन मित्रतो जीवितथ । राक्षसस्यानध्यशापस्थान्तोऽभृत् । नेत्रैनिरीक्ष्य विक्रमं प्राह-तुष्टोऽिस तव सत्त्वाद् । विक्रमार्कः-परं 10यिद तुष्टस्तद्वाऽस्य नृपतेर्झम्पां विना नित्यं सुवर्णां देयम् । इत्युक्त्वा परोपकारं कृत्वा स्वस्थाने गतः । तत्कथं विक्रमादिधकस्त्वं भवित ।
- 3. तृतीययोक्तम्-एकदा केनाप्युक्तम्-देव! त्वं परकायप्रवेशविद्यां न वेत्सि । नृपेणोक्तम्-को जानाति १। श्रीपर्वते भरवानन्दोऽस्ति, स जानाति । नृपः खल्वाटं कुम्भकारमादाय तत्र गतः । योगी मिलितः । स शुश्रूपया तुष्टः प्राह-विद्यां गृहाण । पूर्वं मम मित्रस्य देहि । तेनोक्तम्-असौ कुपात्रं विद्यायोग्यो न । नृपेणाग्रहाद् 15 दापिता । नृपस्त्ववन्त्यां गतः । नृपस्तु द्वारे स्थित्वा किञ्चन्नरं नगरस्य शुद्धिं पप्रच्छ । तेनोक्तम्-नृपस्य पट्ट-हस्ती अद्य विपन्नः । नृपस्त्वन्तः पुरपरीक्षायै मित्रं प्राह-भो ! यदि मम शरीरं रक्षसे, तदाहं परीक्षां करोमि । तेनोक्तम्-करिप्ये। शरीरमेकान्ते ग्रुक्त्वा तं प्रहरके मुक्त्वा गजे प्रविश्य गजं सजीवमकरोत् । स खपादैः पुरान्त-र्गातः । इतो मित्रेणाचिन्ति-अमं भुण्डतरं त्यक्त्वा नृपश्ररीरमिष्ठिष्टाय भोगानभोक्ष्ये । स स्वश्ररीरं त्यक्त्वा नृप-शरीरे प्रविक्य मध्ये आयातः । नृपे आयाते गजो जीवितः न्इति वर्द्धीपनकान्यभूवन् । गजेन चिन्तितम् असौ 20 पापो ममोपरि चटिप्यति । इति सश्चिन्त्य गजः स्तम्भमुन्मूल्य वहिर्गत्वा प्राणानौज्झत् । इतः प्रत्यासन्ने आखेटक एकः शुकान् व्यापादयत्रस्ति । नृपजीवस्त्वेकस्य शुकस्य देहे विवेश । स शुको छव्धकं प्राह-रे ! रे ! शुकान्मा मारय । मां गृहाण । यदि ते द्रव्यस्पृहा पुरे चल । परमहं यत्र कथयामि तत्र विक्रेयः । सर्वोऽपि जनो याचते । शुको न वक्ति । मुख्यदेवीचेट्या याचितः । तेन पृष्टम्-दिश १ । देहि । तेन दीनारानादाय चेट्या अर्पितः । सा देवी शुकं दृष्टाऽऽकृष्टा । सुवर्ण्णपञ्जरे चिक्षेप । नृपोऽन्तः पुरमाययौ । देवी तं दृष्ट्वा खिन्ना सती प्राह—देव ! त्विय 25 देशान्तरं प्रस्थिते मया चिन्तितं क्षेमेणागतेऽपि देवे ततोऽपि मासं यावद्रहाचर्यम् । तदनु कुलदेवीपूजनं कृत्वा नियममपाकरिप्ये । स पश्चाद् गतः । जनस्तु चिन्तयति-कथं नृपतिरन्य एव जातः ? । देहमस्ति परं सम्यग् न ज्ञायते । देवी शुकेन वाढं संस्कृत-प्राकृतकाव्येस्तथा रिक्षता यथा त्विय जीवति जीवामि । इतो देव्या शुक आकारितः । तेनोक्तम्-देवि ! मार्जीर्या विभेमि । देव्याह्-यदि मरसि तदाहमपि त्वामनु मरिप्यामि । एकदा शुकोऽपि परीक्षार्थ मृतां गृहगोधां दृष्टा शुकदेहमुत्सृज्य तत्र विवेश । सा भित्तौ चिटता । शुकं मृतमालोक्य देवी 30 तेन सह काष्ट्राधिरोहणसञ्जा नृपेण वारिता । सा वक्ति यदि शुको जीवति तदा जीवामि, नान्यथा । नृपस्त्वपव-रिकां प्रविक्य देहमुत्सृज्य शुकदेहे प्रविष्टः। इतो विक्रमार्कः पछीदेहमुत्सृज्य खशरीरमादाय वहिरायातः। शुको जीवितः, परं देव्या दृष्टोऽपि न सुखायते । नृपं दृष्टा तत्कालमभ्युत्थानं चके । नृपेण शुको भाषितस्तेनोक्तम्-देवाहमदृष्टव्यमुखः। मां वामपादेन हत्वा मुश्च । नृपेणोक्तम्-तव सान्निध्येन मया देवीपरीक्षा लब्धा। स

कीरदेही हिजो गतः।

¹ G फन्ययासी मृतेन जीवितः। 2 G राज्यस्वरूपं। 3 G निर्यन्धात्तस्यापि दापिता।

(६) विषे प्राहरिके तृपो निजगजस्याङ्गेऽविशाद्वियया, विषो भूपवपुर्विवेश तदनु कीडाशुकोऽभूत्ततः। पल्लीगात्रनिवेशितात्मनि तृपो व्यामृश्य देव्या मृतिं विष्यः कीरमजीवयन्निजतनुं श्रीविक्रमो लब्धवान्॥

एवं यः परोपकारी कथं तेन समो भविष्यसि ।

· 5

- 4. तुर्ययोक्तम्-एकदा विक्रमार्केण उत्तमं सौधं कारितम्। राजा तत्र गतः। तत्र चटकयुग्ममितः। चटकेनी-क्तम्-साधु सौधमितः। चटकयोक्तम्-याद्दशं स्वीराज्ये लीलादेच्या वाह्यगृहमितः ताद्दशमेतत्। राजा शुतं तत्। चृपत्तत्र गमनोत्सुकः। स्थानं तु न वेत्ति। सचिन्तं चृपं दृष्ट्वा भट्टमात्रस्तदाश्यं परिज्ञाय तत्स्थानविलोकनाय चिलाः। तन्मार्गे लवणसमुद्रः। तमुत्तीर्याग्रे रात्रौ मदनायतने स्थितः। निशीथे हयहेपारवस्तितं दिच्यालङ्कार-भूपितं दिच्यं स्वीवृन्दं आगतम्। तत्स्थामिन्या कामपूजनं कृतम्। व्यावर्त्तमानानां तासामेकस्थाश्यस्य पुच्छे लिगत्वा 10 तत्र गतः। दासीभिर्दष्टः। स्थामिनीसमीपे नीतः। तया स्नानादि कारितः। रात्रौ तत्रैव सुप्तः। तया स्वपन्त्योक्तम्-मम विक्रमार्कः पतिर्भावी, किं वा मां यश्रतुर्भिः शब्दौर्जागरयति। इत्युक्तवा सुप्ता। तेन चिन्तितम्-चतुर्भिरिपे शब्दौर्न जागित्तं तिर्द्दं एनामहमेव जागिरिप्यामि। शब्दाः कृताः। न जागित्तं। तदा पादाङ्कुष्टश्रमितः। तया पादेनाहत्य तत्र क्षिप्तः, यत्र विक्रमार्कः प्रसुप्ते।ऽस्ति। राज्ञा पृष्टं किमिदम्-तेन वृत्तान्तः प्रोक्तः। राजाऽगिनकवेतालमारुद्य तत्र गतः। वेतालञ्कनं स्थितः। राजा दासीभिस्तत्र नीतः। तयोपचरितः। तद्रपदर्शनात्सरागा 15 जाता। परं शयानया पूर्ववत्प्रतिज्ञा कृता।
- A. राज्ञा दीपस्थो वेताल उक्तः—भो दीप! तावदद्य कुवासको जातः। यसा गृहे आगताः, सा वक्त्येव न। अतस्त्वं कामिप कथां वद। तेनोक्तम्—देव! कोऽपि विग्रस्तस्य सुता चतुण्णां दर्गा। एकस्य पित्रा, परस्य मात्रा, एकस्य मातुलेन, एकस्य भात्रा। एवं चतुण्णां दत्ता। चत्वारोऽपि आगताः। विवादे जाते कन्यया काष्ट्रभक्षणं कृतम्। एकश्चितायां तामनु विवेश। एको देशान्तरं गतः। एकस्त्वस्थीन्यादाय गङ्गां गतः। एकस्तु उटजं कृत्वा 20 तत्र स्थितः क्ष्मशानं रक्षति। देशान्तरिणा सङ्घीविनी विद्या शिक्षिता। चत्वारोऽपि मिलिताः। देशान्तरिणा विद्या जीविता। पुनर्विवादो जातः। सा राज्ञञ्चतुण्णां मध्ये कस्य पत्नी १। राज्ञोक्तम्—नाहं वेजि, ब्रूहि। स आह—यश्चित्तायाः सहोत्थितः स भ्राता। योऽस्थिनेता स पुत्रः। येन जीविता स पिता। यो भस्तरक्षकः स भर्चा, पालकत्वात्।
- B. द्वितीययामे राज्ञा ताम्बूलस्थिगका पृष्टा-रे! कथां काश्चित्कथय । वेतालाधिष्ठाता साऽप्याह-कापि पुरे एका मृता ब्राह्मण्यस्ति । तस्या जारेण सह सुता जाता । सा तां त्यक्तं रात्रौ वहिर्गता । इतस्तत्र कोऽपि 25 शूलाक्षिप्तो जीवन्नस्ति।तस्याः पादेन स्वलितः। तेनोक्तम्-कः पापी दुःखिनोऽपि दुःखमुत्पादयित ? । तयोक्तम्-

^{*} G सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे एपा कथा किञ्चिद्धिन्नरूपेण लिखिता लभ्यते। यथा—

अस्य किं दुःखम्?। देहपीडादिकमेकमपुत्रत्वमपरम्। चौरेणोक्तम्-त्वमिष कथय का त्वम् १ कथिमहागतासि १। निजचिरतं तयोक्तम्। ग्रूलास्थनरेणोक्तम्-मां विवाहयेमाम्। मया पुरादाहतं भूक्षिप्तं द्रव्यं गृहाण च कये। व्राह्मणी आह-त्वं मिरण्यितः। सुता लघ्वी, पुत्रः क १। तेनोक्तम्-अस्या ऋतुकाले कस्यापि द्रव्यं दत्त्वा पुत्रमुत्पाद्येः। तया सर्वं कृतम्। यावत्पुत्रो जातः। मात्रा छन्नं नृपद्वारे मुक्तः। केनापि राज्ञे निवेदितम्। जन्येणापुत्रेण पालितः। राज्यं दत्तम्। राजा मृतः। स पितुः श्राद्धं कर्तुं गङ्गायां गतः। जलात्करत्रयं निर्ययौ। राजा विस्तितः। कस्मिन्करे पिण्डं मुश्चामि। वेतालेनोक्तम्-देव । वद। स पिण्डं कस्य करे मुश्चतु। राज्ञोक्तम्-चौरस्य। येन परिणीता यस्य वित्तम्।

- C. राज्ञा सुवर्ण्णपालकं जिल्पतम् । तदिष कथां प्राह—किसनिष ग्रामे किश्चित् कुलपुत्रः । स परिणीतोऽन्यग्रामे । तत्पत्ती श्रञ्जरगृहे न याति । स जैर्हस्यते । एकदा जनप्रेरित आनयनाय गतो मित्रान्वितः । मार्गे 10 सरस्तीरे यक्षदेवकुलम् । तत्र यक्षं नत्वा प्राह—देव ! यदि मे पत्ती समेष्यित तदा वलमानस्ते शिरो दास्यामि । तत्प्रभावाच्छ्युरकुले सत्कृतः । सा हृष्टा तेन सह चिलता । स चलन् मार्गे वाहिन्या उत्तीर्य यक्षं नन्तुं गतः । यक्षाग्रे स्त्रीलान्छिरुरुछेदितम् । स नायाति । मित्रं तु तमनुगतम् । विनष्टं दृष्टा जनापवादात् भीतेन तेनापि शिरिइछन्तम् । तस्त्रिनप्यनागच्छिति, सा गता । द्वाविष तदवस्थो दृष्टो । चिन्तितम् जनोऽग्रेऽपि मां पतिद्वेषिणीं कथयित । अधुना पतिप्तीं कथयिष्यति । ततः सापि शिरुरुछेत्तं प्रवृत्ता । यक्षेणोक्ता साहसं मा कुरु । तयोक्तम्—15 द्वाविष जीवापय । तेनोक्तम्—निज २ कवन्ये शिरोदानं कुरु । तयोत्सुकभावादन्यान्यकवन्धयोर्न्यस्ते । द्वाविष जीवितौ । परस्परं भार्याविवादो जातः । एको मदीयां वक्ति, द्वितीयस्तु मदीयाम् । तेनोक्तम्—देव ! सा कस्य भवति ? । नृपेणोक्तम्—यस्य शिरस्तस्य भार्या । ['सर्वस्य] गात्रस्य शिरः प्रधानििति वचनात् ।
- D. वेतालवशात्कर्प्रसमुद्गकः पृष्टः—रे! कामिष कथां कथय। देव! कुतोऽिष पुराचत्वारः कलाविदग्धा-श्रेलुः । एकः काष्ट्रघटकः सूत्रधारः । अपरः स्वर्णकारः । तृतीयः शालापितः । तुर्यो द्विजः । कािष वने रात्रौ 20 स्थिताः । प्रथम[यामे] सूत्रधारः प्रहरके स्थितः । काष्ट्रमयी पुत्तिलका कृता । स सुप्तः । द्वितीयप्रहरे सुवर्णकार उत्थाय [यामिके] स्थितः । तेन सा पुत्तिलकाऽऽभरणैर्मण्डिता । तृतीये शालापितस्तेन दुक्लं परिधापिता । चतुर्थे द्विजेन सजीवा कृता । प्रातः सजीवां दृष्टा विवदितुं प्रवृत्ताः । इतस्तेन वैतालेनोक्तम्—देव! विक्रमादित्य! सा कस्य भविति ! [त नाम श्रुत्वा सा चुक्षोभ] राज्ञोक्तम्—नाहं वेधि, यदियं सुप्ता वेत्ति । [त तयोरकथ-यतोश्च तया जल्पितम्—भो राजन्!] कस्य सा १। राज्ञोक्तम्—स्वर्णकारस्य । पितं विना को नारीं मण्डयित । 25 [त सा पप्रच्छ—के यूयम् १। दीपस्थेन वेतालेनोक्तम्—असौ स विक्रमादित्यः ।] सा हृष्टा, राज्ञा परिणीता च । [त तामादायावन्तीमागमत् ।] य ईदग् हे महाराज! तत्समः कः १; आधिक्ये त का कथा इति हिसेतम् । इति श्रुत्वा विक्रमसेनेन गर्वस्त्यक्तः । इति विक्रमसेनगर्वत्यागप्रवन्धः ॥ विक्रमसेनेन गर्वस्त्यक्तः । इति विक्रमसेनगर्वत्यागप्रवन्धः ॥ विक्रमसन्वन्धे रामराज्यकथाप्रवन्धः (В. Р. С.)
- § १२) अथैकदा विक्रमसेनः पुरोधसमप्राक्षीद्—यदेताः काष्टपुत्रिका मम पितरमद्भुतगुणं वर्णयन्ति, तर्हि स

 30 एव लोके प्रथमः । [G तत्प्रथमतयोत्तमत्वेनावतीणों भविष्यति । प्राक् तु न कोऽपि तादगुत्तमोऽभूत्—इति

 ब्रमः ।] पुरोधाः प्राह—राजन् ! अनादिर्भू रत्नगर्भयम् । [G अनादिश्रतुर्युगी ।] युगे युगे रत्नानि जायन्ते ।

 अहमेव प्रधान इति गर्वो न श्रेयःकारी [G न निर्वहते] । तव पितुर्मनिस एकदा इत्यभूत्—यथा रामेण जनः

 सुखी कृतः तथाऽहमपि करिष्यामि [G ततो रामायणं व्याख्यापितम् । तत्र यथा—] रामस्य दानं सत्रागार
 स्थापनं वर्णाश्रमव्यवस्थादि गुरुभक्त्यादि तथा सर्वमारव्धम् । ततोऽभिनवो राम इत्यात्मानं पाठयति । मित्रिभि
 35 रिचिन्ति—असावनुचितकारी । [G असात्प्रसुर्यो गर्वादात्मानं तद्दन्मनुते] यतः—

(७) *उत्क्षिप्य टिट्टिभः पादावास्ते भङ्गभयाद्भवः। खिचत्तकिपतो गर्वः कस्यान्यस्य न विद्यते॥

[G उपायेनोत्तारियतव्यः प्रस्तावे] एकटा राज्ञोक्तम्-स कोऽप्यस्ति योऽश्रुतपूर्वा रामकथां कथयति । एकेन वृद्धमित्रिणा प्रोक्तम्-राजन्! कोशलायामेको वृद्धिजोऽस्ति । स पारम्पर्येण कामपि रामवार्क्ता विक्त । ि अहर पृच्छचते] स राज्ञा सगौरवमानीतः पूजितथ । पृष्टं च–हे वृद्ध ! कांचिद्रामवार्त्ता [नव्यां] वद । सोऽभाणीत- 5 देव ! कोशलायां यद्यागच्छसि तदा किमप्यपूर्वं दर्शयामि [G इह स्थितस्य तु वक्तुं न पारयामि]। राजा मन्त्रिपु राज्यं न्यस्य खर्यं फटकेन सह कोशलां प्रति चचाल । तत्र गत्वा विहःस्थितः । वृद्ध ! दर्शय । देव ! अत्र जन-पार्श्वात्खानय । तथा कृते, स्वर्णकलगः प्रकटो जज्ञेः तदनु हैमी मण्डपिका च । पुनः खनिते एकक्षण-द्विक्षण-तृतीयक्षण-चतुर्थक्षणे प्रकटीकृते महती खर्णोपानदेका प्रकटी जाता। खर्णवालकगुम्फिता सर्वरत्नखचिता। विसितेन गृहीत्वा हृदि कण्ठे च दत्ता नृपेण । वर्णनं कुर्वति, द्विजेनोक्तम्-देव ! चर्मकारपत्या उपानदेपा न 10 स्प्रष्टुमहिति । नृपेणोक्तम्-सा चर्मकार्यपि धन्या, यसा ईद्युपानत् । परं कथ्यतां कथम् १ । देव ! श्रीरामे सत्यत्र चर्मकारगृहाण्यासन् । इदमेकस्य गृहम् । तत्पत्नी लाडवहुला, अतः सगर्वा । विनयं न करोति । सा भन्नी हिकता शिक्षिता च । उक्तश्च-महहाद याहि । सा वाणहीमेकां पतितां सुक्त्वा एकां च पादे कृत्वा पितृगृहं गता । पत्युरपमानमूचे । पित्रा दिनद्वयं स्थापिता पश्चादुक्ता-त्रत्से ! कुलिस्रियः पतिरेव शरणम् । त्वं तत्र याहि । सा द्वित्रिवारं भणिताऽपि न याति । तदा पित्रा शोक्तम्-वत्से ! श्रीरामः सलक्ष्मणः सप्रियश्च त्वामनुनेष्यति । 15 साऽप्यलीकाऽभिमानिनी प्राह-यदि समेष्यति तदैव यास्यामि [G नापरथा] । इयं वार्त्ता छन्नेर्नृपपुरुषैः श्रुता । तैर्नृपाय न्यवेदि । ¹श्रीरामस्ततः श्रुत्वा तद्गेहद्वारे स्थितः । तेन कथितम्-देव ! पादमवधार्यताम् । मम रङ्कस्य गृहेऽद्य कल्पद्धमागमनम् । तव पुत्रीमानयितुं वयमागताः साः । मात्रा सा त्वरितं पत्युर्गृहे नीता । तस्या औत्सु-क्येन व्रजन्त्या इयमत्रैवोपानद्विस्मृता । श्रुत्वा देवस्तु खस्थानं गतः । देव ! रामराज्यमीदशमासीत् । तच्छुत्वा विक्रमादित्यः गर्वे त्यक्त्वा निजपुरीं प्राप् ।। इति विक्रमादित्यविविधप्रवन्धाः ।। 20

(G.) सङ्ग्रहगतं विकमवृत्तम्।

§ १३) श्रीविक्रमादित्यसत्रागारे नित्यं कार्षटिका विनक्यन्ति । तदपवाददोपभयेन राजा प्रच्छन्नः स्थितः । तावता

* प्र नास्ति एप छोकः । ‡ प्रतद्न्तर्गतपाठस्थाने प्र सङ्गृहे कियानिधको विस्तृतश्च पाठः प्राप्यते । यथा—
ततो देवः श्रीरामः प्रजावत्सरुः प्रातः ससीतः सरुक्षमणः समागत्य तच्चमंकारभवनमगात् । तन्मध्यं प्रविष्टः पूजितः कारुमिविस्तिते
विज्ञस्थ्य-देवायमसान् फीटकान् प्रति कियान् प्रसादः कृतः । स्रमेऽपि नेदं संभाव्यते, यहेवोऽस्मानुपतिष्ठते । किं कारणमागमनस्य ।
श्रीरामः प्राह-स्वयुज्याः स्वशुरकुरुप्रेपणायायातोऽस्मि । तस्या हि वराक्याख्याविधा सन्धाऽऽसे । ततो हृष्टस्वनकः । अपवरकं गत्वा दृष्टितरमाह स्म-मुग्धिके ! तव प्रतिज्ञा पूर्णा । रामदेवोऽध्यायातः सदेवीकः । एहि वन्दस्व तं जगत्पतिम् । ततस्तुष्टा रामान्तिकमागता । ववन्दे
तम् । आठापिता प्रजातातेन-वरसे ! गच्छ स्वशुरमन्दिरम् । तथा भणितम्-आदेशः प्रमाणम् । ततो गता पितृ(पति)गृहम् । रामः स्वस्थानमयासीत् । श्रीविक्रमस्य द्वितीया उपानत् तत्रापि गृहे सन्यधोमाने (अधःखन्यमाने) रुप्यते । स्वामिन्नायाति तन्न सान्यते । गतो राजा
तत्र । खानितं तत् । रुच्या द्वितीया उपानत् । दृष्टं हेमगृहम् । एवमन्यान्यपि तेन विश्रेणाखानियत् । ठातं तह्ने । राज्ञा विष्ठः पृष्टः —
विप्र ! कथमीदशं सम्यग् जानासि ? । विश्रेण गदितम्-पूर्वजपारंपर्योपदेशात् ज्ञातं तुभ्यमुक्तं च । परं गर्वं माधाः । स रामः स एव । तस्माः
ज्ञ्या जलज्वलनो संभ्यते सा । पतन्त्यो पत्त्रयो दत्तायां तदाज्ञायां न पेतुः । रुत्ता द्विच्यारिश्चत्, अन्धगडाः सप्तविद्यतिः, रफोटिका अष्टोतरं शतं, विद्वराणि दोपाश्च सर्वे व्यनेशन् । या तु तहेवी सीता, ये तद्नातरः, ये तद्भया हन्मससुग्रीवाद्यसेषां महिमानं वर्पशतेनापि
वाक्पतिरपि वक्तं न शक्तः । इति श्रुत्वा विक्रमेण गर्वो मुक्तः । वि[क्]दं निपिद्धं 'अभिनवराम' इति । पुनरज्ञयिनीमगात् । यथाशक्ति छोकमुद्दधत् । तस्य हि अभिवेताल-पुरुरपसिद्धिभ्यां सुवर्णसिद्धाः चोपकारैश्वर्यं तदा निरुपममासीत् । ततो विक्रमो धन्य एव । ततोऽधिकास्तु
परे कोटाकोटयोऽभ्वन् । इत्याकर्यं विक्रमसेनो विवेक्यभूत् ॥

भोगीन्द्रः समागतः । राज्ञा पृष्टं-कथं त्वं कारणं विना नित्यं तीर्थकरणप्रवणपात्राणि मारयसि । तेनोक्तं-[कथय] किं पात्रं १ । राज्ञोक्तं-'भोगीन्द्र ! बहुधा० ।' इति तुष्टो मनुष्यपात्राणि ररक्ष ।

- § १४) केनापि साम्रद्रिकशास्त्रवेदिना मध्याहे चतुःपथे कस्यापि काष्टभारवाहकस्य चरणलक्षणानि भ्रुवि प्रतिविवितानि वीक्ष्य शास्त्रं वितथिमिति विचार्य प्रस्तकैः सह राजद्वारे काष्टभक्षणं प्रारव्धम्। ततो राज्ञा पृष्टं-मम ठलक्षणानि कथय । तेनोक्तं-नैकमपि । तत्कथं राज्यम् १ । पुनरुक्तं-यदि वामक्रक्षौ करडांत्रं भवति । तदा राज्ञा भ्रुरिकामाक्रुप्योक्तं स्थानं दर्शय । तेनोक्तं-सन्त्वेनैव राज्यम् १ । राज्ञापि दरिद्रमुखे कणिकगोलिकाप्रयोगेन तालुनि काकपदं दर्शितम् ।
- १९) अन्यदा सिद्धसेनदिवाकरेण गुरुचरणसंवाहनां विधीयमानेन गुरव उक्ताः—यदि यूयमादेशं ददत, तदाहमागमं संस्कृतेन करोमि । गुरुभिरुक्तं—तव महत्पातकमजिन । त्वं गच्छयोग्यो न, गच्छ । तेनोक्तं—प्रायिश्वं

 10 ददत । गुरुभिरुक्तं—यत्र जिनधम्मों न तत्र जिनप्रभावनां विधाय पुनः समागन्तव्यं । इत्यवधूतवेपेण चिर्तिः ।
 ततः सप्तवर्पानन्तरं मालवके गृहमहाकालप्रासादे शिवाभिमुखं चरणौ विधाय सुप्तः । तत्र वारितोऽपि तथैव ।
 अत्रान्तरे राज्ञा रक्षकपुरुपान् प्रेपित्वा उपद्वतः । तावतान्तःपुरे प्रदीपनकं लग्नम् । ततो राज्ञा समागत्य पृष्टः—
 कथं शिवनमस्कारं न विद्धासि १ । तेनोक्तं—मम नमोऽसौ न सहते । राज्ञोक्तं—विधेहि । तेन सकललोकसमक्षं
 द्वात्रिंशतिका विहिता । तदा लिंगमध्यादवन्तीसुकुमालद्वात्रिंशत्पत्नीकारितप्रासादे श्रीपार्थनाथविम्वं प्रकटीभृतम् ।

 15 तन्नमस्कृतम् । असन्तमस्कारमसौ सहते । तदाप्रभृति गृहमहाकालोऽजिन ।
 - § १६) अन्यदा सकलकवीनां दानं ददानं राजानं वीक्ष्य शिवतपोधनचतुष्टयं कविताकृतेऽरण्यमगमत् । तत्र गजवर्णनमारव्धं तैः, एकैकेन प्रहरेण एकैकश्ररणो विहितः । तद्यथा-
 - (८) च्यारि पाय विचि दुडुगुसु दुडुगुसु, जाइ जाइ पुणु रुडुगुसु रुडुगुसु । आगलि पाछलि पुंछु हलावइ,ं.....
- 20 तुर्ययामे तुर्यपादो न भवति । तदा श्रीकालिदासकविना दृक्षान्तरितेन चतुर्थश्ररणः पूरितः—अंघार कं किरि मूला चावह ॥

तुर्यतपोधनेनोक्तं-मम सरखतीत्रसादो जातः । तैर्नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तं-तुर्यचरणोऽमीपां न भवति । इदम्रप-मानं कालिदासस्यैव नान्यस्य ।

- § १७) अथ कुमारसम्भवमहाकाव्ये नवभिः सर्गैः शृंगारसुरतवर्णनकुपितयोमया कालिदासकवेः शापो दत्तः। 25 यत्—त्वं स्त्रीव्यसनेन मरिष्यसि। तेन वेश्याव्यसनी वभूव। राज्ञा श्रीविक्रमेण व्यसनिनं मत्वा तिरस्कृतः। वेश्या-सदने स्थितः। अत्रान्तरे राजपाटिकायां गतेन राज्ञा सरसि कमलं कम्पमानं विलोक्योक्तं—'पवनस्यागमो नास्तिः।' कैरपि कविभिः प्रत्युत्तरं न दत्तम्। राज्ञा नगरे पटहो वादितः। यः कोऽपि समस्यां पूर्यित तस्य सुवर्णलक्षं दिष्ठ । इति वेश्यया कालिदासस्य निवेदितम् । तेनोक्तं—अहं पूरियत्वा तव समर्पयिष्यामि । पूरिता । तया सुवर्णलोभेन स मारितः। तदनु तथा राज्ञोऽग्रे न्यगादि समस्या। यत्—'पावकोत्सिष्टवर्णाभः शर्वरी०।' राज्ञोक्तं—केन पूरिता?। उ० तयोक्तं—मया। 'कांते०' इति पदेन त्वया न बद्धा। ततस्तयोक्तं—कालिदासेन। स च मया मारितः। राज्ञो विपादोऽजनि।
 - §१८) अन्यदा श्रीविक्रमस्य रोगः समजिन । वैद्येन क्रुचेष्टां वीक्ष्य काकमांसभोजनेनाऽऽरोग्यं कथितम् । राज्ञोक्तं-भवतु । ततो वैद्येनोक्तं-राजन् ! धर्मीपधं विधेहि । त्वं प्रकृतिव्यत्ययेन न जीवसि ॥

॥ इति विक्रमप्रवन्धः ॥

15

30

२. सातवाहनप्रवन्धः (P.)

§१९) मरहद्वदेशे प्रतिष्ठानपत्तनम् । नरवाहनो नृपः । सुभटोऽङ्गरक्षः । तत्पत्ती मनोरमा । गर्भाधाने सित शुभदोहदे जाते नैमित्तिकाः पृष्टाः । तैरुक्तम्—सुतो भावी, परं पोडशवर्षाणि भूमिगृहे स्थाप्यश्चन्नम् । तेन तथा कृते, पश्चवार्षिकः कलाभ्यासं करोति । इतथ नृपो राज्यद्वें स्वीविलापं श्चत्वा प्राहरिकानाह [कोऽत्र १] सुभटेनो-क्तम्—देवाहमस्मि । इमां पृष्ट्वा समागच्छ कथं रोदिति १ । स गतः । पुरे आन्त्वा समेतः । देव ! नगरमध्ये कापि 5 न दृष्टा । तिहैं वहिर्गत्वा विलोकय । पृच्छां कुरु । स विद्युत्किरणात्सनृपस्तत्र गतः । वने स्त्रियं दृष्ट्वा पत्रच्छ—कथं रोदिपि १ राज्याधिष्ठात्री देवी । तिहैं कथं रोदिपि १ । तया क[थितम्] पण्मासान्ते नृपः पश्चत्वं प्रयास्यति ।

(९) वैधव्यसदृशं दुःखं स्त्रीणामन्यन्न विद्यते।धन्यास्ता योपितो यास्तु म्रियन्ते भर्त्तुरम्रतः॥

तत्कथं निवर्तते १ इति सुभटे पृष्टे तयोक्तम्—यदि चासुण्डाग्रे द्वात्रिंशहक्षणो वध्यते, तदा नृपस्य क्षेमम् । इत्युक्त्वाऽदृश्या जाता । नृपाग्रे उक्तम् । नृपः स्वस्थानं प्राप्तः । प्रातर्नृपेण सुभटाग्रे उक्तम्—यदि द्वात्रिंशहक्षणं 10 नरमानयित तदाऽर्द्वराज्यं ददामि । तेन गृहे गत्वा स्वपत्ती पुत्राय याचिता । पोडशवाह(हाय)नः सुतो दत्तः । नृपायोक्तम्—देव ! स्थाने कृतोऽ……िन्धिकास्य वध्यस्य नेपथ्यधरं कृत्वा चामुण्डाग्रे नीतः । नृपत्तत्र गतः । नैवेद्येन सह कल्पितः । मात्रा केशैर्धतः पित्रा खङ्गं कृष्टम् । तेन……िद्वतिम् ।

(१०) राजा खयं हरति मां यदि जीविताथें द्रव्येच्छयान्धविधरौ पितरौ मदीयौ। त्वं देवता मनुजमांसरसस्पृहासि प्राणाः खयं हसत किं [प]रि[दे]वितेन॥

देवी सन्तेन तुष्टा। वरं वृष्टा। याचितः-िकमर्थिमहानीतः?। देव्या खभाव उक्तों, तेनोक्तम्-नृपाय राज्यं देहि, त्वं जीववधाद्विरमख । तयोक्तम्-राज्यं मया दत्तं राज्ञे, [जीवे]प्वभयः । जीववधान्निवृत्ता । सर्वोऽपि खखानं गतः। प्रातर्लोकापवादमसहता नृपेण राज्यं सर्वं सातवाहनाय दत्त्वा खयं तापसीं [दीक्षां] जगृहे। नृपोऽपि राज्यं कुर्वन् समाताऽक्ति (१)। अन्यदा नृपेण मत्री पृष्टः-ममाज्ञा कियतीं भूमिं यावदक्ति । देव । मथुरायां न वर्तते। नृपेण कटकं प्रहितम्।.....जाते मित्रिभिर्द्विधा कृतं तेन मथुराद्वयम्। खर्योदये पुत्रजन्म-20 वर्द्वापनम् । द्वितीये प्रहरे वापीमध्यात् कोटि ९ सुवर्णलाभः। तृतीये प्र० दक्षिणमथुरा। चतुर्थे प्र० उत्तरमथुरा वर्द्वापने। एवं दिवसमध्ये वर्द्वापनचतुष्के जाते नृपो हृष्टश्चिन्तयित-िकं मया पूर्वभवे पुण्यमकारि?। प्राता राज-पाट्यां गतः। हदं गोदावर्यां मत्सहसने विस्मितो गृहे गतः। सर्वः कोऽपि पृष्टः परं कोऽपि न वेति। इतश्च श्रीकालिकाचार्यागमं विदित्वा वन्दित्वा ते पृष्टाः। तैः क[धितम्]—त्वं पूर्वभवे अत्रैव काष्टवाहकस्तेन सक्तुभिरि-हैव शिलापट्टे मुनिः पारितः। तन्मत्स्येन दृष्टम् । अतो जलदेवतया हिसतं मत्स्यिमपात्। तव दानप्र[भावा]त् 25 वर्द्वापनं जातम् ॥ इति सातवाहनप्रवन्धः॥

(G.) सङ्ग्रहे सातवाहनसम्बन्धिगाथावृत्तम् ।

- (११) ताण पुरओं य मरीहं कयलीथंभाण सरिसपुरिसाणं। जे अत्तणो विणासं फलाइं दिंता न चिंतंति॥१॥
- (१२) जह सरसे तह सुके वि पायवे घरइ अणुदिणं विंझो । उच्छंगसंगयं निग्गुणं वि गरुया न मुंचंति ॥ २॥
- (१३) सरिसे माणुसजम्मे दहइ खलो सज्जणो सुहावेइ। लोह चिय सन्नाहो रक्खइ जीयं असी हरइ॥३॥

({8})	संयलजणाणंदयरो सुक्षस्स वि एस परिमलो जस्स ।
	तस्स नवसरसभावंमि होज्ञ किं चंदणदुमस्स ॥ ४ ॥
	–इति गाथाचतुष्टयं श्रीसातवाहनेन राज्ञा चतुःकोटिभिर्गृहीतम् ।
(१५)	हारो वेणीदंडो खट्टुग्गलियाई तहय तालु त्ति ।
• • •	सालाहणेण गहिया दहकोडीहिं च चडगाहा ॥ १ ॥
(88)	
	डर्बिबो भमइ उरे जउणाणइफेणपुंज व ॥ २ ॥
(१७)	कसिणुजलो य रेहइ०। ३॥
(86)	परिओससुंदराई सुरए जायंति जाई सुक्खाई ।
• • •	ताई चिय तिवरहे खट्टुग्गलियाई कीरंति ॥ ४ ॥
(१९)	ता किं करोमि माए खज्जड सालीउ कीरनिवहेहिं०॥५॥
(,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,	–इति गाथाचतुष्टयं कोटिभिर्दशभिर्गृहीतम्।
(२०)	अहलो पत्तावरिओ फलकाले मुयसि मृढ ! पत्ताई ।
, ,	इण कारणि रे विड विडव मुद्ध ! तुय एरिसं नामं ॥ १ ॥
(29)	

(२१) निव्वृहपोरिसाणं असचसंभावणा वि संभवह। इक्काणणे वि सीहे जाया पंचाणणपसिद्धी॥२॥

(२२) आसन्ने रणरंभे मूढे मंते तहेव दुव्भिक्खे। जस्स मुहं जोइज्जइ सो चिय जीवड किमन्नेण॥३॥

-इति गाथात्रयं कोट्या गृहीतम्।

20

10

15

३. वनराजवृत्तम् (G.)

§२०) आंवासणवास्तव्यचापोत्कटज्ञातीयचंड-चामुंडाभिधौ आतरावभूताम्। ततः केनापि नैमित्तिकेनोक्तम्— चामुंडपत्तीगर्भेण चंडो मरणमगमिष्यदिति सा सगर्भा परिहृता। ततः सा पंचासरग्रामं गता। ओञ्छ्वन्या जीवति। अन्यदा श्रीशीलगुणस्रिभिर्वाह्यभूमौ गतैर्वणच्छायामनमन्तीं वीक्ष्य सुलक्षणं वालकं दृष्टा च सा निजचैत्ये स्था-पिता। कियतापि कालेन वार्यमाणोऽपि वनराजो मूपकमारणं कुर्वन् गुरुभिर्निर्वासितः। चरडः सन् सेहर-सेप-25 राभ्यां सह संखेश्वर-पंचासरग्रामान्तरे चौर्यवृत्तिं वितन्वन् शरहयभक्षकं श्रेष्ठिजाम्बाकं पत्रच्छ। तेनोक्तं—यूयं त्रयः। अतो द्वयं भग्नम्। तेन वाणत्रयेण परीक्षा दिश्चिता। तेन प्रीतिर्जाता। अन्यदा काकरग्रामे श्रेष्ठिगृहे क्षात्रपातं कृत्वा सर्वस्वं गृह्णतस्त्रस्य करो मंजूपान्तर्दिधमांडे पतितः। ततस्तेन सर्वमिषि मुक्तम्। प्रातः श्रीदेव्यास्तत्पत्या पंचागुली-प्रतिविम्वं दिश्च वीक्ष्य कुलीनः कोऽपि चौरोऽयं इति विज्ञाय, चौरे मिलितेऽहं भोक्ष्ये, इति अभिग्रहो गृहीतः। स सप्तमे दिने समेत्य तां भगिनीमिति नमश्रके। अन्यदा श्रीकन्यकुव्जदेशीयमहणकराज्ञ्याः [पश्चकुलं] गूर्जरघरोद्वा-30 हणके गच्छति। अन्तरा युद्धं विधाय वनराजेन सर्वं जगृहे। ततः शश्चकेनैकेन स्वानभंगामिज्ञानेऽणिहिद्धपश्चपा-लेनापिते वीरक्षेत्रेऽणिहिद्धपुरस्थापना। श्रीदेव्या वर्द्वापनकं कृतम्। गुरुभिर्मत्राभिषेकश्च।।

४. लाखाकवृत्तम् (G.)

§२१) परमारवंशे समुत्पन्नया प्रासादे रममाणया कामलया स्तम्भभ्रान्त्या फूलडाभिधः पशुपालो वृतः।

तत्सुतो लापाकः । स कच्छेश्वर एकविंशतिवारत्रासितमूलराजः समजिन । द्वाविंशतिवेलायां कपिलकोटिश्वतो लापाको रुद्धः । माहेचनाम्नः पदातेराकारणं प्रहितम् । सोऽन्तरावस्थितशीमूलराजभिष्ठः प्रहरणानि गृहीतः । ततः तिसन् निरायुषे समागते लापाकेन राज्ञा समं युद्धमकृत । लापाको रणभुवि पतितो राज्ञा रोपाचरणेनाहतः । ततो लापाकस्य मात्रा राजा श्वमः । ततः प्रांते स्फोटिका समजिन । ततो राज्ञा तांचुलमध्येऽलिका विलोक्य सार्चाः शुभमरणं पृष्टाः । तैरुक्तं—इंगिनीं साधय । तथा विहिते सप्तमिदिने स्वविमानमायांतं वीक्ष्य मुदितः । उपनरन्यतो गोकार्यमृतस्वपाकमानियत्वा (१) समेते तत्र पुनः सार्चाः पृष्टाः । एवं सित सुखमृत्यो कथं मम कप्तमृत्युरुपदिष्टः । तैरुक्तं—राजन् ! कस्तव भूमो गोग्रहं तनोति । एवं विपनः ॥

५. मुञ्जराजप्रवन्धः (P.)

· §२२) श्रीउज्जयिन्यां नगर्यो सिंहो नृपः । स एकदा मृगयां गतः । तत्र शरवणमध्ये [वालः] पतितो दृष्टः । नृपेण गृहीतः । प्रच्छन्नमन्तःपुरे प्रहितः। देच्यैकया स्रतिकर्माणि कृतानि । वालस मुझ इति नाम दत्तम् । स्रोहेन् 10 वृद्धि गतः । इतो नृपसापरसा पत्यां सिन्धुलनामा पुत्रो जातः । उभावपि निरवशेपभावेन वृद्धि गतौ परिणीतौ च । इतो नृपो वृद्धो जातः । एकदा मुझावासे गतः । आवासान्तर्मुझः सप्त्तीकोऽस्ति । नृपेण वहिःस्थेनोक्तम्-रे मध्ये कोऽप्यस्ति?। नृपशब्दं श्रुत्वा मुझक्शंकितः । प्रियां भद्रासनाधो निवेक्य व्याहतवान्-देव! मध्ये पादमवधारयत । नृपः सिंहासने उपविष्टः । कुमारः प्रणम्य भद्रासने निविष्टः । आदि इयतां कार्यम् । नृपेणी-क्तम्-राज्यं कस्य दीयते १ । मुझः प्राह्-तातः प्रमाणमत्र । वत्स ! त्वं मम पालितः पुत्रः । सिन्धुलस्त्वङ्गजः । 15 व्यतिकरे उक्ते मुझेनोक्तम्-मम आतुर्देव ! राज्यं भवत्वहं तस्य सेवां तावत् करिप्यामि । नृपेणोक्तम्-एवं मा भण । राज्यं तवैव । अधुना परावर्त्ते कृते जनो न मन्यते । परं मम शिक्षां शृष्ट । सिन्धुलो नापमान्यः । मुन्नी रुद्रादित्यो न पृथकार्यः । गोदावरीं तीर्त्वा परतीरे न गम्यम् । तेन सर्वं मानितम् । नृपे वहिर्गते भेदभयाद्राञ्ची खङ्गेन पातिता । तसा आकृन्दं श्रुत्वा नृपो वलितः । वधूं पतितां दृष्टा प्राह-रे पाप ! किमकार्यमकार्पाः ? अपरा-मपि शिक्षां न करोपि । अतोऽनहोंऽपि निवेक्यः, वाक्यभङ्गभयात् । मुझस्य राज्यं जातम् । नृपो दिवं ययौ ।20 स सिन्धुले सदा प्रसादपरो वर्तते । जनः सर्वोऽपि सिन्धुलेऽनुरक्तः । एकेन मित्रणा प्रोक्तम्-देव ! सिन्धुलात्तव विनाशों भावी । नृषेण तद्वचनमङ्गीकृत्य ग्रासो निपिद्धः । सिन्धुलः खावासे तिष्ठति । एकदा नृषो राजपाट्या गजारुढो वजन् सिन्धुलगवाक्षाधः प्राप्तः । सिन्धुलेनोपरि निविधेन दक्षिणकरे आदर्शे सित वामकरेण करी वर-त्रया धृतः । तद्तु पुच्छे धृतः । पदमपि न चलति । आधोरणे नैष्टिष्ट । नृपेणोक्तम्-करी किं न चलति ? देव नृसिंहेणात्रान्तः । तावत्क्रमारो दृष्टः । वत्स ! मुश्च । तेनोक्तम्-अहं देवपादानां केनाभक्त उक्तः, यद्वासः श्वितः 125 गजं मुञ्ज, द्विगुणं गृहाण । सिन्धुलेनोक्तम्-एप गजस्त्रुटितः, अपरमानयत । नृपस्तु द्वितीये निविष्टः । करी तत्रैव पतितः । नृपेण वलं वन्धोर्द्धा वद्धापनं प्रारव्धम् । पिशुनेन मित्रणा देव उक्तः-एप त्वां हिनप्यत्येव । नृपेण देशपट्टो दत्तः । सोऽर्द्वदे कासहेदग्रामे गतः । दीपदिने रुमशाने गतः । तत्र स्रुकरं वीक्ष्य वाणसन्धानमकरोत् । इतो र्जन (१) सुप्तः। तेन प्रत्यासनं मृतकं जानोरधः प्रदत्तम्। तत् सलसलितम्। तेन वामकरेण वारितम्-वाणेन सूकरी विद्धः। तत्साहसेन तुष्टः, वरं याचस्य। तेनोक्तम्-मालवराज्यं देहि। तव भाग्यं न, परं तत्र याहि। तव पुत्रस्य 30 भविष्यति। पुनर्नृपाहृतः स्वघरे गतः। राज्ञा दुर्जनवचसा नेत्राकर्पणं कृतं सिन्धुलस्य। तत्पुत्रो भोजः। स नृपस्या-तीव वह्नभः। यौवनाभिम्रस्वो जनेनानुरागात् सेञ्यते। अतस्तेन कूटमित्रणा नृपस्योक्तम्-देव। त्वां हत्वा कुमारो राज्यं ग्रहीष्यति । राज्ञा रुद्रादित्येन मित्रणा छन्नमाज्ञापितः । मित्रणा एकान्ते नीत्वा नृपाज्ञा उक्ता । कुमारेणी-क्तम्-शीवं इरु । किमपि राज्ञः कथापयसि ? । तेन 'मान्धाते'ति लिखित्वा पत्रिकाऽर्पिता । काले दर्शनीया ।

मित्रिणा प्रोक्तम्-त्विय मारिते राज्यं निमजाति । अतञ्छनं तिष्ठ । मित्रिणा कार्यं कृतं निवेदितम् । तेनापि 'किमप्युक्तम् १' तदा पत्रिका दर्शिता । नृपः काष्ठारोहणाय गतः । मित्रिणा कुमारो दर्शितः । अथ नृपो हृष्टः ।

§ २३) अथ कर्णाटे उरङ्गलपत्तने तैलपदेवो नृपः । तस्य मन्नी कमलादित्यः । स मालवेशेन सह वैरप्रारम्भं कर्त्तुं स्वां नासां कर्णाविष वुध्या अपाकृत्य नृपेणापमानितो ग्रुञ्जनपमाययो । देव । मया स्वामिनोऽग्रे उक्तम्—
ग्रुञ्जेन सह वैरं त्यज । तेनाहमपमानितः । नृपेण सत्कृतः । रुद्रादित्येन नृपो वारितः । याविद्वत्तं (द् हितं १) न
शृणोति तावद्वद्रा[दित्यो]ग्रुत्कलाऽप्य स्थितः । गोदावरीतटे नृपः कमलादित्यवचसा कटकं सम्मीत्य चिलतः ।
रुद्रादित्योऽपि चितां प्रविष्टः । कमलादित्येन कटकं सम्मुखमाकारितम् । मन्त्रिणो वचसा कोऽपि न युध्यति । ग्रुञ्जो
नष्टः । वुभुक्षितः कस्मिन् वासे गतः । तत्र ज्ञीताशनं याचन् महीआरीं गर्वोद्धतां दृष्ट्वा पपाठ—

(२३) मा गोलिणि मन गव्यु किर पिखि वि पहुरूआई। पंचइ सई विहुत्तरां मुंजह गय गयाई॥

10 इति पठन् नृपचरैरानीतः। नृपायापितस्तेन गुप्तौ क्षेपितः। मृणालवती चेटी पिरचर्याकृते मुक्ता। नृपस्तस्यामासक्तो जातः। इतो धारायां रुद्रादित्येन भोजो राज्ये मुख्यः कृतः। स सैन्यं कृत्वा गोदावरीतीरमागत्य
स्थितः। भोजेन सुरङ्गा दापिता सिद्धा च। पुमानेको नृपानयने प्रहितः। स सुरङ्गाद्वारेण गत्वा नृपमाह—चल्यताम्। राजाऽऽह—प्रतीक्षस्त, यावन्मृणालवती आयाति। देव! किं चेट्या १, चल्यताम्। नृपे स्थिते, विनष्टं नृपं
मत्वा गतः। चेटी आयाता। भोजनमादाय नृपं सचिन्तं वीक्ष्य पप्रच्छ—देव! किं चिन्ता १। न वक्ति। तया

15 भोजनमध्ये लवणमुष्टिः क्षिप्ता तेन नाज्ञायि। तया निर्वन्धेन पृष्टः प्राह—चल्यताम्, त्वां प्रतीक्ष्यमाणोऽसि।
तयोक्तम्-आभरणान्यादाय त्वरितमेमि। गत्वा तैलपदेवाय सुरङ्गाद्यमुक्तम्। नृपेणागत्य वन्धितः। स वध्यमानः प्रोचे—

अच्छ (अत्रादर्शे गाथाप्रमाणा पङ्किरक्षरशून्या मुक्ताऽस्ति ।) ॥

भिक्षां भ्रामयित्वा वनमध्ये नीत्वा श्रूलाशेतः कृतः ।

20(२४) यद्याःपुञ्जो मुञ्जो गजपतिरवन्तीक्षितिपतिः सरखत्यावासः समजनि पुराविष्कृतगतिः । स कर्णाटेदोन खसचिवबुध्यैव विधृतः कृतः ग्रूलाघोतस्त्वहह विषमाः कम्भगतयः ॥

(२५) गय गय रह गय तुरय गय गय पाइक अनु भिच । सग्गद्विय करि मंत्रणडं महँता रुद्दाइच ॥

(२६) मुंज भणइ मिणालवइ केसा काई चुयंति । लडुउ साउ पयोहरहं बंधण भणीअ रअंति ॥

(२७) मुंज भणइ मिणालवइ गउ जुवण मन झूरि। जइ सक्कर सयखंड किअ तोइ स मिट्टी चूरि॥

25(२८) इच्छउ इअरमणोरहाण मणवंछिआण संपत्ती। न पहुप्पइ वंधणदोरिआ वि दिवे पराहुत्ते॥

(२९) झोली तुद्दवि किं न मूच न हूच छारह पुंज। घरि घरि भिक्खभमाडीइ जिम मंकड तिम मुंज॥ (३०) मा मण्डक! कुरूद्वेगं यदहं खण्डितोऽनया। रामरावणभीमाचा योषिद्भिः के न खण्डिताः॥

(३१) वेसा छंडि वडाइ ती जे दासिहिं रचंति । ते नर मुंजनरिंद जिम परिभव घणा सहंति ॥

(३२) आपद्गतान् इसिस किं द्रविणान्धमूढ ! लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमन्न चित्रम्।

³⁰ एता न पदयसि घटीर्जलयन्त्रचके रिक्ता भवन्त्यविरतं भरिताश्च रिक्ताः॥

(३३) क तरुरेष महावनमध्यगः०॥ (३४) उत्तंसकौतुककृते तु विलासिनीभिर्छूनानि०॥

^{1 &#}x27;यः कृतिरिति' इति प्र० चि० शुद्धपाठः ।

(३५) इयं कटी मत्तगजेन्द्रगामिनी०॥ (३६) लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे०॥ गुञ्जे धृते राजपुत्रीवाक्यम्-'चिन्तामिमां वहसि किं गजयूथनाथ०'॥ सिन्धुलवाक्यानि-(३७) अद्धां अद्धां नयणलां जइ मुं मुंज न लिंत। सत्तइ सायर सधर धर महि सिंधलु भंजंत॥

(३८) पश्चादात्पश्चवर्षाणि पण्मासाश्च दिनन्नयम्०।

The state of the s

॥ इति मुझराजप्रवन्धः॥

६. श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रवन्धः (B. Br.)

(३९) प्रभोः श्रीमानतुङ्गस्य देशनायां रदत्विपः। जयन्ति ज्ञानपाथोधिशारदेन्दुसहोद्राः॥

§ २४) वाणारखां हर्षो राजा। तत्र ब्रह्मक्षत्रियो धनदेवः श्रेष्ठी। मानतुङ्गः सुतः। सोऽन्यदा दिगम्बरचैत्ने जिनं नत्वा गुरुपादान्ते गतः। प्रतिवोध्य दीक्षितः। चारुकीर्तिर्नाम । स्त्रीम्रक्तिन्केविश्वक्तिन्नं मन्यते। दिगम्बरत्वं 10 दुष्करं कुर्वन् भगिनीपतिलक्ष्मीधरेण सगौरवं निमंत्रितो गृहमायातः। अशुद्धेर्यावत् कमंडलुजलेनाचमनं गृह्णाति, तावद् भगिन्या श्वेताम्बरभक्तया पूतरानालोक्य तद्वतं निन्दियत्वा श्वेताम्बराणां पश्चसिमत्यादि स्तुत्वा प्रतिवोध्य किथितम्—समायातान् जैनाचार्यान् मेलियिप्यामि । परिभदं पयो यसाज्यलाशयादानीतं तसिन्नेव क्षिप । यथान्यान्यजलसंपर्कात् पूतरका न मियं[ते]। अन्यदा श्रीअजितिसिंहस्रीणामागमने गङ्गातीरोद्याने भगिन्या किथिते मानतुङ्गः पूर्विपिसामाचारीश्रवणात् तदीक्षां गृहीत्वा समग्रसिद्धान्तमधीत्य गुरुभिर्दत्तस्रिपदः सुललित-15 काव्यकर्ता वभव।

§२५) इतश्र तत्र पुरि मूर्तीव्नहा मयूरो नाम महाकविरस्ति । तस्य श्रीनाम्नी पुत्री रूपवती ।

(४०) पङ्के पङ्कजमुज्झितं कुवलयं चापारनीरे हदें विम्वी चापि वृतेविहिः प्रकटिता क्षिप्तः दाद्यी चाम्वरे । यस्याः पाणिविलोचनाधरमुखान् वीक्ष्य समृष्टिं विधि-रुद्धिष्टेव पुरातनी समभवद्दैवाद्विधा येहताम् ॥

तदनुरूपं वाणनामानं कविम्रद्वाहिता। ततः श्रीहर्पस भेटियत्वा तस्य धान्यादि पृथक् धवलगृहं च कारितम्। अन्यदा वाणपत्नी सञ्जातकलहा पिरुगृहं गता। वाणेनागत्य प्रदोपेऽनुकूलियतुमारव्धा।

(४१) मानं मुश्च खामिनि रात्रुं जगतो विनाशितखार्थम् । सेवक-कामुकपरभवसुखेच्छवो नावछेपभृतः॥

अमानिते पण्डितं गृहाद् वहिः प्रेपयित्वा सखी तां जगाद । तथापि न मानयति । उक्तं च-

(४२) लिखन्नास्ते भूमिं विहरवनतः प्राणद्यितो निराहाराः सख्यः सततरुदितोच्छूननयनाः।
परित्यक्तं सर्वे हसितपठितं पञ्जरञ्जकैस्तवावस्था चेयं विसृज कठिने मानमधुना॥
सख्या विहरागत्य कथिते विभातसमये वाणेन गत्वा—

(४३) गतप्राया रात्रिः कुरातनु राशी शीर्यत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो धूर्णित इव । प्रणामान्तो मानस्तद्पि न जहासि मानमधुना कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते सुश्च कठिनम्॥

.

20

25

इति भित्तिपुरतः सुप्तेन मयूरेण-सुभ्रुशब्दस्थाने चण्डीत्याख्यां कथय, यतोऽस्या दृढकोपायाश्रण्डीशब्द उचितः। इति पितुर्वचनेन कुपिता लिजता भर्तृवचनं मानयित्वा सतीत्वप्रभावेण पितरं कुष्ठीभवेति शप्तवती । सञ्जातकुष्ठेन मयूरेण राजभणितेन सूर्याराधनाय पद्पादं रञ्जयत्रं बद्धा खिदराङ्गारचितां काराप्य तत्स्तवने एकैकवृत्ते छुरि-क्या एकैकरञ्जपादच्छेदे यावता पश्च च्छित्राः। पष्टच्छेदे सूर्यपरितोपे नव्यदेहदानेन मयूरप्रमोदे वाणपक्षीयैरुक्तं उराजसभायाम्-

(४५) यद्यपि हर्षोत्कर्षं विद्वधित मधुरा गिरो मयूरस्य । बाणविज्ञम्भणसमये तदिप न परभागभागिन्यः ॥

राज्ञोक्तम्-यूयं गुणिषु मत्सरिणो यस्य शक्तिर्भवति किमप्यधिकं दर्श्यते । ततो वाणेनोक्तम्-मम हस्तपादौ छेदय, यथा नव्यान् करोमि । ततिश्ठिकेषु चण्डिकास्तुतौ सप्तमाक्षरे नव्या जाताः । तथाप्युभयोविवादे राज्ञो10क्तम्-काश्मीरे श्रीसरस्वती विवादं भञ्जयति । यो हारयति तेन पुस्तकानि ज्वाल्यानि । इति प्रतिज्ञाय राजपुरुपैः समं काश्मीरगमने देव्या समस्याऽर्पन्त । पदे पृष्टे वाणस्य शीघपूरणे मयूरस्य सविलम्बे-तथाहि-

(४५) दामोदरकराघातिवहलीकृतचेतसा । दृष्टं चाणूरमछेन द्यातचन्द्रं नभस्तलम् ॥ मयूरेण पराभूतत्वादागत्य पुस्तकज्वालने श्रीसर्यञ्चतकपुस्तकेऽदग्धे उभयोर्मानदानैः राजप्रसादः ।

§ २६) अन्यदा राज्ञा मित्रसम्मुखं भिणतम्-पत्रय भूमिदेवानां कीद्दक् प्रभावः १। मित्रणोक्तम्-जिनशासनेऽपि

15 महाप्रभावोऽित्त । यदि कौतुकं ततः श्रीमानतुङ्गाख्यं स्रिमाकार्य विलोक्य । राज्ञोक्तमाकारयस्य । ततो मित्रणा गत्वा भिक्तवचनैर्दर्शनप्रभावार्थं निरीहा अपि तत्रानीताः । राज्ञो धर्मलाभाशिपं दन्वा यथोचितासनसमासीनाः । मयूर-वाण-प्रशंसापूर्वं राजोवाच-यदि भवतां काचिच्छिक्तिरित्तं तिकिश्चित् कौतुकं दर्शयत । गुरुभिरुक्तम्-असाकं किमिप कार्यं निह । जिनमते मोक्षार्थं एवाभ्यस्यते । तथापि शासनोत्कर्पाय दर्शयामः । ततो राज्ञा तमिस आपादमस्तकं चतुश्चत्वारिश्रह्णोहर्श्यस्ताभिनियंग्यापवरके क्षित्वा तालकं दन्वा मोचिताः । ततो 'भक्तामरस्तवः' 20 कृतः । एकैकष्ट्रतपाठे एकैकनिगडभङ्गे निगडसंख्यया वृत्तभणनम् । स्र्रयो मुत्कला जाताः । तालकं भग्नम्, स्वयं कपाटोद्घाटने निर्गत्य सभायां राज्ञ आशीर्वादं ददुः । राज्ञाऽनेकस्तुतीः कृत्वा सिवनयं नत्वा कृत्यादेशेन प्रसीदत्त । स्रिणोक्तम्-असाकं कापीच्छा निह । परं तव हिताय ब्रूमः-जिनधर्मं प्रपद्यस्य । राजाऽङ्गीचकार । दान-पात्रौचित्यात्रिधा दानं देयं-जीर्णोद्धारे(रं) नव्यविम्वकारणं चैत्यादिधर्ममादिश्य प्रभावनां कृत्वा सर्यः स्वाश्चयं गताः । तदाख्यातो 'मक्तामरस्तवः' अद्यापि सर्वोपद्रवहर्ता । अन्यदा कर्मवज्ञात् सङ्गातकुष्ठोऽनशनाय धरणेन्द्रं रास्मार । प्रत्यक्षीभूयायुःशेपतया धरणेन्द्रोऽप्टादशाक्षरं पार्श्वनाथमत्र्वं दत्तवान् । सर्यः सर्वोपद्रवहरं तन्मन्त्रगर्भितं 'मयहरस्तवं' कृत्वा पुनर्ववतां प्राप्ताः ।

§ २७) एकदा तन्नगरेशसैन्ये परदेशं प्राप्ते तद्विपवस्तमल्पवलं ज्ञात्वा सम्भूय भूरिसैन्येस्तन्नगरमावेष्ट्य तस्थुः। पौरजने न्याकुले, भयभीते राज्ञि, गोपुरेषु पिहितेषु राज्ञा बाण-मयूरादिषु पण्डितेषु तदुपसर्गोपशमनायादिष्टेषु पातालप्रवेशार्थमिव भूमिमालोकयत्सु श्रीसरयो धवलगृहमूर्द्धानमारुद्ध 'भयहरं' प्रकटीचक्कः। तत्प्रभावात् तेषु 30 वैरिषु स्तम्भितेषु गुरोराज्ञया तेषां घातमकुर्वन् सर्वस्तं हस्ति-हयाद्यं जग्राह नृषः। ततः स्वरिं राजानं नत्वाऽऽज्ञां प्रपद्य प्रसादं च प्राप्य स्वं स्वं स्थानं ययुः। ततो 'भयहरस्तवः' पत्र्यमानो भयहर्ता सर्वेपाम्। इत्थं प्रभावनां कृत्वाऽन्तसमयं प्राप्य श्रीगुणाकरस्वरिं न्यस्य पदेऽनशनमर्णेन स्ररयो दिवं ययुः।

॥ इति श्रीमानतुङ्गसूरिप्रवन्धः ॥

७. माघपण्डितप्रवन्धः (Br.)

§२८) अथ दत्तस्नोर्मायस्योच्यते । मायस्य जन्मनि पित्रा जातकं कारित्म् । आयुर्वर्पाणां चतुरशीतिः, परं प्रान्ते चरणशोफेन सत्युः । पित्रा ऋद्विप्राग्भारकलितेन पोडशवर्षादृर्द्धं दिनदिनसम्बन्धी लिहितो हारको द्रम्माणां मुक्तः । अतिव्ययवानपीयता सुखं निर्वहिष्यते । स प्रौढः सन् पठितं प्रवृत्तः । कवित्वं कृत्वा पितुर्दर्शयति । ईदशानि कवित्वानि कुरुपे, पूर्वकवित्वानां शतांशेनापि न प्रभवन्ति । पुत्रेण शिशुपालवधो नाम- 5 कार्च्यं कृत्वा चुल्हकोपरि च्छनं धृतम् । एकदा पितुः पुस्तकं जीर्णप्रायं धृमेन कृत्वा दिशितम् । पिता वाचयन् शिरोऽवधृनन् आह-वत्स ! ईट्यानि कवित्वानि कियन्ते । तेनोक्तम्-तात ! भच्यानि ? । किम्रुच्यते । तर्हि मया कृतानि । जनकेनोक्तम्-मया छलः कृतोऽतस्ते इयता कवित्वसीमा जाता । अतःपरं तव कवित्वं न । स अधीत्य पितर्युपरते विलसितुं प्रवृत्तः । जन्मपत्रिकां दृष्टा सिश्चलं हारकं व्ययीकुरुते ।

§ २९) तस्य भोजन्पतिना मालवाधीशेन मैत्री जाता। एकदा श्रीभोजेन मिलितमाकारितो मायस्तत्र गतः। 10 नृपेण सगौरवं धवलगृहे स्थापितः । स्नानं कुर्वता पण्डितेन मुखं कृणितम् । नृपेण भोक्तुमुपविष्टस्य दिन्यरसवती-समाना रसवती परिवेपिता । स मुखमेव कृणयति । नृपेण चिन्तितम् -खगृहे किमसौ भुनक्ति । उत्थितः । पृष्टो नृपेण-रसवती की दशी ? । देव ! कदशनेनोदरं पूर्तम् । भव्यशीतरक्षा पार्श्वे हसंतिका च रात्रौ सुप्तः । पण्डितो नृपख नातिद्रे । रात्रौ पण्डितः शय्यायां पुनः पुनः पार्श्वे वातं करोति । नृपेण-किमसौ भुनक्ति, कथं शेतेऽख गृहे १। अवलोकनीयं गत्वा एतत्। प्रातरुत्थिते नृपेण पृष्टम्-सुखेन निद्रा समायाता १। देव! रासभवद्भारितानां 15 निद्रा क्तः । दिनचतुष्कं स्थित्वा पण्डितेन नृपो ग्रुत्कलापितः। राज्ञा श्रीमाले भोजस्वामित्रासादः कारितः। तस्य प्रण्यं पण्डितस्य प्रदाय पण्डितः सम्प्रेपितः । पण्डितेनोक्तम्-देव! कदाचिन्ममोपरि प्रसादं विधायासारपुरे पाद-मंबधारणीयम् । एवमित्यभिधाय सम्प्रेप्य नृपः प्रत्यावृत्तः, खगृहमायातः । इतो द्वितीये शीततौं नृपः प्रौढकटकेन श्रीमालं प्राप्तः । माघेन सम्मुखं गत्वा नृपः खगृहे एव सकटकोऽप्युत्तारितः । नृपस्तु आवासमवलोकितुं प्रवृत्तः । स्थाने स्थाने विचित्रकौतुकानि पश्यन्, स्थाने स्थाने धृपघटीपरिमलमाजिघन्, सञ्चारभृमिमतीव परिमलाढ्यां 20 दृष्टा पृष्टवान्-किमेप देवतावसरोपवरकः ? । देव ! एप सञ्चारकोऽपवित्रः । नृपो लिखतः । इतो मखनावसरे पूर्व मर्दनिकैर्मर्दनं दत्तं यथा नृपोऽतिरञ्जितः । स्नानपीठे स्वर्णमये महाविच्छित्या स्नानं कारितः। तद्तु देवदृष्यसमानि नासानिःश्वासहार्याणि वस्त्राण्याजग्मः । महद्भा देवान् नत्वा भोकुमुपवेशितः । स्वर्णस्थाले द्वात्रिंशत्कवीलकैईते मण्डिते क्षीरमयं पकान्नं परिवेपितम्। क्षीरतन्दुलमयः क्ररः। एवं वटकान्यपि तस्यैव। अपराणि नानाव्यञ्जनानि परिवेपितानि । नृपश्चिन्तयति स-य ईदशीं रसवतीं धनिक्त तस्य मे रसवती कथं रोचते । धक्तोत्तरं पश्चसु-25 गन्धिनामताम्बुले जाते वार्त्ता विद्धतो रात्रिरजनि । सर्वोपरितनभूमौ नृपाय पल्यङ्कः सज्जितः । राज्ञोक्तम्-मित्र ! शीतकारुं न जानीथ १ । देव ! जानीमः । चन्दनं सज्जितम् । नृपस्तत्र शय्यामरुंचके । तत्र महान् तापश्चन्दन-मपितम् । तालद्यन्तैविंज्यमानस्य निद्राऽऽयाता । प्रातः पण्डितेन पृष्टम्-देव ! शीतकाल उप्णकालो वा १ । उप्णकाल इति प्रत्युत्तरं ददौ । पण्डितप्रीत्या कियन्ति दिनानि स्थित्वा मुत्कलाप्य नृपः खपुरीं ययौ ।

§ ३०) ऋमेणैवंविलसतः पण्डितस्य धनं क्षीणं वार्द्धक्यमपि चागमत् । इतः पण्डितेन प्रिया उक्ता-(४६) न भिक्षा दुर्भिक्षे पतित दुरवस्थाः कथमृणं लभन्ते कर्माणि क्षितिपरिवृहान् कारयति कः। अदत्त्वापि यासं यहपतिरसावस्तमयते क यामः किं क्रमों गृहिणि! गहनो जीवनविधिः॥

इति निर्वाहमविसृक्ष्येतो माघेन माधकाच्यपुस्तकमर्पयित्वा प्रिया माल्हणादेवी नाझी धारायां नृपसमीपे प्रहिता-यद्मं प्रन्थं प्रहणकेऽङ्गीकृत्य लक्षत्रयं द्रम्माणां ददत । सा तत्र गता नृपेण शुद्धिः पृष्टा । पुस्तकम-पितम् । लक्षत्रयी याचिता । राज्ञा शलाका क्षेपिता । प्रातर्वर्णने पण्डितस्वरूपस्चकं कार्व्यं निस्सृतम्— पु॰ प्र॰ स॰ ३ 35

25

(४७) क्रमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोजखण्डं त्यजित मदमुल्कः प्रीतिमांश्चक्रवाकः। उदयमहिमरिक्सेमर्याति शीतांद्युरस्तं हतविधिललितानां ही विचित्रो विपाकः॥

नृपेण विमृश्य ही इति अक्षरस्य लक्षत्रयं दत्तम् । ग्रन्थस्तावत् दूरेऽस्तु काव्यं च । पण्डितपत्न्या नृपक्कलादुत्तरन्त्या पण्डितविरुदान्यधीयानानां लक्षत्रय्यपि दत्ता । नृपेण पुनराहूयोक्ता—पुनर्द्रव्यं गृहाणेत्युक्तो-५ वाच-अधिकं नानायितमतोऽहं न गृह्णे । सा क्रमेण खगृहं प्राप्ता । यथा गता तथा आगता । पण्डितेनोक्तम्—
पुस्तकं राज्ञा किमिति नात्तम् १ । तया वृत्ते उक्ते पण्डितेनोक्तम्—सत्यं आवयोयोंगो विधिना कृतः । अद्य त्यं
परीक्षाशुद्धा निवृत्ता । एतावन्ति दिनानि चेतस्येवं विकल्प आसीत् यन्मे गेहिनी ममानुरूपा न वा । अद्य
सन्देहो भग्नस्तव दानेन । यत्त्वया गृहदौस्थ्यं न गणितम् ।

(४८) अर्था न सन्ति न च मुश्रति मां दुराशा दानान्न सङ्कचित दुर्ललितः करो मे । याच्या च लाघवकरी खवधे च पापं प्राणाः खयं व्रजत किं परिदेवितेन ॥

इतो दर्भस्रस्तरसुप्तः चरणयोः श्वयथुर्जातः । अस्मिन्नवसरे कोऽपि विप्रः क्षुघार्थी पण्डितावासे प्रविष्टः । भोजनं याचितम् । पण्डितेनोक्तम्-

> (४९) क्षुत्क्षामः पथिको मदीयभ्रवनं एच्छन् कुतोऽप्यागतः तिंक गेहिनि ! किश्चिद्दस्ति यदसौ भुङ्के वुभुक्षातुरः । वाचाऽस्तीत्यभिधाय सत्वरपदं प्रोक्तं विनैवाक्षरं स्थूलस्थूलविलोललोचनगलद्वाष्पाम्भसां विन्दुभिः॥

> > इतोऽर्थी विमुखीभूय गतः। पण्डित आह-

- (५०) व्रजत व्रजत प्राणा अर्थिनि व्यर्थतां गते । पश्चादिप हि गन्तव्यं क सार्थः पुनरीहदाः ॥ इति कथनादनु प्राणैस्त्यत्यजे । पत्त्यानु सहगमनमकारि । इतः श्रीभोजराजो वित्तस्य करभीर्भृत्वा 20 त्वरितमाययौ । पृष्टम्-पिष्डितः क ? । जनैर्वृत्तमुक्तम् । नृषः प्राह-रे रे इदं श्रीमालं न, भिल्लमालिमदम् । यत्र मम मित्रस्य मिय सत्यपि केनाप्युद्धारकेऽपि किमिप नार्पितम् । अतः पुरेष्विप [अप]वित्रमिदम् । शेपकार्याणि तस्यार्थस्य व्ययेन विधायेति विमृशन् मनसि-
 - (५१) शशिद्वाकरयोर्थहपीडनं गजभुजङ्गविहङ्गमवन्धनम् । मतिमतां च समीक्ष्य दरिद्रतां विधिरहो वलवानिति मे मतिः॥ ऋमेण खपुरीं गतः।
 - (५२) उदयति यदि भानुः पश्चिमायां दिशायां विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायाम् । प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वह्निः तदपि न चलतीयं भाविनी कर्मरेखा ॥

॥ इति माघपण्डितप्रवन्धः॥

८. कुलचन्द्रप्रवन्धः (B.)

30 § ३१) एकदा श्रीभोजो वीरचर्यायां भ्रमन् दिगम्बरं मठोपिरस्थं इति वदन्तमशृणोत्– (५३) तिक्खा तुरिअ न माणिआ भडिसिरि खग्ग न भग्गु। एह जम्म नग्गहं गयंड गोरी कंठि न लग्गु॥ नृपेण चिन्तितम्- नैप सामान्यः । प्रातराहृय उक्तः- तव किं नाम ? । देव ! कुलचन्द्रः ।

(५४) देव! दीपोत्सवे रम्ये प्रवृत्ते दन्तिनां मदे। एकच्छत्रं करिष्यामि सगौडं दक्षिणापथम्॥ राज्ञा गृहिवेपं ग्राहितः। इतो राजकुमारी तसिन्ननुरक्ता जाता। सा एकदा वर्पारात्रौ प्राह-

(५५) नव जल भरिआ मग्गडा सजल घडुक्कइ मेहु। इअ वारि जइ आविसिइ तउ जाणीसिइ नेहु॥

5

ंद्वारस्थेन श्रुतम् । स कटकमादाय गूर्जरत्रोपरि गतः। पत्तनं भन्नम् । नृपस्तु नंष्ट्वा गतः। वलमानस्य स्तम्भनकाचार्यर्घाटे रुद्धे, घाता जाताः। तेन सङ्कटस्थेन भोजं प्रति पत्रिकामादाय [नरः] प्रहितः। तत्र—

(५६) विस्फारस्फारधन्वा मृगयुरनुपदं पार्श्वयोदीवदाघः

क्ष्वेडानादः पुरस्तात् तपित च तपनो मूर्धि तापर्ज्यतीवः । अन्तःशल्यं शिरस्सु स्थपुटगिरिनदी दुस्सहा क्षुद् तृपार्त्ति-दुईवादय जातं व्रजतु हि हरिणः कां दिशं कांदिशीकः ॥

10

राज्ञा दृष्ट्वा 'कां' स्थाने 'किं' कृत्वा प्रहितः । स तु युद्धा मृतः ॥ इति कुलचन्द्रप्रवन्थः ॥

९. षड्दर्शनप्रवन्धः (B. Br.)

§३२) एकदा श्रीभोजराजेन दर्शनानि सम्मील्य उक्तम्- मोक्ष एकः पन्थानः पश्च । एकसम्मती भव । लिक्क्ताः । कः कं मन्यते । कः कं न । इतस्तैर्नृपो विज्ञप्तः-देव! देवी भारती पद्दर्शनानां सम्मता । सा तव 15 प्रत्यक्षाऽस्ति तां पृच्छ । नृपेण उपोपितेन पूजापूर्वं प्रत्यक्षीकृता । देवी उवाच- कथं स्मृता १ । नृपेणोक्तम्- मम तथ्यं कथय, कस्मिन्मार्गे यामि । देवी आह-

(५७) श्रोतव्यः सौगतो धर्मः कर्त्तव्यः पुनराईतः। वैदिको व्यवहर्त्तव्यो ध्यातव्यः परमः शिवः॥ इत्यभिधाय देवी अदृश्याऽभृत् । प्रातर्नृपेण सर्वे सम्भूय सत्कृत्य प्रहिताः॥ इति पहर्व्शनप्रवन्धः॥

१०. नीलपटवध-प्रवन्धः (B.)

20

§३३) श्रीभोजराजवारके नीलपटा दर्शनिन आसन् । ते तु, एका स्त्री एकः पुमान् नीलीं दोटीं प्रावृत्य मध्ये नप्रीभूय विजहतुः । एकदा धारायां प्राप्तास्तत्रापूर्वान् द्वा सर्वः कोऽपि तेपां समीपे याति । ते त्वित्थं प्ररूपयन्ति—वयमीश्वरस्य तथ्याः सन्तानिन अर्द्धनारीश्वरत्वात् । इतश्च कौतुकाद् भोजपुत्री समागमत् । कर्तव्यं पृष्टम् । तैरुक्तम्—

(५८) पिव खाद च चारुलोचने ! यदतीतं वरगात्रि ! तन्न ते । नहि भीरु ! गतं निवर्त्तते समुद्रयमात्रमिदं कलेवरम् ॥

25

तया व्याहतम्-भवन्मतमङ्गीकरिष्ये । नृपं मुत्कलापियतुं गता । ताताहं नीलपटानां धर्ममङ्गीकरिष्ये । नृपेण आहूताः, पृष्टाश्र- सुखिनः स्य १ । मुख्येनोक्तम्-

(५९) न नद्यो मद्यवाहिन्यो न च मांसमया नगाः। न च नारीमयं विश्वं कथं नीलपटः सुखी॥

नृपेणोक्तम्- यूर्यं कियन्तः स्थ ? । एकोनपश्चाशद् युगलानि । नृपेणोक्तम्- सर्वानप्याकारयत्, अहं त्वद्भक्तो 30 भविष्यामि । ते सर्वे मिलिताः । नृपेण पुरुषाः सर्वे मारिताः, स्त्रियश्च निष्कास्य मुक्ताः । अतस्तेषां वीजमपि नाशितम् ॥ इति नीलपटवधप्रवन्धः ॥

११. भोज-गाङ्गेययोः प्रबन्धः (B.)

§ ३४) एकदा वाणारसीपतिः श्रीमाङ्गेयक्तमारो गजसहस्र १ शत ४ एवं १४००, तुरङ्गमलक्ष ३ जीणसालहा न्, द्वयं उद्घाटं एवं लक्ष ५, मनुष्यलक्ष २१; एवं सामय्या मालवपति मोजं प्रति चचाल । गोलातीरे आवास्य स्थितः। इतो भोजन्योऽपि तुरङ्गसहस्र ४४, मनुष्यलक्ष ५, गज २००; एवं सामय्या सम्मुलो गोदानरी5 तीरे आवासान् ददौ । इतो गाङ्गेयस्य पण्डितेन परिमलेन भोजं प्रति 'वकोटित' काव्यं प्रहितम् । नृपः क्वपितः। परं किं कुरुते । इतो भोजेन काष्ट्रधवलोपि स्थित्वा विलोकितम् । वहु सैन्यं दृष्टा छित्तिपमहामात्यं सन्ध्यर्थमप्रैपीत् । स तत्र नृपसदिस गतः । नृपेणोक्तम्—अरे ! तव स्वामी मत्सैन्यं न पत्र्यति, यदमिमुलः समाययौ १ । देव ! सैन्यस्य को गर्वः ! इति वार्त्तायां सत्यां कटके कलकलं नृपोऽश्रोपीत् । पृप्टम्—रे ! किमिदम् १ । देव ! हस्ती परवशो जातस्तस्य कलकलोऽयम् । नृपस्तदाकण्यं उत्थाय काष्ट्रपञ्चरे प्रवित्र्य भुजार्गालां ददौ । छित्तिपस्तु
10 श्वनैरपसृत्य 'कथिमहे'त्यार्यां वाणहीतले इङ्गालेन लिखित्वा जनमप्रैपीत् । स उपानहं नृपायादर्शयत् । नृपः सज्जीभूय गाङ्गेयसैन्ये पपात । सर्वमात्तम् । नृपोऽप्यन्तस्थो धृतः । सुवर्णानिगडे क्षित्वा गजमिथरोप्य धारायामानीतः । धवलगृहेऽपरे सिंहासने निवेशितः । पण्डितपरिमलोऽपि राजवर्गीण सहायातः । राज्ञा भोजेनोक्तम्—
पं० उपविश्वत । परमासनं न मोचयित । "इह निवसित मेरः शेखरो भूधराणां०" । भोजेनोक्तम्—कोटकः (१) । किं तस्य चिरतें(तं) । मं(पं)डितेन "अयं वरामेके०" इति उक्ते "जन्मस्थानं न खलु विमलं०" इत्युक्तवता—
15 पण्डित उक्तः—पारितोपिकं याचस्य । देव ! अयं नृपतिर्भुच्यताम् । भोजेन सिंहासने निवेश्य तिलकं कृत्वा
पुनर्वाणारसीराज्ये प्रहितः ॥ इति भोज-गाङ्गेययोः प्रवन्यः ॥

१२. भोजदेव-सुभद्राप्रबन्धः (B.)

§ ३५) इतो गोपगिरीश्वरो नरवर्मदेवसत्सुता सुमद्रा । सा मोजराजस्य 'अभिनवार्जुन' इति विरुद्ं पठ्यमानं श्रुत्वा जनकं प्राह—तात ! मां प्रेपय । मोजो राधावेधं कृत्वा मां परिणयते, विरुद्ं वा सुश्रिति । सा

20 निर्वन्थे जनकमापृच्छ्य तुरगसहसैद्धीद्यभिः सह चचाल । नृपाग्रे कथापितम्—यदहं त्वां वरीतुमागतेति । श्रुत्वा
नृपश्चिन्तातुरो जातः । सा तु गोदावरीतीरमेत्य स्थिता । राधावेधं कुरु विरुद्दं वा त्यज । एवं श्रुत्वा नृपः
सम्मुखं प्रयाणमकरोत्, अभ्यासमारव्धवांश्च । सर्वः कोऽपि कौतुकान्वेपी सन्धेर्वार्त्तामपि को न विधत्ते ।
पण्मासान्ते तथा कन्यया भिर्तितः साहसमवलम्वय गोदावरीतीरमायातस्त्र राधावेधो मण्डितः । तस्याधसौलकडाहिरुत्कलित । नृपस्तस्यास्तीरे स्थाने स्थितः । कवीन्द्रैर्नानावण्णीनमारव्धम् । तत्र द्रद्वसरस्वतीति नाम्नाऽ
25 चार्या नृपसेवकाः सन्ति । "तैर्विद्धा विद्धा शिलेयम्०" इत्युक्तम् । नृपेण राधावेधे कृते कन्यया वरमाला श्विप्ता ।
नृपेण काव्यस्य द्पणं पृष्टे कोऽपि न वेत्ति । नृप आह—"विद्धा विद्धा" इति मत्वा मया चिन्तितम्—मम कार्य
सृतम् । "भवतु कार्मुकक्रीडितेन" अनेन भोजस्य पण्मासान्ते मृत्युः । स्वामिन्निति । प्रसीदेति । असदाचार्याणां
पण्मासमायुः । "धारा ध्वस्ता" इति प्रकटम् । मालवश्चाप्रधानो विनंश्चिति । तदनु सा परिणीता । पष्टे मासे
नृपोऽतीसारान्मृतः । सुभद्रया सहगमनं कृतम् ।

30(G.) सङ्ग्रहगतं भोजनृपवृत्तम्।

§ ३६) *भोज जातके "पंचाशत्पंच वर्षाणि" इति श्लोके तेन गणको निषिद्धः । इतश्र मुझेन स एव गणकः सन्तानहेतोः पृष्टो भवान् अपुत्र एवेत्यवादीत् । श्रावणसुदि पंचम्यां प्रथमप्रहरे यो भवत्समस्यां पूरियता

^{*} एतस्य सङ्गहस्यात्रैकं पद्मं श्रुटितं तस्मिनस्य वृत्तस्य कियान् भागो नष्टः ।

स एव राजा भविता । इति निर्णाते दिने कस्यापि सौधस्योपिर पितः कृष्णः पत्नी गौरीति वीक्ष्य राज्ञः समस्या सम्रत्यना-'ढुछुड सामलड धण चंपावनी०।' केनाप्यपूरिते भोजेन पठता पूरितेति-'छज्जइ कणयारह कसवहुइ दिन्नी०।' पिछतेनोक्तम्-मया पूरिता। सा राज्ञो दर्शिता। अर्द्धराज्ययोग्यं तं ज्ञात्वा भोजं विहाय यावत् युवराज्याभिलापिथन्तयित, तावज्ञालन्थरेण राज्ञी सुस्नाता शोक्ता। ततो निर्पृणश्चम्मा मारणायाप्पितः। भोजेनोक्तम्-'भान्धाता स महीपितः।'' इति तुष्टेन पुनर्मोचितः।

§३७) अन्यदा श्रीभोजेन श्रीपत्तनाधिपतेः श्रीमीमस्य गाथाहस्ताः पण्डिताः प्रेपिताः । तथा गाथा-"हेलानिद्दलिय॰ ॥" तत्प्रत्युत्तरेऽजायमाने नृपो विपि(प)ण्णो जातः । पण्डितैस्ततो विगोपनाय गाथायां संस्कार्य-माणायां स्रिंभिरुक्तं-जीवमाना कथं मार्यते । भविता भवतां स्त्रीहत्या । इति निपिद्धे राज्ञा सन्मान्य गुरवः प्रत्युत्तरं पृष्टाः । तथा चोक्तं-"अंधयसुयाण कालो० ॥" इति प्रत्युत्तररुष्टेन भोजेन पत्तनोपरि वाह्यावासा दत्ताः । श्रीमीमेन तत्परिज्ञाय डामरनामा सान्धिविग्रहिकः प्रहितः । राज्ञा भोजेन तं क्ररूपं वीक्ष्य हसितम् । उक्तं च-10 "योप्माकाधिप॰ ॥" ततो राज्ञा स्नानोत्तीर्णोन गलद्भिः केरोः पृष्टं-मन्त्रिन्! भीमडाको नापितः कि करोति । तेनोक्तं-अश्वपति-गजपति-नरपति-नपत्रयस्य शिरांसि भद्रितानि । चतुर्थस्य शिरासि साद्रीकृते क्षरमा-चालयनिस्त । रिञ्जितेन कौतुिकना राज्ञा स कौतुकवादी आत्मनः समीपं स्थापितः । निर्द्धं कौतुकवक्तत्वेन राजानं रञ्जयति । अन्यदा राजविडम्बननाटके कारिते भीमे रूपे मार्दंगिके मृदंगं वाद्यमाने राज्ञोक्तं-मञ्जिन् ! भीमडाकस्य करौ मृदंगपुटे भव्यौ पततः । तेनोक्तं-देव! पुरा भीमेन पार्वतीपुरस्ताण्डवे क्रियमाणेऽभ्यस्तम् । एवं 15 विधावेव मीमस्य कराँ कठोरौ वर्त्तते । अन्यदा तैलपदेवरूपे समागते मन्त्री प्रोक्तः-मन्त्रिन्! भवदेशीयोऽयं राजा उपलक्ष्यताम् । एवम्रके तेनोक्तं-अभिज्ञानं नास्ति । "मत्स्वामी तैलपदेवो यदि० ॥" इति प्रोक्ते रुप्टेन राज्ञा पितृव्यवैरीति तदेव सैन्यं तैलपदेवस्रोपरि चालितम् । चिलते राज्ञि मन्त्रिणोक्तं-राजन् ! श्रीभीमः पाण्णिघातं विधासति । राज्ञोक्तं-यात्वा वारय । वचनेन न स्थासतीत्युक्ते ततः अश्वसहस्र ४, जात्यगज ४, सुवर्णालक्ष ९-एतत्सर्वं प्राभृते प्रेपितम् । मन्त्री सार्थे गृहीतः । तस्यैव बुद्ध्या योजन १६ शिक्षितगतिभिर्नवभिः तुरगसहस्त्रैः 20 पाद्रदेवतां नमस्कर्वन तेलपदेवो धृतः ॥

§३८) एकदा मन्त्रिडामरसाग्रे उक्तं-विद्वान् यावान् लोकः श्रीमालवकेऽस्ति, न तादशोऽपरदेशेषु । ततो डामरेणोक्तं-नृप! यादशो लोको गोपाल-वेश्यादिको विद्वानस्ति गौर्जरे, न तादगत्र । नृपो मौनेन स्थितः । डामरेण चिन्तितं-राज्ञा धूर्नत्वेन स्थितम् । पुनः कदाचिदेपा वार्त्ता कर्त्ता । अतो भाणितं स्वनृपाग्रे । यदेका विदुपी स्वीपण्डिता देशसीमायां स्थाप्या । एको विद्वान् गोपालरूपो देशसीमायां स्थाप्यः । ततोऽन्यदा भोजे-25 नोक्तं-आनयत । प्रधानरानीतो तावेव । प्रथमभेटायां राज्ञोक्तं-भण पण्डित! वर्णय किंचन । स आह- "भोयराय गलि कांद्रलउ भण० ॥" प्रशंसितो राज्ञा । सा उक्ता-इह किं । साह-"पृच्छंति० ॥"

§३९) अन्यदा निशीथे भोजराज्ञा परिश्रमता कुलचन्द्र नामा क्षपणक एवं पठन् श्रुतः—"तिक्खा तुरिअ न मा०॥" "नव जल भरिआ०॥" ततो राजा निजपुत्रीखरूपं दृष्टा प्रातराकार्य गूर्जरदेशोपरि सेनाधिपत्यं दत्तम् । तदा तेनोक्तम्—"देव दीपोत्सवे०॥" ततो गूर्जरदेशो विनाशितः समग्रोऽपि । श्रीपत्तनचतुष्पथे ३० कपर्दका उप्ताः । ततस्तसागतस्य राज्ञोक्तम्—रम्यं न कृतम् । अद्यप्रभृति मालवदेशदण्डः श्रीगूर्जरं यास्यति । कपर्दका मालवदेशीयनाणकम् ।

§ ४०) धारानगर्यां सीता नाम रन्धनी । केनापि दूरदेशान्तरिणा तस्या गृहेऽत्रं कारितम् । तया निशि घृतकुम्पकव्यत्ययेन कांग्रणीतैलक्कम्पकात् तैलं परिवेषितम् । स मृतः । तं तथा विलोक्यापवादमीतया तया तदे-

वान्नमुपभुक्तम् । तत्प्रभावात्सारखतमजिन । राज्ञो मानपात्री सीता पण्डिता जाता । एकदा राज्ञा तस्याः स्तनयुगं वीक्ष्यापाठि-

(६०) किं वर्ण्यते कुचद्वन्द्वमस्याः कमलचक्षुषः। सप्तद्वीपकरग्राही भवान् यत्र करप्रदः॥ सीतया उत्तरार्द्धं पठितम् । तथा राज्ञा पुनः पठितं-"सुरताय नमस्तस्मै०॥" अन्यदा तया जालान्तरे ⁵चन्द्रकरस्पर्शे इदमपाठि-"अलं कलंकश्वंगार०॥"

§४१) अन्यदा राजपाटिकायां गच्छतो राज्ञो भोजस्य सर्वैरपि नमो विहितम् । परमेकेन पुरुपेण हट्टमध्य-स्थितेन राजा न नमस्कृतः। ततो राज्ञा तत्सम्मुखमालोकितम्। तेनांगुलित्रयम् ध्वींकृतम्। राज्ञा चिन्तितम् किन मनेनांगुलित्रयेण का सञ्ज्ञा विहिता। द्वितीयदिने तथैव तेनांगुलिद्वयम्, तृतीयदिने एकांगुलिः। आकार्ष राज्ञा पृष्टम्। तेनोक्तं-राजन्! दिनत्रयं चूणिरिस्त, किं राज्ञा। इति तुष्टेन तसे वर्षाश्चनं दत्तम्।

§ ४२) केनापि पण्डितेन श्लोकद्वयमिदमपाठि-"यदनस्तमिते सूर्ये०॥२॥" "ग्रासादर्द्धमपि ग्रासमर्थिभ्यः ।। १॥" एतत् द्रयमपि राज्ञा भोजेन कुण्डलयोः सम्रुत्कीर्णम् । द्रयसापि दाने लक्षद्रयी दत्ता ।

§ ४३) श्रीभोजेन सिद्धरससिद्धिहेतोः सुवर्णसप्तकोटीर्भक्षिताः । रत्तिकामात्रापि न सिद्धिरजनि । ततो रस-विडम्बननाटकममण्डि । तत्र पात्राण्यागत्य विजल्पन्ति-

15 (६१) कालिका नहा नहा कस्स कस्स नागस्स वा वंगस्स वा। नहि नहि धम्मंत फुकंत अम्ह कंत सीसरस कालिम ... ॥ १॥

इति राजा हसति । अत्रान्तरे सिद्धरसयोगी तन्निशम्य समागतः । प्रदीपिकाधूमवेधेन राज्ञस्ताम्रमण्डिका सुवर्णीकृता । राज्ञा दृष्टं किमेतदिति ? आन्तेन नाटकनिवारितम् । राज्ञोक्तं-तदा भोक्ष्ये यदा स सिद्धयोगी मिलिष्यति । एवं दिनत्रयेण मिलितः । तेनोक्तं-राजन् ! रसो दैवतम् ।

> अत्थि कहंत किंपि न दीसइ। [नित्थ] कहउ त सुहगुरु रूसइ। जो जाणइ सो कहइ न कीमइ। अजाणं तु वियारइ ईमइ॥

> > इत्यवगत्य मानितः।

§४४) श्रीमोजेन लोकोपकारकरणाय सप्तोत्तरशतवैद्यग्रासो विहितः। चतुष्पथचत्वरके जयघण्टा वन्धापिता। इत्युक्तं च-रोगिणा घण्टा वादनीया । यथा वैद्या मिलन्ति, चिकित्सां क्वर्वन्ति च । अपरं च रोगिणा वलहद्वेषु 25 भेपजान्नादि ग्राह्मम्। एवं कियति काले गते सति एकदा कोऽपि जलोदरी समेतः। घण्टारवादागतेन भिपजाऽ-साध्यः कथितः । ततो रोगी राज्ञो मिलितः । राज्ञापि कृपयोक्तं-वैद्या! असं जीवयत । राजन्! असौ न जीवत्येवासाभिः । इत्युक्ते दीनारपंचरातीं दुन्वा रोगी प्रस्थापितः । स निदाघे मध्यन्दिने सार्थरहिते पथि वटच्छायायां विश्रामायागमत् । तत्र सर्प्य एक आगच्छन् तहुर्गन्धेन नप्टः । स च विपि(प)ण्ण आत्ममरणाय पृष्ठे धावितः। ततस्तेन सर्पवान्तगरललिप्तार्कपत्राणि भक्षितानि । तैर्विरेको लग्नः। ततः कयाचित्रायिकया खगृहं 30 नीत्वा निरामयो व्यधायि । पुनर्व्यावृत्त्य घण्टारवो विहितः । तन्नादागतैर्भिपग्भिस्तं सर्ज्ञं वीक्ष्य प्रोक्तं-त्वया कथं घण्टारवोऽकारि । तेनोक्तं-मम राजैव वेत्ति । तैस्तत्रानीतः सः । राज्ञा पृष्टः-को रोगोऽस्ति ? । तेनोक्तं-अहं वैद्यमुक्तः स एव जलोदरी । त्वत्प्रसादाञ्जीवितः । किमेतदिति दोपज्ञवैद्यमुख्येनोक्तं–स एवायम् । परमेकौपध-साध्य एव। तदौपधं कर्म्मयोगेनैव मिलितम्, नार्थेन। किमौपधम्?। राजन्! निदाधमध्याहे ऋष्णसर्पखयंग्रक्त-गरलिप्तान्यर्कपत्राण्येव । तदौपधं विना यदि जीवितो भवति तदा मम काष्टानि । इत्युक्ते राज्ञा पृष्टं-किमहो १। 35 तेनोक्तमेवमेव । ततो राज्ञा द्वयस्थापि प्रसादो दत्तः ।

§४५) अन्यदा डाहलदेशीयकर्णमात्रा देमतया सिद्धयोगिन्या प्रहरं यावत् शुभलमकृते प्रसवसमये कपा-लासनेन गर्भो धृतः । कर्णो जातः । सा तु मृता । शुभलमप्रभावात् पद्त्रिंशद्धिकशृतराजचक्राधिपत्ये किय-माणे राजा रोदिति । मन्त्रिभिः कारणं पृष्टम्-"मा स्म सीमन्तिनी काचित् ॥"

§ ४६) अन्यदा श्रीकर्णेन श्रीभोजं प्रति कथापितम्—यत् भवतश्रतुरुत्तरश्रतं प्रासादाः, गीतवद्धप्रवन्धाश्र वर्त्तन्ते।अतस्तुरगद्दन्द्वयुद्ध-विद्याल्यागयुद्धेन मां विजित्य एकं प्रासादं प्रवन्धाधिकमुररीक्तरु । ततः पंचाशद्वस्त- ⁵ प्रासादप्रतिज्ञायां भोजे जिते मित्रिभिराहूयमाने शरीरापाटवे सति घाटमार्ग्गेषु वद्धेषु रुद्धेषु श्रीभीमेन श्रीकर्णस्य शुकचरणेन कृत्वा लेखः प्रस्थापितः । "अंवय फलं० ॥" इति यौगपद्येन मालवभंगे कृते भागहेतोर्डामरेण श्रीकर्णो वन्दी कृतः ॥ इति विविधा भोजनृपप्रवन्धाः ॥

१३. धाराध्वंसप्रबन्धः (B.)

§४७) मालवमण्डले उज्जयिनी पुरी अपरा धारा l तत्र राजा यशोवर्मा l इतश्च पत्तने श्रीजयसिंहदेवः l स 10 मालवं जेतुं प्रयाणमकरोत् । समीपभूमौ गतः प्रतिज्ञामकरोत्-यद् धारां लात्वा भोक्ष्ये । इतो धारायां गन्युति ५ मध्येऽयोमयाः क्षुरिकाः क्षिप्ताः सन्ति । प्रतोल्यो दत्ताः । कपाटेषु योजितेषु सम्मुखानि नाराचानि । तत्र गज-स्याप्यवकाशो नास्ति । धारायाः प्रत्यासन्तैरपि भवितुं न शक्यते । अथ सिद्धराजप्रधानैः कणिकाया धारा कृता । तस्या भङ्गे ५०० परमारा युद्धा मृताः। द्वादश्रवार्षिके विग्रहे सिद्धनाथे खिन्ने वर्व्वरको वेतालः प्राह-देव! यदि यद्मःपटहः करी किराह्रवास्तव्यो जेसलपरमारस्तत्र प्रेष्यते, गजारूढेन तेन धारा गृह्यते अन्यथा न । राज्ञोक्तम्-15 स करी कास्ते १। कान्त्यां मदनब्रह्मनृपतेरस्ति । जयसिंहदेवस्तु कियता परिकरेण तत्र गतः । वर्षाकालोऽस्ति । पुर्यो द्वारे स्थितः। मांइदेवमत्त्रिणो मिलितः। आदिश्यतां कार्यम्। नृपदर्शनमवलोक्यते। नृपो महानवम्यां विना र्द्यनं न ददाति । जयसिंहदेवः स्थितः । इतो गाढे घर्मेऽभिजायमाने नृप उपरितनभूमौ आकाशे प्राप्तः । पुरम-वलोक्य पुराद् वहिर्दशं ददौ । मदनकपटैः कृष्णान् चतुरकान् दृष्टा प्राह-अरे ! पूर्वारे किमिद्ं दृश्यते ? । देव ! गूर्जरत्रानृपतिर्देवदर्शनार्थी प्राप्तोऽस्ति । अरे ! नृपो न किन्त्वेप कवाडी । य एवंविधे वर्षाकाले आम्यति ।20 आकार्यताम् । जयसिंहदेवस्तूपायनमादायाययौ । श्रीमदनब्रह्मेण राज्ञा सत्कृतः । आगमनकारणं पृष्टम् । राज्ञो-क्तम्-यशःपटहः करी विलोक्यते । किमर्थम् १ । देव । तेन विना द्वादशवार्षिको विग्रहो न भज्यते । राज्ञो-क्तम्-गजानानयत । जनैरुक्तम्-प्रसिद्धानां मध्ये स नास्ति । सिद्धराजः कृष्णवदनो जातः । इत एकेनाघोरणे-नोक्तम्-देव! स यशःपटहः करी । तं समानाय्यत । नृपेणोक्तम्-यद्यम्रना कार्यं सरति तदा गृहाणान्येपि हस्त्यश्चादयः । देव! पूर्णमनेनैव । राजा परिधाप्य करिणं दत्त्वा चोक्तम्-अतः परं विग्रहो न कार्यः । यतः 25 स्रल्पायुपि जीवलोके राज्यस्य सौख्यं नानुभूयते तत्तस्य को गुणः । नृपस्तु धारायां गत्वा सगौरवं जेसलपरमार आहतः । तं दृष्टा चारणेनोक्तम-

(६३) तुह मूंडिए घणेहिं धार न लीजइ कर्णउत्त !। जिम जे हेडे(?)प्रऊंचेहि जोइ न जेसल आवतउ॥

स यशःपटहमारुह्य प्रतोलीं गतः। कपाटयोर्नाराचानि सम्मुखानि तैः करी विध्यते। स पश्चात् स्थितः। जेस-30 लेन हिकतः। करी कुपितः। कपाटाध ईपत् शुण्डाप्रवेशं प्राप्योद्धृतवान्। प्रतोली अतिवलेन पतिता। धारा गृहीता। नुपतिर्यशोवमी धृतः। श्रीजयसिंहदेव उपकारिणो जेसलसौद्धिदेहिकं कृत्वा वलितः।

§४८) यावत्क्रमेण बद्धनगरमायातस्तत्र ब्राह्मणैः प्रवेशोत्सवे कारिते श्रीयुगादिदेवप्रासादाग्रे नृपे प्राप्ते, द्विजैरुक्तम्-देव! देवं नमस्कुरुत । किमसौ ब्रह्मा १ । देव! असौ युगादिदेवप्रासादः । किमत्रापूर्वम् १ । देव!

असाकं पुरे एप देवो मुख्यः । नृपस्तु मध्ये गत्वा देवं नमस्कृत्य ध्वजां प्रासादोपिर दृष्ट्वा जनानाह—मया मालवे रुद्रमहाकालं विना ध्वजा कापि न दृष्टा । अतः कथमत्र १ द्विजैरुक्तम्—उत्तारके चलत यथोच्यते । ततो नृपतिर्वह्वदेवकुले गत्वोत्तारके गतः । तदनु व्राह्मणैः श्रीयुगादिदेवभाण्डागारात्कांस्यतालाईं गोष्टिकैरानीय नृपाय दर्शितम् । देव ! असौ स प्रासादो यत्रैवं कांस्यतालान्यासन् । एवं प्रासादाः २१ सकलशा भूगताः सन्ति । एप 5 द्वाविश्वतितमः । नृपस्तु चमत्कृतः । देवायाधिकं ग्रासं दत्त्वा पत्तनं गतः ॥ इति धाराध्वंसप्रवन्धः ॥

१४. सिद्धराजौदार्यप्रबन्धः (B.)

§ ४९) अथैकदा गुप्तिस्थाय यशोवर्मनरेश्वराय सिद्धराजेन पत्तनं दर्शितम् । तेन प्रासादपरम्परां दृष्टा उक्तं च—देवासाकं वैरं सुखेन वलिष्यति । कथम् १ । एषु देवकुलेषु मानातीतो ग्रासोऽस्ति । पाश्वात्यास्तं लोपयिष्यन्ति । अतो देवद्रव्यभक्षणाद्विनश्यन्ति । सहस्रलिङ्गं दृष्टा प्राह─वयं देवद्रव्यभक्षकाः, यूयं शिवस्नातजलपायिनः । अत 10 एवावां तुल्यो ।

(६४) न मानसे माचित मानसं मे पम्पा न सम्पादयित प्रमोद्म्। अच्छोदमच्छोदकमण्यसारं सरोवरे राजित सिद्धभर्त्तुः॥

६५०) अथैकदा सिद्धनृपतिर्नगरचरितं ज्ञातुं छन्नं अमित सा । व्यवहारगृहश्रेणौ एकसिन्नावासे बहून् दीपानालोक्य प्रातस्तस्याकारणं प्रहितम् । तेन भयभीतेन कारणं पृष्टम् । आकारकेणोक्तम्-नाहं जाने । स गतः । 15 नृपेण पृष्टम्-कियन्तस्ते गृहे दीपाः १ । तेनोक्तम्-चतुरशीतिः । नृपेण भाण्डागारात्पोडशलक्षान् दन्त्वा ध्यजा कारिता, दीपका विध्यापिताश्च ।

१५. मद्नब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीतिप्रबन्धः (B.)

§५१) कान्तीपुरी सर्वपुरश्रेष्टा । तत्र चतुरशीतिश्रतुष्पथानि । चतुरशीतिर्जैनाः प्रासादाः । तावन्तो माहे-श्वराः । तावन्त्यो वाप्यः । ८४ उद्यानानि । ८४ सरोवराणि । एवं ८४-८४ स्थानानि । तत्र मदनब्रह्मा राजा । 20 तस्य धवलं गृहम् । योजनप्रमाणः प्राकारत्तत्र धवलगृहं सप्तदशभूमिकम् । तस्य पाश्रात्यप्राकारमध्ये सर्वऋतूपयोगि उद्यानम् । तत्र सप्त[द्या ?]भूमो गवाक्ष ४ । आदौ विमानविश्रमेः पूर्वस्थाम् । उत्तरस्यां कैलाशहासः । दक्षिणस्यां पुष्पाभरणः । पश्चिमायां गन्धर्वसर्वस्वः । एते चत्वारो मुख्या गवाक्षाः । सर्वे स्वर्णमयाः । नानाकौतुकोप-शोभिताः । अपरे ११६ । एवं १२० तहुर्गो । वाप्यश्चतस्रश्चतुर्दिक्षु । क्षीरोदवापी १, कमल़केदारा २, हंसविश्राम-वापी ३, सुधानिधिः ४ एवं । तदन्त पुरमध्ये चन्द्रज्योत्स्रा तटाकिका धवलगृहप्रवेशप्रत्यासन्ना नानारहैर्निवद्धा । 25 तस्याश्चतुर्दिक्षु वाटिकाधारागिरिः सर्वर्त्तूपयोगिभिर्दृक्षैविंराजितः । तस्य राज्ञोऽन्तः पुरसहस्र ५ । एवं ३६००० पिंड-विलासिन्यः । मुख्यदेव्यश्रतस्रः । वावन १, [चन्दना २,] सुमाया ३, सींघण ४ । बावनदेवीवाहिगि-सुगति १, हंसगित २, सुललित ३, लीलावती ४ मुख्य । चन्दनावाहिंगि ४ साऊ १, सुसीला २, दक्षमणी ३, वछमा ४। सुमयावाहिगि ४-कांऊ १, कपूरी २, कामल ३, कस्तूरी ४। अमृतमयी १, अमृतवत्सला २, वचन-वत्सला ३, सहसकला ४-सींघणदेवीवाहिगि । मेरी १, हम्मीरी २, फतू ३, फलू ४-एता ग्रुख्याः राज्ञः 30 प्रसादपात्राणि । आलि १, आलिति २, अलिव ३, अलवेसिर ४, वील्ट् वामणी कौतुकपात्राः । गज ३३३०, तुरंगम लक्ष ५, पदाति लक्ष २१। सर्वमित्रिश्रेष्ठी माईदेवः सर्वमुद्राधिकारी । सेनापतिः साईदेवः । वारओंलगड माधवदेवः । तथा वर्षमध्ये सर्वावसरः २-एको महानवम्याम्, अपरश्रेत्राप्टम्याम् । एवमिन्द्रसमानो राज्यं पालयति । सोलही सोल १६ नृत्यं सदा नृपाग्रे क्विन्ति ।

§५२) एकदा गूर्जरत्राधिपतिर्जयसिंहदेवो दिग्विजयं विधाय व्याष्ट्रतः कान्तीपरिसरे प्राप्तः । चिन्तितम्— मम रणश्रद्धा केनापि नापूरि । "पुष्पेषु जाती नगरेषु कान्ती*…" सा ताबद्दिलोकनीया । परिग्रहोऽप्यजु-त्साहोऽपि नृपमनुययौ । क्रमेण पुरीद्वारभूमावावासान् दत्त्वा स्थितः । मध्ये कोऽपि न वेत्ति । नृपेण वहिःस्थेन प्ररीप्राकारे कनककपिशीर्पाणि दृष्टानि । प्रासाददण्डकलशैः सर्वसुवर्णमयी लंकेव भाति । सिद्धराजेन चिन्तितम्-वयमविमृत्र्य प्राप्ताः । इतः सेनानीः सन्नद्धीभूय पुराद्वहिर्निर्गत्य फेरकं दत्त्वा मध्ये याति । अमात्येन पुरीरोघः 5 कृतः । सैन्यसामग्री च सर्वा विहिता । इतो मित्रिणा लेखद्वारेण नृपो विज्ञप्तः-देव ! किमपि सैन्यं द्वारि केनापि हैतनाऽगतमस्ति । नृपेणोपरितनभूमिस्थितेन दृष्टम् । द्वारावलगकस्य प्रति खरूपपत्रमर्प्पितम् । मन्त्रिणा खरूप-मालोक्य पोडशतुरङ्गमानपरवस्तु नृपयोग्यमर्पयित्वा माधवदेवद्वारावलगकः प्रहितः। स सिद्धनार्थं गतः। नृपेणो-क्तम्-किमिदम् ? । मन्त्रिणाऽतिथ्यं भवतां प्रहितम् । प्राघुणका यूयं सत्काराहीः । नृपेणोक्तम्-वयमातिथ्यार्थिनो न, किन्तु युद्धार्थिनः । स तत् श्रुत्वा मित्रणे निवेदितवान् । मित्रिणा नृपो विज्ञापितः । राज्ञा पत्रकेण द्वारि 10 कथापितम् । भन्यमेतत् । आगामिके मङ्गलवारे तव श्रद्धां पूरियव्यावः। मन्त्रिणा द्वारि रणक्षेत्रं नृपस्य जयसिंह-देवस्य वचनात्सञ्जीकृतम् । चतुर्दिक्षु वृक्षादि क्षत्रियैश्छित्रम् । मित्रणा युद्धार्थे सैन्यसामग्री कृता । नृपादेशमेव विलोकमानितष्ठिति । नृपस्तु किमपि न कथापयित । इतो निर्णातिदिनोपरि जयसिंहदेवेन जगद्देवस्य परमारवंशो-द्भवस्य पट्टबन्धः कृतः । पश्चदश चान्येऽपि तत्सदशाः सञ्जीकृताः । इतो मङ्गलवारदिने नृषः प्रबुद्धो दन्तशौर्च स्नानं शृङ्गारं च विधाय देवतावसरमकरोत् । तत्र प्रेक्षणीयं जातम् । पश्चाद्रसवती निष्पन्ना । भोजनं विधाय 15 ताम्बलमादाय तुरगान सजीकृत्य खयं सनाहं जगृहे। पोडश नार्यः सन्नाहं ग्राहिताः। तद्जु ताभिर्युक्तो युवत्या भृतातपत्रो द्वाभ्यां वीजितवालव्यजनः स्थाने २ प्रेक्षणकान्यवलोकयन् पुर्यन्तरेवाष्टौ दिनानि कौतुकेनैव [निर्गम्य] नवमदिने वहिरायातः । इतो रणभूमौ पटो विष्टतोऽन्तरा तावज्ञयसिंहदेवसुभटाः सन्नह्म समाजग्रुः । याव-त्पटोऽपाकृतः, तावन्नारीवेष्टितं नृपं दृष्टा जगदेवाद्याः पश्चाद्ववलुः । नृपेणोक्तम्-किमिति भग्नाः स्थ । जगदेवे-नोक्तम्-केन सह युध्यते १। खयमवलोकयतु देवः। तावज्ञयसिंहदेवः खयं सम्मुखे धावितस्तुरङ्गं मुक्तवा पाद-20 चारेण । मदनब्रह्मनृपोऽप्युत्तीर्णः । द्वयोरालिङ्गने जाते द्वयोरिप प्रीतिर्जाता । प्रवेशमहोत्सवे जायमाने सिद्धनाथ-स्त्वनेकानि कौतुकानि विलोकयत्रनेकानि वाद्यानि शृष्यंश्व राज्ञा समं प्रतोल्यामागतः । एवं नवभिर्दिनैश्वन्द्र-ज्योत्स्नातटाकिकायां प्राप्तौ । तत्र स्नातौ । सुवर्णवेष्टितपादपां धारागिरिवाटिकामवलोकयन्तौ धवलगृहद्वारमा-यातौ । मन्त्रिणा कारितमङ्गलोत्सवौ धवलगृहं प्राप्तौ । सिद्धनाथस्तु सर्वरमणीयतामालोक्य ग्रामीण इव विस्पया-तुरः स्थितः । भोजनाद्या सर्वा सामग्री तथा जाता यथा वाढं चेतिस चमत्कृतः । मासान्ते मुत्कलापयामास ।25 राज्ञा हस्त्यश्वादीन्युपढौकितानि । जयसिंहदेवस्तु पात्राष्टकं ययाचे । नृपेणार्पितम् । राजा मुत्कलाप्य पत्तनोपरि चिलतः । पात्राष्टकं यावत्पुरप्रतोल्यामागतं सुखासनादि संहत्य.....तावित्रर्गमे उक्तम्-अग्रे पत्तनं क ?। जनैरुक्तम्-'पत्तनं दूरे' इति श्रुत्वा पण्णां हृदयसङ्घद्दो जातः । इतो द्वयस्रोपर्याच्छादनं दत्तम् । द्वयं जीवितम् । तन्नुपेण सह क्रमेण पत्तने प्राप्तम् । माऊनाम एकखाः, परस्याः पेथू । अद्यापि माऊइराणि पेथूहराणि च पात्राणि श्रयन्ते । एवं श्रीजयसिंहदेवः कान्तीं गत्वा समायातः ॥ इति मद्नेत्रसनृपतेर्जयसिंहदेवस्य ग्रीतिप्रवन्धः ॥

१६. अथ श्रीदेवाचार्यप्रवन्धः (Br.);

(६५) वस्त्रप्रतिष्ठाचार्याय नमः श्रीदेवसूरये । यत्प्रसादमिवाख्यान्ते सुखप्रश्लेषु साधवः ॥ (६६) नम्रो यत्प्रतिभाघमीत् कीर्तियोगपटं त्यजन्। हियेवात्याजि भारत्या देवसूरिर्भदेऽस्त सः॥

^{*} अत्र पद्यस्य पूरणार्थे मूलाद्शे तत्प्रमाणा पंक्तिः रिक्ता मुक्ताऽस्ति । पु॰ प्र॰ स॰ 4

- (६७) प्रभाधिनाथैर्मुनिभिः कलाभृत् मुख्यैरुपेतो गुरुतारकौँघैः। अनन्तलीलाकलितः किलास्ते गच्छो वृहदुगच्छ इति प्रतीतः॥
- (६८) तत्र चित्रचरितः परितापं हर्तुं मेघ इव भव्यजनानाम् । शिष्यवृद्धिकरसंवरवानप्युज्ज्वलोऽजनि गुरुर्भुनिचन्द्रः ॥
- 5 (६९) दुःषमाजलधौ येन मग्ना सुविहितस्थितिः। हेलयेव समुद्दधे धरित्रीवादिपोत्रिणा॥
 - तच्छिष्यः- (७०) पडिबोहिअमहिवलओं निन्नासिअक्रमतिमिरखरो। सबक्रपवोहकरो जयउ जए देवसूरिरवी॥
 - (७१) तावचिअ गलगाजिं कुणंति परवाइमत्तमायंगा । चरणचवेडचमकं न देइ जा देवसूरिहरी॥
- 10 १५३) तस्य चरितारम्भः- *धन्याधारदेशे मङ्घाहडपुरे वीरणागश्रेष्ठी प्राग्वाटज्ञातीयो वसति । तित्रया जिन-देवी । साऽन्यदा खमे चन्द्रं मुखे विश्वन्तं ददर्श । अथ गुरूणां श्रीम्रिनचन्द्रस्रीणामुक्तम् । तैरुक्तम्-चन्द्रवत्सौम्यः सतो भावी । सा समये ग्रुभदिने सं० ११४३ वर्षे वैशाखग्रुद्धदशम्यां सुतमस्रत । पूर्णचन्द्र इति नाम कृतम् । कदाचिन्मड्डाहडेऽशिवम्रत्पत्रम् । लोको दिशोदिशं गतः । वीरणागोऽपि भृगुकच्छे गतः । पूर्णचन्द्रस्तु अप्टवा-पिंकः सन् शुष्कभक्षिकां विकीणाति । गुरवस्तत्रायाताः । स शुष्कभक्षिकां विकेतुं कस्यापि गृहे गतः । तद्गृहे-15 शोऽपि निधानद्रव्यमङ्गाररूपं त्यजन् पूर्णचन्द्रेणोक्तः-स्वर्णं किं त्यजिस १ । तेनोक्तम्-मम भाग्यादङ्गारा जाताः, त्वं खकरे कृत्वा ममार्पय। तेनार्पितम्। धनिकेन कनकं दृष्टम्। धनिकेन शुण्डो भृत्वा खर्णस्यार्पितः। तेन पितु-रपिंतः । पित्रा गुरूणामुक्तम् । स्रिभिरुक्तम्-एप न सामान्यः, यद्यसाकं ददासि तदा प्रभावको भावी । पित्रो-क्तम्-अहं वृद्धः; तथा एकसुतो निर्द्रव्यः । पूज्यानां च वचोऽन्यथा कर्तुं न शक्यते । गुरुभिरुक्तम्-मम तपो-धनानां पश्चशत्यस्ति ते सर्वे तव सनवः । स दियतां पृष्टा पुत्रं गुरूणां ददौ । सं० ११५२ वर्षे दीक्षा । प्राज्ञ-20 त्वात् समग्रशास्त्रपारङ्गतो जातः । रामचन्द्र इति नाम दत्तम् । स महावादी जातः । पूर्वं धवलकापुरे धन्धो नाम द्विजो जितः । काश्मीरदेशीयो द्विजः सत्यपुरे सागरो जितः । नागपुरे गुणचन्द्रो दिगम्बरो जितः । चित्रकृटे शिवभृतिर्भागवतो जितः । गोपगिरौ गंगाधरो द्विजः, धारायां धरणीश्वरः, पुष्करिण्यां पद्माकरः । इतो विमले-चन्द्र-हेरिचन्द्र-पार्श्वचन्द्र-सोमचन्द्र-शान्तिकलश-अशोकचन्द्राद्याः सहायाः सङ्जाताः । गुरुभिः सं० ११६२ वर्षे पदे स्थापित:-देवस्रिर इति नाम जज्ञे । तथा वीरणागश्रेष्टिना जिनदेवीसहितेन तथा सरस्वतीनास्या पुत्र्याऽ-25 न्वितेन व्रतमात्तम् । पुत्र्याश्चन्दनवालानाम्ना गुरुभिर्महत्तरापदमदायि ।
 - §५४) अन्यदा धवलकके विहारे गताः । तत्र ऊदाश्रेष्टिना श्रीसीमन्धरप्रासादोऽकारि । तस्यायमभिप्रायः-यत् सीमन्धरो यं कथयति तेन प्रतिष्ठां कारयामि । उपवासत्रयं जातम् । सङ्घो मिलितः । शासनदेवी स्मृता । कार्ये निवेदिते, देव्या उक्तम्-श्रीसङ्घः कायोत्सर्गं करोतु । तस्य वलात् देवी तत्र गता । श्रीसीमन्धरं नत्वा

^{*} B सङ्ग्रहे एतच्चरितस्पारम्भः किञ्चिद्धिन्नपाठक्रमेणोपलभ्यते । यथा-महाहडिम्म नयरे निवसह सेही अ वीरणागु ति । सिरिपोरवाडवंसे जिणदेवी तस्स भजा य ॥

तयोक्तन्तः शुभस्त्रमस्चितो रामचन्द्र नामास्ति । अन्यदाऽवृष्टो सत्यां दुर्भिक्षवशात् भृगुपुरे सुभिक्षं श्रुत्वा श्रेष्टी तत्र गतः । राम-चन्द्रस्तु नोवित्तवाट्यां वाणिज्याय यदिष तद्प्यादाय याति । एकदा श्रीमुनिचन्द्रसूरयो विहारेणाजग्मुः । वीरणागो वन्दनायायातः । इतो रामचन्द्रेण पोडशवर्षदेशीयेन पौपधागारमागत्योक्तम्–तात! मया चणकान् दत्त्वा तावत्यो द्राक्षाः समानीताः । गुरुभिर्छक्षणान्यवलोक्य श्रेष्ठी उक्तः-श्रेष्टिन्! पुत्रो महाभाग्यवान्, त्वद् गृहे सन् तव कुलस्यैव द्योतको भावीः परं गृहीतदीक्षः सकलस्यापि जिनशासनस्य द्योतको भविता। ततः श्रेष्टिना श्रेष्टिन्या च क्षमाश्रमणं दत्तम् । भगवन्! सपुत्रयोरप्यावयोदीक्षया प्रसादं कुरु ।...(इतोऽग्रे B सङ्ग्रहः खण्डितः)

20

25

पप्रच्छ-भगवन् ! धवलकपुरे श्रेष्ठिना ऊदाकेन भवतां प्रासादः कारितः । तस्य प्रतिष्ठां कः करोतु ? । स्नामिना उक्तम्-श्रीदेवाचार्याः कुर्वन्तु । निष्टत्य उक्तम् । कायोत्सर्गः पारितः श्रीसङ्घेन । प्रतिष्ठा जाता । ऊदावसहीति नाम जज्ञे ।-इत्याद्यनेकवर्णनानि, तथापि किञ्चित् खण्डितसम्बन्धा लिख्यन्ते ।

§५५) अथ कर्णावतीसङ्घप्रार्थनया कर्णावतीं गताः। चतुर्मासकं स्थिताः। तत्र श्रीमदरिष्टनेमिनः प्रासादे व्याख्यानं भवति । इतः कर्णाटनृपगुरुश्रतुरशीतिवादान्−एवं देशे देशे जित्वा मालवमण्डलस्य मध्ये भृत्वा ठ गूर्जरत्रां प्रति चचाल। क्रमेण आसापहृयामाययो । तस्य वादाः−

(७२) वंभ अह नव बुद्ध भगव अहारस जित्तय, सइव सोल दह भद्द सत्त गंधव विजित्तय। जित्त दिगंवर सत्त च्यारि खत्तिय दुय जोइय, इक्ज धीवर इक्ज भिल्ल भूमिपाडिओं इक्ज भोईओं। ता कुमुदचंदि इय जित्त सवि अणहिल्लपुरि जओं आइयओं। वडगच्छतिलइ पहुदेवसुरि कुमुदह मदु उत्तारियओं॥

वासुपूज्यचैत्ये स्थितः । इतो धावँस्तत् श्राद्धोऽमन्दतरमायातः । कुम्रुदेनोक्तम्-किं चिरेण दृष्टः ? । तेनोक्तम्-श्वेताम्बरश्रीदेवाचार्यपौषधागारे समर्थनमजनि । तत्र वेला लगा । कुम्रुदेनोक्तम्-मयि आगते श्वेताम्बराणां

समर्थनमेव युक्तं न त्वारम्भणम् । तेनोक्तम्-मैवं वद ।

(७३) आस्तां सुधा किमधुना मधुना विधेयं, दूरे सुधानिधिरलं नवगोस्तनीभिः। अदिवसूरिसुगुरोर्यदि सुक्तयस्ताः पाकोत्तराः श्रवणयोरतिथीभवन्ति॥

इति श्रुत्वा सकोपः सन् साहारणं नाम भट्टमाहूय प्राहिणोत् । स पौपधागारे क्रमुद्विरुदान्यवादीत्—सकल-चादिवेताल, वादितरुप्रवलकालानल, वादीन्द्रमानपर्वतदावानल, वादिगजघटापश्चानन, वादिसिंहशार्दूल, मुक्तिनि-तिम्बिनीकण्ठकन्दलालंकारहार, श्वेताम्बरदर्शनप्रहसनस्त्रश्वार, पट्दर्शनपाठी जयति वादीन्द्रश्रीकुमुदचन्द्र ।

> (७४) हंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोऽस्ति सण्टङ्कितैः संसारावटकोटरेऽतिविकटे सुग्धो जनः पालते। तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकलेशस्तदा सल्यं कौसुदचन्द्रमङ्गियुगलं राज्ञिन्दिवा ध्यायत॥

ततः प्रभोः शिष्येण माणिक्येनोक्तम्-

(७५) कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसटाभारं स्पृश्चत्यंहिणा कः क्रन्तेन शितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्कृति। कः सन्नद्यति पन्नगेश्वरशिरोरत्नावतंसश्चिये यः श्वेताम्वरदर्शनस्य कुरुते वन्यस्य निन्दामिमाम्॥

अन्यदा प्रभोर्भगिनी सरखती तनुगमनिकायां गता। क्रमुदः प्राह—केयं गंडुरिका श्वेताम्बरी? क्रमुदेनोक्तम्— आर्ये! नृत्यं क्रुरु । नमाट! त्वं मृदङ्गं वा्दय। ततः सा पौपधागारे गत्वा रोदितुं प्रवृत्ता। गुरुभिर्निमित्तं पृष्टा तयोक्तम्—

> (७६) हा कस्स पुरोहं पुक्करेमि असकन्नया महं पहुणो। नियसासणनिकारे जोऽवयरइ वरं सुगओ॥

दिगम्बरविडम्बना उक्ता । गुरुभिश्विन्तितम्-

25

30.

- (७७) आः कण्ठशोषपरिपोषफलप्रमाणो व्याख्याश्रमो मिय वभूव गुरोर्जनस्य । एवंविधान्यपि विडम्बनविड्वराणि यच्छासनस्य हहहा! मस्एणः सृणोमि ॥ दुर्वादिचक्रगजसंयमनाङ्कशश्रीः श्वेताम्बराभ्युद्यमङ्गलबालदूर्वा। श्रीदेवसूरिसुगुरोर्भुकुटिर्ललाटपट्टे स्थितिं व्यतनुत प्रथमावतारम् ॥
- तदन्तु नयसारभद्दमाहूय प्रेपितः । स दिगम्बराग्रे गत्वा जगौ-
 - (७८) दिगम्बरिशोमणे! गुणपराञ्ज्यो मास्म भूर्गुणग्रहफ्लं हि तत् वसित पङ्क्षजे यद्रसः। ततस्यज मदं कुरु प्रशमसंयतान् खान् गुणान् दमो हि मुनिभूषणं सच भवेत् मदो व्यत्यये॥
 - (७९) नास्माकं हृदि दर्पसर्पगरलोद्गाराः स्थितिं तन्वते
 न्यत्कारं च न शासनस्य कलयाऽप्यालोकितुं शिक्षिताः ।
 तत्तुर्णं समुपेहि सिद्धन्यतेरग्रे हरिष्यामहे
 तीक्ष्णेर्युक्तिमहोषधव्यतिकरेस्त्वत्तुण्डकण्डूं वयम् ॥

यदि तव वादेच्छा तत् श्रीपत्तने वज । तत्रावयोर्वादः । इत एकदा माणिक्यं दृष्ट्वा दिगम्वर आह-

- (८०) श्वेताम्बराः कलितकम्बलयष्टयोऽमी गोपालतामविकलां मुनयो वहन्ति । उच्छुङ्खलं विचरतां भ्रवि निर्गुणत्वात् युष्मादद्यामनडुहां परिरक्षणाय ॥
- 15 (८१) तथा—नग्नैर्निरुद्धा तरुणीजनस्य यन्मुक्तिरत्नप्रकटं रहस्यम् । तर्तिकं वृथा कर्कशातकेकेलौ तवाभिलाषोऽयमनर्थमूलः ॥

इतः स शकुनैर्वार्यमाणोऽपि श्रीपत्तनं प्रति चचाल । पूर्वं सम्मुखा श्चत् जज्ञे, विडाली दृष्टा उत्तरिता च, कृष्ण-सर्पः सावडू जगाम । एवं शकुनैर्वार्यमाणोऽपि पत्तने गतः । नृपद्वारे प(ख)डपानीयं चिक्षेप । देव ! मया सह वादः कार्यताम् । अहं सिद्धचक्रवर्त्ताति विरुदं न सहे । विवेकचृहस्पतिर्गूर्जरतेति च नरसमुद्रं पत्तनं च-एतानहं 20 न मन्ये । विद्वांस आहूयोक्ताः । देव ! न स कोऽप्यस्ति पुरे योऽनेन सह वादं कुरुते । तैस्सर्वेरप्युक्तम्-देव ! देवाचार्यान् विना कस्यापि शक्तिर्नास्ति अमं जेत्तम् । तदन्त नृपेणाहूय श्रीसङ्घो भणितः-यत्तथा कुरुत यथा श्रीदेवाचार्याः कर्णावत्याः समायान्ति । श्रीसङ्घेन विज्ञितिका शहिता, आप्तपुरुपाश्चानेतुम् । तैः खरूपमर्पितम् ।

(८२) तत्र-गुणचन्द्रजयांजनतः प्रवादिनकाकुछे भवाम्भोधौ । त्वं वत्स कर्णधारो जिनशासनयानपात्रस्य ॥

(८३) देवाचार्यवेलात् युक्तः शासनस्य किलाईताम् । प्रभावनासरोजाक्ष्याः पाणिग्रहमहोत्सवः॥

स्तरूपं विलोक्य शुभदिने शुभशकुनानुकूल्यात्पत्तनोपरि चेलुः।

(८४) नयनविषयं यातश्चाषः श्चतं शिखिशन्दितं विषमहरिणश्रेणी हर्षात् प्रदक्षिणमागता । तुहिनकिरणक्षेत्रे भानुर्महोद्यमाश्चितः प्रकृतिमृदुलो वायुः पृष्टानुगश्च व्यजृम्भत ॥

क्रमेण पत्तने प्राप्ताः । नृपेण प्रवेशोत्सवः कारितः । कुमुद्चन्द्रेणु लश्चां दत्त्वा वारही परावर्त्तिता । भाण्डा-गारिककपदिनं विना शल्यहस्तं वाहुकनामानं मन्त्रीश्चरं वाहुडदेवं च विना । तदा कुमुद्चन्द्रेण नृपस्य मातुर्म-

¹ पक्षे बृहस्पतिवलात् (-िटपणी)।

यणुरुदेच्या अग्रे उक्तम्−अहं जयकेशिनरेश्वरस्य प्रियस्तव भ्रातुः । इतः करणे स्व-स्वमतख्यापनाय पत्रं लेख- यितुं गतौ । इतो गांगिलपण्डितेन श्रीदेवसूरीनुद्दिश्य हास्यं कृतम् ।	
(८५) वेषः कोऽपि तुरुष्कसन्ततिभवः कक्षान्तरे लम्बित-	
इछायामाश्रयते गताद्युकपद्योर्जीणोर्णकापोद्दलः ।	
अन्धानामिव यष्टिका करतले मुण्डं समुङ्खितं	5
युक्तं केवलमास्यमुद्गतमलं यद्गस्त्रखण्डावृतम् ॥	
(८६) दन्तानां मलमण्डलीपरिचयस्थृलंभविष्णुस्ततिः	
कृत्वा भैक्षभुजिकियामविरतं शौचं किलाचाम्लतः।	
नीरं साक्षि दारीरद्युद्धिविपये येपामहो कौतुकं	
तेऽपि श्वेतपटाः क्षितीश्वरपुरः काङ्क्षन्ति जल्पोत्सवम् ॥	10
ततः प्रभुराह-(८७) यादोऽङ्गशोणितकपायितचीवराणां सन्मांसभक्षणविचक्षणदक्षिणानाम् ।	
विद्वन्त्रिकायजननिन्दनकोविदानां पावित्र्यमुत्तममहो द्विजसत्तमानाम् ॥	
(८८) एतस्याः कुक्षिकोणे विद्धति वसतिं कोटयः खर्गधाम्ना-	
मेतल्लाङ्गललग्नाः सपदि तनुभृतो वैतरण्यास्तरन्ति ।	
गामित्थं स्तौति विप्रः पदि पदि न वयं कारणं तन्न विद्यो	`15
गृह्णानामात्मगेहात् तृणमपि निविडं ताडयन्त्युग्रदण्डैः ॥	
इत्युक्त्वा पौपधा(१)त्रृपेण गांगिलस्य देशपट्टो दत्तः । तदा क्रमुद्चन्द्रः प्रतिज्ञामवादीत्—	
(८९) इह रूपतिसभायां वाहरूर्द्धीकृतो मे वदतु वदतु वादी विद्यते यस्य शक्तिः।	
मयि वदति वितण्डावादविद्याधुरीणे जलधिवलयमध्ये नास्ति कश्चिद्विपश्चित् ॥	
(९०) वृहस्पतिस्तिष्ठतु मन्दवुद्धिः पुरन्दरः किं क्रुरुते वराकः ।	20
मिय स्थिते वादिनि वादिसिंहे नैवाक्षरं वेत्ति महेश्वरोऽपि ॥	
श्रीदेवाचार्येः कुमुदं प्रति-	
(९१) न लाभयामो ललनां न भोज्यं सुगन्धिसर्पिः हुतसुष्णमद्मः ।	
कार्यं विवादेन सखे न तत्र खशासनोद्योतकृते च कुर्मः ॥	
स्व-स्वमतख्यापनाय पत्रकमलेखि । कुमुदेनोक्तम्─	25
(९२) केवलिहुओ न भुंजइ चीवरसहियस्स नत्थि निद्याणं।	
इत्थीहुआ न सिज्झइ मयमेयं कुमुदचन्दस्स ॥	
देवाचार्येणोक्तम्-	
(९३) केवलिहुओ वि संजइ, चीवरसहियस्स अत्थि निवाणं ।	
इत्थीहुआ वि सिज्झइ मयमेयं देवसूरीणं ॥	30
गूर्जरत्राया विवेकच्रहस्पतित्वम्, नृपस्य सिद्धचिकित्वम्, पत्तनस्य नरसम्रद्रत्वमसह्न् विवदते । सं० ११८२	

गूर्जरत्राया विवेकच्हस्पतित्वम्, नृपस्य सिद्धचिकित्वम्, पत्तनस्य नरसमुद्रत्वमसहन् विवदते । सं० ११८२ वर्षे वैशाखपूर्णिमादिने वादहेतोराहृतौ । दिगम्बरः पूर्वं गतः । श्रीदेवस्ररिः शुभशकुनैः प्रेर्यमाणः पश्चाद्भतः । क्रमेण सभायां गताः । कुमुदेनाशीर्वादो दत्तः, प्रभुभिश्च । तदन्त गद्यपश्चशती उपन्यस्यते, तस्याः प्रत्युत्तरं पश्च-शत्या दीयते । पुनर्गद्यपश्चशती उपन्यस्यते । एवं तत्र पश्चविंशतिदिनानि विवादो जज्ञे । कुमुदो वारत्रयं निग्रह-

: 5

15

स्थानमायातः । क्रमेण सर्वेर्नृप-राज्ञीप्रमुखैर्मानितम्-क्रमुदचन्द्रो हारित-इति कृत्वा देशानिष्काशितः । क्रमुद-स्याशोकवनिकां गतस्य हृदयास्फोटो जातः । राज्ञा तत्सर्वस्वमादाय प्रभूणां प्राभृतीकृतम् ।

च्यारि जोड नीसाण हय हिंसह पंच पंच्यासी, इग्यारह सई सुहड सीस सई दुन्नि च्छिआसी । वलदह सइं चिआरि कम्मकर पंचछहुत्तर, अत्थ लक्ख पणवीस दम हुइ लक्ख बहुत्तर। ता चमर छत्त तुदृर विरुद सुखासण वाहण लियओं। वडगच्छतिलइ पहुदेवसूरि नग्गओं विल नग्गओं कियओं॥

श्रीगुरुं प्रति नृपः प्राह-भगविन्दं भविद्भिरेवार्जितं तत् गृह्णीत । स्रिराह-(९५) भुञ्जीमिह वयं भैक्षं जीर्णवासो वसीमिह । द्यायीमिह महीपीठे कुर्वीमिह धनेन किम् ॥ .10 नृपेण महोत्सवपुरस्सरं पौपधागारे सूरयः प्रेपिताः।

(९६) श्रीसिद्धपुरे रम्धे सिद्धन्तपो देवसूरिग्रह्यचसा । तुर्यद्वारं चैत्यं कारितवान् तुर्यगत्यर्थम् ॥ [*श्रीवादिदेवस्रिसदुपदेशवासितचेतसा सिद्धराजजयसिंहदेवेन सं० १८८३ वर्षे पत्तनमध्ये श्रीऋपभप्रासादः कारितः ८४ अङ्गलऋषभविम्बयुग् राजविहारनाम्ना ।]

॥ इति देवाचार्यप्रवन्धः॥

१७. आरासणीयनेमिचैत्यप्रबन्धः (P.)

§५६) अथैकदा आरासणपुरात महं गोगासुतः पासिलो दौर्वल्यात् क्लिकामादाय पत्तनमाययौ । तत्र राय-विहारे देवं नत्वा विम्वमपने लग्नः । इतः ठक्करछाडापुत्र्या देवकुलमागतया दृष्टः पृष्टश्र—आतरेवं विम्बप्रमाणं गृह्णासि, किं नृतनमेवंविधं करिष्यसि ?। तेनोक्तम्-भगिनि ! यदि कार्यते तदा प्रतिष्टायामागन्तव्यम्। एवमस्तु। 20 स खपुरे गतः । विम्बरचनेऽन्यमुपायमलब्ध्वा, अम्बाविदेवीप्रासादे गत्वा लङ्घितुमारेभे । दश्मिरुपवासैर्देवी प्रत्यक्षीभूयोवाच-वरं वृणु । तेनोक्तम्-देवि ! तथा कुरु यथाऽहं नृपविहारसमं प्रासादं कार्यामि । देव्या स्थान-मुक्तम्-खानिर्दिर्शता । परं पोडशप्रहरेस्ते मनोरथः सेत्स्यन्ति, तदनु न । इतो लव्धवरः सङ्घेन सह व्रजन् बुद्ध्या चतुष्पथमध्ये उपविष्टः। इयन्ति दिनानि देवीनिमित्तम्, अतः परं सङ्घोपरि । कथम् १ । यदि सर्वः कोऽपि खतो जनेन स्वसमुदायेन पोडशप्रहरान् सान्निध्यं करोति तदा भुझे नान्यथा । सङ्घेन मानितम् । पारणकादनु जनं [']25 सम्मील्य खनौ गतः । खननं प्रारव्धम्-प्रहरत्रयं जातं खनताम् । अतस्तस्य गुरवस्तनुगमनिकायां प्रस्थिताः । पासिलेन वन्दिताः। तैरुक्तम्-पूर्णा मनोरथाः ?। तेनोक्तम्-देवगुरुप्रसादात् । देवी रुष्टा मम प्रसादो न किन्त्वे-तेपाम् । सत्वरं निःसरत । खानिः पतिता । दीनारसहस्र ४५ विमलो निर्गतः । इष्टिकामयः प्रासादः प्रारव्धः । विम्बं कारितम् । चन्द्रमा सहस्र २ अवशिष्यन्ते । चिन्तितं विम्वग्रुपवेशयामि । इति ध्यात्वा पत्तनं गतः ठक्कर-छाडावासे प्रतोल्यां स्थितः। प्रवेशमलभमानो महता खरेण पूत्करोति। ठक्करेण मध्ये मोचितः। नमस्कारे '30 कृते ठक्करेणोक्तः—कुतः समायातः ? । छाडापुत्री वाई हांसी तस्या मीलनाय । ठक्करेण पुत्री आहृता । वत्से ! तव आता। तेन नमस्कृत्योक्तम्-मां न वेत्सि १, राजविहारे विम्यं मपन् दृष्टः सोऽहम्। मया विम्यं कारितम्, प्रतिष्ठायामागच्छत । ततः श्रीदेवस्रिः समं श्रेष्ठिपुत्री चलिता, पित्रा प्रेपिता । तत्र प्रतिष्ठा जाता ११९२ । तत्र तया दोपं सम्पूर्णं कृतम् । मण्डपस्तया भगिनीत्वेन कारितः । लक्ष ९ द्रव्यलागिः । स च मेघनादः ।

(९७) गोगाकस्य सुतेन मन्दिरमिदं श्रीनेमिनाथप्रभोन स्तुङ्गं पासिलसञ्ज्ञकेन सुधिया श्रद्धावता मिन्निणा। शिष्यः श्रीमुनिचन्द्रसूरिसुगुरोर्निर्ग्रन्थचूडामणे-र्वादीन्द्रैः प्रभुदेवसूरिगुरुभिनेंमेः प्रतिष्ठा कृता॥ (९८) रामनन्ददाशिमौलिवत्सरे माधवे च दशमीतिथौ सिते। वाक्पतेः सुदिवसे प्रतिष्ठितोऽरासणे पुरवरे शिवाङ्गभूः॥ ॥ इति आरासणसत्कनेमिचैलप्रवन्धः॥

१८. फलवर्ष्टितीर्थप्रवन्धः (P. Br.)

§५७) अधैकदा श्रीदेवाचार्याः शाकंभरीं प्रति विज्ञहुः । अन्तराले मेहतकपुरपाट्यां फलवर्द्धिकाग्रामे मासकल्पं स्थिताः । तत्र पारसनामा श्राद्धस्तेन जालिवनमध्ये श्रीपार्श्वतीर्थं प्रादुःकृतम् । तेनैकदा वनं निरीक्ष्यमाणेन 10 जालिवनमध्ये लेप्ट्राशिर्द्धः । अम्लानशितपत्रिकापुष्पेः पूजितः । लेप्ट्रवो विरलीकृताः । मध्ये विम्वं दृष्टम् । तेन श्रीदेवस्रिरमक्तेन गुरवो विज्ञापिताः । तैः स्रिरिमधीमदेव-सुमितिप्रभगणी वासान् दत्त्वा प्रहितौ । धामदेव-गणिना वासक्षेपः कृतः । पश्चादेवगृहे निष्पने श्रीजिनचन्द्रस्रयः स्वशिष्याः वासानपीयत्वा प्रहिताः । तैश्च ध्वजा-रोपः कृतः । पश्चात्तत्र प्रासादेऽजमेरीयशेष्टिवर्गो नागपुरीयो जाम्बर्डवर्गः समायातः । ते गोष्टिका जाताः । संवत् ११९९ वर्षे माहसुदि १२ शुके कलश्चनारोपः ॥ 15

।। इति फलवर्द्धिकातीर्थप्रवन्धः ॥

१९. मन्निसान्त्प्रवन्धः (B. Br.)

६५८) श्रीपत्तने जयसिंघदेवस्य मन्नी सान्त्नामा सर्वमुद्राधिकृतः श्रीदेवस्रिणां भक्तः। तेन धवलगृहानुकारी आवासः कारितः। ग्रुरवोऽवलोकनायाकारिताः। मन्निणा अग्रेसरेण भृत्वा द्शितः। पृष्टम्-प्रभो ! कीदगावासः !। इतः शिष्यमाणिक्येनोक्तम्—यदि पौपधशाला भवति तदा वर्ण्यते। मन्निणा क्षमाश्रमणं दत्तम्। एपा 20 पौपधशालेव भवतु। तदनु सा मुख्यपौपधशाला जाता। तत्र पद्दशालायाम्रभयोः पार्श्वयोरादर्शाः पुरुपप्रमाणा आसन्। श्रावका धर्मध्यानादनु यथा वक्त्राण्यवलोकन्ते। तथा वांका-निहाणाभिधानयोग्रीमयोद्धी प्रासादौ कारितौ। एकसारक्षपनं कृत्वा सुरङ्गया गव्यतिमितया द्वितीये गम्यते। एकदा मन्त्रिणो राज्ञा सहाऽप्रीतिर्जाता। मन्त्री रूसणके मालवदेशं प्रति सपरिच्छदोऽचालीत्। राज्ञा ज्ञातमेपो मध्यवेदी। सैन्यं सत्वरमानिय्धति। छन्ना नरा राज्ञा तेन सह प्रेपिताः। तत्र गतोऽसौ किं कुरुते। मन्त्री उज्जयिन्यां गतो नृपमन्दिरे, परं नृपस्य नमस्कारं न 25 करोति। पार्श्वव्येरुरुक्तम्—मन्निन् ! नमस्कारं [कयं] न कुरुपे !। देव ! देवं मत्वा श्रीवीतरागो नमस्कृतः, गुरून् भणित्वा सुसाधवः, नृपस्तु जयसिंघदेवः। अन्यस्य कस्य शिरो न नाम्यते। राज्ञोक्तम्—मन्निन् ! मुद्रां गृहाण। देवासाकं स्वामी केनापि कारणेन रुष्टोऽस्ति। कत्येऽप्यसानाकारियष्यति। तदनु राज्ञा गौरवेण स्थापितः। छन्नपुरुपैः पत्तने गत्वा नृपाय निवेदितम्। नृपेण सत्वरमाकारणं प्रहितम्। मन्त्री नृपं मुत्कलाप्य चलितः। मालव-मेवाडसन्यौ आहदम्योमे महं० सान्त्योग्यं पाश्रात्यप्रहरे मृत्युः। मन्निणा तदेव क्षामणाद्यं कृत्वा ३० पुत्रस्य शिक्षां दत्त्वाऽनक्तां गृहीतम्। पुत्रीवयज्ञ तथा प्रदत्तम्। तताः। किमवशिष्यते १ पृष्टे, वत्से! तपोधना-दर्शानादन्यन्त किमिपि। तया वण्ठस्तपोधनवेषं कारयित्वाऽग्रे नीतः। उक्तम्। तदर्शनान्मित्रणा हप्टेन नमस्कृतः

¹ Br कारापितं। 2 Br विम्बमः। 3 Br लेपूनि विरलीकृतानि। 4 Br सेढिवर्गो। 5 Br जावद। * P १९८८।

तन्मुखान्नमस्कारं प्राप दिवं ययौ । स तथैव समुद्रो निवेश्य स्थितश्रलनवेलायामुक्तः-रे वेपं मुश्र, खकर्माणि कुरु । तेनोक्तम्-यत्प्रसादान्मत्री सान्तू चरणयोर्निपतितस्तं वेपं न मोक्ष्ये । क्रमेण पत्तने नीतो गुरूणां पार्श्वे दीक्षितः । नृपेण पुत्रस्य महं० देवलस्य महन्मानोऽदायि ॥ इति मन्त्रीसान्त्प्रवन्धः ॥

२०. मन्त्रिउद्यनप्रबन्धः (P.)

5 ६५९) श्रेष्टीबोहित्थपुत्र अश्वेश्वरः । पुत्रयक्षना[ग]-पुत्रवीरदेव-पुत्रउदयनः । तत्पुत्रो मन्त्रिगुर्रुवाहडदेवः । श्रीकरणम् । लाटाह्वयदेशकरणमपि तस्य अर्पयति स नरेन्द्रो, येन वशेकरणपश्चकमनुष्यः (१) ॥

मरुखल्यां जावालिपुरसमीपे वाघराग्रामे श्रीमालज्ञातीय उदयनो विणक् । भार्यो धवलकक ठ० साम्बपुत्री सहादेवी । स क्रिपकां करोति । अन्यदा घृतक्रुपं मस्तके कृत्वा धनुरादाय मेघान्धकारयामिनीं विभातप्रायां मत्वा रामशेनोपरि चचाल । इत एकसिन् क्षेत्रे कलकलं श्रुत्वा, धनुरारोप्य, पृष्टवान्-के यूयम् १ । अस्य क्षेत्रधनिकस्य 10 कमा । उदयनेनोक्तम्-अस्यैव स्युः किं वा अन्यस्थापि ? । भवन्ति, परं स्थानान्तरिताः । मम क सन्ति । तैरू-क्तम्-आञ्चापह्यां कर्णदेवोऽपरः शालापतिस्तिहुणसीहः। स ततः श्रुत्वा पश्चाद् व्याष्ट्रस्य, महिलामुत्थाप्य, सुत-बाहड-चाहडान्वितः आञ्चापल्लीं गतः । तत्र चैत्ये सुंडु सुत्तवा देवं नन्तुं मध्ये गतः । तत्र तिहुणसिंहस्य पत्नी चेटीवृता देवं नन्तुमागता । अपूर्वान् दृष्टा वन्दनां चकार । पृष्टं कस्यातिथयः ? उदय०-आदौ देवो दृष्टः, पश्चा-च्चम् । ततः खसार्थे स नीतः । सा घरं (गृहं) मध्ये गता । द्वारपाल उदयनं न मुश्चिति । प्रतोल्युपरिस्थेन शाला-15 पतिनोपरि आनायितः । उदयनेन नमस्कारे कृते, पृष्टम्-कुतः प्राघुणकाः ? । मरुखल्या भवन्तं ध्यात्वा वर्तना-यागताः । भव्यं जातम् । भोजनाय सक्कद्धम्वो [उपवे]शितः । भोजनादनु पृष्टम्-मध्ये स्थास्यथ पृथग्वा १ । तेनो-क्तम्-पृथग् । स्तोकमि स्थानमर्प्यताम् । तेन गृहद्वारेऽपवरको दर्शितः । तत्र भूमिशुद्धं कृत्वा यावद्वारं ददाति ताविन्धानं निर्गतम् । स विलसति । तन्नृपस्य सारा जाता । शालापतिराहृतः । याचितं तत् । देव ! मदीये [गृहे] मारुक एक आगतः । तस्य गृहे किञ्चिन्निस्सृतम् । तदहं न वेद्यि । ततः स नरैर्धृत्वा नीयमानो निरो-20 धार्थं शून्यं हट्टं विवेश । तत्रापि निधानं दृष्टम् । राजकुले गतः । राज्ञा पृष्टम्-रे निधानं दर्शय । तेनोक्तम्-देव ! बुभुक्षितेन भक्षितम् । ततो गुप्तौ क्षेपितः । स यदा शरीरचिन्तायां याति तदा निधानमेव विलोकयति । अन्यदा नृपेणोक्तम्-रे अर्पयसि १ । तेनोक्तम्-कियन्ति दर्शयामि । राज्ञोक्तम्-एतत्किम् १ देव । यत्र यत्र यामि तत्र तत्र निधानानि । दर्शय । तेन ५-१० दर्शितानि । तं भाग्यवन्तं ज्ञात्वा खमुद्रा दत्ता भूपेन, राणिमा च ।

§ ६०) एकदा मित्रपत्नी विनष्टा । वाग्भटेनाचिन्ति—मम पिता दुःखितः । कापि कन्यां विलोकयामि । 25 वायडपुरे कोऽपि व्यवहारी तस्य सुता बृद्धाऽस्ति । सा वाग्भटेन ख्यं तत्र गत्वा याचिता । तेनोक्तम्—कस्यार्थे १ किं तेन १ ममैव देहि । तेन दत्ता । इतो वाग्भटदेवेन राणक उक्तः—तात ! वायडपुरे जीवितस्वामिनं श्रीम्रिनिस्त्रतमपरं श्रीवीरं नन्तुं चलत । सङ्घं सम्मील्य ततो गतः । तत्र गत्वा, पूजां विधाय, भोजनवारा प्रारव्धा । इतो वाग्भटदेवसङ्केतात् कोऽपि स्थालं न मण्डयति । मित्रणोक्तम्—स्थालानि किं न मण्ड्यन्ते १ । यदि सङ्घवचः प्रमाणीकुरुत तदा सर्वः कोऽपि स्रुनक्ति । आदिशत । यत्परिणयनं मन्यध्वम् । मित्रणोक्तम्—सप्ति वर्पाण ३० जातानि । अतः कोऽवसरः १ अवसरं विना न शोभते । अतो वाग्भटेनोक्तम्—ज्ञातिर्वलीयसी । उदय०—कः कन्यां प्रयच्छिति । सर्वं निष्पत्रम्, भवतां वाक्यमेव विलोक्यते । ततः परिणीतः । तस्याः सुतो रायविद्वार आम्बडो जातः । उदयनेन सङ्गारो जितः । पश्चान्मेलगपुरे साङ्गणडोडीआकेन सह युद्धं जातम् । घाताः लगाः । तत्राभि-प्रहद्यम्—शञ्जलयोद्धारे द्विवेलं भोजनम्, श्रीम्रुनिस्त्रत्रप्रासादोद्धारे स्नानम् । अभिग्रहद्वैविष्यं सत्याप्य कालं कृत्वा सुगतौ प्राप्तः ।। इति मित्रउदयनप्रवन्धः ॥

२१. अथ वसाह आभडप्रवन्धः (B. Br. P.)

§६१) श्रीअणिहिछपुरे नागराजंश्रेष्ठी कोटीध्वजः। तस्य प्रिया लीलादेवी। अन्यदा श्रेष्ठी आपन्नसत्त्वायां पह्यां विश्चित्वातो सृतः । तद्यु नृपपुरुषेर्षृहसारमपुत्र इति कृत्वा गृहीतम्। श्रेष्ठिनी धवलकके पितृगृहे गता। तत्र तस्या अमारिदोहदो जज्ञे । स पित्रा पूरितः। क्रमेण पुत्रो जातः। तस्याभयकुमार इति नाम दत्तम्। स क्रमेण पश्चवर्षायो जातः। पठनाय क्षिप्तः। अध्ययनं करोति। अधैकदा वालकैर्निस्तात इति कथितः। स मातरं 5 पप्रच्छ-मातः! को मे तातः । तया स्विपता दिश्चितः। तेनोक्तम्-एप ते, मम क १ तया स्वभावे उक्ते, तेनोक्तम्-पत्तने यास्यामि, अत्र न स्थास्यामि। इत्याग्रहमादाय स्थितः। मातामहेन सम्प्रेपितः। पत्तने गतः । तत्र स्वगृहे स्थितः। क्रमेण व्यवसायः प्रारव्धः। लाछलदेवी भार्या परिणीता । किमपि निधानं पूर्वजसत्कं लेभे। व्यवसायात् पितृतुल्यो जातः श्रिया। सुतत्रयं जातम्। अथ कर्म्मदौर्वल्यात् श्रीर्गन्तुं लग्ना। मन्दं मन्दं निर्द्धन-त्वमाययौ । पत्नी पुत्रानादाय पितृगृहं गता। आभडोऽप्येकाकी मणिकारहट्टे घुर्घरकान् घर्षति। यवानां माणकं 10 लभते। तेन वृत्तिः। । तं पीष्य स्वयं पक्तवाऽश्नाति। एवं दुरवस्थां गमयित। यतः-

(९९) वार्द्धिमाधवयोस्सौधे प्रीतिप्रेमाङ्कधारिणोः। या न स्थिता किमन्येषां स्थास्यति व्ययकारिणाम्॥

एकदा कुलगुरूणां हेमाचार्याणां पौपधागारे गतः । जनान् परिग्रहप्रमाणं गृह्णतो वीक्ष्य सोऽपि ययाचे । गुरुमिर्द्रम्मान् पृष्टः । योग्यतां ज्ञात्वा टिप्पने द्रम्मलक्ष ९ कृताः । एवं शेपवस्त्नि । टिप्पनमिर्पतम् । तेनो-15 क्तम्—कस्यापि पुण्यवत इदम् । ममेवं योग्यता निह । गुरुमिरुक्तम्—मविष्यति । शेपं धम्में देयम् । क्रमेण द्रम्मपञ्चकं प्रन्थों कृतम् । एकदा चतुःपथान्तरे एकामजां दीनार ५ जग्राह । गले आभरणं साथें क्रीतम् । तस्य पापाणस्य दलानि वैकटिकात् कारितानि । क्रमेण धनी जातः । कुटुम्वं मिलितम् । तपोधनानां विहरणे पृत्त-घट १ दिनं प्रति । तथा सत्राकारस्त्ववारितः । नित्यं प्रासादेषु पूजा । सदैव साधिर्मिकाणां वात्सत्यं सत्कारः । वर्षं प्रति सकलदर्शनसङ्घार्च २ । तथा पुत्तकान्यनेकशः लेखितानि । जीर्णोद्धाराश्च कारिताः । वहूनि विम्यानि 20 कारितानि । एवं सङ्गमुक्त्यतामासाद्य वर्ष ८४ प्रान्तेऽनशनमादातुकामः पुत्रपञ्चकं स्वजनानप्याहूय प्रोवाच—हे वत्साः ! धर्मवहिकां वाचयत । वाचितायां 'मीर्मप्रीद्राम ९८ लक्ष ।' इति अङ्कं श्रत्वा वसाहो विपण्णः । व्येष्ठस्रतेन आसपालेन व्याहृतम्—यूयं तात ! मा विपीदत । यदसाभिः सकलोऽर्थो व्ययीकृतः । अद्याप्यादिश्यताम् । मवन्यसादेन सर्वमित्त । वसाहः प्राह—रे वत्साः ! जनके मिर्य गर्भित्यते विपन्ने सर्वसं नृपेणात्तम् । पुनर्जातेन पुनर्गानेतम् । महदुःस्वमनुभूतम् । पुनर्थे जातेऽहं कृपणो जातः । कोष्ट्यपि न प्रिता । पुत्रैरुक्तम्—तात । 25 परं कोटीः पूर्णा तदा स्यात्, यदा अष्टोत्तरा भवति । १० लक्षास्तत्कालमानीय सप्तक्षेत्रयां व्ययिताः । अष्टी पुनर्थम्नव्यये । एवं पुण्यानि कृत्वा सर्गभाग् जातः" । पुत्राणां मध्ये ह्रौ माहेश्वरिणौ त्रयः श्रावकाः सञ्जाताः ।

।। इति आभडवसाहप्रवन्धः ॥

¹ B गूर्जरत्रामण्डले श्रीपत्तने श्रीमालज्ञातीयो नागराज०। 2 B दिवं ययो। 3 B पंचवपंदेशीयः। 4 B अत्र मातुःशाले। 5 P नास्ति। 6 B पाणिग्रहणं क्रमेण जातं लाङ्कदेवी नाम कृतम्। 7 B प्रंजक्रमागतं च। 8 P नास्त्येतद्वाक्यम्।
† एतदन्तर्गतः पाठः P नास्ति। ‡ एतदन्तर्गतपाठस्थाने B आद्शें एतादशः पाठः-'एका अजा विकेतुमायाता। तस्याः कण्ठे पापाणोऽस्ति। स इन्द्रनीलमयो वसाहेनोपळक्ष्य मूल्यं पृष्टम्। पंच दीनारा उक्ताः। तेनार्पिताः। कण्ठाभरणं गृह्णत् वारितः। स अजामादाय
गृहे गतः। पापाणोऽपि वैकटिकाय दिशेतः। अर्द्धमुक्त्वा विदारितः। लक्ष्यमूल्या मणयः कृताः। अर्द्धमद्दं कृत्वा गृहीताः। क्रमेण
धनवांस्त्रथेव जहे।' 9 B भीमपुरी। 10 B नृपेणेत्वरं गृहीतम्। 11 B ०कृत्वा ८४ वर्षसम्पूर्णेऽनदानं प्राप्यं शुभध्यानाद्विपेदे। स्वर्गमगात्।

२२. मं० सज्जनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रबन्धः (P.)

६२) अथ सिद्धराजे राज्यं शासित श्रीमालज्ञातीयवान्धवाः ३—साजंण—आम्बा—धवँलाः । इतः श्रीजयसिंहेन सज्जनः सुराष्ट्रायां व्यापारे प्रहितः । श्रीरविते तीर्थं नन्तुं गतः । प्रासादो जाकुड्यमाल्येन शैलमयः प्रारव्धः ।
अमाल्यो मालवावासी दिवं गतः । १३५ वर्षाण्यन्तरे गतानि । ततः सज्जनेन कर्मस्थायः प्रारेभे । वर्षत्रयोइहाहितं द्रव्यलक्ष २ व्ययीकृत्य प्रासादः कारितः । कियन्ति वर्षाण्यन्तरे गतानि । तत्रत्यान् इभ्यानाकार्यः प्रोक्तम्—मया प्रासादः कारितः । पुनर्नृपो द्रम्मान् यदि याचते तदा भवद्भिरङ्गीकार्यः । तैरमन्यत । इतश्र सिद्धेशः सोमनाथयात्रायामागतः । सर्वे व्यापारिणो मिलनाय आगताः । सज्जनो नाययो । नृपेण तदनागमने कारणं पृष्टम् । तैरुक्तम्—देव! तन द्रव्यं विनाशितमतः स कथमायाति । ततः सज्जनस्याकारणं गतम् । स आयातः । नृपेणोक्तम्—देव! तन द्रव्यं विनाशितमतः स कथमायाति । ततः सज्जनस्याकारणं गतम् । स आयातः । नृपेणोक्तम्—तत्रागम्यते तदा दर्शयसि । देव! दर्शयामि । नृपस्तु तत्र गतः । पृष्टः—कास्ते । उपर्यागल्खा । तथा कृतम् । प्रासादे नेमिं नत्वा बहिरायातः । पृष्टम्—केनात्र प्रासादः कारितः । सज्जनेनोक्तम् श्रीसिद्धेशेन । मम तु श्रुद्धित्पि न] कथं जातः ? । देव! इदमुद्धाहितम् । राज्ञोक्तं न मन्यते । ममादेशं विना कथं कारितः । द्रम्मानानय । आनयामि । कथम् । देव! अत्रत्येनेभ्यवर्गेणाङ्गीकृतमितः ।द्रम्मान् देवो गृह्णातु, पुण्यं वा । राज्ञा पुण्यमङ्गीकृतम्, परं मनाम्ना प्रासादोऽस्तु । देव! त्वन्नाभ्रैव, मम दासस्य किम् । कृत्येण तुप्टेन पुनर्व्यापारे दत्तः । अवलोकनासिखरमारुख दिशावलोकनं कृतं सिद्धेशेन । चारणेनोक्तम्—

(१००) मइं नाईउं सिद्धेश तउं चडियओ उज्जिलसिहरि। जीता च्यारइ देस अलीउं जोअइ कर्णाउन्र॥

ततः उत्तरितः।

20

(१०१) जाकुड्यमात्य-सज्जनदण्डेशाचा व्ययीकरन् यत्र। नेमिसुवनोद्धृतिमसौ गिरनारगिरीश्वरो जयति॥

(१०२) नाखानि खानितरतो घटितो न रङ्केर्नासूत्रि सूत्रकलया प्रमितो न मानैः। नाचार्यमञ्जकलया कलितप्रतिष्ठो यः खेन विश्वकृपया प्रभुराविरासीत्॥

२३. महं आंबाकारितगिरिनारपाजप्रबन्धः (P.)

§६३) अत्र धवलेन प्रपा कारिता। महं आम्बाकस्य श्रीक्रमारदेवेन सुराष्ट्राव्यापारो दत्तः। तेन व्रजता महं 25 वाहडदेवो विज्ञसः। तत्र गतोऽहं रैवते पद्यां कारयामि। मित्रणोक्तम्-कार्या। पश्चात्तेन तत्र पद्या कारिता। व्यये भीमप्री[य]द्रम्मलक्ष ६२। इतः क्रमारेशो यात्रायामागतः। साङ्कलीआपद्यायां चिटतः। वलमानो वाहडदेवेन सुखासने समारोप्याध आनीतः। केनेयं पद्या कारिता १, पृष्टं देवेन। तेनावादि मया। कदा १। ततः स्वरूपं प्रोक्तम्। तुष्टः [सन्] आम्बाकस्य व्यापारो दत्तः॥ इति पाजप्रवन्धः॥

(P.) सङ्गहे सोनलवाक्यानि ।

30 ६४) प(ख)ङ्गारे जीर्णदुर्गाधिपतौ उदयनेन हते तिस्रया सोनलदेवी जगाद-(१०३) षडहडीयां षंगार धणीविह्नणां धूलहर । गया करावणहार जाइसिइं.....॥ (१०४) पइं गरूआ गिरनार काहुडं मिन मत्सर धरिडं । मारितां षंगार एकू सिहर न ढालिडं॥

- (१०५) वीजलिआ वीजी वार सोरठ म आवे प्राहुणड । अम्मीणड भंडार लाई तई लूसी लीउ ॥ (१०६) मन तंबोल म मागि कंषि म ऊघाडई मुहिहिं। देउलवाडइ सागि तउं पंगारिं सउं गयउं॥
 - (१०७) जेसल मोडि म वाह विल विल विरूप भाविअइ। नदी जिम नवा प्रवाह नवघणविणु आवई नहीं॥
- (१०८) का हउं करिसि गमार अणहिलवाडइ रूअडई। सिहरतणां गिरनार सृतांहीं सालई हीअइ॥ 5
- (१०९) विल गरूआ गिरनार दीह नीझरणे झरइ। वापुडली ग्जरात पाणीहइ पहुरउ पडइ॥
- (११०) राणा सबे वाणिया जेसल वडु उ सेठि। काहउं वणिजडु मांडी उं अम्मीणा गढहेठि॥
- (१११) गया ति गंगह तीरि हंस जिसी वइसता । अड्डीणइ ढंढारि वगला वइसेवउं करई ॥
- (११२) अम्ह एतलइ संतोस जं पहुपाय पेलीआं। इक राणिम अन रोसु वेड षंगारिइं सडं गयां॥
- (११३) वढी तउं वढवाण वीसारतां न वीसरइं। सोनलकेरा प्राण भोगावहिसिउं भोगव्या ॥ 10
- (G.) सङ्गहे सिद्धराजसम्बन्धिवृत्तम् ।
- ६५) श्रीजयसिंहदेवेऽष्टवार्षिके श्रीकर्णो दिवं गतः । अप्टवार्षिक एव स सांत्मित्रिणा गुणश्रेणि नीतः । कटकं कृत्वा धाराभङ्गप्रतिज्ञां चकार । मित्रणा तृतीये दिने प्रतिज्ञापूरणाय मितर्दत्ता । ततः कणिकधारायां भज्यमानायां परमारपंचराती मृता । तदनु विग्रहायालिगेन सह मन्त्रे विधीयमाने चारणेनैकेनापाठि-
- (११४) एहे टीलालेहिं धार न लीजइं करण उत्र । जम जेहे प्रउंचेहिं जोइइ जेसलु आवतउ ॥ 15

इति श्रुत्वा वन्दीकृतस्य तस्य लेखः प्रहितः। तेनोक्तम्-पितुराज्ञया समेण्यामि । ततः पित्रा समागत्योक्तम्वत्स ! याहि । तदनु खयं नि.....ं विधाय गतः । सैन्ये राजा मेटितः। अत्रान्तरे जसपडहहस्ती
मत्तो जातः। राज्ञोक्तम्-जेसल ! धाराभङ्गं विधिह । तेनोक्तम्-देव ! प्रसीद[सकल]......द्र्य । स च
गजिशक्षावेदी यशःपटहं स्वीचकार । ततः सहस्राश्चतुश्चत्वारिशन्मिताः तुरङ्गमाः पृष्टे अग्रतो रम्याः। पत्तयश्चत्वारो लक्षा देहमोक्ष.....कुर्वन्ति । प्रतोल्यां गतो हस्ती । प्रहारे दत्ते दन्तभङ्गः समजित । ततो लत्ताप्रहारेणा- 20
गीला भग्ना । यदा जेसलेन लत्त्या हत्वा त्याजितः । स तदा त्रिखंड [डो (१) वभृव] यशःपटहो जेसलश्च स्वयं
भवी जातो । राजा च वन्दीकृतः । पत्तनप्रवेशे जयसिंहदेवेन राज्ञोक्तम्-निजमोक्षं विना सर्वं याचस्व । करस्थकुपाणस्य मम भवान् कवचहीन एव गजाधिरूदस्य प्रवेशं देहि । एवसुक्ते [काष्ट १] क्षुरिकां समर्प्य प्रवेशो विहितः।

े ६६) श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरदेवं नमस्कर्तं चचाल । मन्नी सांत्ः श्रीपत्तने मुक्तः । पंचगन्यूतप्रयाणके कृते धरापतौ मयणछदेवी अग्रे स्थिता याति । अत्रान्तरे मालवेशयशोवर्म्मणा श्रीपत्तनं वेष्टितम् । तदिष श्रुत्वा 25 श्रीसिद्धराजश्रिलत एव, न विलतः । गाढं गढरोधं भिणत्वा मन्निणा दण्डो मानितः । यशोवर्म्मणा श्रीसिद्धराजयात्रा-पुण्यं याचितम् । ततस्तत्करे पुण्यं दत्तम् । गतो मालवेशः । ततो यात्रां कृत्वा समेतः सिद्धेशः । मन्नी मेटनाय गतः । राजा कृद्धः । मन्निणा मुद्राऽपिता । अपरो न्यापारी जातः । अस्वास्थ्यं चौरवाहुल्यम् । ततो लोकै राज्ञोऽग्रे पूत्कृतम् । तदवगत्य राजा तत्रागत्य मानितो मन्नी । गृहाण मन्नित्वम् । ततो मन्निणोक्तम्─राजन् ! मृणु । केनापि तपस्थिना यूथभ्रष्टः कलभो वर्द्धितः । स च महावस्थामुपेतो यावताश्रमोपद्रवं कर्त्तं लगः, तावता ३० तपस्थी नष्टः । तदा─

- (११५) नीवारप्रसवाग्रमुष्टिकवलैयों वर्द्धितः शैशवे पीतं येन सरोजपत्रपुटके स्नानावशिष्टं पयः। तं दानासवमत्तषट्पदक्जलव्यालीढगण्डस्थलं सानन्दं सभयं च पश्यति गजं दूरे स्थितस्तापसः॥
- एवं जातम् । राज्ञोक्तम्-पुण्यं मम कथं दत्तम् १ । तेनोक्तम्-तवैकस्य पुण्यं दत्तम् । त्वं करं धारय यथा तेपां सर्वेपां पुण्यं तव ददामि । राज्ञोक्तम्-मृढ ! तव भिणतेन कथं तेपां पुण्यं दत्तं याति । मित्रणोक्तम्-आभीर ! यद्येवं वेत्ति तदा तव पुण्यं मम दत्तं तत्र कथं याति । स तु मया वचनेन छिलतः । हिप्तिन राज्ञा मित्रत्वं पुनर्दत्तम् ।।
- §६७) तीर्थयात्रायां पंचगव्यूतमात्रेणैकप्रयाणेनाग्रभागस्थितया श्रीमयणछदेव्या श्रीजयसिंहदेवपार्श्वात् द्वासप्ततिलक्षप्रमाणो वाहुलोडकरो मोचितः । तदन्त श्रीसोमेश्वरलिंगहेतोर्हेमकोटिपूजा विहिता । पूर्णमनोरथा 10 गर्वमावहन्ती । ततो देवेनेति कथितम्-यत्कस्याश्चित्कार्पिटिक्याः पिण्याकपुण्यं याचेः । सा तु नार्पयति पुण्यमिति गर्वपरिहारः ॥
- §६८) अथ मयणछदेन्या पापघटे दीयमाने कोऽपि न गृह्णाति । अत्रान्तरे विपण्णां तां कश्चिद्धिजन्मा जगा-देति—मातर् । यदि भवत्रयस्य पापघटान् ददासि तदा गृह्णामि । हिपतया तया तसौ भवत्रयपापघटो दत्तः । अन्ये सर्वेऽपि विसिताः पत्रच्छः-त्वया किं कृतम् १; पापघटसौकस्य निर्वाहो नास्ति, त्वया कथं त्रयं गृहीतम् । 15 तेनोक्तम्-अस्या जन्मत्रयेऽपि पापमेव नास्ति, तत्कथं धनं न गृह्यते । सर्वेरपि मानितम् ॥
- §६९) अथ कर्णाटदेशे पुलकेशिराजा ग्रीष्मसमये राजपाटिकायां गतः। सच्छायफलितसहकारतरोरधो विश्रशाम । अत्रान्तरे वनविहरुत्थितः । तेन दह्यमानेन वृक्षेण सह राजापि स्वक्षात्रधम्मेश्रंशभीत्या ज्वलितवान् । तस्य सुतो जयकेशिनामा वृपोऽभृत् । तस्य महाविद्वान् क्रीडाशुकोऽस्ति । तं विना राजा न भुद्धे । अन्यदा राज्ञा भोजनावसरे पंजरात्समाकारितः शुकः । तेन मार्जारभयाद्विभेमीत्युक्तम् । राज्ञा सर्वत्र मार्जारो गवेपितः । न 20 दृश्यते । पुनरुक्तम्—समेहीति । तेनोचे—विभेमीति । राज्ञोक्तम्—समेहि यदि त्वां भक्षयति मार्जारः, तदा भवता सह काष्टभक्षणं करोमि । एवमुक्ते समागतः । स्थालाधःस्थितेन मार्जारेण भक्षितः । राज्ञापि स्वप्रतिज्ञा-भङ्गभयात् सह काष्ट्रभक्षणं कृतम् ॥
- § ७०) गयणा-मयणाभ्यामिन्द्रजालिवद्या साधिता । ततः पत्तने नृतने सहस्रलिङ्गसरिस गयणो निजिवद्यां प्रकाशियतुं मकररूपेण प्रविश्योपद्रवित । वहुभिरुपायैरलब्धे तत्र राज्ञा पटहो वादितः । लघुश्रात्रा मयणेन 25 धीरां याचित्वा निष्कासितः । प्रसादितौ तौ राज्ञा ॥
 - §७१) श्रीसिद्धि-बुद्धियोगिनीभ्यां कदलीपत्रासनोपिवष्टाभ्यां श्रीसिद्धराजो जयसिंहः सिद्धराजत्वं पृष्टः। एवं विपि(प)ण्णेन राज्ञा रात्रौ वीरचर्यायां सज्जनसाकरीयाकः पुत्रेण समं योगिनीप्रतिमस्नत्वं वदन् श्रुतः। प्रातराकार्य सन्मानितः। तेन सप्तदिनान्ते सितां कावलयित्वा(१) क्षुरिकाद्वयं विधाय परमंडलभेटामिपेण राज्ञेऽर्पितम्। राज्ञा फलद्वयं भक्षयित्वा लोहमुष्टिद्वयं योगिनीद्वय[ाय भक्षण]हेतोर्रितम्। ताभ्यां न भक्षितम्।।
- ३० §७२) श्रीजयिंसहेदेवस्थान्यदा महं गांगाकेन आम्राणि प्रहितानि कस्यापि विष्रस्य शये । ततः स श्रीजय-सिंहदेवसदो दृष्ट्वा क्षुभितः । तत आह–राजन् । महं आंविल गांगे मोकल्यां छइं । सता उपरी पसावउ । ततो हिसतस्सः ।।
 - ९७३) एकदा श्रीसिद्धराजे दिग्विजयं द्वादशवार्षिकं विधाय समागते प्रजा मिलनाय गता । राज्ञा कुग्रलं पृष्टम् । ताभिरूचे-राजन् ! कुश्लमित्तः । परं चेतिस न निर्धत्तिः । राज्ञोक्तम्-कथम् १ । तैरुक्तम्-राजन् ! असाकं

रक्षको भवदीयसुतो विलोक्यते। राज्ञा तद्र्थं शाक्कनिकः पृष्टः। तेन क्रमारपालस्य राज्यं कथितम्। राज्ञा चितितम्-मम राज्यं अक्कलीनस्य भविता। तदेनं मारयिष्यामि। इति विचिन्त्य घातकान् सम्प्रेष्य त्रिस्रवनपालो मारितः॥ (G.) सङ्कहे हेमचन्द्रसूरिसम्बन्धिवृत्तम्।

§७४) श्रीहेमसूर्योऽप्टम्यां चतुर्द्श्यां श्रीजयसिंहदेवभवनं प्रयाति । पौपधशालायां सदिस स्यूलभद्रचरित्रं नित्यं वाचयन्ति । एकवेलमालिगपुरोहितेन राज्ञोऽग्रे कथितम् –यन् महाराज । कोऽयमसत्प्रलापः, सर्वरसभोजने पूर्वपरिचितवेश्याभवने च कामनिग्रहः । परं किं कियते भवद्वल्लभाः । राज्ञोक्तम् –आचार्या इह समेप्यन्ति तदा वक्तव्यम् । परोक्षे नोच्यते । सरिभिरागतम् । राज्ञोक्तम् –यूयं किं किं वाचयन्तः स्थ । ततः सरिभिः संक्षेपतः साद्यन्तमपि श्रीस्यूलभद्रचरितं कथितम् । आलिगेनोक्तम् –महाराज । "विश्वामित्रपराशारः ।।" गुरुभिरुक्तम् चली० ।" ततः आलिगेनोक्तम् –किं क्रियते असाकीनान्येव शास्ताणि पठित्वा असाकमेव सम्मुखाः संजाताः । गुरुभिरुक्तम् –ऐन्द्रं व्याकरणं किं भवदीयम् श्रिथाद्यापि श्रीमातृकावर्जं सर्वं नवं करोमि । 10 ततः श्रीजयसिंहदेवाभ्यर्थनया व्याकरणं कृतम् ॥

§७५) श्रीहेमस्रिपार्श्वे कोऽपि वादी कपटेन प्रच्छनाय समागतः । पृष्टम्-उर्वशीश्वकारः कीद्दशो भवति । स्रीणां मनः सन्देहदोलारूढं सम्पन्नम् । परं सचिन्ता अपि पुत्तकविलोकनं कुर्वतः [आयातः कार्पटिकः ।] तत उपि भूमिस्थेन लेखकं संपाठयता भाण्डागारिकेन कपिदिनाम्ना दृष्टाः । तेनेति लिखित्वा पित्रका तथा मुक्ता यथा पृच्छको न प्रयति । तद्यथा-उरू शेते उर्वशी । तद्विलोक्येवं स्थिता गुरवः । पुनस्तेन पृष्टम् । गुरुभिः 15 कथितम् । किं पृच्छन्नसि १ । तेनोक्तम्-उर्वशीशकारः । गुरुभिरुक्तम्-तालच्यः । तेनोक्तमहं वादी परं कपटेन नागतोऽभृत् । नमो विधाय गतः । गुरुभिरुक्तम्-भांडागारिकेन रम्या चाडा विहितास्ति ॥

§७६) केनापि मिथ्यादृष्टिना व्याख्यानानन्तरं श्रीस्त्यः पृष्टाः । यूयं सर्वानपि रसान् वेत्थ । परं मम सन्देहोऽस्ति । विष्ठारसः कीद्यः स्यात् । गुरुभिरुक्तम्—सत्यं पृष्टम् । परं वयं सर्वानपि रसान् ब्रूमहे । परं रसवेदकाः पृथगेव हि । वयमेतद्रसाभिप्रायं कथयिष्यामः । परमनास्वादितत्वात् भवान्न मानयिष्यति । अतो 20 भवान् पूर्वमास्वाद्यतु—इति वचनेन पराजितः ॥

. § 99) श्रीहेमद्धिर्माता पाहिणिनास्नी अनशने स्तीकृते भूमौ मुक्ता । श्रीसंघेन कोटित्रयधर्म्मञ्ययो दत्तः । ततो ज्ययो (हर्षो) न भवति । केवलं रोदिति । रोदनकारणे पृष्टे मात्रोक्तम्—मम सदशा घनतरा अपि विप- घन्ते । नामाऽपि कोऽपि न वेत्ति । परं मम कोटित्रयं धर्माञ्यये जातं । तदयं मम सुतश्रीहेमद्धिः प्रमाणम् । परं यस मम लगति स किमपि न विक्तः । इत्युक्ते श्रीगुरुभिर्लक्षत्रयीशास्त्रपुण्यञ्ययो दत्तः । ततो निर्वाणमजिन । 25 ततिस्त्रपुरुपद्वारि द्विजैर्विमानोपद्रवो विहितः । ततो रुपितैर्गुरुभिरुक्तम्—"आपणपइं प्रसु धाइयइ०॥" इति विचिन्त्य श्रीकुमारपुरो विच्छाया गताः ॥

१७८) एकदा हेमाचार्याः छत्रशिलायां निविष्टास्तेजो दद्दशुः । विलोकयतां समीपे समागतं तत् । मध्यगतपुरुपभेटः । कृष्णचित्रकार्पणं लोभवृद्धिहेतुरिति निस्पृहैर्निपिद्धः ॥

२४. कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः (P.)

(११६) आचार्या वहुँचोऽपि सन्ति सुवने भिक्षोपभोगक्षमा नित्यं पामरदृष्टिताडनविधावत्युग्रजाग्रत्कराः। चौलुक्यक्षितिपालभालदृषदा स्तुत्यः स एकः पुन-र्नित्योत्तेजितपादपङ्कजनखः श्रीहेमचन्द्रो गुरुः॥ 30

६७९) तिहुअणपालपुत्रः कुमारपालः । तस्य द्वे भगिन्यौ-एका प्रेमलदेवी सपादलक्षाधिपतिना आनाकेन नृपेण परिणीताः द्वितीया नामलदेवी राज्ञो महासाधनिकेन प्रतापमछेन परिणीता ।

§८०) अथान्यदा सिद्धेशो निरपत्यश्चिन्तयति-

- (११७) निर्नामताम्बुधौ मजजत्राज्यभूवलयोद्धृतौ । पुत्राः क्रीडावराहन्तः सम्पद्यन्ते महात्मनाम् ॥
- (११८) घटिकाऽप्येकया घट्या कुम्भीपयसि मज्जति । गोत्रं पुनरपुत्रस्य क्षणान्निर्नामताम्भसि ॥

इति विचिन्त्य देवपत्तने श्रीसोमेश्वरयात्रायै चचाल । परं विहङ्गिकां स्कन्धे निधाय तत्र गत्वा सोमेश्वर आराधितः । स प्रत्यक्षीभूय आह-कष्टं कथं कृतं यत्स्कन्धे विहक्षिकां विधायेहागतः ? । तेनोक्तम्-सुतं देहि । 10 किं तेन ? । राज्यार्थम् । राज्यधरस्ते कुमारपाली भविष्यति-इत्युक्तं सोमेश्वरेण । नृपो निवृत्यायातस्त्वेवमचिन्त-यत-चेदमुं मारयामि तदा सोमेश्वरः पुत्रं यच्छति । अतस्तं मारयितुमारेभे । सोऽपि विंशतिवर्षदेशीयः पुरा-च्छनो निःससार । सप्तवारं भ्रमन् केदारयात्रामकरोत् । अन्तरान्तरा प्रच्छन्नमभ्येति तपस्वी सन् । राज्ञा मार्य-माणी नष्टः। सज्जनकुलालेन कोष्टीमध्ये क्षेपितः। तस्य चित्रक्टं दत्तम्। पुनरप्येकदा अनादिराउलमठे प्रविष्टः। कदाचिद्धेमस्रिगुरुपौपधागारे प्रविष्टः । तत्र तैरुक्तम्-संवत् ११९९ मागसिरवदि ४ रवौ तव राज्यम् । परं 15 तव प्रत्यासन्नं कप्टम् । तदा पौपधागारे आगम्यम् । इतश्चानादिराउलतपखिसप्तशत्या सार्द्धं जेमनाय गतो नृपवे-इमनि । राज्ञा तपस्विनां पार्श्वे खङ्गधराः [स्थापिताः] सन्ति । यस्य तपस्विनः पादौ प्रक्षालयन् विम्रच्य उपरि यामि स मारणीयः । तथा कृते तेपां जनानां तद्भाग्यवशाद्धिस्मृतम् । भोजनावसरे एकं हस्तमुदरे न्यस्थापरं मुखे वान्तिमिपेण नष्टः। श्रीहेमस्० पौपधागारे गतः। दिन ३ उपवरके तालकं दत्त्वा स्थापितः। ततो भाण्डा-गारिककपर्दिनो दत्तः । तेन खगृहे छत्रं स्थापयित्वा पत्रचोलकमध्ये क्षित्वा २० योजनप्रान्ते मोचितः । कान्त्यां 20 गतः । तत्र सरिस तस्करस्य शिरः केनापि निःकृत्य क्षिप्तम् । तदनु तत्प्रातः प्रातरिदं त्रूते-एकेन बुडित । नृपे-णामात्याः पृष्टास्तैः पण्डिताः । तैर्मास एको याचितः । मुख्यपण्डितः खगृहसूत्रं कृत्वा निर्ययौ । अटवीं अमन् एकसिन् वृक्षकोटरे रात्रौ स्थितः । तत्र भूताः सन्ति । लघुभिरुक्तम्-तातासाकं क्षुधा । तातेनोक्तम्-दिनत्रयान-न्तरं यास्यामि । कथम् १ । प्रत्यासन्नपुरे नृषेण पण्डिताः शिरसो वाक्यं पृष्टाः । ते न जानन्ति । नरेन्द्रस्तान् सक्कटु-म्वान् व्यापादियप्यति । तैः पृष्टम्-तात ! किं कारणम् ? । निर्वन्धे कृते उक्तम्-लोभेन बुडित । तत्पण्डितेन 25 श्रुतम् । गृहमायातः । मासप्रान्ते नृपेणाहूतः । तेन सरस्तीरे गत्वा उक्तम्-यदि लोभेन बुडित तदा पुनर्न वाच्यम् । शिरस्तथैव स्थितम् । नृपेण प्रासादः कारितः । अतो मध्ये शिरः पूज्यते । ततः कुण्डगेश्वरप्रासादे श्रीसिद्धसेनलिखितां गाथां ददर्श- ॥ "पुण्णे चाससहस्से० ।" एवं तस देशान्तरे ३० वर्षाणि जातानि । कदाचिदुज्जियन्यां चर्मकारहट्टे सिद्धेशो विनष्टः श्रुतः। ततः कृष्णमुखो जातः। तेनोक्तम्-िकं कृष्णास्या यूयम् १ भवतो नृपः किं सगीनः ? । उत्तरः कृतः-नृपमृतौ को न दूयते । ततः पत्तनमागतः । तत्र भगिनीपतिः प्रता-30 पमछः । तेन जागरणिरेका गृहमानीता । तया पणवन्धः कृतः । अन्याः सर्वाः पितृगृहे प्रेपय । तेन तथा-कृते, क्रमरस्य स्वसा नामलदेवी पितृगृहमदृष्ट्वा समयज्ञा तस्याश्वरणयोः पपात । तयोक्तम्-किमिदम् १। देवि ! त्वं [म]म पितृगृहम्, तव दासीसमा स्थास्यामि । तया कथितम्-स्थीयताम् । इतः क्रमिरको भगिनीं एत्य प्राह-अहं क्षुधा श्रिये, मम दशां पश्य । सामा उक्तम्-मम आता भवान् । तया वेश्योक्ता-मम आतुर्दालिमुप्टेरादेशो दीयताम्। तथाकृते स पाणउठे (१) नित्यं दालिमुप्टिं गृह्णाति। इतो नृपे मृते यो यो राज्ये स्थाप्यते स स

अधानैरपाकियते । एवं सिद्धेशस्य पादुके राज्यं कारयतः । एकदा प्रतापमल्लो रात्रौ वैकालिकं कर्त्तुग्रुपविष्टः । सा वेश्या परिवेपयति । नामलदेवी दीपकरा पराखी (१) वर्तते । तां दृष्टा प्रतापमछ उवाच-रे ! तव आता का-प्यस्ति । तया वेश्या दृष्टा । उक्तम्-पाणउठे प्रतिदिनं दालिमुप्टिं गृह्णाति । तत्र पृष्टसौरुक्तम्-यद्द नायातः । तेन गवेपयितुं नराः प्रहिताः । ते प्रपादि शोधयितुं नराः प्रवृत्ताः । इतः प्रपायां क्रमरिको वोसरिकद्विजेन वार्त्ताः कुर्वन् श्रुतः-रे वोसरिक ! अद्य द्युताक्षिप्तेन दालिरपि नानीता। ततोऽस्मिन् सम्मुखे हट्टे गत्वा दीपच्छायायां करं 5 प्रक्षिप्य चणकमुप्टिं समानय । तेनोक्तम्-प्रथिलोऽसि । तव प्रातः पितृराज्यं भविष्यति, मम त्वारक्षकैर्वाहुव्छि-द्यते । इति श्रुत्वा नृपपुरुपैरभाणि सन्कः १। कुमरिकेनोक्तम्–को विलोक्यते १। कुमरिकः । केन हेतुना १। प्रता-पमछ आकारयति, चलत । इतो वोसरिकेन ज्ञातम्-एप मारणाय नीयते । स जीवग्राहं गतः । कुमारोऽपि स्तसः पतिं भणित्वा नमश्रकार । तेनोक्तम्-यदि राज्यं दिश्व तदा मे किम् १ । यद्भणिस तत् । तिर्हे यावजीवं साध-नम् । वर्षं प्रति लक्षत्रयं द्रम्माणाम् । प्रातर्नृपक्तले आगम्यम् । क्षुधार्त्तः स्थितः । वोसरिं प्रपायां न पञ्यति । 10 अचिन्ति-राज्यं सन्देहे, वोसरिरपि गतः । इतः प्रातर्दन्तधावनं कृत्वा नगरान्तः प्रविशति । तावत्खङ्गकरवैज्ञा-निकं दुद्रश । तेन खड़ी दुत्ती वन्दितः । चिन्तितं मम कार्यं जातमेव । शकुनं भव्यम् । तेन किमपि न याचि-तम् । अग्रे मीचिकेनोपानहौ दत्ते । दोसिकेन वस्नाणि । मालाकारेण पुष्पाणि । ताम्वृलिकेन पत्राणि । ततो राजकुले गतः। प्रतापमछेन प्रधाना उक्ताः-कुमारः किं न स्थाप्यते ?, सोऽपि धनिकोऽस्ति । तैरुक्तम्-स्थापयत। असिवलेन तदा राज्यं जातम् । सं० ११९९ । ततोऽप्यनेकानि कष्टानि अनुभूतानि । एवं कद[र्थ]नेन वर्पत्रयं 15 गतम् । पश्चाद्राज्यं सले जातम् ॥ ॥ इति कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः ॥

२५. राणक अंवडप्रवन्धः (P.)

\$८१) अन्यदा कुङ्कणे जालपतनं श्रुत्वा महिरावणाधिपतिं मिल्लकार्जुनं प्रति द्तं प्राहिणोत्—तथा विधेयं यथा जालं न पतित तव देशे । तेन च वलमानं विज्ञापितम्—यदावयोरेप पणः। कुङ्कणाधिपो गूर्जिरेशस्य विगि(१)कायां पत्राणि पूर्यति, तत्करोमि अन्यदिष्कं न जाने । अत्र जना मत्स्यमांसरताः प्रायश्चान्नदौरूथ्यात् । श्रीकुमार-20 पालेन कथापितम्—यदनं तथा प्रेपिप्ये यथा पत्त(१)नाथों भवति । तेनोक्तम्—सर्वथा नैतत् । इतः श्रीकुमारपालः कुद्धः सन् प्राह्—राजा (ज्ये) कोऽपि वीटकं मिल्लकार्जनोपिर प्रहीप्यति । इतः श्रीवाहडदेवश्चात्रा अम्बद्धेन वीटकं गृहीतम् । प्रौदक्तटकेन चिल्लतम् । तेन मार्गे घाटी रुद्धा । तत्र कटकं हतप्रहतं जातम् । अम्बद्धो निष्टुत्तः । कृष्ण-शृङ्कारः कृष्णाश्चः कृष्णगुप्तोदरः पत्तनवाद्धे स्थितः । नृपं नन्तुं न याति । नृपेणोपिरिस्थितेन गुप्तोदरं दृष्टं पृष्टं च—रे किमेतत् १ । तैर्निवेदितम्—सामिन् ! अम्बद्धोत्तारकोऽसौ । इतः स्पक्तिऽम्बद्धो द्वारिकया प्रविदय नृपं २५ पाश्चात्येन [न]त्वा पृष्टौ स्थितः । अग्रे पृहीति नृपोक्ते, देव ! मया स्यसामिनः कालिमानीता । अतो रात्रौ समेतः । यद्युक्वलो भवामि, तदा दिने समेप्यामि । इतो नृपो वीटकमादाय उक्तवान्—गृह्णीत । कोऽपि न गृह्णाति तदा भट्टेनोक्तम्—यदा रासभः प्रचण्डस्तदा तुरगेन समं कथम्रपृमीयेत । तथा वणिक् नृपप्रसादेऽपि क्षत्रि-यपौरुपान्वितः स्यात् । इत्युक्तेऽम्बद्धेनागत्य वीटकं गृहीतम् । सभ्येरुक्तम्—अग्रेऽपि कटकं हतप्रहतं कृतम् । शेप-मिप तथा करिप्यति । ततोऽम्बद्धो समीपमेत्य अश्ववारपञ्चशतीं याचितवान् । स तां गृहीत्वोपरि पथेन हेरकं ३० कृत्वा मिल्लकार्जुनं वेद्धायां स्थितमश्चान् वाह्यन्तं प्राह—भो ! शस्त्रं कुरु । अम्बद्धसमङ्काङ्केन युध्या शिरः पात-यत् । इतथारणेनोक्तम्—

(११९) अंव[ड] हुंतु वाणीड महिकार्जन हूंत राउ । पाडी माथउं वाढीउं उअडिहिं देविणु पाउ ॥

शिरिक्छत्वा वाहीआलीकिसोरसप्तशाती, शेपतुरगाश्वभाण्डागारम्, कोष्ठागारम्, सेङ्यकं दन्तिनम्, नव धडी हिरण्यस्य, चतुरस्नं कलशम्, मूटक ९ मौक्तिकानाम्, माणिकउ पछेडउ, शृङ्गारकोडि साडी, सहस्रिकरणता-डङ्क २, पापक्षयो हारः, संयोगसिद्धिः शिप्रा-एवंविधं सर्वमादाय अम्बडः पत्तनं गतः। नृपः सम्मुखमाययौ। मिछिकार्जुनिशिरसा नृपपादावपूजयत् । नृपस्तुष्टः, अम्बडस्य लाडदेशमुद्रां ददौ । हस्ती दत्तः, कलशस्य(श्र) 5 मिल्लिकार्जनजयस्चकः । खगुप्तोदरादयः । इतो हिस्तिनमादायाम्बडः खगृहं गतः । वाग्भटदेवो नमस्कृतः । वत्स ! देवं नमस्क्ररः। तथा कृते सति पुनरप्युक्तं वाहडदेवेन मित्रणा-इयन्ति दिनानि राजपुत्रस्त्वमभूः। अधुना व्यापारी जातः। अतः श्रीहेमसूरीन् कुलगुरून्नमस्कुरु । पौपधागारे गतः। तैस्तु धर्मलाभो न दत्तः। आशीर्वादोsस्तु । गृहे गत्वा प्रोक्तम्-अहं पौपधागारे गतः । तत्र गुरूणां धर्म्मलाभस्यापि सन्देहः । मन्त्रिणा वाग्भटदेवेन गुरव उक्ताः-यद्भवद्भिर्धर्मेलाभो न दत्तः । गुरुभिरुक्तम्-यदि असाभिर्नोक्तिस्तर्हि किं भृगुकच्छेन गतः । प्रासादं 10 कथं श्रीमुनिसुत्रतस्वामिन उद्धरिष्यति । अनेकानन्यायान् करिष्यति । मन्त्रिणा वाग्भटदेवेनाम्बडस्याग्रे उक्तम् । तेनोक्तम्-मम गुरव उद्धृतेः । प्रासादे हृष्टाः । द्विवेलग्रुव्धृते भोक्ष्ये, परं भूर्जं (१) विना युष्माभिः किमपि न वर्क्त-व्यम् । ततश्रिलत्वा भृगुपुरे गतः । प्रवेशे जाते मश्चमुपविष्टः । इतो देवीपूजिका योगिनीभिरन्विता समेत्यानभ्यु-त्थिता समीपे समीपे समेत्य विवेश । अम्बडेन कूर्पराहता मश्रकाद्वहिः पपात । मृता । कर्म्मस्थायः प्रारव्धः । वर्षेण सम्पूर्णः। शिलाकोटिघटितः प्रासादो जातः, राणकोदयनस्य मनोरथश्च। अम्बडेन श्रीपत्तने एका विज्ञप्तिः 15 श्रीकुमारपालदेवस्य १, एका गुरूणां २, एका वाग्भटदेवस्य, ३ एका श्रीसङ्घसः एवं ४ प्रहिताः । वाग्भटेन श्रीगुरूणां पुरो विज्ञप्तिर्मुक्ता। इदं किम् १। एपा अम्बर्डस्य विज्ञप्तिः। वर्षमेकं गतस्यासीत्। अद्य का विज्ञप्तिः १ । विलोकयत । प्रतिष्ठोपर्याकारणमागतम् । मन्त्रिन् ! एतत् सत्यम् १। अहं किं जाने, विज्ञप्तिः कथयति । तर्हि चल्यताम् । नृपो गुरुभिः सह प्राचालीत् । इतोऽर्द्धमार्गे जनः सम्मुखमाययौ । यदम्बडो न शक्रोति । गुरवः सङ्घं विग्रुच्य भृगुपुरे गताः । इतः प्रक्षीणधातुरम्बडो दृष्टः । देवीप्रासादं गत्वा ध्यानेन निविष्टाः । 20 इतो मुख्यपूजिकोदरे उदरवाढिर्जाता । सा कोक्यते । परिचारिका एत्य प्रभ्रमूचुः । असार्क खामिनी मुच्यताम्। तर्हि अम्बडोऽपि मुच्यताम् । स सकलो जग्धः पीतश्च । तर्हीपाऽपि म्रियताम् । जीवन्ती किं करोति । एक एव सार्थोऽस्तु । सा अत्यर्थं पीडिता प्रभूनेत्यावदत्-प्रसादं कृत्वा मां मुश्चत । अम्बडमूपि मुश्च । तरु(१)वेष्टितं कृत्वा भृतक्रम्भ्यां प्रक्षिप्ते यदिति वक्ति, म मारिति मां कर्पति । ततः कृष्ट्वा स्नानं कार्यः । यदि जल्पिप्यते स तदा त्वमपि सञ्जा भविष्यसि । दिनत्रयान्ते अम्बद्धः सञ्जो जातः । साऽपि च । इतः श्रीसङ्घान्वितो नृपः प्राप्तः । ²⁵ गुरुभिः साकमम्बद्धः सम्मुखो ययौ । अम्बद्धेन दत्तकरा गुरवः प्रदक्षिणां यच्छन्ति । प्रासादं तुङ्गमालोक्य गुरुभिरुक्तम्-मया देवं गुरुं विना कोऽपि न स्तुतः। तव कीर्त्तनेन किश्चिद्रक्ष्यामः। आदिशत।

(१२०) किं कृतेन न यत्र त्वं यत्र त्वं किमसौ किलः। कलौ चेद्भवतो जन्म किलरस्तु कृतेन किम्॥

प्रतिष्ठा जाता । आरात्रिकोत्तारणाय नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तम्-त्वमेवोत्तारय । वाग्भटेनाप्यनुमतः । 30 कर्त्तमुद्यतः । नृपेण शृङ्खलं कनकमयं खकण्ठादुत्तार्याम्बडगले क्षिप्तम् । तेन च याचकानां पठतां गृहसारं दत्तम् । द्वारभट्टस्य तिसन् शृङ्खले दत्ते नृपेणोक्तमवतारय । तथा कृतेऽम्बडेन पृष्टम्-देव ! किम्रुत्सुका जाताः । मया ज्ञातं जीवमिप दाखिस । मम त्वया वहुकार्यमिति । सङ्घार्चीदिषु जातेषु पुनः सङ्घः पत्तनं प्राप्तः । तत्र चैत्यवलानके ९ धडी सुवर्णस्य चतुरस्रं कलशं ददौ ।

१८२) अथैकदा नृपः सेवायातं मिल्लकार्जुनसुतं प्राह-पापक्षयादिरत्नपश्चकस्यौत्पत्यं वद । देव ! मिल्लकार्जु-35 नादेकविंशः पूर्वजो धवलार्जुनस्तस्य पश्चदश प्रिया आसन् । एका नरेन्द्रसुता खड्गेन परिणीता। आनीय वन्दीवास्थापि । नृपत्तां वेत्तीव न । शेपा मान्यतमाः । सा तु देवमेवोपालभते सा । अन्यदा पुरे काचित् परिव्राजिका आगता । सा चेटीभिः राज्ञीसकाशमानीता । तयोक्तम्-किं वेत्सि १ । साऽऽह-

(१२१) दंसेमि तं पि ससिणं वसुहावइद्गं थंभे वि तस्स वि रविस्स रहं नहद्धे। आणेमि सबसुरसिद्धगणं गणाओं तं नित्थ भूमिवलये महू जं न सिद्धं॥

प्रसीद, मम पति वशीक्तर । तया करे सर्पपा जिपत्वा ऽपिताः । यथा तथा नृपख [भोजन]मध्ये देयाः । 5 तया शाकं कृत्वा शियां भृत्वा चेट्युक्ता-भोजनावसरोऽस्ति देवस्य परिवेपय । सा शृङ्गारं कर्त्तुं गता । देव्या चिन्तितम् न ज्ञायते कदाचिदेपा वैरिणा प्रहिता स्थात्तदा मे पतिमारिकायाः का गतिः स्थादिति मत्वा गवाक्षस्याधः समुद्रस्तत्र शिप्रां ढालयामास । चेटी उक्ता-शाकं सम्प्रति तिष्टतु । कथम् १ । तत् करात्पपात । इतस्तेन वशीकृतः समुद्रो नृपरूपं कृत्वा रात्रावायातः । स तु देव्या नृपवदुपचरितो नित्यमेति । इतो देवी सगर्भाऽभूत् । चेटी प्राहिणोत्-देव! सीमन्तोन्नयनाय मुहूर्त्तमसत्स्वामिन्या गणापयत । नृप आह-का त्वम् १, 10 का तव स्वोमिनी ? । अहं तस्या नामापि न जाने । कस्य सुता णीता । तया यदकृत्यं कृतं तन्मम किमुच्यते । साऽऽगत्य देवीं प्राह-इत्थं निवेदयति । तयोक्तं समये ज्ञास्यते । इतः पुत्रो जातः । स्तकशुद्धेरनन्तरं वा.....य प्रतोलीमेत्य उपविष्टा । मम शुद्धि यच्छत । जातायां वालः स्तनं गृहीप्यति । नृपेणोक्तम्-मम साराऽपि न। अधुना खड़ेन परिणीता थुता, परं दृष्ट्रापि न। पुत्रस्य काप्रधानान् प्रैपीत् । एन्मम दृपणं तत्र न मया सोढ्यम् । सा न मन्यते । पट्टराज्ञी प्रहिता । स्त्री स्त्रीभणितेन मन्यते । सा एत्यावादीत्-किमिद्मार-15 व्धम् १। तयोक्तम् तव कुले इदंमम् तु न। नृपः खयमेत्य तां प्राह-तव ममाधुना दर्शनम् , पुत्रस्य तु का कथा ? । उत्थीयताम् । देव ! सर्वथापि वार्त्ता दिव्यं विना न वाच्या । प्रधानैदिव्यं दत्तम् । राज्ञी सुत बहिर्ययौ । पौरसहितो चृपश्च । तत्र लोहमयी नौस्तस्यां समिधरोप्य, दिन्यकर्त्ता क्षिप्यते । शुद्धे तरत्यशुद्धे ब्रुडति । सा राज्ञीति कामा श्रावणामकरि......त्यवद्राव इत्युक्तवा नावमधिरुरोह । सपुत्रापि ब्रुडिता । लोकः कोलाहलं यावत्करोति तावन्नावमधिरूढा देवी सशृङ्गारा शृङ्गारकोटिशाटीपरिधाना, सहस्रकिरणताड-20 ङ्काभ्यामलङ्कतकपोला, पापक्षयेण हारेण विराजितवक्षःखला, माणिक्यपटेनाच्छादितवाला, संयोगसिद्धिश्चित्रा-करा सर्वेरिप इष्टा शुद्धताला पपात । नृपेण नगरमध्ये प्रवेशिता । नृपो निशि तद्वेश्मनि इयाय । तयोपचरितः पृष्टवान्-अहं सर्वथा न जाने त्वं तु सत्येव या समुद्रेण शोधिता। इतः समुद्रदेवेन, प्रत्यक्षीभूयादितोऽपि खरूपमुक्तम्-नाखापराधः । नृपेण सुतस्य वालधवल इति अभिधा चक्रे । सा राज्ञी पद्दराज्ञी कृता । एतानि तानि रतानि तसैव समर्पितानि ॥ इति राणकाम्बडप्रवन्धः ॥

२६. कुमारपालकारितामारिप्रवन्धः (B.P.)

¹ B प्रमृतिपूजकैः । 2 B पूजकाः । 3 B नास्ति । \dagger एतदुन्तर्गता पंक्तिः पतिता P आदुर्शे । प्र॰ प्र॰ स॰ 6

तसादम्भ्यो मांसं नेष्टं किन्तु भवतामेवेष्टम् । तसादहं जीववधं न करिण्ये । ते विलक्षाः स्थिताः । छागमूल्य-समेन धनेन नैवेद्यानि कारितानि । अथाश्विनशुक्कदशम्यां कृतोपवासः हमापो निशि चन्द्रशालायां स्थितः । ध्यानेन पञ्चपरमेष्ठिपदं जपन्नस्ति । विहर्द्धाः सन्ति । गता बह्वी निशा । एका दिव्या स्त्री प्रत्यक्षीभ्य जगाद—राजन्नहं तव कुलदेवी कण्टेश्वरी । त्वयाऽसाकं देयं च न दत्तम् । नृपेणोक्तम्—दयाछरहम् , अतःपरं पिपीलिका-कृषी न हिन्म, का कथा पश्चनाम् । कण्टेश्वरी इति श्रुत्वा कुद्धा नृपं शिरसि त्रिश्चलेन हत्वा गता । नृपस्तत्क्षणा-त्कृष्ठी जातः । विखिना भृत्येन उदयनतन्त्वं वाग्भटमाकार्य पत्रच्छ—मित्रन् ! देवी पश्चन् याचते, दीयन्ते न वा । मित्रणा दाक्षिण्यादुक्तम्—देव ! दीयते । मित्रन् ! विणगिसि, यदेवं त्रूपे तिर्हे ममातः परं जीवितव्येनालम् । राज्यं प्राप्तम्, धम्मों लव्धः संसारतारकः, शत्रवो हताः । त्वरितं काष्टसञ्जतां कुरु । येनेद्यां मां दृष्टा जनो धर्मसोङ्घाहं विधास्यति । गुरून् गत्वा ग्रुत्कलापय । राज्ञा विसृष्टो गतो गुरूणां पार्श्वे । स्वरूपं निवेदितम् । विगुरुमिर्नीरमानाय्य कलापनीय(अकलापानीय)मिर्पतम् । तेन पूर्व देहाभ्यङ्गः कृतः पश्चात्पीतं च । नृपस्तत्क्षणं सुवर्णवर्णो जातो वपुपि । प्रातर्गुरूणां नन्तुं गतः । ततो गुरुभिर्देशना चके । पश्चादमारिविपये विशेपोन् द्यमः कृतः । एवममारिविपये कुमारपालप्रवन्धः ।।

२७. कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रबन्धः (B.)

§८४) एकदा गुरुभिरुपदेशो दत्त:-

एकदा प्रश्निर्भरतस्य चिक्रणः साधिमंकवात्सल्यकथा कथिता। नृपस्तां श्रुत्वा प्रतिग्रामं प्रतिपुरं साध-20 मिंकवात्सल्यमारेमे । तदृष्टा कविः श्रीपालपुत्रः सिद्धपालोऽपाठीत्—

> (१२३) क्षिस्वा वारिनिधिस्तले मणिगणं रत्नोत्करं रोहणो रेण्वावृत्त्यसुवर्ण्णमात्मिनि दृढं बद्धा सुवर्ण्णाचलः । क्ष्मामध्ये च धनं निधाय धनदो विभ्यन् परेभ्यः स्थितः किं स्यात्तैः कृपणैः समोऽयमखिलाऽर्थिभ्यः स्वमर्थे ददन् ॥

द्रम्मलक्ष १ दानम् । पं० श्रीधरेणोक्तम्-

(१२४) पूर्व वीरजिनेश्वरे भगवति प्रख्याति धर्मं खयं
प्रज्ञावत्यभयेऽपि मन्त्रिणि न यां कर्तुं क्षमः श्रेणिकः।
अक्केरोन कुमारपालन्यतिस्तां जीवरक्षां व्यधात्
यस्यासाय वचस्सुधांशुपरमः श्रीहेमचन्द्रो ग्रुरः॥

अत्रापि लक्षदानम् । अन्येद्यः कथाप्रसङ्गे प्रभवः प्राहुः-पूर्वं भरतो राजा श्रीमालपुरे श्रीशत्रुञ्जये सोपारकेऽष्टापदे च जीवित-स्वामिप्रतिमाश्रकार । श्रीसङ्बस्त्रचक्रोच्छलितरजःपुञ्जध्यामलितदिक्चकवालः सङ्घपतिर्भृत्वा ववन्दे । तदाकर्ण्य श्रीकुमारपालनृपतिः स्वयं कारिते देवालयेऽईद्विम्बमारोप्य ससैन्यः शत्रुञ्जयोज्ञयन्तादियात्राये चचाल । सङ्घेन

25

15

सह—उदयनसुतो वाग्भटश्रतुर्विशितिमहाप्रासादकारापकः, नागराजश्रेष्ठिभूः श्रीमानाभडः, पड्भापाचक्रवर्ती प्राग्वाटश्रीपालः, तत्तनयः सिद्धपालः कवीनां दावणां धुर्यः, भाण्डागारिकः कपद्दीं, परमारवंश्यः प्रहादनपुर-निवेशकारकः प्रहादनः, राजेन्द्रदौहितः प्रतापमछः, नवनवित्रक्षस्वण्णस्वामी टकरछाडाकःः तथा श्राविका देवी श्रीभोपलदे, नृपपुत्री लील्, राणाअंवडमाता, वसाह आभडपुत्री वाई चांपलदे—इत्यादिकोटीश्वरो लोकः । स्रयः—श्रीदेवाचार्याः, श्रीअभयदेवस्रिरिशिष्याः श्रीजिनचन्द्रस्रपत्तेषां गुरुवान्यवाः श्रीजिनवछभ- क्स्रयः, श्रीचैत्रवन्ध्राः श्रीधर्मस्ययः, श्रीवीराचार्याः—इत्यादिस्रिरवर्गः । श्रीदेवस्ररीणां भगिनी प्रवर्त्तिनी सरस्यतः, श्रीचैत्रवन्द्रस्ररीणां महत्तरापुष्पचूलाद्याः साध्व्यः । लक्षसंख्या मानवाः । एवंविधेन सङ्घेन सह स्थाने स्थाने प्रभावनां कुर्वन् चैत्यपरिपाटीं च कुर्वन् याचकेभ्य इच्छानुरूपं भोजनं यच्छन् श्रीवर्द्धमानमार्गेण रैवतकाद्री गतः । सांकलिआलीपद्यातले श्रीसङ्घः स्थितः । राज्ञोक्तम्—प्रभो ! पादमवधारयत, यथोपरि गम्यते । गुरुभिरुक्तम्—हे कुमारपालराजन् ! यूयं गच्छत, वयं पश्चादेष्यामः । नृपेणोक्तम्—गुरूविनोपरि कथं यामि ? । गुरु-10 भिरुक्तम्—अत्रेद्दशो जनप्रवादः, यत् यदोत्तमनरद्विकं छत्रशिलाध्यो यास्यति तदाऽनर्थः । अतो यूयं पूर्वं त्रजत । नृपस्तु धौतवासांसि परिधायोपरि गतस्तदनु गुरवः । सर्व तीर्थकार्यं कृत्वा नृपो वाग्भटदेवेन नृतनपद्यया मित्र-णाऽऽन्नेण कारितयोत्तारितः । तदनु तलहद्दिकायां जीर्णादुर्गे सङ्घवात्सल्यं सङ्घपूजां च कृत्वा देवपत्तने ससङ्घो नृपो गतः । तत्र श्रीचन्द्रप्रभादितीर्थान्त्रमस्कृत्य वलमानः श्रीजनुङ्कयमधिरुद्धवान् । चैत्यपरिपात्वां जायमानायां भाण्डारिकः कपदीं प्राह—

(१२५) श्रीचौलुक्य! स दक्षिणस्तव करः पूर्व समास्त्रित-प्राणिप्राणविधातपातकसत्तः शुद्धो जिनेन्द्रार्चनात्। वामोऽप्येष तथैव पातकसत्तः शुद्धिं कथं प्राप्तुया-व्र स्पृत्येत करेण चेयतिपतेः श्रीहेमचन्द्रप्रभोः॥

\$८५) मेरुमहाध्वजा-महापूजा-अमारिकाद्सिर्व प्रवित्तम् । मालोद्घट्टनसमये राज्ञि सक्वे चोपविष्टे मन्नी 20 वाग्सटदेवो द्रम्मलक्षचतुष्कमवदत् । केनापि च्छन्नेनाष्टौ लक्षाः कृताः । एवं क्रमेण वर्द्धमानेषु कश्चित्सपादकोटी-श्रकार । नरेन्द्रश्चमत्कृतोऽवादीदुत्थाप्यताम् । स उत्थितः । यावदृत्र्यते मिलनवसनो वणिक् । राज्ञा मन्नी उक्तः—द्रम्मसौस्थ्यं कृत्वा मालां प्रयच्छ । मन्नी तेन सह पादुकान्तिके गत्वा द्रम्मसौस्थ्यं पप्रच्छ । तेन सपादकोटि-मूच्यं माणिक्यं दिन्नित्तम् । मन्निणा पृष्टम्-इदं ते कृतः ? । तेनोक्तम्-महुआवास्तव्यो मम पिता हंसो नाम सौरा-पृक्षः प्राग्वाटः । तत्पुत्रोऽहं जगढः । माता मे धारू । मम पित्रा मरणसमयेऽहं भाषितः—वत्स ! मया प्रवहण-25 यात्राश्चिरं कृताः, फिलताश्च । मेलितं धनम् । तेन क्रीतं सपादकोटिमूच्यं रत्नमेक्षकम् । एवमधुना मम श्रीयुगादि-चरणः शरणम् । अन्तानं प्रतिपन्नम् । उक्तं च-एकं श्रीनेमिने, एकं श्रीचन्द्रप्रभाय, द्वयमात्मनोऽन्तर्थनं द्घ्याः । वाह्यधनमपि तव प्रचुरमस्ति । इदानीं यात्राये मया माता सहानीताऽस्ति । कपर्हिभवने मुक्ताऽस्ति । तां जरन्तीं मातरं सर्वतीर्थाधिकतया पुराणपुरुपैनिवेदितां मालां परिधापिय्यामि । श्रुत्वा मन्त्री हृष्टः सर्खं च सम्मुखं नीत्वा महोत्सवेनानीय सङ्घसमक्षं मालापरिधानं कारितम् । तन्माणिक्यं खण्णजिटितं कृत्वा कण्ठाभरणे ३० मध्यमणिख्याने निवेश्य श्रीयुगादिदेवाय दत्तम् । देवं मुत्कलप्य खयमारात्रिकमाधाय सङ्घः समुत्तीर्य क्रमेण चिलतः । प्राप्तः श्रीपत्तने । प्रवर्तितं सङ्घात्सल्यम् । प्रतिलाभिताश्च [साधवः] । अमारिस्तु शाश्चतेव ॥

।। इति श्रीकुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रवन्धः ॥

२८. कुमारपालपूर्वभवप्रबन्धः (B.)

§८६) एकदा श्रीकुमारपालेन श्रीहेमसूरयः पूर्वभवस्यरूपं पृष्टाः । ततः सूरयः सिद्धपुरे गताः । प्राचीमाधवाग्रे इमशानभूमी चतुरः श्रावकान् कृतोपवासान् चतुर्दिक्षु तपोधनांश्रत्वारो विदिक्षु स्थाप्य खयं त्रिभ्रवनस्वामिनीं विद्यां स्मृतवन्तः । देव्याह-सारणकारणं वदत । तैस्तु नृपभवः पृष्टः । देव्याह-मेदपाटदेशे चित्रक्तटप्रत्यासन्ने 5 ऊपरमालपर्वते परमारवंशीयो जैत्रः पछीपतिरासीत् । सोऽन्यदा धाराया गगनधूलेर्नायकस्य दशसहस्रवलीवर्दमितं सार्थं जगृहे। नायको नंष्ट्रा मालवेशमाह। राज्ञोक्तम्-मया तस्य किमपि कर्त्तं न शक्यते। तेनोक्तम्-मया शक्यते। कटकमादायाज्ञातवृत्त्या पह्यां गतः । जैत्रो नष्टः । तेन कीटमारिं कृत्वा जयतापत्याः सगर्भाया उदरं विदार्थ वालं भूमावास्फोट्य वलित्वा च तं नृपं प्रति खदृत्तमुक्तम् । नृपेणादृप्योऽयिमिति तिरस्कृतो जनैनिन्द्यमानस्ताप-साश्रमे गत्वा शुद्धिकृते तपस्वी जातः । अथ जैत्रः स्थानभ्रंशाचीरवृत्त्या जीवन्नेकसिन् सार्थे मिलितः । सार्थे 10 स्थिते श्राद्धा देवपूजां विधाय सरसः पालौ वजन्तो वीक्ष्य तैः सार्द्धं गतः । ते तपोधनान् नमस्कृत्य धर्मोपदेशं श्चत्वा क्षमाश्रमणपूर्वं तपोधनानादाय गताः । स तथैव स्थितस्तपोधनाः समायाताः । स न उत्तिष्ठति । मयि बुं भ्रक्षिते कथं भोक्ष्यन्ति मुनयः। श्राद्धानाहूय भोजितः। तदनु गुरुभिरुक्तम् –त्वं चौर्यसादत्तस्य नियमं गृहाण। तेनोक्तम्–यद्यदरपूरणं भवति तदा नाहं करोमि । तैः श्राद्धपार्श्वीच्छम्वलं दापितम् । स क्रमेण सार्शाचलितो गुरुभिर्नियमं सारितः । उरंगलपत्तने गतः । तत्र ऑढरनायकाट्टे उपविष्टः । तेनागतेन पृष्टम्–क यास्यसि ? । 15 तेनोक्तम्-युत्रोदरपूर्त्तिर्भविष्यति । नायकेन स्थापितः । शुद्धवृत्त्या सञ्चरन् विश्वासपात्रं जातः । एकदा चतुष्पदे विसाधनहेतौ प्रहितः । इतो हट्टान् दीयमानान् दृष्टा पृष्टम् । तैरुक्तम्-सूरयः समायाताः । सम्मुखैर्गम्यते । तेन चिन्तितम्-अहमपि यामि । यदि ते मे गुरवो भवन्ति । इति मत्वा सूरीनुपलक्ष्य नमस्कृतवान् । गुरुभिः क्रुशलं पृष्टम् । सं क्रमेण विसाधनमादाय गतः । नायकेन पृष्टम् । तेन वृत्तमुक्तम् । नायकः सुभद्रकत्वात्तत्र तेन सह गतः । ''न कयं दीणुद्धरणं'' इत्यादिच्याख्यानान्ते सुंबुद्धो धर्ममङ्गीकृतवान् । गुरूनाह—दक्षिणां याचत । 20 तैरुक्तम्-अत्र जिनालयो नास्ति तं कारय । तथाकृते प्रासादप्रतिष्ठा जाता । एकदा पर्वदिने नायको वस्ताणि निर्मलानि परिधाय जैत्रेण सह प्रासादं गतः । तेन पूजा कृता । जैत्रायोक्तम्-त्वम्पि पूजां क्ररु । तेन किमपि द्र्व्यमासीत्तेन पुष्पाण्यादाय पूजा कृता । पौपधागारे नायकेनोपवासः कृतो जैत्रेणापि । पश्चाद् गृहे गतो धौतवस्त्राणि मुक्तानि । जैत्रो भोजनायोपविष्टः । परिवेष्य यावत् स्थितस्तावत्पारणार्थी मुनिराययौ । कालेनान-शनमादाय खर्ग्यभूत् । जैत्रोऽप्यनशनमादाय् त्रिभ्रवनपालदेवसुतो जज्ञे । नायकजीवस्तु जयसिंघदेवी जातः । 25 पूर्वभवपातकादनपत्थो जातः । ततो गुरुभिर्नृपाय निवेदितम् । नृपो हृष्टः ॥ इति कुमारपालदेवपूर्वभवप्रवन्धः ॥

२९. द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रबन्धः (Br.)

§ ८७) एकदा श्रीपत्तने द्वात्रिंशदिहाराणां प्रतिष्ठां महदुत्सवेन प्रारम्थां श्रुत्वा वटपद्रपुरनिवासी वसाह कान्हाकः स्वयं कारितप्रासाद विम्बमादाय श्रीपत्तने प्रतिष्ठार्थमाययौ । हेमाचार्याः प्रतिष्ठार्थेऽभ्यार्थेताः । तैर्मानितम् । इत-स्तिसन् दिने जनसम्मदीं जातः । रात्रौ घटी मण्डिता । इतो वसाहस्य भोगाद्यपस्कारो विस्मृतः । तेन तमानीतुं अगते लग्नघटी असमये वादिता । स आगतः । मध्ये प्रवेशं अलब्ध्वा लग्नघटीं श्रुत्वा विपण्णः । प्रतिष्ठापश्राज्ञनो विरलो जातः । कान्हाकोऽप्यन्तः प्रविश्य गुरूणां चरणयोर्लगित्वा वाढं रुरोद् । मदीयं विम्बं प्रभो ! स्थितम् । गुरुभिरूर्द्वमवलोकितम् । लग्नं तदा वहमानं विलोक्योक्तम्-भो ! त्वं पुण्यवान्, लग्नमधुनास्ति, परिच्छेदं ग्रुरु विम्वप्रतिष्ठायाम् । स न मन्यते । गुरुभिः प्रतिष्ठां विधायोक्तम्-यदि न मन्यसे तथा देवं पृच्छ-एतत्तथ्यं न

वा । विम्वेनोक्तम्—तथ्यं भो । तव विम्वं वर्पशतत्रयायुः । एतानि वर्पत्रयायुंपि भविष्यन्ति । इतः कश्चित् व्यवहारी स्तम्भतीर्थं वाणिज्याय गतः । तत्र तेन श्रीदेवाचार्या नमस्कृताः । पृष्टम्—िकमस्य कल्ये नृपः पुण्यकर्म्म
तनोति । तेनोक्तम्—हात्रिंशदिहाराणां प्रतिष्ठा जाता । तस्य उत्सवस्य किं वर्ण्यते । लग्नं वेत्सि । अमुकमनुमानम् । इदं लग्नं हेमाचार्येनिरूपितं न वा । यदि निरूपितं तदा महत् क्षुण्णं जातम् । स पुनः पत्तनमाययौ ।
हेमाचार्येः पृष्टम्—श्रीदेवस्त्यो नमस्कृताः । सरूपमुक्तम् । त्वया कारणं किमपि न पृष्टम् । मया ज्ञातं यदुन्नितिमसहमानाः कथयन्ति । इतः श्रीदेवाचार्याः पत्तनमागताः । श्रीहेमाचार्यान्तमस्करणायाऽऽगच्छतो विलोक्योकम्—तपोधनाः ! नृपगुरूणामर्थे उपवेशनमानयत । श्रीहेमाचार्या विसिताः । यावद्वन्दन्ते तावदुक्तम्—हे
नृपगुरवः ! इहास्यताम् । हेमाचार्येरुक्तम्—प्रभो ! ममोपि कथमप्रसादः ! प्रभुभिरहं दर्शनिकर्द्वे पथि सञ्चरन्
हप्टः श्रुतो वा । कथयत—प्रतिष्ठालग्रं भवद्विनिरूपितं न वा । निरूपितम् । तत्र क्रुरकर्त्तरीयोगोऽस्ति । एतस्त्रगं
पूर्वकृतानामपि प्रासादानामनर्थहेतुः । भगवन् ! किं कियते । गुरुभिरुक्तम्—स्तोकदोपं वहुगुणं कार्यं कार्यं 10
विचक्षणिरिति विचिन्त्य यदमी प्रासादा मूलतोऽप्यपाकृत्य नृतनास्तदा सर्वेऽपि प्रासादाः स्थिराः स्युः । प्रभो !
एतन्न युज्यते । तर्हि भवितव्यतेव वलवती भवतां कोऽपराधः ॥ इति द्वात्रिंशदिहारप्रतिष्ठाप्रवन्यः ॥

(G.) सङ्गहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्।

६८८) श्रीकुमारपालः भावस्थितौ अमन् श्रीसिद्धपुरे गतः। तत्र शकुनान्वेपणे तेन कोऽपि मारवोऽभ्यर्थितः— किं मे भिवता?। अत्रार्थे गतौ विहः। ततो देव्याह्वाने कृते देवी श्रीमुनिसुत्रतचैत्ये आमलसारके खरद्वयं कृत्वा, 15 ततः कलशे त्रयं, ततोऽपि दण्डे खरचतुष्टयं च विधाय स्थिता। ततः स शाकुनिकः प्राह—तव जिनभक्तस्य सतो राज्यप्राप्त्यादि अधिकाधिकं पदं भवितेति॥

§८९) अन्यदा श्रीक्रमारपालस्य कस्यापि कोट्टिम्बिकस्य गृहे हालिकत्वेन वर्त्तमानस्य सकणश्रकणांवाभारम्रद्र-हतः शिरस उपरि दुर्गयोपविश्य सरोऽकारि । ततः शाक्तिकः पृष्टः । तेनोक्तम्-तव राज्यं भविष्यति । परं तव सन्तितिन भविता । यतो युगन्धरीधान्यं सर्वधान्योत्कृष्टम्, तेन राज्यम् । यतः प्रभोहेंतोर्भारकः, तेन न 20 सन्तितिसव ॥

§ ९०) तपोधनवृत्त्या वर्तमानस्य श्रीकुमारपालस्य राज्यावसरे श्रीप[त्तनो]परि गच्छतः पथि [दुर्गा] पूर्वं वव्बूल-वृक्षे निवित्रय स्वरश्रके तदनु राफमध्यान्निःसृतफणिः फणोपरि....सार्थे वहमानः मारुयकः एष्टः । तेनोक्तम्-दिनत्रयेण तव राज्यं भविष्यति । परं प्रहरत्रयेण विद्यं विद्यते । तदनु सार्थे तृतीये यामे मेघवृष्टौ... ...मध्यान्त्रिःसृते कुमारपाले द्वादशजनोपरि विद्युत्पातः समजनि । ततस्तृतीये दिने राज्यं जातम् ॥ 2

§९१) अन्यदा श्रीजयसिंहदेवो दिवं गतः । तदन्त अष्टाद्यदिनानि यावत्पादुकया राज्यं कृतम् । ततः श्रीहेमस्रिकिथितदिनोपिर कुमारपालः समागच्छन् निश्चि कडीग्रामपाद्रप्रासादे सुप्तः । तत्रारक्षकः परिभ्रमन् आगतः ।
चौरच्छलेन कुट्टियित्वा प्रावरणकम्बलादि गृहीत्वा स सुक्तः । प्रातः समुत्थाय पत्तने नहुलाकान्हडदेवस्य निजभावुकस्य गृहं गतः । ततो भगिन्या दुक्लानि दत्त्वा राजभवनं श्रेपितः । तत्राग्ने त्रयो राजप्रतिपन्नपुत्रा राज्यं
दत्त्वोत्थापिताः । कुलक्षणैरेभिः । तत एकेनोक्तम्—अहं सर्वं मारियण्यामि । द्वितीयेनोक्तम्—यत् यूयं भणिण्यथ 30
तदहं करिण्यामि । तृतीयो दुक्लाश्चलै रुलमानैरुपविष्टः । अत्रान्तरे कुमारपालः समागतः । कान्हडेनोक्तम्—भव्यं
कृतं यद्युना समागतः । राज्ये भवानेव । इत्यं वारितेनापि कृण्णदेवेन राज्यं दत्तम् । तत्वश्चर्द्वशराज्यस्थानमहाथर, ४ राजल, ७२ मंडलीक, ८४ राणा, ३६० सामन्तपरिवारः प्राकारविहर्निर्गत्य स्थितः । ततो नित्यं
कथापयन्ति कृष्णदेवस्य ते प्रधानाः—त्वया किं कृतं यदसौ राज्यं दत्तम् १। तेन कथितमहं न मारियण्यामि,

यूयं मारयथ । मया राजा समग्रपरिवारो राजपाटिकोपायेन वाह्ये निःकासितोऽस्ति । ततो राजा दृष्टिकलया विनष्टं वीक्ष्य पश्चाद्वलितः । प्राकारासन्नं कान्हडदेवं विस्त्रयित्वा ततो निश्चि सप्तशतमितगढसंखराजपुत्रहस्ते दीपिका अपीयत्वा राजगोधर्दयाकं सुप्तं विश्वत्य एकरात्रिमध्ये समग्रमपि राजचकं वशीकृत्य राज्ये निविष्टः ॥

- § ९२) श्रीकुमारपालेन राज्ये प्राप्ते तत्थ्वणं कडीतलारक्षस्थाकारणे सुखासनेन समं लेखः प्रहितः । स च विस
 5 यापन्नमनाः समागतो राज्ञा सन्मानितः । ततो विशेपविस्योऽजिन । अत्रान्तरे सुगपत् स्नानद्रोणी.....तेन

 पृष्टिर्द्शिता......सकशाप्रहारां वीक्ष्य विपण्णेन चिन्तितं यदसौ मां मारयिष्यित विपं दत्त्वा । ततो

 भोजनावसरे राज्ञा बहुमानेन निजरसवतीं भोजियत्वा राणकपदं दत्तम् । इत्थं विपि(प)ण्णः क्षीणतेजा जातः ।

 राजा तु पुनः पुनः चरान् परिषृच्छिति । स चाद्यापि जीविति । स इत्थं चतुःपथानितक्रम्य प्रतोलीद्वारे गतो

 मृतः । राज्ञोक्तम्-[आ! वाढं] ढाढिसिकः । सर्वैः पृष्टं-राजन् । किमेतद्वयं न विद्यः । अतो राज्ञापि सर्वो दृत्तान्तो

 10 निगदितः । अतो मया मारणार्थमस्य प्रौढिर्दत्ता । यथा मम महत्त्वं स्थात् ॥
 - §९३) एकदा क्रमारपालदेवः सप्तदिनानि यावत् ब्रभ्रक्षितः कस्यापि गोधूमक्षेत्रे कलिङ्गानि गृहीत्वा अरघट्ट-घटिकया वाफयित्वा रात्रौ यावद्भक्षितुं लग्नः, तावद् हालिको दण्डमुद्यम्य धावितः। परं क्षेत्रपतिना रक्षितः। राज्ये प्राप्ते कालिङ्गीयको नाम्ना ग्रामो दत्त आघाटे तस्त्रै॥
- §९४) अन्यदा श्रीकुमारपालो दिनत्रयं श्लिधितः परिश्रमन् कस्यापि व्यवहारिणो गृहे प्रविश्य निविष्टः । 15 गृहाधिपतेर्लेखकं विद्धतो मध्यरात्रिरजनि । ततस्तेन चिन्तितं—यद्यसौ न भ्रक्तोऽस्ति, तदा भोजयिष्यामि । ततः पृष्टे स व्रक्लभकलत्रगृहे प्रेपितः । तया तसै भोजनं न दत्तम् । द्वितीयया हपितया दत्तम् । प्राप्ते राज्ये राज्ञः स्थालं गृहीत्वा चौरस्तस्य श्रेष्टिनो हट्टे व्ययितम् । ततो राज्ञा आकारितो व्यवहारी । उपलक्षितः । राज्ञोक्तम्—तव कलत्रद्वयमास्ते । तेनोक्तम्—एवमेव । राज्ञोक्तम्—आकारय तत् द्वितयम् । यथा तव सक्तुदुम्वस्य निग्रहं करोमि । कुदुम्वे समेते पूर्वोपकारीति भणित्वा राज्ञा तस्य प्रसादो दत्तः ॥
- 20. § ९५) पुरा श्रीकुमारपालेन क्षयाहे पिण्डदानसमये उधियमाणे द्वारमहेन मयणसाहारेण पितामहिषण्डे प्रोक्त-मिति—राजन्! राजपितामहं मिल्लिकार्जुनं पितृणां मेलय तदन्त पिण्डं उद्धर। इति श्रुत्वा राज्ञा पिण्डः पथान्युक्तः। राज्ञा वीटके दीयमाने सकलेऽपि राजमण्डलेऽघो विलोकयित वाहडवारितेनापि आम्बडेन वीटकं जगृहे। राज्ञा कटकं राजिगिरं च समर्प्य प्रेपितः। संप्रहारे सकलमपि वलं भग्रम्। तत आम्बडः कृष्णगुरूदरोदरान्तः कृष्ण-वासाः कस्तूरिकानुलेपनः पत्रपुटमोजी कस्थापि निश्चि दिने निजवदनं न दर्शयित। राज्ञा तिद्वज्ञाय स्वयमागत्य 25 सन्मानं दन्वेति प्रोक्तम्—मम मिल्लिकार्जुनविग्रहे त्वमेव सेनापितः। पुनिहित्तीये वर्षेऽश्वसहस्र ४४, पत्तिलक्ष ३ मितं कटकं दत्तम्। तेन मिल्लिकार्जुनं विग्रच्य नान्यस्य मे प्रहार इति प्रतिज्ञातम्। सत्वरं गत्वावेष्टितः। युद्धे जायमाने निजौ चरणौ परदन्तिदन्ते दत्त्वा तत्राधिरुद्य कोङ्कणस्वामी व्यापादितः। कोङ्कणं गृहीतम्। मृटक १८ मौक्तिक। संयोगसिद्धि सिप्रा। सहस्रकिरण ताडंक २। अग्निपखालु पछेवडउ। खृङ्कारकोडी साडी। सेडउ पट्ट-हस्ती। अष्टोत्तरसहस्रमौक्तिकहारः त्रिसरकः। चतुश्चत्वारिग्रदङ्कलप्रमाणं मरकतिलङ्कं नीलकण्ठस्य। एतदानीय ३०राज्ञः पादौ शिरसा सह पुजितौ। अत्रान्तरे द्वारमहेनोक्तम्—

"कीडी रक्ख करंतु चडिउ रणि मइगल मारइ०॥"

- § ९६) श्रीआम्बडोपि रणांगणपिततो जगादिति-देवबुद्धा जिनेन्द्र एवास्ति । गुरुः श्रीहेमसूरिरेव । खामी श्रीक्रमारपाल एव । ततः केनापि कविना इति जगाद-"वरं भट्टैभीव्यं०॥"
- §९७) अन्यदा श्रीकुमारपालेन पृथिवीमनृणां कर्त्तुं गुरवः सुवर्णसिद्धिं पृष्टाः। गुरुभिरुक्तम्─मम गुरवो 35 जानते, नाहमिति प्रवन्धो ज्ञेयः॥

- १९८) एकदा श्रीकुमारपालेनात्मनः श्रीजयसिंहस्यान्तरं पृष्टम् । सभ्येरुक्तम्-श्रीसिद्धराजस्याष्टौनवित गुणाः, दोपद्धयं देहे । भवति अप्टनवित दोपाः, गुणद्धयम् । भवान् विक्रमी, कृतज्ञश्च । श्रीसिद्धराजस्तु मत्सरी, दीर्घरोपी च ॥
- §९९) श्रीसङ्घयात्रायां जायमानायां रैवतिगरौ छत्रशिलाकम्पे जायमाने राज्ञा पृष्टैर्गुरुभिरूचे —द्वात्रिंश-छक्षणोपेतं पुरुपद्वयं यदि शिलाधो यास्यति तदा शिला पतिप्यति । अतो नन्यपद्यया देवनमस्करणं विधास्यामः । ⁵ इत्युक्ते आम्वाकेन नन्या पद्या कारिता ॥
- § १००) अथ महापूजायां महाभोगे विधीयमाने धृपधृमान्तरिते गर्भगृहान्तरे प्रभुभिः श्रीसोमेश्वरः प्रत्यक्षी-कृतः । देवादेशेन ततः प्रभृति मज्जाजैनः कुमारपालोऽभृत् ॥
- §१०१) अथ श्रीदेवेन्द्रस्रिभिः श्रीसेरीसके तीर्थे निर्मिते कान्तीत आकृष्टिविद्यया महाविम्वानि समानीतानि । मनसीति चिन्ता जाता-श्रीपत्तनं सेरीसकं च एकमेव विधास्यामि । अत्रान्तरे गाजणपितनृपतेरुपरि 10
 कटकं विधाय श्रीकुमारपालदेवः श्रीप्रभुभिः सह तत्रागतः । श्रीदेवपादान्तमस्कृत्य श्रीदेवचन्द्रस्रयो नमस्कृताः ।
 श्रीस्रयः कथितवन्तः—राजन् । वर्षासु कथं कटकवन्धः । राज्ञोक्तम्—साम्प्रतं छलं विना गाजणपितर्न विनक्ष्यति ।
 स्रिभिरुक्तम्—कथं भवद्वरूणां एतावत्यापे शक्तिनीतित । राजा मौनेन स्थितः । ततत्तिरुक्तम्—अत्राद्य कटकं
 स्थापय । अहं गाजणपितमानेप्यामि । निश्चि स्रिभिराकृष्टिविद्यया देवतावसरं कुर्वद्भिर्गाजणपितरानीतः । परस्परं
 मैत्री जाता । अक्षरैः पाङ्गलां (१) पत्राणि जातानि ॥
- § १०२) श्रीहेमाचार्येरवसानसमये सगद्गदं राजानं समीक्ष्योक्तम्−मम तव च पण्मासान्तरमेवास्ति । ततः प्रभोरवसानानन्तरं रामचन्द्रेण श्रीसङ्घस्य पुरः पठितमिति−"महि वीढह सचराचरह०॥"
- § १०३) अथ पण्मासान्तरे श्रीक्कमारपालेन भूमौ मुक्तेन श्रीवीतरागिवस्त्रदर्शने उक्तमिति—"सावय-घरंमि०॥" अत्रान्तरे मिल्लकार्जुनभांडागारनीतसंयोगिसिद्धिसित्रा जलपानार्थं याचिता। अजयपालदेवोक्तैश्वार-क्षकैर्नार्पिता। तदा चारणेनोक्तम्—"कुयरड कुमरिवहार०॥"

३०. अजयपालप्रवन्धः (P.)

§ १०४) अथाजयपालेन प्रासादेषु पात्यमानेषु, यमकरणं तारणदुर्गोपिर सम्नद्धं प्रातः प्रयास्यतीति श्रुत्वा वसाह-आभडमुख्यः समग्रोऽपि सङ्घः पर्यालोचितवान्—विलोकयत श्रीकुमारपालदेवेन प्रासादाः कारिताः, अनेन दुरात्मना पातिताः । कोऽपि इदं न वेत्स्यति यन्नुपः श्रावकोऽभून्न वा । तारणदुर्गप्रासादो रक्षितुं शक्यते तदा भव्यम् । सीलणाग क्रुतिगिया विनाऽन्योपायो नास्ति । तस्य गृहे चलत । ते तत्र गताः । सङ्घन्तेनाम्युत्थितः । 25 करौ संयोज्य उक्तम्—मिय विषये महान् प्रसादः । किं कार्यम् । भोस्त्वं वेत्ति पूर्वनृपेण प्रासादाः कारिता अनेन पातिताः । एकत्तारणदुर्गस्यावशेपोऽस्ति, सोऽपि प्रातः पतिष्यति । यदि त्वया रक्ष्यते । अन्यः कोऽप्युपायो नास्ति । तेनोक्तम्—एप भवतां प्रमादः । पूर्वं ज्ञापितोऽभूवं तदैकोऽपि नापतिष्यत् । यज्ञातं तज्ञातम् । त्वयाऽमुं रक्षता सर्वेऽपि रक्षिताः । सङ्घः सत्कृत्य विसुष्टः । स नृपसमीपं गतः । देव ! मुत्कलाप्य यामि । भोः क यासि ! । देव वयमुत्पन्नभक्षकाः । सर्वं भक्षितम् । कापि रायने गत्वा त्वन्नाम्ना द्रविणमादाय पुनरेष्यामः । नृपेणोक्तम्—यदि 30 पत्तनं विहाय यूयमन्यत्र यात तदाऽहं लज्जे । अवसरं दास्यामि । देव ! अवसरो भवति वा यामि ? तिर्हे सज्जतां कृत्वा सन्ध्योपर्येहि । नृपेण सर्वः कोऽप्याहृतः । प्रारव्धं प्रेक्षणम् । इतः सीलणेन इष्टिकाः समानीय पातिताः मृत्तिकारासभानि रङ्गान्तः समाजग्रः । पानीयं च । कटिकस्त्वाकारितः । प्रासादं कुरु । तेन कृतः । मध्ये

एकस्य देवस्य स्थानं कुरु । तेन कृतम् । ध्वजाऽऽरोपं कृत्वोक्तम्—देव! गजान्ता लक्ष्मीः, ध्वजान्तो धर्मः । अथाहमम्रं निर्माय कृतकृत्यो जातः । शयनं विधास्ये इति शुकटीं (मुखे पटीं?) कृत्वा सुप्तः । इतः पुत्रेणागत्य देवकुलिका
पातिता । सीलणः पटीं त्यक्त्वोत्थितः सन् प्राह—रे! केनेदं पातितम् । भवतो च्येष्टपुत्रेण । सीलणेन स चपेटया
हतः । रे! त्वमस्थापि सदशो नः एतस्थापि नृपतेहींनः । अनेन नृपति[ना पित]रि मृते तस्य कीर्त्तनानि पातितानि,
त्वया तु मम जीवतोऽपि पातितम् । मम मृत्युरपि न प्रेक्षितः । इति श्रुत्वा नृपस्य नेत्रयोनीरं पपात । सीलण!
किं कथयसि? । देव! विमृश्च तथ्यमिद्मतथ्यं वा । गृहस्थः कीर्त्तनं कारयति यावन्मम कोऽपि भविष्यति तावदस्य सारा भविष्यति । ये पतितास्ते पतिताः, शेषाः सन्तु । एक एवावशेपोऽस्ति यः स तव नाम्ना । यमकरणं
च्यावर्त्यताम् । इत्थं कृते प्रासादाश्चत्वार उद्गरिताः ॥ इति तारणगढप्रासादरक्षणप्रवन्धः ॥

§ १०५) अथ राज्यानृतीये वर्षे पर्यूपणापर्वणि थारापद्रीये प्रासादे श्रावका मिलिताः । आभडवसाहेनोक्तम्-10 समयं विलोकयत ! । यत्र तपोधनानां सहस्रा आसन् तत्राद्य स कोऽपि न दृश्यते यस्य मुखात्प्रत्याख्यानमपि क्रियते । कापि केन[पत्त]नमध्ये श्रुतो वा दृष्टो वा । एकेन कर्णे प्रविश्योक्तम्-यद्राजपुत्रवाटके धरणिगः श्रेष्ठ्यातः । तेन जङ्घावलपरिक्षीणाः खगुरवः स्थापिताः सन्ति च्छन्नम् । तदनु वसाहस्तस्य गृहे गतः । तेनाभ्युत्थितः, पादमवधार्यताम् । अद्यं सांवत्सरिकपर्वणि तपोधन क तपोधनाः सन्ति ? । तेन भूमिगृहे नीत्वा गुरवो दर्शिताः । वसाहस्तु चरणयोर्निपत्य रोदितुं प्रवृत्तः-भगवन्! स कोऽपि नास्ति यो......दुरात्मानं 15 नृपं शिक्षयति । गुरुभिरुक्तम्-शक्तिरस्ति परं सान्निध्यकर्त्ता कोऽपि विलोक्यते । वसाहस्तु तस्यैव श्रेष्टिनः शिक्षां दत्त्वा ययौ । गुरवो जप्तुं प्रवृत्ताः । इतस्तृतीयदिने.....र्जाता । यतो मदीयौ धांगा-वङ्जलियाख्यौ पदाती स्तः । तयोर्माता सहागदेवी । सा स्वैरिण्यस्ति । सा नृपेणानीयान्धकारे स्थापिताऽस्ति ।..... वइजलिकः पीत्वा समायातः । नृपेण हास्ये प्रारव्धे उक्तम्-रे ! याचस्य स्वैरम् । तेनोक्तम्-देव ! अधुनाऽवसर-योग्यं दीयताम् । नृपेणोक्तम्-उपवरिकायां वज । परं वदनं नावलोकनीयम् । स तत्र गतः । इतः पृष्ठे दीपकरः 20 समाययौ । तेनाम्बा दृष्टा, सवित्र्या पुत्रो दृष्टः । परस्परं लिखतौ । वर्डजलेन धांगाऽग्रे उक्तम्-नृपेणैवंविधं हास्यमकारि । तदहं मरिष्ये । तेन साक्षेपमुक्तम्-मारियष्ये न वदिस, मरिष्ये वदिस । अमुं मार्यिष्यावः । इति निश्चित्य खितौ । नृपस्तु राजपाट्यां निर्ययौ । वलमानः सन्ध्यायां सुखासनासीनोऽन्धकारे प्रतोल्यां प्रविश्चन्, वइजलेन कपाटपार्श्वाचिर्गत्य धांगाकेन सह स्थितेनोभाभ्यां नृपो हतः। कलकले जाते वइजलो नष्टः, धांगाको हतः । राजा तु तत्रैव पपात । जनो दिशो दिशं गतः । इतो लब्धसंज्ञस्तृपितो राजा रिंखन् प्रतोलीप्रत्यासन्ने 25 तन्तुचायगृहे प्रविष्टः । गर्त्तायां मुखे वाहिते, तन्तुवायेन लक्कटः क्षिप्तः, खानं मत्वा । तेन दीर्णिशिरा पपाठ-

> (१२६) धांगा दोसु न वइजला न वि सामंतह भेउ। जं मुणिवर संताविया तह कम्मह फलु एहु॥

इति वदन् पीडया मृत्वा श्वभ्रं ययौ ॥ इत्यजयपालप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्गहगतं अजयपालवृत्तम्।

^{30 §}१०६) श्रीअजयपालेन श्रीकपर्दिमन्त्री अमात्यताहेतोरुपरुद्धः । मन्त्रिणोक्तम्–मनसा समालोच्य देवादेशं विधास्मामि । इति भणित्वा गृहं प्रति गच्छत ईज्ञानदिज्ञि दृपभस्वरपश्चकं वामभागेऽजनि । तन्मारुयकस्य मन्त्रिणा कथितम् । तेनोक्तम्–न भव्यम् । यदयं दृपः ज्ञिववाहनम् । अतः परं ज्ञिवज्ञासनं विजयि भविता । ततश्च न गृहीतं अमात्यत्वम् । राज्ञा धृतः । तत्रस्थरामचन्द्रेणोक्तम्–"जो करिवराण कुम्भे०॥"

§१०७) श्रीहेमस्रिरिशिष्यौ रामचन्द्र-वालचन्द्रौ । गुरुभिः सुशिष्यं भिणत्वा रामचन्द्रस्य विशेपविद्याः दत्ताः । मानं च दत्तम् । तत्कोपेन वालचन्द्रो निःसृतः । तस्याजयपालेन सह मित्रत्वं जातम् । राज्ये प्राप्तेऽजयपालेन रामचन्द्रस्थोक्तम्—श्रीहेमचन्द्रस्रिणां सकला विद्या मम मित्राय वालचन्द्राय देहि । तेनोक्तम्—गुरूणां विद्याः कुपात्राय न दीयन्ते । राज्ञोक्तम्—तिर्हे अग्रि......तत्र जिह्वां खण्डियत्वा उपविशता तेन दोधकपञ्च शती कृता ।।

३१. धर्मस्थैयें सज्जनदण्डपतिप्रबन्धः (B.)

§ १०८) अथ दण्डपितसजनप्रवन्धः—श्रीपत्तने ग्रिथिलभीमदेवो राज्यं करोति स । तेन सहस्रकला वेश्याऽन्तःपुरे क्षिप्ता । सा राज्यिचन्तां सकलां करोति । दण्डपितः सज्जनः श्रीमालज्ञातीयो मजाजैनो राज्याधिकारं करोति
सा । स देवपूजां विना न भुक्के, प्रतिक्रमणं विना न शेते । अथैकदा पत्तनोपिर तुरुष्काणां सैन्यमाययो ।
दण्डनायकसज्जनेन वनासनदीतीरे गांडरो नामाऽरघट्टस्तत्र रणक्षेत्रं सजीकृतम् । देवी सहस्रकला खयं सज्जनदण्ड-10
[नाय-]केन सह सैन्यमादाय सम्मुखमागता । अथसहस्र २४ मनुष्यसहस्र २२ सार्धम् । तत्र प्रातर्भुद्धमिति निश्चिकाय । रात्रौ शस्त्रजागरणं कृतम् । वीराणां सन्नाहाः समिष्तिताः । गजा १८ गुडिताः । अश्वाः सर्वेऽिष सजिताः ।
प्रक्षरां ग्राहिताः । इतो देव्या सज्जनो दण्डपितः सैनान्येऽभिषिक्तः । स सन्नाहमादाय यामिन्याः पाश्चात्यप्रहरे
गजमधिक्तः । चतुर्दिश्च सन्नद्धैर्वीरिष्टेतः । इतो मित्रणा गजस्कन्ये ख्यापनाचार्यं निवेश्य प्रतिक्रमणं कृतम् । पार्थस्थिथिन्तितम्—असार्तिक युद्धं भविष्यति । तेन सामायिकं पारितम् । रणरसोत्सुका वीरा उभयोः पक्षयोर्मिलिताः । 15
महान् रणः समजिन । सज्जनदण्डेशेन खयमत्यप्तिनका कृता । शरीरे घातदशकं लग्न । परं म्हेच्छसैन्यं निर्दारितम् । रणः शोधितः । इतो देवी खयमेत्य दुक्लाञ्चलेन सज्जनगात्रं प्रमार्ज्य गुत्रादरे निनाय । इतः पार्थस्थेरुक्तम्—देवि ! दण्डनायकस्य काऽप्यपूर्वा वार्ता । पाश्चात्ययामिन्यां 'एकेन्द्रिया [द्वीन्द्रया]' इत्युक्तम् । प्रातर्युद्धं
तथा कृतं यथा केनापि न कियते । देव्या पृष्टम्—दण्डेश ! किमेतत् १ । देवि ! रात्रौ सकार्य कृतम् , प्रातस्त ।
यत् पिण्डस्त्वदीयस्तेन यत्कृतं तत्तव कार्यम् । मम सायत्तनमम । एवं च तुरुष्कान्विजत्य देवी पत्तनं 20
प्राप्ता । मन्नी सजाङ्गो जातः ।। इति धर्मस्थैरें सज्जनदण्डपतिप्रवन्धः ॥

३२. मन्त्रियशोवीरप्रवन्धः (P.)

§ १०९) श्रीजावालिपुरे श्रीसमरसिंहन्पाङ्गजः श्रीउदयसिंहस्तस्य मन्नी दुसाजस्तत्पुत्रो यशोवीरस्तस्य भार्या सहागदेवी, सुतः कर्म्मसिंहः। एकदा सण्डेरगच्छोद्भवैः श्रीईश्वरस्वरिभिरुक्तम्—हे मन्निन् ! तव पुरे धारागिरिवा-टिकाऽस्ति । तत्र अद्यदिनात् पोडशमे दिने तव वाटिकामध्ये स्थितस्य द्विप्रहरवेलायां यो द्विजः समभ्येति, 25 त्वया तसिन् दृष्टमात्रे 'पादमवधार्यताम्, अधुना प्राप्तकालं श्रीतोदनं क्रियताम्'। तत्र क्र्रकरम्त्रो दृशा कृतः, शाके लिम्बुकं च भोजनीयम् । तद् सु द्रम्मसहस्र (३०००) वासणे प्रक्षिप्य एका त्रिपट्टदुक्ला मिह्नदेया । भव्यरीत्या चिन्तनीयम् । मन्नी तां सामग्रीं कृत्वा वाटिकायां गतस्तत्र कीडितुं प्रवृत्तः । इतो नागडनामा भट्टपुत्रस्तिदिन-लङ्घनावसाने—अद्य यशोवीरं वन्दी करिष्ये वा मे चिन्तितं भोजनं प्रयच्छिति—इति विचिन्त्य मन्त्रिणं वाटिकायां मत्वा विवेश । मन्त्रिणा दृष्टमात्र एव उक्तः—सत्वरमेत्य भुज्यताम् । भोजने दिशिते सुस्थीभूतः । मुखं प्रक्षाल्य 30 भोक्तमुपविष्टः।अनन्तरं मन्त्रिणा वस्नाणि द्रम्माश्च दिशिताः।तेनोक्तम्—मन्त्रन् ! ममाभिप्रायः त्वया कथं ज्ञातः ! । अद्य मे मनसि इत्यासीत्—यदेवं ददाति वा मारयामि । मन्त्रिणोक्तम्—किमत्र ज्ञानम् ! । नागडेनोक्तम्—मन्तिन् ! मया तवोपकारः कथं कर्तुं शक्यः । परं तथापि मे दैवः किमपि ददाति, त्वयाऽञ्चानं ज्ञाप्यम् । एवमाख्याय प्रवृत्तः । ४

गतः। क्रमेण नागडस्य श्रीपत्तने श्रीकरणं जातं राज्ञः श्रीवीसलदेवस्य। पश्चात् राउल-उदयसिंहराजादेशे समायाते मृं(वी?)सलदेवस्य किक्किंदिकमर्णय। नागडाग्रे त्रा(झ?)गर्डं च कथयति। राज्ञा रुप्टेन ससैन्यो मन्नी नागडः प्रहितः। सुन्दरसरोपकण्ठे कटकं स्थितम्। विग्रहः प्रारव्धः। टङ्कशाला पतितुमारव्धा। पण्मासान्ते दण्डेन भव्यं विधाय म.....स्थाने गतः। उदयसिंहस्तु तथैव जल्पति। नागडो नृपाग्रे प्रतिज्ञामाधाय जावालिपुरग्रहणे प्रौढकटकेन विश्वतः। क्रमेण स्वर्णगिरि[दुर्ग]पृष्टौ वाघरा.....कटकमावासितम्। राउलेनोपरि स्थितेन सर्वं दृष्ट्याऽवलोक्य, यशोवीरं प्रत्युक्तम्-मन्त्रिन्! सर्वस्वमपि दत्त्वा नागडं पश्चा....वर्त्तय। जीवतां सर्वं भविष्यति। मन्त्री मध्या- ह्ववेलायां भव्यार्थे चलितः। इतः प्रतोल्यग्रे खेजडीतरोस्तले गोगामठे एकश्चारणश्चित्तोऽस्ति तेन.....मन्त्रणं प्रति.....

(१२७) [दूसा]...जग्र (१) वीर जड आव्यां दल वाघराइं। मोटी हूंती हीर देसह वासेवा तणी।।

10 मित्रणा चिन्तितम्—चलमानोऽस्य कर्णावपाकरिष्ये.....गतः। राणकः प्रतीहारेण विज्ञप्तः—देव! मारुकस्य प्रधानः समागतोऽस्ति। मध्ये निवेशयत। ततः प्रणम्य मत्री आसीनः। राणकेनोक्तम्—भो मित्रिन्! तव टक्करः एतावन्ति दिनानि विरूपवक्ता आसीत्। अधुना मय्यागते किं करोति १। देव! प्राधूर्णकार्थे सञ्जीभ्य स्थितोऽस्ति। सत्वरमागच्छत। मित्रिन्! अहं नागडः। यदि दुर्गं पृथग् पृथग् मङ्क्त्वा न क्षमामि। मित्रणोक्तम्—सत्वरमागन्तव्यम्। इत्युक्त्वा मत्री निःसृत्य गतः। राणकेनोक्तम्—रे! क एप मन्नी १। देव! यशोवीरः। तिर्हं सत्वर15 माकारयत। मन्नी आकारितः। राणकेनोक्तम्—मित्रन्! माम्रुपलक्षयसि १। देव! त्वां को न वेत्ति १। राणकसत्वाह—यस्त्वया अमुकवर्षे वाटिकान्तः क्रिकरम्वं मोजितस्तम्रपलक्षयसि १। देव! किंयो नोपलक्षे। मित्रिन्! स अहम्।
तस्योपगा(का)रस्यैकवेलं भव्यं त्वया लभ्यम्। लोहटिकं विना यामि। इदं तव मानम्, परं स्वसामी विरूपाणि
वदन्तिवार्यः। मन्नी परिधापितः। मन्त्रिणोक्तम्—यद्येवं तिर्हं अधुनैव प्रयाणं कुरु। यथा मे स्वामी प्रस्थेति।
तत्वेव प्रयाणं कृत्वा कटकं पश्चाद्रतम्। मन्नी ईर्ष्या विहरन् चारणे, यावक्तत्रैवायातः, तावक्तेनैव तत्रस्थेनोक्तम्—

(१२८) जिम केतू हरि आज तिम जइ लंकां हुत दुसाजुत्र । नांऊं बूडत राज राणाही[व] रावण तणउं ॥

मन्त्री परिधापनिकां तसौ दत्त्वा पुरे प्रविष्टः। राउलेन सम्भूपितः।

(१२९) ओं आगिलउ जु होइ सो जसवीर न जाणीउ। ए बूझइ सहु कोइ एकावन बूझही नहीं ॥ §११०) मित्रणा यशोवीरेण तलहिक्कायां स्वर्णगिरेश्चन्दनवसद्यां श्रीवीरिवम्वं कारितं प्रतिष्ठापितं च। तदनु 25 श्रीजयमङ्गलस्रिंगिरुक्तम्-

(१३०) यत्त्वयोपार्जितं वित्तं यद्योवीर! प्रतिष्ठया । तस्रक्षराणितां नीतं यद्यो वीरप्रतिष्ठया ॥ तद्तु आलङ्कारिकैः श्रीमाणिक्यस्रिभः-

(१३१) यशोवीर ! लिखत्याख्यां यावचन्द्रे विधिस्तव । न माति स्वने तावदाद्यमप्यक्षरद्वयम् ॥
§१११) अथ एकदा गूर्जरत्रां भक्ष्तवा तुरुष्का व्यावृत्ताः सुन्दिरसिरिजलं पीत्वा सिराणाग्रामे आवासिताः ।
30 तत्र राउलेन तैः सह सङ्घामं विधाय भग्नाः । अइवुको नाम मुख्यो मिल्लको मारितः । तदनु चारणेनोक्तम्—
(१३२) सन्दरसिर अस्ररांह [दिलि] जलु पीधउं वयणेहिं ।

र) सुन्दरसरि असुराह [दलि] जलु पीघउ वयणीह जदयनरिंदिहिं कड्डिउं तह नारीनयणेहिं ॥

तदनु परिभवमसहमानः श्रीजलालदीनसुरत्राणः सं० १३१० वर्षे माघमासस्य पश्चम्यां स्वयमागत्य पर्वतस्य स्वर्णागरेः शृङ्गे आवासान् दत्त्वा स्थितः । प्रत्यहं ढोये (१) जायमाने सुरङ्गाखानकैः खण्डिः पातियतुमारव्धा ।

20

25

पतिता कर्करकोष्ठके । स्थानान्तरस्थैः पत्तिभिधीन्यं रन्धमानैः स्थाल्युच्छलात् परिज्ञाता । प्रभोरग्रे निवेदितम् । राउलेन वापडो राजपुत्रो भव्यं कर्त्तुं नियुक्तः । तेन सुरत्राणं नत्वा उक्तम्—देव ! दण्डं कुरु । सुरत्राणेन लक्ष ३६ द्रम्माणां याचिता । वापडेनोक्तम्—वयं द्रम्मान् न जानीमः । पाइ(रू)थकान् दास्यामः । पार्श्वस्रैरुक्तम्—देव ! मान्यताम् । एकसिन् पारूथकेऽष्टौ द्रम्मा भवन्ति । सुरत्राणेन मानितम् । तेनोक्तम्—देव ! प्रसीदस्य, करं देहि । करो दत्तः । इतथ वर्द्धापनिकेनोक्तम्—देव ! सुरङ्गा पातिता । वापडेनोक्तम्—देव ! तवं महाराजस्तव जिह्वा 5 अन्यथा न स्यात् करश्च [दत्तः] । सुरत्राणेनोक्तम्—तव बुद्धिश्रेष्टाय मासै (१) भैपीत् । दण्डमानय । तदन्तु राउलेन्नोक्तम्—स्रताः पश्च मे । कं गृहाण १ । सुरत्राणेनोक्तम्—यशोवीरस्रतमर्थय । राउलेन मत्रिपत्नी अभ्यर्थिता । तया स्यस्तरत्वेकोऽपि समर्पितः । कटकम्रत्थितम् । तदन्तु देवद्विजादीनां सर्वस्वमात्तम् । दण्डादुद्धरितवित्तेन तेन श्रीखर्णिगरौ दुर्गः कारितः । राउलेन यशोवीरपुत्रस्य कर्मसिंहस्य गृहागतस्य रामशयनं प्रसादे दत्तम् ॥ इति राउलउदयसीह-मन्नियशोवीरप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे यशोवीरस्योल्लेखो यथा-

(१३३) ओ आगिलड जु होइ पहं जसवीर न सिक्खियड । महि मंडलि सहु कोइ वावन्नइ बूझइ वहू ॥

चारणदानमदातुर्मत्रिणः पुरश्वारणेन पठितम् । तसौ घोटको दत्तः ।

(१३४) संतः समंतादि तावकीनं यशो यशोवीर ! तव स्तुवंति । जाने जगत्सज्जनलज्जमानः प्रविश्य कोणे त्वमतः स्थितोऽसि ॥

इति पठिताय भट्टाय मन्त्रियशोवीरेण कोणाग्रामस्योद्घाहितं दत्तम् ॥

३३. विमलवसतिकाप्रवन्धः (B.)

§ ११२) अथ विमलवसतिकाप्रवन्धः—

(१३५) श्रीविक्रमादिखन्यप्रह्यतीतेऽष्टाशीतियाते शरदां सहस्रे। श्रीआदिदेवं शिखरेऽर्बुदस्य निवेशितं श्रीविमलेन वन्दे॥

(१३६) भीमदेवस्य रूपस्य सेवाममन्यमानः स तु व(ध)न्धुराजः । धाराधिपं भोजनृपं प्रपेदे स्ववंश्यसेवा हि रूणां विपत्सु ॥

(१३७) विद्याधिच्याधिसंहर्जी मातेव प्रणताङ्गिषु । श्रीपुञ्जराजतनया श्रीमाता साऽस्तु वः श्रिये ॥

(१३८) मेरुणा मनुजदुर्लभेन किं किं हिमैकनिधिना हिमाद्रिणा । साहिना मलयपर्वतेन किं नन्दिवर्द्धनसमो न भूधरः॥

(१३९) भूभृतां निजगृहेषु तिष्ठतां वाञ्छितं यदचिरान्न सिद्ध्यति । नन्दिवर्द्धनविटङ्कवासिनो हेलयैव शवरीजनस्य तत्॥

§ ११३) अथ श्रीमातादेच्या अम्बाया दैवयोगान्मैत्री जाता। अम्बा गिरनाराधिष्ठात्री। अन्तरान्तरा प्रीत्या-३० ऽर्जुदे समभ्येति। श्रीमाता तु तत्र न याति जैनच्यन्तरभयेन। एकदा श्रीमातयोक्तम्-भगिनि! अत्रैव यदि स्थास्यसि तदावयोः प्रीतिर्निरन्तरा स्थात्। अम्बयोक्तम्-जिनभ्रवनं विना स्थानं न। तदत्र नास्ति। श्रीमातयो-

क्तम्-द्रव्ययुतां भूमिमर्पियिष्यामि । तत्र जिनायतनं कार्यम् । इह वक्कलचम्पकौ स्तः । तयोस्तले द्रम्मलक्ष २७ सिहतं निधानमस्ति । अम्वयाऽचिन्ति—कः प्रासादं कारियण्यति । इतश्चन्द्रावतीं परित्यज्य धंधूपरमारः श्रीभीम-देवेन समं विरोधात् धारापुरीं गतः । पश्चान्नृपेणाश्वसहस्रद्धीदश्वभिर्युतो विमलदण्डनायकञ्छत्रं दत्त्वा प्रहित-श्चन्द्रावत्याम् ।

(१४०) प्राग्वाटवंशाभरणं वभूव रतं प्रधानं विमलाभिधानम् । यत्तेजसा दुस्समयान्धकारमग्रोऽपि धर्मः सहसाऽऽविरासीत् ॥

अथ देच्यम्वा प्रासादार्थे प्रत्यक्षीभूय विमलदण्डपतिं जगाद-

(१४१) अथैकदा तं निशि दण्डनायकं समादिदेश प्रयता किलाम्बिका। इहाचले त्वं कुरु सद्म सुन्दरं युगादिभर्त्तुर्निरुपाधिसंश्रयः॥

10 दण्डपितना उक्तम्-भूमिः क १। देच्याह्-श्रीमात्तयाऽपितमित्त । दण्डपेनोपिर गत्वा स्थानं निरूपितम् । कुङ्कम-गोमय......दिच्यपुष्पदर्शनेन च । पूर्वं धारायां धंधूपरमारपार्श्वे मनुजमश्रेपीत् । भवतामनुमितभेवित तदा जैनं प्रासादं कारयामि । भवतां भव्यं करिष्यामि । पुनरत्रानियण्यामि । तेन कथापितम्-वयमत्र गोष्टिकाः । इतो देवी स्थानं दर्शयित्वा रैवतं गता । कर्मस्थायो यावान् दिने भवित तावान् रात्रौ पति । कर्मस्थायः स्थितः । तत्र प्रासादः शुभग्रहूर्ते प्रारच्धः । पण्मासान्ते देवी समाययौ । प्रासादं स्थितं दृष्टा देवी जगौ-िकिमिदम् १। 15 तेनोक्तम्-देवी पादमन्यत्रावधारिता । कथं निष्पद्यते १ । देव्या उक्तम्-इह देवकुल्यां वालीनाहोऽित्त । तस्य भूरियम् । अतः स पातयित । प्रातरुपवासं कृत्वा पूजोपचारमादाय तं ध्यायन्, वालीनाहाग्रे उपविश्व । स प्रकटीभविष्यित । मद्यं मांसं याचयिष्यिति । भवता नैवेद्यं माननीयम् । यदि न मन्यते तदा खङ्गं कर्पयित्वा चाच्यम्—याहि नो वा मारयिष्यामि । अहं खङ्गेऽवतरिष्यामि । तथाकृते स आराटिं कृत्वा प्रणष्टः । तत्र देवकुल्यां क्षेत्रपालः स्थापितः । तत्पार्थेऽम्बाया देवकुलिका कारिता । दण्डपतिदेवतावसरे श्रीआदिनाथविम्वमित्तः । अतो 20 युगादिदेवप्रासादः कारितः । चतुर्गच्छोद्भवैश्वतिभिराचार्यैः प्रतिष्ठा कृता । आदो शैलमयं विम्वम् । तदनु पितलमयं भारा १३ तुलामाश्रित्य । पूर्वं ठकुरनीतस्तत्सतो लहरस्तत्सतो मत्रीनेह(ह)स्तेन दीक्षा गृहीता । विमलः श्रीभीमेन गर्जं छत्रं च दत्ता नृपतिः कृतः । तत्सुतेन चाहिलेन रङ्गमण्डपः कारितः । एवं प्रासादे निष्पन्ने केनापि चारणेनोक्तम्—

(१४२) मंडी मुरकी रइ करउ छंडउ मंसह ग्गाह। विमलडि खंडुं कहिअउं नद्वउ वालीनाहु॥
25 ॥ इति विमलवसहीप्रवन्धः॥

३४. अथ ॡणिगवसही-प्रवन्धः (P. Br.)

\$ ११४) धवलकपुरे मन्नी आसराजः । सहचरी कुमारदेवी । पुत्र ४-मन्त्रि लूणिग १, मालदे २, वस्तुपाल ३, तेजपालाख्याः ४ । परं निर्द्रव्याः । एकदा लूणिगो मन्दो जातः । अन्त्यावस्थायां वस्तुपालेनोक्तम्-वन्धो । किमिप द्रव्यव्ययं याचस्व । तेनोक्तम्-नवकारलक्षाः ३ गुणनीयाः । अपरं किमिप दृश्यते तिर्हं याच्यते । तथापि ३० किश्चिद्याचस्व । लूणिगेनोक्तम्-अत्र काचिदावाधा न । परमहमर्चुदाद्रौ देवान्नन्तुं गतः । ममेति मनोरथ आसीत् । यदत्र विमलवसद्यां आलकेऽपि विम्वं लघ्वपि करिष्यामि । यदि काऽपि शक्तिर्भवति तदा कार्यम् । अत्र न काऽप्य-चप्टविधनी । इति वदन्ननशनाद्विं ययौ । पश्चाद् व्यापारे जातेऽर्वुदे श्रीमाताऽवोटीपार्श्वाद्विमलवसहिकोपिर मूल्येन भूर्यहीता द्रम्मेराच्छाद्य । एवं द्रम्ममूडा ३६ तीरिताः । तैरुक्तम्-अतः परं पूर्णम् । तव द्रव्यसामग्री वह्वी ।

त्वं पर्वतमिप गृह्णासि । १२८६ वर्षे शोभनदेवस्त्रधारमाह्य प्रासादं प्रारेभे । १२९२ ध्वजारोपो जातः । तत्र इन्यकोटीद्वादश, लक्ष ५३ एवं द्रव्यसंख्या । छणिगवसहीति नाम कृतम् । श्रीनेमिनाथप्रतिमा स्थापिता ।

(१४३) विमलदण्डपतिर्विमलाचलाधिपजिनालयमारचयत्पुरा । इह गिरावसकौ तु स कौतुकी व्यथत्त रैवतदेवतमन्दिरम्॥

तत्र प्रासादे मित्रणा यशोवीरेण त्रयोदश दोपा उक्ताः । आदौ विलासमण्डपो न युक्तः १, परं स्तम्मेषु 5 विम्वानि २, सिंहमध्ये ३, हरिणगवेक्षण ४, द्वारे गजशालापरं पाश्चात्ये ५, तपोधना आकाशे ६, सोपानानि हस्तानि ७, स्त्रधारमातुक्छत्रं ८, मुख्यद्वारं पुरवाह्ये ९, तथा घण्टा महत्तरा १०; त्रयं तज्ज्ञलोकाज्ज्ञातच्यम् ॥

।। इति ऌणिगवसहीप्रवन्धः* ।।

३५. अथ वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः (B. Br. P. Ps.)

(१४४) म्श्रीमत्प्राग्वादवंद्दोऽणहिलपुरभुवश्चण्डपस्याङ्गजन्मा जज्ञे चण्डप्रसादः सदनमुरुधियामङ्गभूस्तस्य सोमः। आद्याराजोऽस्य सूनुः किल नवममृतं कालक्त्दोपभुक्ति-च्छेकश्रीकण्ठकण्ठस्थलविषजमलच्छेदकं यद्यद्योऽभूत्॥

े \$ ११५) आसराजप्रवन्धाद् वस्तुपाल-तेजःपालोत्पत्तिर्ज्ञेया ।.....[अत्र सूचित आसराजप्रवन्धः B सञ्ज्ञ-कसङ्ग्रहस्य खण्डितत्वात् तत्र न लब्धः परं BR सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे स उपलभ्यते । तत एवात्र समवतार्यते । यथा-]15

§ ११६) अथ आसराजप्रवन्धो यथा—ंअणिहल्लपत्तने मलधारिश्रीदेवप्रम (Ps. हेमप्रम) स्रिट्याख्याने गादीयां १४ शत उपविष्टेषु, तिसन् व्याख्याने साधुमदनपालपुत्री (Ps. 'आभूनिन्दनी'; तथा अत्रैवाद्शेंऽन्यत्र- 'तिहुअणपालपुत्री' इति लिखितम् ।) कुमारदेवी वालविधवा व्याख्याने उपविष्टासीत्। नियोगी अश्वराजस्तत्रोप- विष्टोऽभूत् । यावद्वाचको वाचयति तावदाचार्यदृष्टिस्तत्र कुमारदेव्यां विश्राम्यति । विदग्धेनाश्वराजेन कारणं

'एकदा ल्लिगेऽनदानं गृह्णति धर्मोब्ययो याचितः-यदहं अर्बुदाद्दी देवं नन्तुं गतः। तत्रेति मनोरथ आसीत्। यद्यत्राल्के एकं विनर्व स्थापयामि तदा भव्यम्। अतो यदा भवतां पाहति......तदा तत्र किञ्चित्कीर्त्तनं काराप्यम्। पश्चाद्ध्यापारे जाते विमलवसतेरुपारे मूर्यू- त्येन गृहीता, द्रम्मेराच्छाय। एवं द्राममूडा ३६ ती.......रुक्तम्-अ[तः] परं पूर्णम्। तव द्रव्यसामग्री यही। त्वं पर्वतमिप गृह्णासि। तत्र १२८६ वर्षे द्रोभनदेवं स्त्रधारमाकार्यं प्रासादं प्रारेमे....सं० १२९२ ध्वजारोपः कृतः।

सङ्कीर्णसोपानमपाच्यगाध्वपृष्ठेऽत्रशाला मुनयश्च घर्मे । स्तम्भेषु विम्वानि च दीर्घपृष्टाः सिंहाग्रगेणा रतिमण्डपाश्च ॥ छत्रं च शीर्पे स्थपतेर्जनन्या गजाधिरूढा निजपूर्वजाश्च । स्तम्भा अनुल्या तनुरक्षरश्च ते द्वादशामी कथिताः कलङ्काः ॥ —मञ्जियशोवीरेणैतानि द्यणानि श्रीअर्श्वदपासादे कथितानि ।

^{*} P सञ्ज्ञके पुस्तके एप एव प्रवन्धः निम्नलिखितस्वरूपेण प्राप्यते-

 $[\]dagger$ एतत्पद्यं P सङ्गहे नोपलभ्यते ।

[‡] एतत्प्रवन्धगतवर्णनं P सङ्झके सङ्ग्रहे निम्नगतेन प्रकारेण लिखितं लभ्यते-

^{&#}x27;एकदा मलपारिगणाधीशाः श्रीहेमप्रभस्तयो धवलकापुरे चतुर्मासकं स्थिताः। तत्र व्याख्याने सर्वः कोऽप्येति। तत्र ठक्कुरतिहुण-पालपुत्री कुमारादेवी मात्रा सह व्याख्याने आगता। परं विधवा। अथ गुरूणां व्याख्यानान्तरे तरूण्यां विश्रामो दृष्टेः स्थितः। मत्री आश-राजो देशनान्ते गुरूनाह-भगवन्! चन्द्रमसोऽङ्गारवृष्टिनं स्थात्, परं प्र्यानां दृष्टिः कुमारादेव्यां किमासीत्?। निर्वन्धेन पृष्टा अवदन्-[Ps. यदेपा विधवा] अस्याः कुक्षावेकादशरलानि सन्ति। पुत्र ४, पुत्री ७; पुत्रद्वयं लोकोत्तरम्-इति श्रुत्वा तिहुणपालस्योलगा प्रारव्धा। तेन आवासलेखकवही दत्ता। प्रासः कृतः। आसंघे जाते तथा पुत्र्या सह प्रीतिरभूत्। मात्रा ज्ञातवृत्तया वाहिनीमपंथित्वा सपुत्रीकः प्रहितः। स्तम्भतटे गतः। तत्र पुत्रा जाताः। स्तृणिग-महदेव-वस्तुपाल-तेजपालाः। पुत्र्यः सप्त।

धर्माविधाने भवनच्छिद्रपिधाने विभिन्नसन्धाने । सृष्टिकृता नहि सृष्टः प्रतिमञ्जो मञ्जदेवस्य ॥' .

पृष्टम् । पूज्यैरिति भणितम्-अस्याः क्वक्षौ पुत्ररत्नद्वयमितिशायि विद्यते, यिजनशासनप्रभावकं [स्यात्]। अन्यदाश्व-राजे साधुमदनपालसमीपे उपविष्टे सित तस्य लेखकं न मिलिति । व्यवहारिणो लेखकं मेलियत्वा समर्पितमश्व-राजेन । ततस्तस्य द्रम्मौ द्वौ दिनं प्रति ग्रासे कृत्वाऽऽत्मपार्श्वे स्थापितः । पुत्री गृहव्यापारे मुख्या । कदाचिदु-भयोः स्रोहो जातः । मात्रा वृत्तान्तं ज्ञात्वा द्रव्यदश्सहस्राणि समर्प्य प्रेपितौ सोहालकनाम नगरम् (Ps. 'मंड-गृलीनगर्या गतः ।' पुनरस्मिन्नेव सङ्गहेऽन्यत्र 'स्तम्भतीर्थे गतः' एतिहिखितं लभ्यते)।

आसराजस्य चत्वारः पुत्राः-मन्त्री ऌिणगो १, मछदेवोऽपरः २, वस्तुपालस्तृतीयः ३, चतुर्थस्तेजपालः ४। पुत्र्यः सप्त-साऊ १, भाऊ २, माऊ २, धनदेवी ४, सोहगा ५, वयज्ञ्का (तेज्ञ्का 🗜)६, पद्मलदेवी ७। (१४५) श्रीवस्तुलस्य पत्नी लिलतादेवीति विश्चता जगति। तेजःपालस्य तथाऽनुपमदेवीति सत्कान्ता॥

§११७) इतो व्याघपछीयो राणक आनाको भीमेनापमानितो देशसीमिन गतः । परिग्रहेणाकारितो नायाति । राज्यं विनष्टम्, आगत्य किं करोमि । परं पदातिमात्रः सन् ऑलगां करिष्यामि-इति पत्तने समायातः। तत्सुतो ल्णपसानामा भस्नकधरोऽस्ति । *तस्य द्वे कान्ते । वीरम-वीरधवलौ सुतौ । इतो लवणप्रसादेन 15 वीरममाता सपुत्रापि त्यक्ता । सा मेहतावास्तव्येन त्रिश्चवनसिंहकौडुम्बिकेन धृता । लवणप्रसादस्तन्मारणाय तस्य गृहे सन्ध्यायां प्रविष्टः । इतः कौडुम्बिकः कान्तया वैकालिकायोपवेशितः । तेनोक्तम्-वीरमः कः १ । तया प्रोक्तम्-कापि रन्तुं गतः । तेनोक्तम्-आकारयत, तं विना नाहं भोक्ष्ये । तया निर्वन्धादुक्तोऽपि न विश्वति । इतो लवणप्रसादेन चिन्तितम्-अनेन मम कान्ता धृता, परं मे पुत्रेण सह वाढं स्नेहवानसौ । अतः कथं हन्यते । इति विचिन्त्य प्रकटो जातः । तेनाभ्यर्थितः कस्त्वम् । स्वभावे उक्ते तयोर्मिथः प्रीतिर्जाता । स लवणप्रसादस्तेन 20 भोजितः । वसादि दन्ता प्रहितः । इतः स क्रमेण भीमदेवेन राणकः कृतः (B. Ps. प्रधानः कृतः राणिमा दत्ता) स राज्यचिन्तां कर्तुं प्रवृत्तः । [B. Ps. नृपस्तु खयं विकलः । अथ लवणप्रसादेन] राज्य-मात्मायत्तं कृतम् । इतो राज्ञि दिवं गते स एवाधिपो जातः । वीरमः खसमीपमानीतः । वीरधवलस्य कुमारश्कतौ धवलकं दत्तम् । तस्य प्रिया जइतलदेवी । [Ps. पुत्रसोहेन लवणप्रसादो धवलकपुरे धनं तिष्ठति । पत्तने अमात्याः कर्णवारां कुर्वन्ति ।]

११९८) इतो वस्तुपाल-तेजःपाली हट्टं मण्डयतः। तेजःपालस्य राणकेन सह प्रीतिर्जाता। राजकुले वस्नाणि प्रयति । अथ एकदा देवपत्तने ठ० धरणिगस्तेजःपालस्य श्वश्चरोऽनुपमदेवीजनकः। तेन स्वपुत्री अनुपमदेवी श्वश्चरकुले प्रहिता। तया गृहमागतया सर्वं वस्तु ज्येष्ठप्रभृतिक्कटुम्त्रस्य दिशतम्। तत्र कप्रस्य सर्वोऽपि शृङ्गारः। वस्तुपालस्तेजःपालमाह-आवां वणिष्मात्रौ। एप ईश्वराणां स्वामिनां वा योग्यः शृङ्गारः। यदि वध्विचारे आयाति तेता राणकपल्यै दीयते । अअनुपमयोक्तम्-स्नीतनुर्भर्तायत्ता, आभरणानां तु का कथा। ततो राणकं निमन्त्रय

^{*} एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps, आदर्शे नास्ति । ‡ एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps, आदर्शे परित्यक्तम् । 1 B तदा देव्ये जयतलदेव्ये उपायनीकियते । अ एतदन्तर्गतपाठस्थाने B आदर्शे एतादशः पाठः प्राप्यते-"अनुपमदेव्योक्तम्-स्रीणां शरीरं भर्नुरायक्तमाभरणानां त का कथा ।
विशेषतो यच्छध्वम् । वस्तुपालः प्राह्-यद्राणकं भोजनाय सपलीकं निमंग्य भोजय । तथा कर्तुं गते वस्तुपालो हृद्दे गतः । राणकः प्राप्तः ।
भोजितश्च । आभरणे दर्शिते देवी प्राह्-स्वामिन् ! इद्माभरणं अद्ययावत् न दृष्टं न श्रुतम् । तदा गृह्णामि यदि मुद्रां तेजःपाले गृह्णाति । भवत्वेवं मुमापीप्टमिदम् । तेजःपालेनोक्तम्-वृद्धआतरं पृच्छामि । प्रष्टुं गतोऽद्दे । आत्रोक्तम्-किं मुद्रया । यदि ददात्येव तदेति वक्तव्यम्यद्दिप्पां कारयत । यत्तत्र भवति तद्र्पयित्वा शेपमादाय वयं मोच्याः । एवमस्तु । इत्युक्त्वा मुद्रा समर्पिता । व्यापारो जातः । तद्नु कूर्चालसरस्वतीत्येविधानि विरुद्रानि प्रव्यमानैर्वाद्यणैर्मक्षिकाजालमिव विष्टतः । अनन्तवन्धनं कृतम् । एकदा कुलगुरवः श्रीविजयसेनस्रयो वन्दा-

भोजयित्वा तद्त्तम् । देव्यै दातुं राणो लग्नः । तयोक्तम्-एतयोः खम्रद्रा देया । ततो दृद्धश्रातरं पृष्टा गृहटीपां दर्शयित्वा मुद्रा गृहीता! ।

§११९) तदनु वस्तुपालो [Ps. क्चिलसरस्वती-इत्येविधानि विरुदानि पठमानै:] ब्राह्मणैर्न्याप्तः । [Ps. अनन्तवन्धनं कृतम्।] एकदा कुलगुरुश्रीविजयसेनस्त्रयो वन्दापिवतुमागताः। कुमारदेन्या नमस्कृताः। मन्त्री नागतः। मन्त्रिणं वन्दापिवतुं गृहे गताः। मन्त्री द्विजान्दतो गवाक्षस्थो दृष्टः। तेन नाभ्युत्थिताः, ते व्याप्तृदिताः। मात्रा प्रोक्तम्-मन्त्रिन् ते अतीव ईदृशी विग्रता यत्कुलगुरवोऽपि आगता न ज्ञाताः। ततो मन्त्री धावितः। अभ्यर्थ्य नीताः। तत्र तेरुक्तम्-आश्रराजतन्त्रस्य गेहं न किन्तु मद्यपगृहम्। किमिति [Ps. B. गुरुभिरुक्तम्-वयं ठक्कुरचण्डप्रसाद-सोम-आसराज-तन्द्रवयः कुमारदेवीक्रुक्षीसरोजराजहंसस्य श्रीवस्तु-पालस्य गृहं मत्वा समायाताः। परमग्रे मद्यपगृहं दृष्टम्। मन्त्रिणोक्तम्-एकवेलं मध्ये पादाववधारयत। स्वकरे-णासने दत्ते उपवेशिताः। सत्रश्रयमुक्तम्-प्रभो। मे गृहे श्रीमद्गुरुभिः किमयुक्तं दृष्टम् । एतच्छृणुत-]

(१४६) जीवादिशेति पुनरुक्तसुदीरयन्तः क्वर्वन्ति दास्यमपि वण्ठजनोचितं ये । तेष्वेव यद्गुरुधियं गुरवोः विदध्युः सोऽयं विभूतिमदपानभवो विकारः ॥

भगवन्! एवं भवति यदि सारा न कियते । शिक्षां यच्छत । [Ps. आदावनन्तमपाक्तरः । तसिन् द्रीकृते, तव कुले कोऽपि माहेश्वरो न जातः । अतः श्रावकत्वमङ्गीकुरु] आदावनन्तोऽपाकृतः । ततः श्रावकत्वं जातम् । पूजानिश्चयमकार्पात् ।

- (१४७) *सोऽयं क्रमारदेवीक्रक्षिसरःसरसिजं श्रियः सदनम् । श्रीवस्तुपसचिवोऽजनि तनयस्तस्य जनितनयः ॥
- (१४८) विश्वेता-विकेम-विद्या-विद्रंधता-वित्तं-वितर्रण-विवेकैः । यः सप्तभिविकारैः कलितोऽपि वभार न विकारम्॥

§१२०) अथ देशस्तोको वीरधवलस व्ययो वहुः। इति मत्वा तेजःपालः पत्तनोपिर गन्तुकामं राणकं 20 निपिध्य ख्यं गतः। ॥तत्र सभायां श्रील्रणप्रसादेन कुशलं पृष्टम्—कुमारः किमिति नागतः १। देव । श्रीवीरध- वलेन देविगरेरुपिर वीटकं याचितमस्ति। कथम् १-व्ययो वहुः। अतो देविगरेरुपिर कटकार्थी। तं विना व्ययो न सम्पद्यते। राणकेनोक्तम्—यदि तत्र गतः [हतः] स, तिहं व्ययं कः कर्ता १। केन दत्तेन तिष्ठति १-देव । सम्भतीर्थेन। व्यापारिणः पृष्टाः—तस्य किमायपदम् १। तेरुक्तम्—द्रम्माणां सहस्र ३०, वाहण (छ शत १) ३२। राणकेनोक्तम्—यदि तेन पुरेण दत्तेन धनी भवति तिहं दत्तम् +। महाप्रसादम्रुक्त्वा तेजःपालो धवलकमागतः। 25 राज्ञा पृष्टम्—किश्चिद्धव्यम् १। सम्भतीर्थम्। किं तेन १-मया तव लङ्का दत्ता, परं न खाद्यते न पीयते। सर्व भवष्यति—इत्युक्त्वा मिश्चणं वस्तुपालमश्चवारैः पञ्चाशद्भिः (५०), पत्तिभिः शतद्वयेन (२००) स्तम्भ-

पितृमायाताः। मं० कुमारदेव्या नमस्कृताः। उक्तम्-मन्नी नाययो ?। मन्निणं वन्दापिततुं गृहे पादमवधारयत। गुरवस्तवातः प्राप्ताः। उपिरितनभूमो गताः। तत्र गवाक्षस्यो मन्नी द्विजेवेष्टितो दृष्टः। तेनाप्यनभ्युत्थिताः। पश्चाद्वलिताः। अथ मात्रोपर्यागत्य प्राह्ममन्निन् ! भव्यमिदम्। एवं तेऽञ्जनं यद् गुरूनप्यागतान्नोपलक्षयाति। मन्निणा जनं प्रहित्य स्थापिताः। गवाक्षादुत्तीर्यं गतो नत्वावादीत्-प्रभो! कथं पदमवधारिताः, व्यावृत्ताश्च। गुरुमिरुक्तम्-वयं उक्कुर चंढप-चंढप्रसाद-सोम-आशराजतन्द्रवस्य कुमारदेवीकुक्षिसरोराजहंसस्य श्रीवस्तुपाल-स्थावासं मन्वा समायाताः। परमग्ने मद्यपगृहं दृष्टम्। मन्निणोक्तम्-एकवेलं मध्ये पादमवधारयत। स्वकरेणासने दृत्ते उपवेशिताः। सप्रश्र-यमुक्तम्-मद्गहे श्रीमद्गुक्तिः किमयुक्तं दृष्टम् । एतच्लुणुत-"जीवादिशेतिः।"

 $^{1\} B$ धनिनो । $2\ B$ अपराधः । $3\ B$ आदौ देवपूजानिश्चयमकार्पीत् । $4\ B$ तदनु क्रमेण वतमूलो धर्मश्च । B *आदर्शे _पुप श्लोको नास्ति । $1\ U$ पतत्समार्ग्रं $1\ V$ पतत्समार्ग् $1\ V$ पत्तत्समार्ग् $1\ V$ पत्तत्समार्ग् $1\ V$ पत्तत्समार्ग $1\ V$ पत्तत्समार्ग $1\ V$ पत्तत्समार्ग $1\ V$ पत्ति तप्ति तप्ति तप्ति नाययौ $1\ V$ पदि साम्भतीर्थन ऋदिमान् भवति तदा तद्सु ।

तीर्थं [प्रति] प्राहिणोत् । मन्त्री तत्र गतः । नियोगिभिरुक्तम्-आदौ सईदगृहे गम्यते, तदनु उत्तारके । मन्त्री अनाकर्ण्य स्वोत्तारके गतः । तदनु सईदोऽपि मिलितुमागतः । मन्त्रिणं न[त्वो]पविष्टः । मन्त्रिणा तादक् सम्भापणं न कृतं [परं] स्तोकं गौरवं कृतम् । यतः-

(१४९) *नयणिहिं रोसु निवारि वयणिहिं वरिसइ अमिअ रसु। तिल दोरड संचारि करि कांई जन वीसरइ॥

इतो द्वितीयदिने मन्त्रिणा सईदो न्याहृतः । जलमण्डपिका द्रम्माणां लक्षेस्त्रिभिर्यान्यते । सईदेनोक्तम्-अर्पय-तान्यस्य मया त्यक्ता । द्वितीयदिने उक्तम्-स्थलमण्डिपका द्रम्माणां लक्षपश्चकेन याच्यते । तेनोक्तम्-ददत । साऽपि त्यक्ता । अपरेष्वपि व्यापारेषु खमनुष्यान् मुमोच । इतः सईदेन खमित्रं भृगुपुराधिपतिः सण्डेराजः शङ्खल (B खंडेराजः सांखलज) आकारितः। स जलमार्गेणाश्वसहस्र २, मनुष्यसहस्र ५ समानीय समुद्रतटे 10 समुत्तीर्णः । इतः सईदेन मन्त्री व्याहतः । शङ्खः समायातोऽस्ति, किश्चिद्द्वा प्रेष्यते । मन्त्रिणोक्तम्-असाकं द्रव्यं न हि । त्वद्वहेऽस्तिः, त्वं देहि । मदीये युद्धमेव । तर्हि चलतः, यथा युध्यते । मत्रिणोक्तम्-त्वं खपरिकरेण व्रजः, वयं तु खपरिकरेण यास्यामः । मत्री अश्ववार ५० मनुष्यज्ञतद्वयेन वहिर्निर्गतः । वलद्वयं वहिर्निर्गतम् । इतो मित्रणा राजपुत्रा व्याहृताः । कः पूर्वमुत्थापनिकां विधास्यति ?। तदनु चालुक्येन (В चौलुक्यवंशजेन) भ्रवन-पालेन वीटकं याचितम् । मया शङ्को इतः । केनाप्युक्तम्-मृतस्य किं प्रासादं करिष्यति मन्त्री ? । स किञ्चि-15 तक्षुव्धः । मित्रणोक्तम्-यदि ते विरूपं भवति, तदा तव मानुपाणि निर्वाहियण्ये प्रासादं च कारियण्ये । ततस्ते-नाश्चीत्थापितः-रे! यः शङ्घः स मे पुरो भवतु । तदनु एकेनाश्ववारेणोक्तम्-अहं शङ्घः । स भक्षेन हत्वा पातितः । अपरेणोक्तम्-सोऽपि पातितः । एवं पण्मारिताः । इतः शङ्खशरीरे गत्वोक्तम्-अहो मया ज्ञातम् । भृगुपुराधियः शङ्ख एक एवं । परं समुद्रस्य तीरभावाद्वहवः । अहं हत्वा हत्वा श्रान्तोऽस्मि । ततः पत्तिभिस्तुरङ्गं हत्वा पातितः । शह्बेन चिन्तितम्-मम पण्मारिताः, अस्य त्वेकः । फलं न किमपि विमृश्य निष्टतः । सईदेनोक्तम्-यदपि तदपि 20 दत्त्वा प्रहीयते । मित्रणोक्तम्-त्वयाऽऽनीतस्त्वमेव देहि । इत्युक्ते स प्रहितः खस्थानम् । मृत्रिणा भ्रवनपालस ऊर्द्वदेहिकं कृत्वा, भ्रवनपालेश्वरप्रासादस्तिनिर्मणं कारितः। इतो मित्रणा तेजःपालपार्श्वात् अश्वशतद्वयम्, पदातिशतपश्चकम्, सौख्यासनमेकं चानायितम्। मित्रणा पुरान्तर्वार्ता कृता—यद्राणकः श्रीवीरधवल एति। इति सम्मुखो निःसृतः। सईदोऽपि वहुना परिवारेण निःसृतः। आच्छादितं सुखासनम्, परं राणको न दृष्टः। उत्तारके गतो दर्शनं दास्यति । तत्रापि दर्शनं न लब्धम् । ततः सईदेन भीतेन पुनः शङ्कः समाहृतः । यद् युद्ध-25 सर्जेर्भूत्वा समागम्यम् । अश्व सहस्र २, मनुष्यसहस्र १० दशकेन समाययौ । समुद्रादुत्तीर्थ तटे स्थितः । मन्त्री खपरिकरेण वहिनिःसृतः । मित्रणा शङ्खस्य कथापितम् -यत्त्रं वलवानसि, क्षत्रियोऽसि, अहं वणिग्मात्रम् । तत आवयोर्द्ध-द्रयुद्धमस्तु। सोऽत्यर्थं वलवान् ^नहृष्टः सन् काहले मित्रणा सह प्रहर २ अयाचत् । सैन्ययोस्तटस्थेयोर्युद्धं भवति । एवं दिन ३, चतुर्थदिने प्रहरैकसमये मित्रिणा पाश्चात्यस्थेन जानुना लत्तादानात् राह्वः पातितः । तत्कालं शिरुकेंद्मकरोत्। ततः शङ्कसैन्यं हतप्रहतं नष्टं लग्नम्। अश्वाद्यादाय मित्रणा मुक्तम्। तसिन् हते सईदो नंप्टा 80 समुद्रमध्ये गतः। मित्रणोक्तम्-त्वां कोऽपि न मारयति। मया शङ्को हतः, त्वं व्यवहारी कथं नष्टः १ तेनोक्तम्-यदि मे जीवेऽभयं ददासि तदाऽऽगच्छामि । मित्रणा तथेति आहूतः । भोजनार्थं गृहे आकारितः । अङ्गमईकैरङ्गानि टालितानि । [तेनोक्तम्-मित्रन् ! किमिदम् ! । मयोक्तम्-न मारियव्यामि जीवन्तं मोक्ष्यामि । ततस्त्वं जीव-न्नित्ते] जीवन्युक्तः खयमेव व्यथया मृतः । इतस्तस्य गृहे मनुष्याणि ग्रुक्तानि । धवलके कथापितम्-यत्सईदो हतस्तस्य सर्वस्वं राजकुले [नीतम्]। परं महान् व्यवहारी तस्य गृहधूलिर्ममास्त । मित्रणोऽग्रे केनाप्युक्तम्-

 $^{^*}$ P आदर्शे एतत्पद्यं नास्ति । † एतदन्तर्गता पंक्तिः P आदर्शे पतिता । † एतदन्तर्गतः पाठः परित्यक्तः P आदर्शे ।

25

30

यत्सईदस्य वाहनानि एकदा दोलायितुं प्रवृत्तानि । वस्तुवापनि (१) कृता अग्रे घू(धू १)नि भणित्वा रेणुः क्षिप्ता । गृहगतेषु पृष्टम्-किमायातम् १ । वह्वी लक्ष्मीः । तेनोक्तम्-समुद्रस्य रेणुरपि श्रेष्ठा । वखारिर्भृता । एकदा दीपो रूमञ्जर्या लग्नतस्य तापेन रेणुः स्वर्णीभृता । स वृत्तान्तो मित्रणा श्रुतः । अतो याचिता । राणकेन दत्ता । गृहे टीपिः कृता । द्रव्यं स्वर्णं च दुक्लमौक्तिकादि प्रहितं राणकपार्थे । मत्री गतः । तत्र कविभिरुक्तम्-

(१५०) मिलिते तद्दलयुगे तिसान् राङ्के च चूर्णतां याते । श्रीवस्तुपालमन्त्रिन् ! महीसुखे कोऽपि नवरङ्गः॥

§ १२१) एकदा आतरी आलोचे उपविधी । द्रव्यं क सात्यते १-एवं विमृश्यतोः मध्यं दिनं जातम् । इतोऽनुपमदेव्या चेटी प्रहिता-उत्सरं जातं देवताऽवसरस्य । तया अलव्धप्रत्युत्तर्या स्वयमेत्य जगाद-अद्य कोऽयमालोचः १ । यदि कथनयोग्यो भवति तदा कथयत । इतस्तेजःपाले ईर्ष्यापरे मित्रणोक्तम्-वत्स ! मा कुप ! इयमति दक्षाऽस्ति, ब्रद्धिः पृच्छचते ।

> (१५१) असकृन्मूर्खमप्यन्यं एच्छेत् कार्ये समु[द्ग]ते। चपला मनसो वृत्तिवृद्धानपि हि मुद्यति॥

पृष्टम्-असाकं श्रीन्यियेनान्यायेन वा जाता । असाः स्थानमवलोकयावः । भूगता क्रियते जनवेश्मसु वा सुच्यते । किमिप गृहे नायाति । तया च्याहतम्-यदि मे बुद्धिः क्रियते तदाऽक्षया स्थात् । सर्वः कोऽपि प्रकटां च पश्यति कोऽप्यातुं न पारयति । कथम् १ । प्रासादाः कार्यन्ते । उपरि स्थर्णकलशान् दच्या, प्रशस्तौ द्रच्यं १५ सङ्घते । सर्वः कोऽपि वाचयति, अत्र इयद् द्रच्यं लग्नम्, परं काणवराटकमिप गृहीतुं न पारयति । ज्येष्टेनोक्तम्- इदं वध्वाक्यमेवास्तु । भाग्यक्षये आत्मीयाप्यन्या भवति । तद्नु स्नात्वा देवताऽवसरमाधाय, भ्रक्तोत्तरं पौप-धागारे गतौ । यद्वरवो वक्ष्यन्ति सैवोपश्चतिर्नः प्रमाणम् । गुरवो नमस्कृताः । तैर्भणितम् ।

(१५२) कोरां विकाशय क्रशेशयसंस्तालिं प्रीतिं क्ररुष्व यदयं दिवसस्तवास्ते । दोषोदये निविडराजकरप्रपातध्वान्ते समेष्यति पुनस्तव कः समीपम् ॥

नमस्कृत्योत्थितौ विहिर्निर्गतौ । विमृष्टम्-आवयोरुत्तरकालो न भन्यः । अतो द्रन्यं न्ययितुं लग्नौ । [Ps. स्थाने स्थाने सत्रागार-प्रासाद-पौपथञ्चालां प्रारेभाते । वर्षमध्ये वार ३ संघार्चा । यति १५०० विहरणम् ।

§१२२) एकदा मन्त्री सुप्तोत्थितः पाश्चात्ययामिन्यां चिन्तयति-

(१५३) आद्याराज इहाजनिष्ट जनको यस्य प्रशस्यावधि-र्थ.....जुमारदेव्यथ कृती श्रीम.....जः।

तेजःपाल इति प्रधान्निवहेष्वेकश्च मन्नीश्वर-

स्तजायानुपमा ग्रणैरनुपमा प्रसक्ष्वस्मीरभूत् ॥ तेजःपालोऽनुशास्ति प्रवस्तरमतिवीरराजस्य राज्यं

सामग्रीयं समग्रा खजनपरिजनोत्साहसम्पत्तिभिश्च।
एवं पुण्यैर्दिनं मे पुनरसमयतः खेदमग्रो जनोऽयं
तद्भवीदेशमाण्य स्फ्ररितमतिरसावञ्चतं कम्म कर्त्वम्॥

इति विचिन्त्य यावद्वारशालायामागत्योपविष्टः, तावद्वारपालेनोक्तम्-मन्त्रिन्! श्रीपत्तनाद्वुर्वाशीर्वादकरो नरो दर्शनम[भिलपति] । प्रवेशय । स नरः समेत्य प्रणामपूर्वमाशीर्वादं करेणोद्दे ।
प्र॰ प्र॰ प्र॰ ४०

(१५५) मन्त्रीदा! गुरवस्तुभ्यं खस्ति विस्तारयन्तु ते। योग्यं त्वामेव विज्ञाय यैरिह प्रेषितोऽसम्यहम्॥

म्त्रिणा ससम्अम्मुत्थानपूर्वकं करावायोज्य पत्रकं जगृहे । शिरिस निवेश्यावाचयत् । तत्र कुश्रलप्रश्नपूर्विमिद्-माशीर्वादमवाचयत्-5

‡अमुष्मिन् यः काले किरालयति कम्मीद्धततरं० ॥

तथा- (१५६) मुनीनां को हेतुर्जरठकठिनत्वव्यपगमे

भवेद्भवा येषां खजनपरिहारव्यतिकरः। परं धन्यास्तेषामपि वितन्तते केऽपि मृदुतां

शितां शीतांशुर्यो जनयति यतश्चन्द्रदेषदाम् ॥

महामात्य! १२७६ एप संवत्सरोऽतिनीतः (Ps. तीवः)। समयवशेन वर्ष २८ श्रीशतुज्जय-गिरनारयोर्वर्त्म केनापि न वाहितम् । [Ps. मन्त्रिपदं विना मण्डलीं वारमेकं गतः नापरः ।] तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति । श्रीशतुज्जयमाहात्म्यं चैवम्*-

(१५७) अत्रास्ति खस्ति शस्तः क्षितितलतिलको रम्यताजन्मभूमि-

दुँद्राः सम्पन्निवेदास्त्रिभुवनमहितः श्रीसुराष्ट्राभिधानः।

यस्योचैः पश्चिमाम्भोनिधिरपहरते लोलकह्रोलपाणिः

प्रस्फ्रर्जतफालफेनोल्वणलवणसम्रत्तारणैर्देष्टिदोषान् ॥

तत्र तीर्थानि-

15

20

25

श्रीशत्रञ्जय-रैवताभिधगिरिद्धन्द्वेऽत्र यात्रोत्सर्व (१५८) दानब्रह्मतपःकृपाकृतरतिर्यः सन्मतिः सेवते । तीर्थत्वातिशयेन नारकगतिं तिर्थग्गतिं च ध्रवं नो किसात्रपि जन्मनि स्पृशति स प्रध्वस्तदुष्कर्मितः॥

(१५९) फणिपति-मघवाचा यत्र देवाः समेयुर्भरत-सगरमुख्याश्चित्रणः क्षोणिशकाः। निम-विनिममुखास्ते सर्वविद्याधरेशा दशरथसुत-क्रन्तीनन्दनाद्याश्च भूपाः॥

एषु श्रीजयसिंहदेवचृपतिस्तीर्थेषु यात्रां व्यधात्

सिद्धः प्रोद्धरघर्मभूधरिहारःकोटीररलांकुरः ।

राजर्षिस्तु कुमारपालविपुलापालः कृपालुः कलौ

कृत्वा सङ्घमिहोपदेशवचसा श्रीहेमसूरिप्रभोः॥

सङ्घो वाग्भटदेवेन तथा चक्रेऽत्र मन्त्रिणा। भविष्यतामतीतानामुपमानं यथाऽभवत् ॥

तेषु तीर्थेषु दुष्कालवशात्-30

स्तायूद्धद्वतरङ्कञ्जटनरता मार्देङ्गिकाः स्युर्वेका (१६२) घुका घर्घरघोरघोषविषमं गायन्ति नीडस्थिताः। सभ्य(चः ?)च्याघवितीर्णमांसविघसा चत्यन्ति नित्यं शिवाः फेरूणामिह वन्दिनां कलकलः प्रेक्ष्योत्सवः स्यादिति ॥

[‡] एतदन्तर्गताः पंक्तयः Ps आदर्शे न विद्यन्ते । * Ps तीर्थयोर्माहात्म्यं ऋण ।

15

20

(१६३) ंनियउयरपूरणासा जणणी पुत्तं चएइ विलवंतं । मणुयाणि माणुसेहिं निसायरेहिं व खर्जाति ॥

(१६४) । पल्योपमसहस्रैकं ध्यानास्रक्षमिमग्रहात्। दुष्कम्मे क्षीयते मार्गे सागरोपमसंज्ञके ॥ (१६५) । शात्रुञ्जये जिने दृष्टे दुर्गतिद्वितयं क्षिपेत्। पल्योपमसहस्रं तु पूजा स्नात्रविधानतः ॥ अत एवंविधानि तीर्थान्यपूजानि यात्राये यतनीयम् ।

§१२३) तदन्तु मित्रणाऽभाणि-गुरूणामाकारणं प्रेप्यते । आनायिताः । ग्रुमे सहूर्त्ते देवालयः प्रारव्धः । सर्वदेशेषु कुङ्कमपत्र्यः प्रहिताः ।

(१६६) वाहनौषधिपाथेयसहायवृपभादिकम् । यद्यस्य नास्ति तत्तसौ सर्वं देयं मया मुदा ॥

[Ps. इति श्रुत्वा महर्द्धयो] लोका यात्राये मिलिताः । इतः कलिर्गूलगर्जितमकरोत्-

(१६७) रे रे वातूललोकास्यजत निजनिजं सर्वथा धम्मैकुलं

कार्य चेजीवितव्यैरिह कलिसुभटः कुद्ध एवासि यसात्।'

-'नित्यं श्रीसङ्घलोकाः कुरुत नवनवं निर्भया धर्ममेष प्राप्तोऽहं वस्तुपालः कलिन्छपहृदये निर्दयं न्यस्य पादम् ॥'

(१६८) 'किमिह कलिनरेन्द्रं नैव जानाति सोऽयं यदनुचितमिवोचैर्धर्मकृत्यं तनोति ।' 'अमुमनुपमसत्यं धर्मिकस्मैंककृत्यं कलिकवलनकालं वेत्ति नो वस्तुपालम् ॥'

(१६९) गुरवः परःशतास्ते परःसहस्रश्च साधवः सुधियः । गृहिणस्तु परोलक्षाः सङ्घे श्रीवस्तुपालस्य ॥

जने मिलिते शुभे लग्ने प्रस्थाने जायमाने.....किश्वदाह-

(१७०) कान्ते कान्ते शीव्रमागच्छ शीव्रम्. आएसं मे देहि इत्थिन्हि णाह । कीदग्र रम्यं पश्य देवालयं त्वम् १. धन्नो मंती कारियं जेण एयं ॥

[Ps. इतः सङ्घपूजार्थं पूर्वं देवालयो रथे स्थापितः । उपिर च छत्रत्रयं धृतम् । चामराणां च्यजनमिधवाभिः कृतशृङ्गराभिः प्रारच्धम् । कृतशृङ्गरौ धुर्घरमालादिना कौसुम्भवस्थ धृतौ दृपभौ । मार्गणजनैः
प्रारच्धः कीर्तिकोलाहलः । मिलिता मित्रणामनु अश्ववाराणां सहसाः । प्रारच्धं स्नीजनेन गीतम् । वादितानि
मेर्यादीनि मङ्गलतूर्याणि ।] एवं चलित देवालये दक्षिणदिग्मागे दुर्गा जाता । मित्रणोक्तम्-स्थिरीभवत । 25
तत्रैको मारवः क्षत्रियो मित्रणा पृष्टः-भो एपा किं वक्ति । देव । इयं नूतनगृहे निष्पद्यमाने द्वारशाखोपिर
स्थिता मुदिता स्वरं विधत्ते । तत्र सार्द्ध वार घर (Ps. द्वादश घरेण) उपविष्टास्ति । भवतामित्थं १२ ॥ यात्रा
भविष्यन्ति [Ps. एपा प्रथमा तासां मध्ये ।] तदनु वहुस्रीणामनुमतं सप्तशतानि देवालयानामग्रे चलित ।
[Ps. कुहाडीया ५००, कुदालीया ५०० मार्गसारणाय । शकट ४०००, सुसासन ७००, श्रीकरी १९००,
स्रीणां ३३३, त्रितनां २२००, क्षपणक ११००, भट्ट ३३००, देवालां ६४, वाहिनी १८०, जैनयाचक ३०
४५०, तुरंगम ४०००, मनुष्य एवं कारइ ७०००० एवं सामय्या चचाल ।] परतीर्थिकान् कन्दलं कुर्वाणान्
वारयन्ति । एवं श्रीसङ्घः शतुङ्ययाधो वर्द्वापनिकानि कृत्वोपर्याह्रदः । तत्र-

(१७१) ण्हाणं क्रंकुमकद्दमेहि विहियं कत्थूरिआहिं कयं चंगं अंगविलेवणं विरइआ पुष्केहिं पूआ वरा।

[‡] एपा गाथा Ps. आदर्शे एव उपलभ्यते । † इदं पद्यद्वयं Ps. आदर्शे नास्ति । 1 Ps. ईदरो दुःकाले तीर्या० ।

10

रंभाविन्ममलालसेहिं ललनालोएहिं नदं कयं देवेसस्स महाध्या सुहमया पहंसुएहिं कया ॥

§तत्र देवविज्ञाप्तः-

(१७२) आस्यं कस्य न वीक्षितं क न कृता सेवा न के वा [स्तु]तास्तृष्णापूरपराहतेन विहिता केषां च नाभ्यर्थना।
तत् त्रातर्विमलाद्रिनन्दनवनीकल्पैककल्पट्टम!
त्वामासाद्य कदा कदर्थनमिदं भूयोऽपि नाहं सहे॥

मुत्कलापनकाव्यम्-

(१७३) श्रीगर्वोष्मभिरुष्मछेषु धनिनामीष्यानलज्वालया जिह्वालेषु मृगीदशामनुशयाद्धमायितेषु द्विषाम् । वक्रेषु ग्लपितामिमां त्रिजगतीं निस्तन्द्रचन्द्रोदये देव! श्रीविमलाद्रिकेतन! कदा दास्ये त्वदास्ये दशम् ॥§

[Ps. एवमारात्रिकं कृत्वा श्रीजिनं मुत्कलाप्य] तले साधर्मिकवात्सल्यं सङ्घपूजादिकं च विधाय रैवतो-परि ततश्रचाल ।

15 ६१२४) [Ps. इतः केनापि चरटकेन दुर्गवलात् सङ्घमध्ये चौरिकी कृता। मत्त्रिणा स प्राकारो रुद्धः। उक्तं च— (१७४) मह वयरियस्स ठाणं विऔं त्ति अवराहकारणं एयं। पायारं परिच्चन्निय संघं संचारइस्सामि॥

इत्यभिधाय दुर्गं चूर्णयित्वाग्रे प्रस्थितः ।] कियद्भिः प्रयाणकैर्जार्णदुर्गं प्राप । जीर्णदुर्गेऽप्टाद्यप्रासादेषु चैत्य-परिपाटीं कृत्वा (Ps. जीर्णदुर्गोपकण्ठे स्वयं वासिते तेजलपुरे आवासान् दन्ता क्रमारदेवीसरिस सात्वा स्वयं 20 कारितश्रीपार्थनाथचैत्ये महिमां विधाय) यावत्पर्वतोपरि चिल्रितुं समद्धस्तावदेकािकनो व्रतिनः प्रोक्ताः—अत्र वस्त्रपथितींथे पद्याप्रत्यासन्ते मुण्डिके जनं २ प्रति द्रम्माः पश्च २ याचन्ते । तान् भवतां कः प्रदास्ति ? । यथा जानीथ तथा कुरुष्वम् । तैरुक्तम्—मिन्नन् ! तवाज्ञा भवित तदा वयं वार्यामः । मिन्नणा प्रोक्तम्—मुण्डे केशाः सन्ति । वेऽग्रेऽपि दत्ताः । भवतां किं दबः ? । तैः सह कल्हों जातः । कुट्टित्वा व्रतिभिः पातिताः । मिन्न-25 णोऽग्रे रावां कर्तुमागताः । मिन्नणा व्रतिनो हिकताः—कथमेवं कृतम् ? । मिन्नन् ! इयतीं भूमिं यावदितिकम्यागताः । देवनमस्कृतिं विना कथं भुज्यते—इति सिन्निन्त्य चिल्ताः । एभिनिंपिद्धाः । देवदर्शनोत्कण्ठया कल्येऽपि न भुक्ताः । अत उत्कण्ठिताः । परं वुभुक्षिताः । एतेपां किं दबः । सुन्दरं न कृतम्—यत्प्रथमतोऽप्यमी रुद्धाः । ममाग्रेऽपि वार्ता न कृता । तरुक्तम्—मिन्नन् ! देवस्य एप लागः केनाप्यपाकर्त्तं न शक्यते । मिन्नणा प्रोक्तम्—मम मोजनदानावसरो न पुनर्द्रव्यस्य । भट्टान् द्विज्ञान् सर्वानिपि पृथक् पृथक् याचध्वम् । तरुक्तम्—असाभिः ३० कथं गृह्यते । त्वयवानुमता यच्छन्ति । मिन्नणा व्याह्तम्—सर्वः कोऽपि यच्छत्, नाहं वेिच । मद्राद्या कञ्चः—कोऽस्मान् ग्रहीप्यति स कर्न्द्वीमवतु । मिन्नणा ततो व्याह्तम्—यदि मम भिणतं कुरुत, तदा वः कंदलं निर्वाहन्यामि । [२ऽ. एकेन ग्रामेण यदि रितं कुरुत ।] ततस्तेभ्यो जीर्णदुर्गप्रत्यासन्तं ग्रामं वितीर्य पट्टको विदारितः । सर्वः कोऽप्युपरि गत्वा समाधिना देवं वन्दितं लग्नः । तत्र—

[§] एतद्रन्तर्गतः पाठः Ps. आदुर्शे त्यक्तः ।

30 ;

- (१७) गम्भीरगेयभरगज्ञिरवो सुवन्नालंकारताररुहविज्ञुलयावयासो।
 दूराउ उन्नययरो सुवि तावहारी संघो घणु व घणदाणिमसेण बुद्धो॥
 मुत्कलापनं काव्यम्-
 - (१७६) स्वामिन्! समुद्रविजयात्मज! विश्वनाथ! न प्रार्थयेऽन्यदिह किन्तु तव प्रसादात्। एते मनोरथमयास्तरवो मदीयास्त्वदर्शनामृतरसैः सफलीभवन्तु॥

तत्र पूजारात्रिकादि कृत्वा मत्री सङ्घेन सह देवपत्तनं गतः । तत्र चन्द्रप्रभ-प्रभासादिषु तीर्थेषु महिमां कृत्वा सोमेश्वराभोगं विधाय धवलकं प्राप्तो मत्री ।

- (१७७) [†]लिखतु लिखतु धाता दुर्लिपिं भालभित्तौ भजतु भजतु सर्वोऽप्युग्रभावं ग्रहो वा। परमयमिह यावद्वस्तुपालः कृपालुर्ने भवति खलु कप्टं विष्टपस्यास्य तावत्॥
- (१७८) [†]या श्रीः खयं जिनपतेः पदपद्मसद्मा भालस्थले सपिद सङ्गमिते समेता। 10 श्रीवस्तुपाल! तव भालनिभालनेन सा सेवकेषु सुखमुन्मुखतामुपैति॥
- (१७९) [†]पाणिप्रभापिहितकल्पतरुप्रवालश्चौल्लक्यभूपतिसभानलिनीमरालः । दिक्चक्रवालविनिवेशितकीर्त्तिमालः श्रीमानयं विजयतां सुवि वस्तुपालः ॥
- (१८०) [†]सौरभ्यमालगुणमालतमालका…व्योमान्तरालकृतफालयद्योमरालः । जीमूतकालरिपुकीर्त्तिमृणालिनीनां श्रीवस्तुपाल विजयी चिरकालमेधि ॥

-एवं कवीनां तत्र वाक्यानि ।

§१२५) इतो [Ps. सहुं सम्मोज्य, वस्नादिना सत्कृत्य च] वसाह आमडतन्जं सा० आसपालं आहूयो-वाच-भोः! त्वं वसाहपुत्रः (P वसाहमुख्यः) सङ्घमुख्यस्तव शत्रुञ्जये किं लग्नम् श द्रम्म चत्वारिंशत्सहस्नाणि (४००००), रैवतके त्रिंशत्सहस्नाणि (२००००)। देवपत्तने किं १। तेनोक्तम्-तत्रास्माकं तीर्थेऽधिकतरम् १। मित्रणा व्यतिकरः श्रुतः। यद्वरुणा व्राह्मणेनोक्तम्-त्रियमेलके स्नानं तदा स्थात्, यदा पूर्वतीर्थव्ययप्रायित्रेचे 20 लक्षं द्विजेभ्यो दुग्येन प्रक्षाल्य ददासि। तेन स्वीकृतम्। मित्रणा प्रोक्तम्-शत्रुञ्जय-रैवतकस्य प्रायिश्चित्रग्राहके मित्र सिति द्विजानां कथं वितीर्णम् १। यदि दण्डियप्यामि तदा जनापवादः। परं त्वमदृष्टव्यमुखः। तव पित्रा एका कोटीः, ८ लक्षाः (Ps. पोडश लक्षाः) धर्माव्यये कृताः। त्वमेवं कुरुपे। त्वमपाङ्कयोऽतःपरं सङ्घवाद्यश्च । इत्यिभिधाय विसृष्टो जनः। [Ps. स मित्रचरणयोः पितत्वा लक्षद्वयं तीर्थेषु वितीर्थ सङ्घमध्येऽभूत्। विप्राणां नामानि न गृह्णाति। मित्रिणा अन्येऽपि सङ्घलोकाः सम्भूष्य सम्भूष्य प्रहिताः।]

§ १२६) [१एकदा देवपत्तनात्पतितान्वया ईयुः । मित्रणोक्तम्-देवो भव्यरीत्या पूज्यमानोऽस्ति १ । तैरु-क्तम्-न । कथम् १-

(१८१) नादत्ते भितं सितं सचिव! ते कर्पूरपूरं सारन् कौपीनेऽपि च कुप्यति प्रश्चरसौ शंसन् दुक्त्लादिके। दिग्धो दुग्धरसैर्जलेषु विमुखः श्रीवस्तुपाल! त्वया कर्पूरागरुमोदितः पशुपतिनों गुग्गुलं जिघति॥

तेपां सहस्रा दश दत्ताः।

[†] पुतानि पद्यानि Ps. आदुर्शे त्यक्तानि । 🖇 पुतदुन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदुर्शे पुवीपलभ्यम् ।

15

20

25

30

§ १२७) एकदा मत्री तेजःपालो भृगुपुरमायातः । तत्र श्रीम्रुनिसुत्रतचैत्याचार्यैः श्रीरासिल्लसूरिभिरुक्तम्⊸ मत्त्रिन्! सन्देशकमेकं शृणुत । आदिक्यताम् । अद्य पाश्चात्ययामिन्यां दृद्धा युवत्येका समेत्य प्राह−

(१८२) तेजःपाल! कृपालुधुर्य! विमलप्राग्वादवंशध्वज! श्रीमन्नम्बडकीर्तिरच वदति त्वत्सम्मुखं मन्मुखात्। आजन्मावधि वंशयष्टिकलिता श्रान्ताऽहमेकाकिनी वृद्धा सम्प्रति पुण्यपुञ्ज! भवते सौवर्णदण्डस्पृहा॥

इत्युक्ते मित्रणा देवकुले देवकुलिका ७२ सिहते दण्ड-कलशाः सुवर्णमयाश्रकार । तसिनकारिते तैरेव उक्तम्-

(१८३) कं कं देशमहं न गतः कौतुकलोभाविष्टः। त्यागी तेजः पालादपरः कोऽपि न दृष्टः॥

10 § १२८) अथैकदा एकोदिनयोगी गले सरावं वद्धा मित्रणमायातः । पृष्टम् । देव ! द्वात्रिंशत्सहस्नाः श्रीपत्तने नृपवेदमित देयाः । त्वां संस्मृत्यायातः । मित्रिणा सहस्र १० दापिताः । श्रीस्तम्मे भृगौ गत्वा अन्यान् द्वादशसहस्नानानीय चिन्तितम्-याञ्चयान्ये न भविष्यन्ति ।.....अग्रेऽपि गृहीत्वा पुनरिप याचन् न लञ्जसे १ । तेनोक्तम्-देव !

(१८४) हृदि वीडोदरे विहः खाभावादुत्थितः शिखी। इति मे दग्धलज्जस्य देही देहीति का त्रपा॥

मित्रणा श्रुत्वोक्तम्-कियन्तोऽविशिष्यते?। देव! दश सहसाः; द्वादश मिलिताः। त्वां विना शेपेभ्यः को विमोचयित । मित्रणा दश दापिताः। पुनरुक्तम्-निर्वाहं कथं करिष्यसि?। देव! काष्ट्रगणन्यादाय वर्त्तिष्ये। मित्रणा सहस्राप्टकं निर्वाहाय वितीर्थ प्रहितः।

§ १२९) कोऽपि विप्रो मित्रसभायामागतः । मित्रणा उपवेशित इतस्ततो विलोक्य ऊचे -(१८५) अन्नदानैः पयः पानैईमिस्थानैश्च भूतलम् । यञासा वस्तुपालेन रुद्धमाकाचामण्डलम् ॥

क्रुत्रोपविश्यते ? । पुनर्वदेति सभ्येरुक्तं नववारमुक्तं खिन्नः । नव सहस्रा दत्ताः § ।]

§ १३०) अथैकदा वामनस्थलीवास्तव्येन यशोधरेणोक्तम्-

(१८६) श्रीवस्तुपाल तव भालतले जिनाज्ञा वाणी मुखे हृदि कृपा करपङ्कजे श्रीः। देहे सुतिर्विलसतीति रुषेव कीर्तिः पैतामहं सपदि धाम जगाम नाम॥

सहस्र १० दत्तिः । पं० माधवोक्तिः-सरस्वतीसङ्गतकान्तमूर्ति.....॥

द्रम्मसहस्र ४० दत्तिः।

§ १३१) द्वितीययात्रारम्भे श्रीनरचन्द्राचार्येरुक्तम्-

(१८७) लिक्ष्म! प्रेयसि! केयमास्यशितिता वैकुण्ठ कुण्ठोऽसि किं? नो जानासि पितुर्विनाशमसमं सङ्घोत्थितैः पांशुभिः। मा भीर्भीक्! गभीर एव भविताऽम्भोधिश्चिरं नन्दतात् सङ्घेशो ललितापतिर्जिनपतेः स्वात्राम्बुक्कल्यां सृजन्॥ (१८८) गौरी रागवती त्विय त्विय वृषो बद्धादरस्त्वं पुनभूत्या त्वं च समुद्धसद्ग्रणगणः किंवा वहु ब्रूमहे।
श्रीमन्त्रीश्वर! नूनमीश्वरकलायुक्तं च ते युज्यते
वालेन्द्वं चिरमुचकै रचियतुं त्वत्तोऽपरः कः क्षमः॥

तदनु मन्त्रिणा पदोपवेशनं कारितम्।

पातालात्र समुद्धृतो वत वलि०। इदं कङ्कणकाव्यम्।

§ १३२) अथ पादलिप्तपुरे ललितादेवीश्रेयसे सरोऽकारयत् ।

(१८९) *पुण्डरीकनिवहैर्विराजितं पुण्डरीकगिरिराजसन्निघौ । वस्तुपालसचिवेन कारितं भाति यत्र ललिताभिषं सरः॥

10

5

(१९०) [†]दहनेन विनाशितं पुरा सचिवौ सचरितव्रताविमौ । अचलेश्वरनालिमण्डपं रचयामासतुरेनमर्बुदे ॥

(१९१) [†]वस्तुपालसचिवेन कारितं हैमदण्डकलशैः [सुशोभितम्]। [अर्बुदाद्रि]शिखरे मनोरमं नेमिमन्दिरमिदं विराजते॥

§१३३) एकसिन्नवसरे सुराष्ट्रायां सक्के वजित सित अग्रेसरेरेकािकिभिर्त्रतिभिर्वाटिकासु मार्गस्योपद्रवे कते 15 तपोधनिकेरेल्य मित्रणोऽग्रे रावा कृता । मित्रणोज्ञारके कृते अनुपमदेन्यग्रे कथापितम् —यद्य एकािकनां विहरणं न विधेयम् । अपरे सर्वेऽपि विहल्य गताः ।अनायाते अनुपमदेन्या नगोदरं वन्धोः समर्घविच(ह्री)रणं तेपां कारितम् । स्वयमवेलं भोजनार्थसुपविष्टा । मित्रणोक्तम्—यो गृहे लघुः स विह्वितेन नीयते । असािभः केनािप हेतुना वारितम् । इत्यं कियन्ति दिनािन निर्वाहं यासित । तया तत्कालं स्थालं त्यक्वोक्तम्—यद्भवतां वालत्वे जातं वित्कं विस्मृतम् । किं तत् । धवलक्के वसतामेकदा अवेलं तपोधनौ मार्गश्रान्तौ भवतां गृहे 20 समेत्य धर्म्मलाभोक्तिपूर्वं स्थितौ । तदा करुणभक्तािन.....समायान्ति । नापरं किमिप गृहे । सर्वः कोऽपि भ्रुक्तोत्थितः । अतः श्रुगुरेण नेत्रमीलनं कृतम् । श्रश्रुनीचैरवलोक्य स्थिता । युवामधोऽवनौ जातौ । ज्येष्टपत्ती-सिहता अहं कटिकापाश्यात्ये उपविष्टा । तपोधनौ अलन्धोत्तरौ गतौ । तदा युवाभ्यां यदुक्तं वित्कं न सरतः १— चिगसाकं जीवितम् । भृदङ्ग (। वपोधनौ अलन्धोत्तरौ गतौ । तदा युवाभ्यां यदुक्तं वित्कं न सरतः । यद्यवितिवं दत्ते तदा पाताले विद्यामः । अवेलमायातौ यती इत्यं न्याद्य गतौ । स कोऽपि क्षणो भविता 25 यत्र वयमपि किमिप कर्तुं क्षमा भविष्यामः । नृतं तद्भवतां विस्मृतम् । यद्य ऋद्वं प्राप्य ईद्यं विम्यत । भवतां ददतामेव श्रेयः । इति श्रुत्वा मन्त्री हृष्टः । इत्युक्तम्—ममाग्रे तपोधनरावा केनापि न कार्या। ततो

दर्शनिभिः सर्वेः 'पद दर्शनमाता' इति उक्तम् । तसाः कङ्कणकान्यमिदम्-(१९२) पश्चादत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा नवा खलु । खहस्तेनैव यदत्तं तदत्तमुपलभ्यते ॥

§ १३४) तया विमलाद्रौ नन्दीश्वरोद्यापने नर्न्दीश्वरप्रासादः कारितः । तत्रोद्यापनं कृतम् । अत्रैव विमला-३० चलेऽनुपमसरः कारितम् । तसिन् भरिते केनापि चारणेनोक्तम्-

(१९३) भाऊ भरहिं काई सेत्तुंजि सर न काराविडं। जाणिउं ईणई ठाइ अमाइ अणुपमडी किउं॥

^{*} Ps. आदर्शे एवेदं पद्यं प्राप्यते । † एतत्पद्यद्वयं Ps. आदर्शे परित्यक्तम् ।

15

एकवीसवारभणनेनैकविंशतिसहसा दापिता मन्त्रिणा।

§ १३५) एकदा वटक्पपुरेऽलङ्कारिणः श्रीमाणिक्यसूरयः सन्ति । ते मित्रणा आकारिता अपि नागताः । मित्रणा खरूपेण कथापितम्─

(१९४) उत्सुत्योत्सुत्य गतिं कुर्वन् गर्वोदखर्वजडवुद्धिः। वटकूपकूपमध्ये निवसति माणिक्यमण्डूकः॥

पुनराचार्यैः प्रतिस्वरूपं प्रहितम्-

(१९५) गुणालीजन्महेतूनां तन्तूनां हृद्विपाटयन् । वंद्याद्वार्द्वेपरिस्फूर्त्या रे पिञ्जन ! विज्ञम्भसे ॥

मन्नी किञ्चिद्वपितः स्तम्भतीर्थपौपधागारं छण्टाप्यैकत्र वस्तु द्ध्ने । आचार्यास्तद्नु समायाता मिलिताः 10 मन्त्रिणः । उक्तं च-मन्त्रिन् ! सङ्घभारोद्धारधुरीणे त्विय कथमसाकं पौपधागारे उपद्रवः । मन्त्रिणोक्तम्-पूज्या-नामनागमनमेव हेतुर्नान्यत् । पुनः सर्वमप्पितम् । संघार्चासमये तैर्व्याहृतम्-

(१९६) एकं वासः सुरेद्यैः कृतसुकृतदातैर्जन्मकाले जिनानां दत्तं दीक्षाक्षणे वा ध्वजवसनमथो एकमेवाम्वरं च । सूर्यादीनां ग्रहाणां पुनरिप विधिना दत्तमस्मिन् क्षणेऽसौ सत्पात्रेभूरि यच्छन्नधरितसुरुपो नन्दताद् वस्तुपालः ॥

तदनु ते पुस्तकादि दन्त्रा क्षमित्वा च प्रहिताः।

§ १३६) तथा यत्र यत्र प्रासादं कारयति तत्र तत्र निधिः प्रकटीभवति । एकदा श्रीशत्रुझये शृङ्गोपरि कपर्दि-यक्षप्रासादः प्रारव्धः । पापाणान् विदार्थ मण्डयध्यम् । चिन्तितम्—कथमत्र निधिः प्रकटीभविष्यति । मूलादपि टङ्किकाभिविदार्थ पापाणे द्विधाकृते सर्वैरप्यन्तः सप्पे दृष्टः । तदा मन्त्री तत्रासीत् । खयमायातस्तदाश्चर्यविलोक-20 नाय । यावत्पञ्चति तावदेकावली हारः । करेण गृहीतः । सर्वैरपि दृष्टः । तत्र पपाठ कपर्दिस्तुतिम्—

(१९७) चिन्तामणिं न गणयामि न कल्पयामि कल्पट्टमं मनिस कामगवीं न वीक्ष्ये। ध्यायामि नो निधिमधीनगुणातिरेकमेकं कपिईनमहर्निश्चमेव सेवे॥ तदन्र प्रासादः कारितः।

§१३७) एकदा मित्रणा चिन्तितम्-यं श्रीशत्रुञ्जये कर्ममस्थाये मुच्यते स देवद्रव्यं विनाशयित । एवं 25 विचिन्त्य पौपधागारे श्रीविजयसेनस्रिपार्श्वे समेतः । गुरवो विन्दिताः । लघ्वाचार्याः श्रीउद्यप्रभस्र-योऽपि । ते तु मित्रणा सप्तशतयोजनानामन्तर्यः कोऽपि विद्वान् तमानीय पाठिताः सन्ति । तपोधनानामि पञ्चिवंशितिनमञ्जकार । तपोधनमेकं दृद्धं शान्तं नमस्कारपरावर्त्तनपरं दृष्ट्वाऽऽह—भगवन्! देवद्रव्येण रिक्षतेनोपेक्षितेन वा श्रेयः? । यदि रिक्षतेन तर्धमुं दृद्धं यति प्रसादीक्रुरुत । यं शत्रुञ्जये नयामि । अपरे तत्र भक्षकाः । गुरुभिरुक्तम् – युक्तमेतत् । वलादिप मानिता गुरुवः । तैस्तपोधनाग्रे प्रोक्तम् –यनमञ्जी विक्ति तत्का- 30 र्यम् । तेनोक्तम् –भगवन्! दीक्षा मया निस्तारार्थं जगृहे । तत्र द्रव्याशनेन कथं मिलनयामि । मित्रिणा प्रोक्तम् – एतन्मालिन्यं न किन्तु भूपणम्, चैत्यद्रव्यरक्षणेन । आग्रहं कृत्वा प्रहितः । स खद्र्शनमार्गस्थो देवलेखकं विलो- कयित । एकदा आदेशवर्त्तिभः खादकैरुक्तम् –भगवन् । यूयं तीर्थमठपाः । भवतां पार्थे देवनमस्थागताष्टकुरा व्यवहारिणश्चोपविश्वन्ति । एभिर्मिलनैर्जाणैश्चीवर्र्यन्यं न । वस्नमध्ये किं दूपणम् । मनोहराणि वस[ना]िन परि-

¹ B दीक्षा नमस्कारपरावर्तनार्थे गृहीता । 2 B दुर्शनाचाररतः ।

दथत । तानि ग्राहितः । तथाकृते पुनरुक्तम्—अनेके जना भवतां सह पर्यालोचं कुर्वन्ति, तत्कथमुद्गीते वदने भन्यम् १ । पश्चात्ताम्यूलं ग्राहितः । उक्तम्—अत्र भवतां भिक्षावेला तथा कम्मीस्थायान्तरायं स्थात्, रसवतीमा-स्थादयतां किं दूपणम् १ । तल्लोलुपः कृतः । भगवन् ! विलोकयत—पादेन चङ्क्रमणं भन्यं वा सुखासनेन १ । तमिष कारितः । एकदा सुखासनस्थः पालीताणके जनैः पश्चदश्यभिः सह गन्तुं प्रवृत्तः । मन्त्री कृतधौतवसनः कृतमुखकोशः पादचारेण सम्मुखो जातः । मन्त्रिणा पृष्टम्—केऽमी १ । अग्रेसरैरुक्तम्—असौ भवत्प्रहितो मठपः । 5 मन्त्रिणा सुखासनं स्थापयित्वा वन्दितः । उक्तम्—तले कार्यं कृत्वा वेगेन पादमवधारणीयम् । स लज्जितः । तत्रानश्चनमादाय स्थितः । उपर्याकारितोऽपि नायाति । उक्तश्च—मयाऽनशनं जगृहे । इयतां यतीनां मध्यादहं मन्त्रिणा प्रेपितः । ममाप्ययमाचारः । गुरूणां भवतां चाऽऽस्थं कथं दर्शयामि १ । अन्योऽत्र कार्यकर्ता वीक्ष्यः । उपरि गत्वाऽनशनं परिपाल्य दिवंगतः । मन्त्री तु यात्रां कृत्वा पुरमेत्य गुरूणां सकलं तद्वृत्तमाचल्यौ । [Ps. गुरुभिः शोक्तम्—माऽतः परं कोऽपि साधुश्रेत्यद्रव्यचिन्तां करोत् । एपोऽपि ईदृशो जातः ।]

§ १३८) अथ महं० अनुपमदेच्या १२९२ वर्षे पश्चमी-उद्यापनं कृतम् । तत्र समवसरणानि २५, श्रीशत्रुझय-तले वाटिका २२, रैवते १६, तेजलपुरे पौपधागार-कुमरसरःसहितं देवकुलम् । झीझरीआग्रामे प्रासादः, सरोवरम्, वापी च । लूणिगवसहीग्रासकृते डाक-डमाणीग्रामद्वयं दत्तम् । तपोधनोपकरणानि नाम्ना पात्राणि दोरु-झोली-डांडाप्र० ग्रामाणि । कोऽपि यात्राः १३ वक्ति ।

(अत्र B आद्रों एतद्वर्णनं विशेषविस्तरेण लिखितं लभ्यते; यथा-)

5

११२०) {तथा महं० अनुपमदेव्या १२९२ पंचमी-उद्यापनं कृतम्। तत्र २५ समवसरणानि पञ्चवर्णानि कारयित्वा श्रीस्रिस्यः प्रदत्तानि। एवं २५ महं० कुमारदेव्याः पञ्चविंशति महं० ललतादेव्या। तथा महं० आसराजवसही कारिता मा(पि?)तुः श्रेयसे च। महं० मल्लदेवश्रेयसे मं० ल्लणिगश्रेयसेऽचुंदे। तथा सप्तभागिन्यस्तासां श्रेयसे
सप्त प्रासादाः। तासां सखीनां श्रेयसे सप्त देवकुलिकाः कारिताः। श्रीशत्रुञ्जयतले वाटिका २२ जगन्नाथप्जाये
कारिताः। रैवते पोड्य। तथा श्रीतेजलपुरं प्रासाद-पौपधागार-कुमरसरःसहितम्। तथा झींझिरिआग्रामे प्रासादो 20
वापी सरश्च। अर्श्चदं ल्लणिगवसद्यां श्रीनेमिप्जाये डाक-डमाणी इति ग्रामद्वयं ददी। तथा तपोधनोपकरण १४ तेणां
नाम्ना दोरउ-ज्ञोली-डांडाप्रभृतीनि प्रतिग्रामाण्यस्थापयत्। एवं सर्वकीर्तनानि १२५००० विम्वानि शैल-पित्तलमयानि। १८ कोटि, ९६ लक्ष शत्रुञ्जयपदे। १२ कोटि, ८० लक्ष गिरिनारपदे। १२ कोटि, ५३ लक्ष अर्श्चदपदे।
९८४ पोसाल, ५०० सिंहासन दान्त-काष्टमय, ५०५ समवसरणानि पद्वस्त्रमयानि। तीर्थयात्रा १२; कोऽपि
१३॥: वक्ति। ७०० त्रक्षशाला। ७०० सत्राकार। ७०० तपस्तिनो मठाः। मसीति ८४, गढ ३२, सरोवर 25
६४, वावि ७००। माहेश्वरेषु प्रासादेषु, ३ सहस्र विडोत्तर नृतन जीर्णोद्धार, १३०४ जैन प्रासाद शिखरवद्ध,
२३०० जीर्णोद्धार, २१ आचार्यपद। सरस्रतीभांडागार ३-भृगुपुरे स्तंभतीर्थे पत्तने च। १८ कोडि द्राम दण्डकलश-पुस्तकपदे। १५०० तपोधन दिनं प्रति विहरणउं। ५०० त्राह्मणमोजनम्। १०० कार्पटिकमोजनम्।
दक्षिणसां श्रीपर्वत, पश्चिमायां प्रभास, उत्तरस्यां केदारु, पूर्वस्यां वाणारसी इति भूमिमध्ये। एवं सर्वाङ्क ३
कोटिशत, ३२ कोडि, ८४ लक्ष, ७ सहस्र, ४ शत, १४ लोहिडिआ अथवा इका आगला द्राम मीमप्री०।}। । 30

§१४०) अथ भीमे [राज्ञि] दिवंगते राणकलवणप्रसादः पुत्रयोवीरम-वीरधवलयोर्मध्यादेकमपि राज्ये उपवेशियतुं न शशाक । आद्यः पत्तनपरिग्रहस्य प्रियः, द्वितीयस्तु दानी योद्धा । अथैकदा राणकवीरधवलेन ताम्यूलो [वं]ठायापितः । तेन विलोक्य तटे [क्षिप्तः] एवं द्वित्रिवेलम् । राज्ञा पृष्टम्-किमरे । त्यजिसि । स्वामिन् । मध्ये कृमयः कृष्णवर्णाः । राणकेन मत्रिणोऽग्रे उक्तम्-यदहमराजापि छ्त्या नृपः कृतः ।

¹ B कथमुद्गानसत्यं (?) वदने भन्यम् । पु॰ प्र• स॰ 9

§ १४१) तदनु विश्वमल्ले किञ्चिद् यौवनाभिग्रुखे सित धवलककात् सर्वमाप्टच्छ्यं, मित्रणं पाश्वात्ये विग्रुच्य, तेजःपालं सहादाय पत्तने गत्वा राणकं वीरमं च ग्रुत्कलाप्य महता परिकरेण गङ्गां प्रति चचाल । ततो मतोडा-विश्वे दानादि दत्त्वा कुण्ड्यन्तिविद्या । सा द्विजैवेल्यमानापि न ग्रुडित । तेजःपालेनोक्तम्—कापि हृदि आर्त्तः । राणकेनोक्तम्—राज्यं वीरमस्य भविष्यित वीसिलको रुलिप्यित । मम करे जलं क्षिप—वीसलस्य राज्यं मया इदेयम् । मित्रणा तथा हस्ते जलं क्षिप्तम् —एपा चिन्ता न विधेया । तदनु कुण्डी मग्ना । तेजःपालः सुकृत्यं विधाय क्रमेण पत्तनमायातः । इतो राणकस्तेजःपालमागतं श्रुत्वा सशोकः सभायाग्रुपविष्टः । तावता तेजःपालेन विश्वमल्लस्योत्तारके राणकपद्व्यास्तिलकं कृतम् । चादित्रवादनं श्रुत्वा राणकेन पृष्टम्—िकिमिदं विश्वमल्लस्योत्तारके । इतस्तेजःपालो नृपगृहे प्राप्तः । राणकेनोक्तम् —तेजलः । वादित्रवादने को हेतः । देव! विश्वमल्लः स्योत्तारके । इतस्तेजःपालो नृपगृहे प्राप्तः । राणकेनोक्तम् न्तेजलः भवति त्वया वा १, मया न कथं । दवं तु 10 पष्टस्य पदातिरसि । अद्य स्यसामिग्रुतो राणकः कृतोऽस्ति । कल्ये राजानं करिष्यामि । एवं गोधिय-तेजपालौ विवदानौ राणकेन निपिद्यौ । वार्ताः पृष्टा सुतस्यौद्धदेहिकं कृतम् ।

श्रीवीरधवले दिवंगते मित्रणा वस्तुपालेनोक्तम्-

(१९८) आयान्ति यान्ति च परे ऋतवः क्रमेण जातं तदेतदतुयुग्ममगत्वरं तु । वीरेण वीरधवलेन विना जनानां वर्षा विलोचनयुगे हृद्ये निदाघः॥

> अत्र अत्र अत्र अत्र अत्र मोजदीनमातुः सम्वन्धः ।

[एप सम्बन्धः ${f P}$ सञ्ज्ञके आदर्शे लिखितो नास्ति; परं ${f B}$ सञ्ज्ञके आदर्शे उपलभ्यते । तत. एवात्रावतार्यते । यथा-]

§१४२) {इतश्र सुरत्राणमाजेदीनमाता कादिकश्र हजयात्रां कर्तुं पत्तनमायातौ । मित्रिणा प्रवेशोत्सवपूर्वकं प्राचुणकं विधाय सम्प्रेपणपूर्वकं स्थाने स्थाने, मित्रवचसा गौरवमनुभवन्तौ हजयात्रां कृत्वा प्रत्याद्दत्तौ । प्रवेशपूर्वकं भोजितौ । मात्रोक्तम्—त्वं मत्सुतः सुरत्राणादप्यिकः । किमिप याचस्य । मातः! नागपुरप्रत्यासन्ने मकर्डाणा 20 ग्रामे पापाणस्य स्वनिरक्ति । तस्याः प्रक्तरत्रयं स्वमातुः सकाशाद्याचे । तयोक्तम्—तथा करोमि, यथा मे सूनुः समर्पयिष्यति । तथा उपायने तेजी ५०० प्रहितानि सार्द्धम् । इतः सुरत्राणः जनन्याः सम्मुखमाययौ । गुरुरुक्तः सुखेन यात्रा कृता । वस्तुपालप्रसादेन । हिंदुकं किं प्रशंसयि । तेनोक्तम्—तस्य भक्तिः सा या एक्या जिह्वया वक्तं न पार्यते । इदमुपायनम् । तदचलोक्याह—स किं याचते । प्रक्तरत्रयम् । एवं त्वं कथयन् हरामं जनयि । किं करोमि १—तस्य सा भक्तिर्ययाऽहं वलादि कथाप्ये । सुरत्राणेन फलहीत्रयमिपंतम् । मार्गे 25 रहकलानि भज्यन्ते । मित्रिणा कथापितम्—यद् रहकलेपु उभयोरिप पक्षयोरखण्डधारा घृतस्य देया । एवं महोत्सवे जायमाने फलहिकाः श्रीशत्रुङ्खये प्राप्ताः । मत्री संयं संमील्य यात्रार्थमुपि गतः । तत्र संवसाङ्गलिपूर्वं विज्ञप्तिकां चक्रे—संवस्त्ववधारयतु । एप मे मनोरथः कदापि सिद्धि मा प्रयातु । यतः पूर्वतीर्थस्थानर्थे जाते एतद्विम्वमुपविञ्ञति । एतद्युगान्तेऽपि मा भूयात् । परं न ज्ञायते । कदाचित्कालयोगेनानर्थः स्वात्तदिदं विम्यं श्रीसंघेन प्रसादं विधाय स्थापनीयम् । संघसाङ्के क्षिप्तमित्ति । एवम्रक्त्वा एकां युगादिदेवस्य फलहिकाम्, एकां उपित्रक्ति, एकां कपदेंः—एवमिभिधाय भूमिगृहे व्यधात् ।}

¹ B सुत्कलाप्य । 2 B मागतोडा । 3 एतद्वाक्यस्थाने B 'कृतं एतत् ।' 4 B बुडिता । 5 B क्षोकचान् । 6 B नृपसमन्यायातः । 7 B पृष्टम् । 8 B तेजःपाल । 9 P भविष्यति । 10 P 'कथं' अम्रे 'त्वया' शब्दोऽधिकः । 11 B वार्ता पृष्टा । 12 B विद्धे ।

्रे१४३) एवं पुण्यानि राजकार्याणि कुर्वतोरेकदा राणक¹ळ्णप्रसादेन तेजलं उक्तः—मन्तिन्! को राजा कार्यः १ । वीरधवलः खर्ग्यामी जातः । तत्पुत्रः १ शिशुः । यदि तव विचारे एति तदा वीरमस्य राज्यं दीयते । मन्त्रिणा उक्तम् —स्वामिन्! मया खखामिस्नोर्वीसलसाङ्गीकृतमस्ति । राणकः प्राह्—यद्यप्येवं तथापि मद्राक्यं मन्यस्य । मन्त्रिणा मानिते, रात्रौ वीरमः समेत्य राणकं लक्त्या प्रहृत्य, प्राह—भो डोकरं! अद्यापि राज्याशां न सुश्रिसि?, किं दितीयमपि न्रियमाणं अपेक्षसे १ । एवसुक्त्या गतः । राणकेन चिन्तितम्—अनेन कीलिकामङ्गो न प्रतिक्षितः । स कोऽप्यस्ति यः प्रातःप्रह्रमध्ये वीसलमानयति । नागडेन भट्टपुत्रेणोक्तम्—अहं धवलके रात्रिपाश्चान्त्रमहरे यास्यामि । वित्तु करभीमाल्ह्य समेष्यिति । स लेखं दत्त्वा प्रहितः । वीसलं सुप्तसुत्थाप्य प्राह—यदि त्वं राजा तदा मे किं १ । श्रीकरणम् । तिर्हे चल । करभीमाल्ह्यायात् । प्रातः राणकः सकलपरिग्रहं सम्मील्य सहस्रलिङ्गोपकण्ठे उत्तारकं दत्त्वा स्थितः । वीसलेन राणकस्त्रतेत्व नमस्कृतः ।

ततो राणकेन तिलकं कृत्वा¹⁸ तूर्यनादपूर्व¹⁴ धवलगृहे नीतः, सिंहासने उपवेशितश्र । वीरमः –िकं १ किं १ याव-10 द्वक्ति¹⁵ ताविन्नखानिस्वनपूर्वकं श्रीवीसलदेवाज्ञा श्रुता । अश्वसहस्रेद्वीदशिमः समं¹⁸ पृथग् भृत्वा स्थितः । इतस्तेजः-पालबुद्ध्या राज्ञाऽचिन्ति—वृद्धस्य वीरमोपिर मोहोऽस्ति, मा कदाचिदेतद्विघटयतु—इति विमृत्त्य वृद्धके विपं क्षिप्त्वा सन्ध्यायां राणकपार्श्वे गन्तुं प्रवृत्तः । राणकेन तु चिन्तितमस्ति¹⁷—मया विरूपं कृतम् । अद्यापि राज्यं प्रातवीरमस्य दासे । उक्तम्—द्वारे कोऽपि विशन् रक्ष्यः । इतो राजा द्वारस्थैिनपिध्यमानोऽपि मध्ये प्रवित्य राणकं प्राह—तात ! अमृतमिदं सत्वरं पिवत¹⁸ । वत्स ! तव विचारे आयातम्²⁰ १। आयातं²¹ तद्यीनीतम् । राणकेन उक्तम्²²—त्वया राज्य- ¹⁵ निर्वाहो भावी²³—एवसुक्त्वा पीतम् । तत्कालं दिवंगतः । तेजःपालस्य "राजस्थापनाचार्यः" इति विरुदं जातम् ।

§१४४) इतो मित्रबुद्ध्या श्रीवीसलदेवेन तृतीये दिने वीरमो भाणितः—यन्मे वीरमस्तातसमः। अतो यदि विक्तः तदा राज्यं मुश्चामि, सेवां करोमिं । तद्गु प्रधानैर्महाथरेश्रोक्तं वीरमं प्रति—देव! राजा मान्यः । यस्त्वेवं विक्तः । वीरमः प्राह—यदि मे नगरपञ्चकं नृपो ददाति—एकं प्रह्लादनपुरं, द्वितीयं विद्यापुरं, तृतीयं वर्द्धमानपुरं, चतुर्थं धवलकं, पञ्चमं पेटलाउद्रपुरं। एतानि पञ्च पुराणिः, तथा वर्षं प्रति द्रम्म लक्ष ३। एवं २० यदि नृपो मन्यते तदा प्रणामं करोमि। नृपेण मानितम्। मित्रणा तत्कालं कत्नगरपरिसरे पञ्च ग्रामाणि तन्नामा वासितानि। वीरमो मिलितः। नृपं प्रणम्य वीरमो वाटके स्थितः। वीसलदेवस्य राज्यं निष्कण्टकं जातम्। नागडस्य श्रीकरणं जातम् । मित्रिणो ज्यापारो निष्टतः। नृपेण "वृद्धामात्या" इति दत्तमानाः सेवां क्वर्वाणाः सन्ति।

(१९९) सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्गसिंहेनापि मनीषिणा। विसूत्रेऽपि कृता तेषां वस्तुपालेन मन्त्रिणा॥*

एकदा वीरमेन नगरपञ्चकं याचितम् । राज्ञा ग्रामपञ्चकं दर्शितम् । तेनोक्तम्-नगराणि याचे । राज्ञोक्तम्-25 एपु दत्तेषु किमविशिष्यते ? । तर्हि न स्थास्ये । त्रज । स सपरिच्छदो मालवं प्रति त्रजन् , राज्ञा जावालिपुरीयस्य चाचिगदेवस्य पार्श्वात् सहंवाडीघाटसमीपे मारितः ।

§ १४५) इतश्र-अर्बुद्चैत्ये गजशालां वीक्ष्य यशोवीरेण मित्रणा पृष्टम्³ –भवतां पूर्वजः कः श्रीकरणः १ । पृष्टम्–कथम् १ । श्रीकरणं विना गजशाला सत्या न भवति³ । तद्तु तेजःपालेन गजः समानायितः । तं

[ा] P 'राणक' नास्ति । 2 B तेजःपालो ज्याहृतः । 3 राज्यं कस्य दीयते । 4 B सुतस्तु । 5 B समेति । 6 B नास्तीदं वाक्यम् । 7 B मम वाक्याद् वीरमस्यास्तु । 8 B होहुत्कर । 9 B म्नियन्तं । 10 B 'रात्रि' नास्ति । $\frac{1}{2}$ एतद्-न्तर्गतपंक्तिस्थाने B आद्दें "तद्दु करभीमधिरुह्य चिलतः ।" इत्येव पाठो विद्यते । 11 B चतुरकं । 12 B वीसलः समायातः । राणकं नमस्कृत्य यावदास्ते तावद् । 13 B विधाय । 14 B अपुरस्सरं । 15 विधत्ते । 16 B सह । 17 B 'अस्ति' नास्ति । 18 B रक्षणीयः । 19 B कुरुत । 20 B समायातं । 21 B आयातेनानीतं । 22 B ज्याहृतं । 23 B मविष्यित । 24 B कथयति । 25 नास्तीदं पदं B । 26 B मानयोग्यः । 27 B अभिद्धाति । 28 B अपरं । 29 B नगराणां परि । 30 B नाम्तीदं वावयं । * P आद्दें एप श्लोको नास्ति । 31 B उक्तं । 32 B गजदाला न घटने ।

नृपस्योपायने कृत्वा, एककोटि १६ लक्ष, वर्षं यावत् चडावके कृत्वा गृहीतम् । व्ययस्ताद्दगेव । केनापि कविना नृपं प्रति प्रोक्तम्-

(२००) एतावतैव वीसल! पदय प्राग्वाट-लाटयोभेंदम्। एक इभानुपनिन्ये प्रथमश्चरमस्तु खरमेकम्॥

- 5 तेजःपालेन स हस्ती ढौकने कृतः । लाटेन समराकेन वेसरश्रेकः । द्रम्म लक्ष ३६ त्रुटौ, द्वितीयवर्षे श्रीकरणं मुक्तम् ।
 - (२०१) बौद्धैर्वोद्धो वैष्णवैर्विष्णुभक्तः, शैवैः शैवो योगिभिर्योगरङ्गः। जैनैस्तावज्ञैन एवेति कृत्वा सत्त्वाधारः स्तृयते वस्तुपालः॥

११४६) सं० १२९८ वर्षे मन्त्री नृपं मुत्कलाप्य चिलतः । नागडस्तु राणकसार्थे मण्डलीं गतः। तत्र 10 तपोधनसाराविषये शिक्षां दत्त्वा अङ्केवालीआग्रामे०......पासादः। सरः। सत्रशालात्रयं च कारितम्। (В सङ्ग्रहे अत्र एतदेव वर्णनं किञ्चिद्विस्तारेण लिखितं लभ्यते। यथा-)

{संवत् १२९८ वर्षे जातकेनायुपोऽन्तं परिज्ञाय नृषं ग्रुत्कलापयामास-देव! क्षम्यताम्, यत्स्वामिन ऊणं खूणं वा कृतः । राजा-हे मिन्नन्! कथमेतत्? । देवसेवाये यास्वामि । मिन्निन्! त्वं मदीय[तात]वीरधवलसमोऽतस्त्वां कथं प्रेपये । कदाचिदेयद्रम्माणां शङ्का भवतिः तदा न कार्यम् । मदीयं शरीरं तवायत्तम्, द्रव्यः किम्, 15 द्रम्माणां पत्रं विदारियण्यामि । परं मा त्रज । मन्नी प्राह-देव! द्रम्माणां किम्?, द्रम्मा वाह्याः । देहं तु तव पिण्डैः पोपितम् । परमवसाने प्रत्यासन्ने देव! तीर्थसेवा युक्ता । अश्रुपातपूर्वं राज्ञा वीटकं दत्तम् । मन्निजनान् क्षमियत्वा श्रीवस्तुपालो महता परिच्छदेन सह श्रीशत्रुञ्जयोपि चचाल । इतो राणकनागडो मन्निप्रयाणं श्रुत्वा सम्प्रेपितुं चचाल । मंडल्यां गतेन मन्निणाभिहितम्-राणक! राजकार्याणि सीदन्ति । यूयं प्रसादं कृत्वा वलत । तेनोक्तम्-तव गृहे वहुरस्मि । तवोपजीवनेन इयतीं ऋद्विम् । करणीयं किमप्यादिश्च । मन्निणोक्तम्-

20 (२०२) न कृतं सुकृतं किश्चित्सतां संस्मरणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥
राणकः प्राह-परं किश्चन मनसि दुष्यति, ममाग्रे किं नोच्यते । देव । मिय गते सित एते व्रतिनो दुःखिनो
भविष्यन्ति । मिश्चन् । इत्थं कथमुच्यते । यद्भवतां पार्थात् सुखिनः करिष्यामि । परिमयं चिन्ता न विधेया ।
इति राणको मुत्कलाप्य वलितः । मन्त्री अंकेवालिआग्रामे गतः । गुरवस्तत्रोक्ताः-भगवन् । मेऽनशनं प्रयच्छत ।
तत्र तेजःपालानुमत्या गुरुभिरनशनं प्रदत्तम् । मन्त्री क्षमित-क्षामणापूर्वं पश्च परमेष्टिनः स्परन् स्वर्गं गतः । संस्का25 रादनु तेजःपालेनास्थीनि श्रीशत्रुञ्जये प्रहितानि । तत्र स्वर्गारोहणप्रासादः कारितः । अंकेवालिआग्रामे प्रासादः
कारितः । सरोवरं च सत्रशाला च । तत्र धर्मस्थानत्रयं कारितम् । तेजःपालो यात्रां विधाय पत्तने समायातः । }

§ १४७) व्यापारे वर्ष १८ तद्तु वइठा ऊठि । तथा १२०८ वर्षे महं० तेजःपालेन खर्गमनाय राजा [Ps. वीसलदेवः] मुत्कलापितः । तदा द्रम्मा लक्ष २७ देया आसन् । राज्ञा मुक्ताः । [तथा राज्ञा द्रम्मा लक्षत्रयं धर्मव्ययाय वितीर्य*] तेजःपालः प्रहितः । श्रीसङ्घं क्षमयित्वा श्रीशङ्खेश्वरोपिर चलितः । चन्द्रोमाणा- 30 ग्रामे गतः । †जातकमवलोकितम्-यचन्द्रोमाणाग्रामे पाश्चात्यप्रहरे व्ययः । मन्त्री अनशनमादाय दिवमगमत् । तत्र कीर्त्तनत्रयम् ।

§ १४८) ई अथ मित्रिणि दिवं गते श्रीवर्द्धमानसूरयो वैराग्यादाम्बिलवर्द्धमानं तपः कर्त्तुं प्रारेभिरे । श्रीशङ्केश्वर-पार्श्वनाथाभिग्रहं च जगृहुः । यत्तपिस सम्पूर्णे देवं नमस्कृत्य पारणकं करिष्यामः । सम्पूर्णे जाते देवं नन्तुं

 $^{1\} B$ दम्मान् विमुच्य । * Ps आदर्शे एवेतद्वाक्यं रुभ्यते । † एतर्पंक्तिस्थाने P 'पाश्चात्यिदने दिवंगतः' इत्येव संक्षिप्तः पाठः । $\ddagger B$ आदर्शे एतःप्रकरणं प्राप्यते ।

प्रस्थिताः । मार्गे श्रान्तास्तृपिता एकस्य तरोस्तले देवं नमस्कृत्यानशनाद्विनष्टाः । शङ्केश्वरेऽधिष्टायको जातः । ज्ञानेन मन्त्रिणो गतिमन्वेष्टुं प्रवृत्तः । अजानानो महाविदेहे श्रीसीमन्धरं नमस्कृत्य पत्रच्छ-भगवन् ! वस्तुपाल-जीवः क गतः । खामी आह-अत्रैव पुष्कलावतीविजये पुण्डरीकिण्यां कुरुचन्द्रो नाम नृपो जातः । स तृतीयभवे सेत्स्यति । अनुपमदेवीजीवः श्रेष्टिनः सुता अत्रैव विजये जाता । साप्टवार्पिकाऽसामिर्दाक्षिता, देशोनां पूर्वकोटिं तपस्ताःचा सेत्स्यति । इति तेन व्यन्तरेणात्र भरते वस्तुपालानुपमदेव्योर्गतिः प्रकटीकृता । ॥ इति वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः ॥ (एतत्प्रवन्धप्रान्ते P सञ्ज्ञके सङ्घहे निम्नगतं विशेपवर्णनं लिखितं लभ्यते-) § १४९) अत्राग्रेतनः प्रचन्धः कथनीयः । वीरधवलेन वामनस्थल्यां जयतलदेविभ्रातरौ साङ्गण-चाम्रुण्डराजौ मारितौ । युद्धे जाते १४ शततुरङ्ग स० ५ जजी (१) (२०३) जीतउं छहि जणेहिं सांभिल समहरि वाजीइ। 10 विहं भुजि वीरतणेहिं चिहं पगि ऊपरवटतणे ॥-इति चारणोक्तिः। §१५०) गोधाधिपो घ्रघलमण्डलीकातेजःपालेन वद्धः धवलकपुरसभायामानीतः । तदा सोमेश्वरोक्तिः-(२०४) मार्गे कईमदुस्तरे जलभृते गर्त्ताशतैराकुछे खिन्ने शाकटिके भरेतिविषमे दूरे गते रोधिस। शब्देनैतदहं व्रवीमि महता कृत्वोच्छितां तर्जनी-15 मीदक्षे गहने विहाय धवलं वोढुं भरं कः क्षमः॥ § १५१) एकदा मत्री स्तम्भने आगतः । तत्राचार्येरुक्तम्-(२०५) असिन्नसारसंसारे सारं सारङ्गलोचना। मन्त्री रुप्टः । श्टङ्गारिण एते । अप्टमे दिने-यत्कुक्षिप्रभवा एते वस्तुपालभवाद्याः॥ 20 दशसहस्रदीनारा दत्ताः । न गृहीताः । भृगुपुरे लेप्यप्रतिमास्थाने अन्या कारिता तद्रव्येण । § १५२) एकदा मित्रिभिः पिततं दृष्टा चिन्तितम्-(२०६) अधीता न कला काचित् न च किञ्चित्तपः कृतम्। दत्तं न किञ्चित्पात्रेभ्यो गतं च मधुरं वयः॥ (२०७) आयुर्योवनवित्तेषु स्मृतिशेषेषु या मितः। सैव चेजायते पूर्वं न दूरे परमं पद्म्॥ १५३) सङ्घप्रारम्भे नरचन्द्रस्ररिभिरुक्तम् 25 (२०८) चौलुक्यः परमाईतो नृपदातस्वामी जिनेन्द्राज्ञ्या निर्ग्रन्थाय जनाय दानमनघं न प्राप जानन्नपि। सम्प्राप्तिखिदिवं खचारुचरितैः सत्पात्रदानेच्छया त्वद्रपोऽवततार गूर्जरस्वि श्रीवस्तुपालो ध्रुवम् ॥ मन्त्री यात्रायां रूपमं प्रति पपाठ-"आसं कस्य न वीक्षितं०॥" 30 (२०९) यहाये चूतकारस्य यत् प्रियायां वियोगिनः । यद्राधावेधिनो लक्ष्ये तद्ध्यानं मेऽस्तु ते मते।। रैवते नेमिं प्रति-(२१०) कल्पट्टमस्तरुरसौ तरवस्तथाऽन्ये चिन्तामणिर्मणिरसौ मणयस्तथाऽन्ये। धिग जातिमेव दहरो वत पत्र नेमिः श्रीरैवते स दिवसो दिवसास्तथाऽन्ये॥

15

25

§ १५४) एकदा मोजनी(दी)नसैन्यं ढिछीतश्रिलतम् । प्रयाणक ४ जातानि । राणकस्य सुद्धिर्जाता । वस्तुपाली वीटकं गृहीत्वाऽश्वलक्ष १ युतोऽर्चुदिगिरौ गत्वा हतवान् । भग्नम् । राणकेन परिधापितः । उक्तम्-"त्वमेव मे गुणवान् ।।"

पूनडसा नागपुरीयो मिलिस मिलितः । तत्र-''अद्य मे फलवती पितुराञा०'' । श्रीयुगादिफलही, कपिई-5 पुण्डरीक-चक्रेश्वरी-तेजपुरविम्वपार्श्वमूर्त्ति-फलही ५ खानित आनीताः ।......िढिछीत आगतस्य मिल्रणो हेमलक्ष १० राणकेन दत्ताः । तेन तत्क्षणमेव ब्राह्मणेभ्यो दत्ताः । तदा कान्यानि-

- (२११) निरीक्ष्य मन्त्रिन्! द्विजराजमेकं पद्मानि सङ्कोचमहो भजन्ति । समागतेऽपि द्विजराजलक्षे सदा विकासी तव पाणिपद्मः॥
- (२१२) उच्चाटने विविषतां रमाणामाकर्षणे खामिहृदश्च वर्रये। एकोऽपि मन्त्रीश्वरवस्तुपालः सिद्धस्तव स्फूर्त्तिमियर्त्ति तन्त्रः॥

नानाकेनाप्युक्तं नागरेण-

(२१३) एकस्त्वं भ्रुवनोपकारक इति श्रुत्वा सतां जिल्पतं लज्जानम्रशिराः स्थिरातलमिदं यद्वीक्षसे वेद्मि तत् । वाग्देवीवदनारविन्दतिलकः! श्रीवस्तुपाल ध्रुवं! पातालाद्दलिम्रद्दिधीर्षुरसकृन्मार्गं भवान्मार्गति॥

अत्रापि पोडशसहस्रदत्तिः ।

§ १५५) एकदा अनुपमा अर्चुदचैत्ये आगता सूत्रधारान् कर्म्मस्थायमन्दादरानाह-

(२१४) भूपभ्रूपल्लवप्रान्तिनिरालम्बिलिम्बिनीम् । स्थेयसीं वत मन्यन्ते सेवकाः खामिप श्रियम् ॥ तया पृ०—शीव्रं निष्यते स उपायः कः । तैः स्०ं निवेदितम्—ग्रासः द्विम(ग्र)णी क्रियताम् । कृतः । 20 पश्चानिष्पनः ।

(२१५) इतोऽव्धिः परितो मृत्युरितो व्याधिरितो जरा। जन्तवो हन्त पीड्यन्ते चतुर्भिरपि सन्ततम्॥

§ १५६) यशोवीरः प्रथमसङ्गमे श्रीअर्चुदे श्रीवस्तुपालं प्रति प्राह-

(२१६) श्रीमत्कर्णपरम्परागतभवत्कल्याणकीर्त्तिश्चतेः प्रीतानां भवदीयदर्ज्ञनविधौ नास्माकमुत्कं मनः। श्चत्वा प्रत्ययिनी सदा ऋजतया खालोकविस्रम्भणी दाक्षिण्यैकविधानकेवलमियं दृष्टिः समुत्कण्ठते॥

§ १५७) मन्त्री राजानं मुत्कलाप्य अङ्केवालीआग्रा० गतः सपरिजनः ।

(२१७) गुरुभिषक् युगादीदाः प्रणिधानं रसायनम् । सर्वभूतदयापथ्यं सन्तु मे भवरुग्भिदे ॥ (२१८) लब्धाः श्रियः सुखं स्पृष्टं मुखं दृष्टं तनूरुहाम् । पूजितं दर्शनं जैनं न मृत्योर्भयमस्ति मे ॥

30 तत्रानशने मित्रचिन्ता-

(२१९) सुकृतं न कृतं किश्चित् सतां संसारणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥ (२२०) यन्मयोपार्जितं वित्तं जिनशासनसेवया । जिनशासनसेवैव तेन मेऽस्तु भवे भवे ॥ इति वदन् मत्री वस्तुपा० दिवं ययौ । ततस्तेजःपाले दिवंगते लोकोक्तिः-

(२२	?) किं कुर्स्मः किमुपालभेमहि किमु ध्यायाम किं वा स्तुमः	
,	कस्याग्रे खमुखं खदुःखमेखिलं सन्दर्शयामोऽधुना ।	
	शुष्कः कल्पतरुर्यदङ्गणगतश्चिन्तामणिश्चाजरत्	
	क्षीणा कामगवी च कामकलशो भग्नो हहा दैवतः॥	
सं०] १३	०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।	5
_	A A A A	
(B:	सञ्ज्ञके आद्र्शे पुनरेतत्प्रवन्धान्ते निम्नगतानि चस्तुपालसम्वन्धिकाव्यानि प्राप्यन्ते-)	
(२२२)	सेजवालकसहस्रचतुष्कं साधिकं पश्चरातेश्च ।	
	पश्चकं च द्यातपश्चकमिश्रं स्यन्दनाभवरपिह्यिखिकानाम् ॥ १ ॥	
(२२३)	शतानि चाष्टादशवाहिनीनां सुखासनानां प्रमितिस्तथैव ।	
	तपोधनानां द्विदातीसहस्रे दातं सहस्रं च दिगम्बराणाम् ॥ २ ॥	10
(२२४)	त्रिंदाद्विमिश्रा त्रिदाती चराणां रह्नासनानां दृषद्गोभितानाम् ।	
-	शतानि च त्रीणि तु मागधानां चतुःसहस्राश्च तुरंगमाणाम् ॥ ३ ॥	
(२२५)	अष्टौ महाङ्गाश्च चतुःशतानि लक्षास्तथा सप्तति मानवानाम्।	
, ,	श्रीवस्तुपालस्य कृताऽऽचयात्रासंख्येयमानन्दकरी जनानाम् ॥ ४ ॥	
(२२६)	स्वस्ति श्रीव्रह्मलोकात्कविजनजननी भारती ब्रह्मपुत्री	15
	धात्र्यां श्रीवस्तुपालं कुशलयति यथा कार्यमेतन्निवेद्यम्।	
	योऽभृत्कलपद्रुकलपः सकलसुमनसां नाधुना सोऽपि भोज-	
	स्तस्मात्सीदन्त एते जगति सुकृतिना रक्षणीयास्त्वयैव ॥ ५ ॥	
(२२७)	स्वस्ति श्रीभृमिवासाद्विपिनपरिसरात्क्षीरनीराधिनाथः	
	पृथ्व्यां श्रीवस्तुपालं क्षितिधवसचिवं वोधयत्यादरेण ।	20
	अस्या आस्माकपुत्र्याः क्रपुरुपजनितः कोऽपि चापल्यदोपो	
	निःशेषः शेषलोकम्प्रणगुणभवता मूलतो मार्जनीयः॥६॥	
(२२८)		
	श्रीवस्तुपाल ! भवतो वदान्य ! तद्दितयमुन्मुद्रम् ॥ ७ ॥	
(२२९)	कीर्त्तिः कन्दलितेन्दुकान्तिविभवा धत्ते प्रतापः पुनः	25
• •	प्रौढिं कामपि तिग्मरिक्ममहस्रां बुद्धिर्बुधाराधिनी ।	
	प्रत्युजीवयतीह दानमसमं कर्णादिभूमीसुज-	
	स्तत्किश्चित्र तवास्ति यन्न जगतः श्रीवस्तुपाल ! प्रियम् ॥ ८ ॥	
	महं० यशोवीरेण-	
(२३०)	लक्ष्मीं नन्दयता रतिं कलयता विश्वं वशींकुर्वता	30
•	त्र्यक्षं तोषयता मुनीन्मुदयता चित्ते सतां जाग्रता।	
	सङ्घेऽसङ्ख्यशरावलीं विकिरता रूपश्रियं पुष्णता	
	नैक्टा मक्रम्बजमा विदिनो रोवेट टर्फलमाः ॥ ९ ॥	

- (२३१) हंसैर्लव्धप्रशंसैस्तरितकमलप्रत्तरङ्गेस्तरङ्गे-नीरैरन्तर्गभीरैर्वकचडुलक्कलग्रास[लीनै]श्च मीनैः। पालीरूढद्रुमालीतलसुखवायितस्त्रीप्रणीतैश्च गीतै-भीति प्रक्रीडदातिस्तव सचिव! चलचक्रवाकस्तटाकः॥ १०॥
- ⁵ अत्र पं० सोमेश्वरेण पोडशयमकन्यये पोडशसहस्रा द्रम्माणां प्राप्ताः । [पुनः] पं० सोमेश्वरेण-
 - (२३२) दिग्वासाश्चन्द्रमौलिर्विहरति रविरयं वाहवैषम्यकष्टं राहोः सातङ्कमिन्दुर्विचरति गरुडान्नागवग्गों विभेति। रत्नानां धाम सिन्धुस्त्रिदशगिरिपतौ खण्णमचापि यसा-तिंक दत्तं रक्षितं वा किम्र किम्रत जगत्यर्जितं येन गर्वः॥ ११॥
- 10(२३३) कलिकवलनजाग्रत्पाणिखेलत्कृपाणः युतिलहरिनिपीतप्रव्यनीकप्रतापः । जयति समरसत्त्वारमभनिर्दमभकेलिप्रमुद्दिनजयलक्ष्मीकामुको वस्तुपालः ॥ १२॥
 - (२३४) यदि विदितचरित्रैरस्ति साम्यस्तुतिस्ते कृतयुगकृतिभिस्तैरस्तु तद्वस्तुपालः । चतुरचतुरुदन्वद्वन्धुरायां घरायां त्विमव पुनरिदानीं कोविदः कोऽविदग्धः ॥ १३ ॥
 - (२३५) मुञ्ज-भोजमुखाम्भोजवियोगविधुरं मनः।श्रीवस्तुपालवक्त्रेन्दौ विनोदयति भारती॥१४॥
- 15 (२३६) त्वं जानीहि मयास्ति चेतसि घृतः सर्वोपकारव्रती किं नामा सविता न शीतकिरणो न खर्गवृक्षो नहि । पर्जन्यो नहि चन्दनो नहि ननु श्रीवस्तुपालस्त्वया ज्ञातं सम्प्रति शैलपुत्रिशिवयोरित्युक्तयः पान्तु वः ॥ १५ ॥
 - (२३७) गाम्भीयें जलिघवेलिर्वितरणे पूषा प्रतापे सारः सौन्दर्ये पुरुषव्रते रष्डपतिर्वाचस्पतिर्वाञ्जये । लोकेऽस्मिन्नुपमानता[मु]पगताः सर्वे पुनः सम्प्रति प्राप्तास्तेऽप्युपमेयतां तद्धिके श्रीवस्तुपाले सति ॥ १६ ॥
 - (२३८) श्रीवस्तुपालः श्रियमेष केषां हृदि स्थितो हार इवातनोति । विश्राणयन्त्यक्षिगतापरागकणा इवार्त्ति तु नियोगिनोऽन्ये ॥ १७ ॥
- 25 (२३९) दीपः स्फूर्जिति सज्जकज्ञलमलः स्नेहं मुहुः संहर-न्निन्दुर्मण्डलवृत्तखण्डनपरः प्रद्वेषि मित्रोदयम् । सूरः कूरतरः परस्य सहते तेजो न तेजिखन-स्तन्केन प्रतिमं द्र(व्र?)वीमहि महः श्रीवस्तुपालाभिधम् ॥ १८॥
- (२४०) आयाताः कित नैव यान्ति कित नो यास्यन्ति नो वा कित थानस्थाननिवासिनो भवपथे पान्थीभवन्तो जनाः । अस्मिन्वस्मयनीयबुद्धिजलिधर्विध्वस्य दस्यून्करे कुर्वन्पुण्यनिधिर्धिनोति वसुधां श्रीवस्तुपालः परम् ॥ १९ ॥

	(२४१) समुद्रत्वं स्हाघेमहि महिमधाम्नोऽस्य वहुधा	
	यतो भीष्मग्रीष्मोपमविपमकालेऽप्यजनि यः।	
	क्षणेन क्षीणायामितरजनदानोदकतनौ	
	दयावेलाहेला द्विग्रणितगुणलागलहरिः ॥ २० ॥	
	(२४२) यः सप्ताननसप्तिसोदरयञ्चाः सप्ताव्धिगरमीरिमा	5
	सप्तार्चिःपरितप्तकाश्चनरुचिः सप्तर्षिसर्गावधिः ।	
	सप्तद्वीपघरानरालिमुकुट[ः]पुण्याय सप्त व्यघात्	
	यात्राः सप्तजगचमत्कृतकृती सप्त क्षिपन्दुर्गितीः ॥ २१ ॥	
(२४३)	किमस्तु वस्तुपालस्य मन्त्रीन्दोः साम्यमिन्दुना । यद्त्ते व[सु]धामेष सुधामेवापरः पुनः ॥	
	(२४४) नाभीपङ्कजमङ्कजन्मविधिना वृद्धेन रुद्धं हरे-	10
	स्तापव्यापदमापदुष्णमहस्रो लीलासरोजं पुनः।	
	किञ्चेतज्ञलजं जलप्रकृतिकं तेन श्रिया शिश्रिये	

यत्पाणिर्निहि चेदमुष्य पुरतस्तस्यौ न दौस्थ्यं कथम् ॥ २२ ॥ (२४५) मुक्तवापि पुण्डरीकाक्षं श्रीरिमं शिश्रिये किल। देहार्धनव(१)वन्धेन विरूपाक्षः प्रियां भिया ॥ २३ ॥

15

अन्वयेन विनयेन विचया विक्रमेण सुकृतक्रमेण च। (२४६) कापि कोऽपि न पुमानुपैति मे वस्तुपालसदशो दशोः पथि॥ २४॥

॥ इति वस्तुपालसम्बन्धिकाच्यानि ॥

(G.) सङ्ग्रहगतं वस्तुपाल-तेजःपालसम्बन्धिवृत्तम् ।

§ १५८) अथ न्यापारे प्राप्ते महं० श्रीतेजःपालः श्रीसम्भतीर्थन्यापाराय प्रहितः । तत्र नोडासईद्सामिलितं 20 वीक्ष्य तस्य कोऽपि न भेटयति । अमात्योऽपि तद्विज्ञाय तं भेटयामास । अन्यदा तेन एकांते चिद्वडकवाचन-च्छलेन तस शिरक्छेदितम् । तस भांडागारोऽपि धृतः । सर्वमपि टीपयित्वा गृहीतम् । उपवरिकात्रये मृत्तिकां वीक्ष्य सा खयं गृहीता । सईदभागिनेयेन राज्ञो मिलित्वा सर्वे कथितम् । राजा म० तेजःपालस्य क्रपितः । मित्रणोऽग्रेऽकथयत्-भवता रम्यं न कृतम् । अकथियत्वा त्वया कथं मारितः । तेनोक्तम्-राजन् ! आज्ञोहंघन-कारकमन्यमपि न सहामि । राज्ञोक्तम्-तर्हि उलपितविषये दिव्यं देहि, घटसर्पमाकर्पय । इति प्रतिषन्ने घटसर्पा-25 कर्पणसमये महं० श्रीतेजःपालेन सर्वसमक्षमित्युक्तम्-यन्मया सर्वमिप सईदस्य सत्कं राज्ञे दत्तम् । यदि कदापि सईदस्य धृलिर्मम गृहे तिष्टति तदोत्स्पृखल(१)मिति भणित्वा सईदभागिनेयस्य पर्यङ्के घटात्सर्प आकृप्य क्षिप्तः। स च मृतः । सा च धृलिस्तयिस्त्रात्कोटित्रमाणा गृहे स्थिता ।

§ १५९) एकदा कटकस्थेन राणकेन मन्त्रीशो लेखकं याचितः । मन्त्रिणोक्तम्-अत्र नास्ति । राज्ञोक्तम्-कस्ये समानेतव्यमेव । एवं स्थिते मित्रिणा तुरगारूढो देपाकः प्रेपितः । तेन पुरान्तश्रतुष्पथे गच्छता भक्त्या श्रीवीत-३० रागो नमस्कृतः । पश्चाछेखकं गृहादानीय दत्तं खामिनोऽग्रे । अत्रान्तरे तत्रैव पुरे कश्चिद्विजो व्यापारी वर्तते । तस पुत्रसुगं विनष्टम् । तृतीयोऽङ्गजो प्रथिलो जातः । पश्चाद्गर्जायां पण्मासं यावत् क्षिप्तः । ततो व्यन्तरेणो-क्तम्-च्यापारिन्! कथं निजपुत्रसारां न कुरुपे। तेनोक्तम्-किं करोमि ?। मम देपाकपार्थात् पुण्यं दापय। ततो प्र॰ प्र॰ स॰ 10

देपाकस्य राजादेशः प्रहितः । ततो मित्रिश्रीवस्तुपालस्य महदुपरोधेन देपाकः सदने समागतोऽपि भयेन व्यन्तरपार्थे नाभ्युपैति । नृपरोधेनानीतः । व्यन्तरेण सन्मानितः । इत्युक्तं च-यत् त्वया तुरगाधिरूढेन श्रीवीतरागो
नमस्कृतः, तत्पुण्यं मे देहि । तेनोक्तम्-कथमस्य लग्नोऽसि । व्यन्तरेणोक्तम्-अनेन.....ना मया वारितेनापि
मम वलीवईयुगं प्रभ्रतयैव गृहीतम् । तिद्वरहेणाहं मृतः । ततो मयास्य पुत्रयुगं मारितम् । अस्य पातकं कथं
- 5 गृह्णामि, अतो मोक्ष्यामि । ततस्तेन पुण्यं दत्तम् ।

- § १६०) श्रीभृगुपुरात् खंडेरायसांखुलाकः श्रीसंभतीर्थे श्रीवस्तुपालोपरि कटकं गृहीत्वा समागतः। तदा निर्णीतिदिने संग्रामे जायमाने भूणपालेन विंशतिः शंखपत्तयः शंखं भिणत्वा मारिताः। तदा मित्रणोक्तम्-रे! शंखमातुः शंखाः कियन्तो जाता विद्यन्ते । तदाकर्ण्य शंखः खयम्रित्थतः। सोऽपि श्रीमित्र-भूणपालाभ्यां पातितः। तदा श्रीसोमेश्वरदेवेनोक्तम्-
- 10 (२४७) श्रीवस्तुपाल ! प्रतिपक्षकाल ! त्वया प्रपेदे पुरुषोत्तमत्वम् । तीरेऽपि वार्द्धेरक्रतेऽपि मात्स्ये दूरं पराजीयत येन शंखः ॥

§ १६१) अन्यदा पं० सोमेश्वरदेवेनोक्तम्-

(२४८) बाणे गीर्वाणगोष्टीं भजित मघवति ब्रह्मभूयं प्रपन्ने
व्यासे विद्यानिवासे कलयित च कलां कैरावीं कालिदासे।
माघे मोघां मघोनः सफलयित दृशं चाद्य वाग्देवतायाः
सोऽयं धात्रा धरित्र्यां निवसनसद्नं प्रस्तुतो वस्तुपालः॥
काव्यसैतस दृशसहस्रा मित्रणा दृत्ताः।

तेनैव एकदा सभायां मन्त्रिकाच्यमिदमपाठि-

(२४९) पाणिप्रभापिहितकल्पतरुप्रवालश्चौलिक्यभूपतिसभानिलनीमरालः। दिग्चक्रवालविनिवेशित....शीमानयं विजयतां सुवि वस्तुपालः॥ इति श्रुत्वा मित्रणि अधोविलोकयति तेन पुनरिदं प्रोक्तम्-

(२५०) एकस्त्वं भ्रवनोपकारक इति श्चत्वा सतां जल्पितं लज्जानम्रशिरा धरातलमिदं यद्वीक्ष्यसे वेद्यि तत्। वाग्देवीवदनारविंदतिलक ! श्रीवस्तुपाल ! ध्रुवं पातालाद्वलिमुद्दिधीर्षुरसक्नुन्मार्गं भवान् मार्गति॥

[एतच्छुत्वा] द्रव्यसहस्राणि चतुश्रत्वारिंशत्संख्यानि मन्त्री ददौ ।

§ १६२) एकदा श्रीशञ्जञ्जयतलहिकायां श्रीसङ्घपूजायां जायमानायां [वस्त्रपोटली-] वंधनं कस्यापि पंडित-स्यापितं मित्रणा । ततस्तेनोक्तम्—तद्वीक्ष्य वस्त्रं मित्रीशाभिम्रखं "किचित्तृलं किचित्सूत्रं०" इति भणिते सहस्रा दश दत्ताः।

BO §१६३) एकदा केनापि खलेन बहुदानं दीयमानं विलोक्य राणश्रीवीरधवलस्य विज्ञप्तम्–स्रामिन्! तव भाण्डागारो यथेच्छं व्ययमानोऽस्ति । तद्वचनाद्विलोकनार्थं तत्रागतः । तद्दिने व्राह्मणश्रमणवनीपकदेशांतरिणां विशेपतो दानं दीयमानं दृष्ट्वा मनिस दूमितो राणकः । राणकेनोक्तम्–मन्त्रिन् ! ईदृशेन व्ययेन कथं पूजयिष्यति । मन्त्रिणोक्तम्–यावान् आदेशो भवति, तावान् विधीयते । राज्ञोक्तम्–इयन्ति दिनानि कथं ममादेशो न कृतः ? ।

20

25

15

यावता पुण्येन राजकुले कार्य ताविद्वधीयते । राज्ञोक्तम्-तंव व्ययेन मम किं पुण्यम् ? । मित्रणोक्तम्-राजन् ! केवलमहं भाण्डागारिक इवासि, सकलद्रव्यव्ययफलं तवैव । इत्युक्ते राणको जगाद-मित्रन् ! यद्येवं तदा दिगुणं दानं देयम् ।

§ १६४) श्रीवस्तुपालः प्रथमयात्रायां पिशुनप्रवेशभयान्मित्रतेजःपालं तत्र विमुच्य प्रस्थितः । ततो मित्रतेजःपालस्य महाविपादः संजातः—यदहं श्रीशत्रुञ्जययात्रायां न चालितो मित्रणा । तदत्तु राणकेन तदवलोक्य 5
गाढाप्रहेण प्रेपितः । ततस्तेजःपालेन महं० देपाक आत्मस्थाने स्थापितः । ततस्तेजःपालं समेतं वीक्ष्य मित्रणोक्तम्—त्वया न कृतं रम्यम् । यतः प्रभुरात्मीयो न भवति । तावता द्विज्ञायमनेनेति राज्ञोऽग्रे निवेदितम्—राजन्!
मन्त्री यात्राये न गतः, िकं तु निधाननिक्षेपाय गतः । यदि राजादेशो भवति, तदा द्रव्यमानयामि । राज्ञोक्तम्—
मध्याहे स्मारयेथाः । यथा कटकमर्ण्यामि । तावता तद्विज्ञाय महं० देपाकेन मित्रणः संदियकः प्रहितः । स्नात्रावसरे संदियकमुत्सुकं समागच्छन्तं वीक्ष्य मित्रणा तेजःपालस्थोक्तम्—इदं तव चरितमायाति । संदियकेन सर्व-10
मपि निवेदितम् । मित्रणा संघस्याग्रे प्रसादः समेत इति विज्ञमम् । निश्चि श्राहद्वयेन मन्त्रं विधाय निधाननिक्षेपाय
मानवा अरण्ये प्रहिताः । तत्र तेषां खनतां नवं निधानमुन्मीलितं वीक्ष्य मित्रणोक्तम्—नैवात्मनां राजभयम् ।
तावता द्वितीयसंदियकेनाभ्येत्य स्वरूपं कथितमिति—वामनोऽन्यायकारी राज्ञा विधृतः । पुनः प्रसादो भवतां
प्रहितः । ततः कुशलेन यात्रा विहिता ।

§१६५) अनुपमया गुरवो नंदीश्वरतपःकरणोद्यापनं पृष्टाः। गुरुभिरुक्तम्—वत्से! भवत्या न प्रष्ट्यम्। तयो-15 क्तम्-कथम्!। भवती पृच्छका, अहं कथकः। यदि न विधीयते तदा किम्। पुनरुक्तम्—भगवन्! कथ्यताम्। गुरुभिरुक्तम्—वत्से! जयन्यं वावनी दौक्यते, मध्यमं वावन-वावनी, उत्तमं नंदीश्वरप्रासादः। ५२ आचार्यपद्—५२ सिंहासन—५२ पाट एवं सर्वं विधीयते। देव्या प्रतिज्ञा विहिता—द्वितीयवेलायां तदा भोक्ष्ये, यदा प्रासादं कारियप्यामि। गुरुभिरिप ततोऽभिग्रहो गृहीतः—वयमाचाम्लान् तदा मोक्ष्यामः, यदा भवदिभिग्रहः सेत्स्यति। भोजनवेलायां देव्या मित्रणो भाजने शालिभक्तं प्राशुक्तजलं च मुक्तम्। मित्रणा कारणं पृष्टम्। तयोक्तम्—20 भवतामभिग्रहोऽस्ति—यत् गुरुदक्तशेषं भोक्तव्यम्। गुरवः पृष्टाः सर्वं जगदुः। ततो वामदेवस्य सूत्रधारस्य पटं दर्शयित्वा प्रासादः कारितः।

§ १६६) एकदा तीर्थयात्रायां श्रीशत्रञ्जये सङ्घपतिना अवारितं सत्रागारा विहिताः। ततः सङ्घात्सस्ये विधी-यमाने घृतं ञ्चितम् । सङ्घपतिचित्ते विपादो जात इति यद्विरंगो भविष्यति । स्वरिभिः श्रीयशोभद्राख्येर्ज्ञातम् । आकृष्टिविद्यया श्रीपत्तनात् कस्यापि गृहात् घृतमानीतम् । वात्सस्यं पूर्णमजिन । ततो गुर्वनुज्ञया तेन तावन्तो 25 द्रम्मास्तस्यापिताः। तेनोक्तममी कीदशा द्रम्माः?। तेन समग्रोऽपि घृत्तान्तो निवेदितः। तेनोक्तम्—यदि ममाज्यं श्रीशत्रञ्जयस्योपिर साथिमिकवात्सस्ये व्ययितं तदाहं न ग्रहीष्ये। ततस्तेन घृतवसतिका श्रीपत्तने निष्यना ।

§ १६७) एकदा धवलकके कलशप्रतिष्ठायां मिलितेषु वहुषु स्रिषु हो वक्तारो पिष्पलाचार्यो मिलितो । तत्र ताभ्यामनुषमदेच्ये उपदेश इति दत्तः । यतः—पात्रदानमर्लं विनोददानं वहुतरम् । अनुषमदेच्योक्तम्—नैवम् । वचः स्मृत्वा स्थितो । ततस्ताभ्यां रात्रो वेषपरावर्तेन मित्रमन्दिरे गत्वा मित्रदेवीपुरतो महासतीचन्दनाचरितं ३० गातुमारच्यम् । चतुर्विशतिसहस्रद्रम्मा लच्याः । प्रातरनुषमदेच्ये दर्शितं सर्वम् । सत्यं मानितम् ।

§ १६८) अन्यदा तीर्थयात्रायां गच्छन्तो देशान्तरादागताः श्रीसङ्घा निमित्रताः श्रीवस्तुपालेन । तदा मत्री चरणप्रक्षालनं कुर्वाणः सेवकैर्निपिद्धः । तदा मत्रिणोक्तम्—"अद्य मे फलवती०" ॥

§ १६९) अन्यदा निश्चि पद्यशालास्थितश्रीविजयसेनस्रीन्नमस्कृत्य मन्त्री अपवरकस्थितश्रीउदयप्रभस्रीणां वन्दनाय गतः । तत्रैते न विद्यन्ते । एवं दिनत्रयं समेत्य विलोकितम् । चतुर्थदिने विनयपूर्वं वृद्धगुरवः पृष्टाः । तरुक्तम्—मन्त्रिन् ! अद्य कल्ये नगरेऽत्र चाचरीयाक एको महाविद्वानुपागतोऽस्ति । तस्य वचनविशेपश्रवणाय नित्यं स्रयो वेपपरावर्त्तेन यान्ति । तद्विज्ञाय मन्त्रिवस्तुपालस्तत्र गतः । स्रयः प्रच्छना वीक्षिताः । प्रातः मन्त्रिणा ज्ञाकारितस्य चाचरीयाकस्य सहस्रद्वयी न्यासे कृता । इत्युक्तं च—यत् त्वया पौपधशालाद्वारे चचरे चचरो मण्ड-नीयः । एवं पण्मासं मण्डितः । ततः सत्कृत्य प्रहितः ।

§१७०) मत्रिणा श्रीउदयप्रभद्धरयः पृष्टाः─कथं चतुर्विञ्चतिजिनेन्द्रध्यानदेव एक एव भवति । तत् कथं चतुर्विञ्चतिमध्ये को ध्येयः १ । गुरुभिरुक्तम्─महानयं सन्देहः । श्रीसरखतीं विना सन्देहनिर्णयो न भविष्यति । गुरुभिर्निशि देव्याराधनं विहितम् । श्रीभारत्या उच्छीर्पके श्लोकोऽयं समर्पितः─

10(२५१) अहं स्मरामि तादात्म्यात्तं रूढ्या परमेश्वरम्। स्थितं वाग्व्रह्मणः पारे परं ब्रह्मेति यं विदुः॥ मन्त्रिणोक्तम्-अत्रापि सन्देहः। परब्रह्मेति वाक्यं सर्वाण्यपि दर्शनानि निजनिजदेवस्य कथयन्ति। गुरुभिः पुनः सरस्रत्याराधनं विहितम्। देव्या पुनर्निशि कथितम्-

(२५२) सुवर्ण......ग्रीवामण्डनेऽन्त्यमणिद्वये । प्रभोर्यस्याङ्कितं नाम स्तुमहे परमेश्वरम् ॥ अर्हिमिति सिद्धम् ।

¹⁵ § १७१) श्रीभृगुकच्छे श्रीमुनिसुत्रतनाथाधिष्ठायकाः श्रीवालहंसस्ररयो विद्वांसः । तेपां मठे घोटकसप्तश्चती-राज्यम् । एकदा मन्त्री सङ्घं विधाय तत्रायातः । सर्वः स्नात्रपूजादिविधिर्विहितः । श्रीस्ररयो नमस्कृताः । स्र्रिभिः समस्तश्रीसङ्घरमक्षमाशीर्वादो दत्तः ।

(२५३) असिन्नसारसंसारे सारं सारंगलोचनाः।

-इति वारसप्तकं पठितम्, व्याख्यातं च । ततो मित्रणा चिन्तितम्-यत् स्रयोऽतिविपयिणः । तदन्र गुरु20 भिरुत्तरार्द्धमुक्तम्-

यत्कुक्षिप्रभवा मन्ये वस्तुपाल! भवादशाः॥

ततो मन्त्रिणा हिंपतेन ग्रामद्वादशकं श्रीदेवपादानां दत्तम् ।

§ १७२) एकदा वहूयाग्रामे श्रीमाणिक्यस्रीणां श्रीवस्तुपालेनाकारणं प्रहितम् । परं नागताः । तदनु मंत्रिणा मह(०त्य १)वदातवती विज्ञप्तिका निमंत्रणार्थं प्रहिता । तत्रेदं काच्यम्─

(२५४) इदं ज्योतिर्जालं जटलितविहायः स्थलमलं सखे मा माणिक्य प्रथय परितः सर्वहरितः।

> अयं गुंजापुंजाभरणसुभगंभावुकवपुः पुलिंद्राणा(०दाना?)मिंद्रस्तव नहि परीक्षाक्षममितिः॥

तथापि सरयो नायाताः । तदा द्वितीयविज्ञप्तिकायां श्लोकोऽयं प्रहितः । तद्यथा ''जडसंगमे प्रहपीं(१) द्विजिह्व 30 जनवल्लभोऽति तुच्छपदः । वटक्रूप० ।'' अनेन श्लोकेन सरयो रुष्टाः । तत आज्ञीर्वादे विश्लेपावदाते श्लोकोऽयं प्रहितः—

> (२५५) वंशार्द्धार्द्धपरिस्फूत्त्यां रे पिंजन! विजृंभसे। गुणालीजन्महेतृनां तृलानां हृद्विपाटयन्॥

25

अनेन मर्मणा मंत्रिमनिस महान् विपादोऽजिन । तद्तुं तत्रत्यमंत्रिणापार्श्वान्त्रविष्णिश्चालान्त्रापुरुपचरितभंडारो रात्रौ चौरवृत्त्या निःकाशितः । प्रातः स्रयो विपादिताः । चित्तनिर्वृत्त्यर्थं वाहरा विहिता । ततो मंत्रिणा दिनेषु सप्तसु गतेषु कस्यापि पथिकस्य हस्ते उपलेखपत्रे श्रीस्रीणां विज्ञप्तिका प्रहितेति—यदत्र तत्र-भवतां भवतां श्रीस्रीणां पुस्तकभांडागारो विल्तोऽिस्त । यदि कार्यं भवति तदाऽऽगंतव्यम् । श्रीस्र्रयस्तद्विज्ञाय प्रस्थिताः । मंत्रिणा महाप्रवेशोत्सवो विहितः तदन्न मध्याहे श्रीसंघपूजायां श्रीस्रिरिभः काव्यमिदं शोक्तम्—

- (२५६) देव! स्वर्नाथ! कप्टं क इह ननु भवान्नन्दनोद्यानपालः स्वेदस्तत्कोऽद्य केनाप्यहह हृत इतः काननात्कल्पवृक्षः। हुं मा वादीः किमेतत्किमपि करुणया मानवानां मयैव प्रीत्या दिष्टोऽयमुर्व्यास्तिलकयति तलं वस्तुपालच्छलेन॥
- (२५७) वैरोचने रचितवलमरेशमैत्रीमेकत्र नाकनगरं च गते द्वितीये। दीनाननं भुवनमूर्द्धमध्यापश्यदाश्वासितं पुनक्दारकरेण येन॥

ततः श्रीस्रयो मंत्रिणा विज्ञप्ताः । किमेतद्धुनागमनकारणम् १ । गुरुभिरुक्तम् –वयं सरस्रतीपुत्रकाः, भवांश्र सरस्रतीकंठाभरणमिति । यत्र सा तत्र वयम् । इति हर्षितः ।

§ १७३) श्रीवस्तुपालसभायां हरिहर-मदननामानौ पंडितौ महाकवीश्वरौ परस्परं निरंतरं विजय(विवद्य ?)मानौ स्तः।तो द्वाविप परस्परं मत्सरं कुर्वतौ न तिष्ठतः। ततो मंत्रिणा दौवारिकस्योक्तम्—यत् त्वया एकस्मिन् पंडितेऽन्तः-15 स्थिते द्वितीयपंडितप्रवेशो न देयः। एकदा हरिहरे सदसि विद्याविनोदं वितन्यति मदनोऽपि समेतः। तेनोक्तम्—

(२५८) हरिहर! परिहर गर्व कविराजगजांकुको मदनः।

द्वितीयेनोक्तम्-

मदन ! विमुद्रय वदनं हरिहरचरितं सारातीतम् ॥

ततो मंत्रिणा प्रोक्तम्-यः पणे काव्यशतं प्रथमं विधासति, स महाकविः । एवं सति मदनेन नालिकेरवर्णाने 20 काव्यशतं त्वरितं विहितम्। अथ हरिहरेण काव्यपिः। ततो मंत्रिणोक्तम्-हरिहर! त्वया हारितम् । तेनोक्तम्-

(२५९) रे रे ग्रामकुविंद कंदलयता वस्त्राण्यमूनि त्वया गोणीविभ्रमभाजनानि वहुद्याः स्नात्मा किमायास्यते । अप्येकं रुचिरं चिरादभिनवं वासस्तदासूत्र्यतां यन्नोज्झन्ति कुचस्थलात् क्षणमपि क्षोणीभृतां वस्लभाः॥

ततो मन्त्रिणा हर्पितेन द्वाविष मानितौ ।

§ १७४) एकदा व्यापारे व्यतीते नागडमंत्रिणि व्याप्रियमाणे श्रीवीसलदेवस्य मातुलो मूलराजः प्रातः श्रीवस्तुपालगुरुपौपधशालाप्रत्यासन्ते पथि व्रजन् लघुक्षुल्लकत्यक्तपुंजकेन खरंदितः । तदनु मंत्रिणा क्षुल्लकपरा-भवत्वात्तस्य करः छेदापितः । वंवारवो जातः । ततो रुप्टेन राज्ञा वस्तुपालवधाय सैनिकाः प्रेपिताः । मंत्रीशोऽपि राज्ञानमागत्येति जगाद−िकं मया कृतम् १ राज्ञोक्तम् –प्रत्यक्षमिदम् । मंत्रिणोक्तम् –अहं तवायशः सोढं नालम् । ३० दर्शनपराभवोद्भवमयशो अपरराजमंडले याति । इति वचः श्रुत्वा विचार्य च राजापि हर्षितः । प्रसादं ददौ ।

§ १७५) अंत्ययात्रायां महं वस्तुपालस आकेवालीयसरसःपाल्यां आकली समेता। तत्र स्थितो मंत्री। भूमौ मुक्तः। श्रीसंघे तत्रागते उत्सवे विधीयमाने च मंत्रिणोऽश्रुपातः समजनि। कारणं पृष्टः। तदा मंत्रिणोक्तम् न में संसारविषये चिंता वर्त्तते, परम्−

सुकृतं न कृतं किंचित्०॥१॥

36

(G.) सङ्ग्रहगतं वीरधवलवृत्तम् ।

§ १७६) अथ श्रीवीरधवलवारके नांदउद्रीपालितः, अढारहीउ वह्नउ हरदेवः वह्नयाचाचरीयाकस्य शिष्यः । अन्यदा आश्वापह्न्यां समेतः । ततो दिवससप्तके जाते तत्परिवार इति कथयति—शंवलं नास्ति किंचित् । चाचरं क्षिपत । स भणति—स्थिरीभवत । अहं नित्यं नगरमनुष्यमनोऽभिप्रायं विलोकयन्नस्मि । इतश्च महाराष्ट्रीयो गोविद10 चाचरीयाकः समाययौ । यस्पाष्टादशपुराणानि अष्टौ व्याकरणानि चउपईवंधेन मुखपाठेनागच्छंति । तेन चचरः क्षिप्तः । पारूथाद्रम्माश्रतुर्विद्यतिसहस्रसंख्यका मिलितास्तस्य । ततो हरदेवचाचरीयाको विशेषतः परिच्छदेन प्रोत्साहितो लवदोसिकहड्डे सायमुपविष्टः । ततस्तेन सहजतो वार्चा कुर्वाणेन सीतारामप्रवंधः कथितुमारेभे । प्रथमं दश्च द्वादश जना मिलिताः । क्रमेण बहवः । मध्यरात्रौ सुखासनाधिरूढा अमात्याद्याः शृण्वंतः संति । इतश्चोत्थितः यथा श्रोदणां विघातो न भवेत्तथा भणन् विद्यः साभ्रमतीनदीतीरं गतः । ततो गानं विस्रप्टम् । वित्रः श्चीतभीता लोका इति वदंति—यचं तथा क्ररुष्य यथा सुखेन नगरे गम्यते । ततस्तेन पुनरुत्तररामचिरिन्गानमारुष्यम् । तदनु सर्वोऽपि जनः परमरसमग्रश्चतुष्पथे समानीतः । ततो लोकेन मुद्रिका-पट्चक्रलादि-दानेन द्वामलक्षत्रयी दत्ता ।

(G.) सङ्ग्रहगतं वीसलदेववृत्तम्।

§ १७७) श्रीजिनदत्तसूरिशिष्येण पं० अमरनाम्ना कोऽपि देशांतरी निरामयो विहितः । तेन श्रीसारस्रतमंत्रो 20 दत्तः । तत्प्रभावान्महाकविरभूत् । ततः पं० सोमेश्वरदेवसान्निष्यात् प्रथमं गद्यभारतम्, तदनु च्छेकभारतं च चकार । ततः सोमेश्वरदेवेन श्रीवीसलदेव इति विज्ञप्तः-राजन्! कविः कर्त्ता एव, परं राजा प्रंथं वर्त्तापयति । इत्युक्ते ग्रंथविलोकनहेतोः पूजा विहिता । शलाकया श्लोको विलोकितः । तद्यथा-

द्धिमथनविलोल्छोल्हग्वेणिदंभा०॥१॥

ततो वेणीकृपाण इति विरुदं जातम्। ग्रंथो विदितो जातः। श्रीवालभारते समग्रेऽपि निष्पन्ने निशि व्यासेन 25 चोरितं पुरत्तकम्। प्रातर्यावद्विलोकयित तावता पुरत्तकं नास्ति। महाविपादोऽजिन। तावता व्यासेनोक्तम्-कथं विपादं कुरुपे?। त्वया मम सपादलक्षग्रंथस्य चौर्यवृत्तिविद्विता। अन्यत् मम नामापि न गृह्णासि। तव ग्रंथः कथं वित्तिष्यते?। एवमुक्तवा पुरत्तकमित्तम् । त्वद्विचारे यत्समायाति तद्वियेयम्। ततः प्रातश्रतुश्रत्वारिंशत्सर्ग्यपुरि एकैकं नवं काव्यं चकार। अन्यदा श्रीवालभारते जगद्विदिते जाते वायडज्ञातीयमञ्जाजनवाणउटीपद्मनाम्ना पं० अमरस्थेति गदितम्-पंडित! तव चेत् सरस्वत्यपि प्रसन्ना जाता। तिर्हे कथं मिथ्यात्वं स्वीकृतम्?। कथमा- 30 त्मीये चरित्राण्यपि न विद्यंते?-इति प्रतिवुद्धेन पंडितेन त्रिपष्टिशलाकापुरुपचरितं पद्मानंद*नामा ग्रंथः कृतः।

[&]quot; एतच्छव्दोपरि पृष्ठस्याधोभागे एवंरूपा टिप्पणी लिखिता लभ्यते—''तत्रारम्भः—मद्गोर्मिथ्यापथभ्रान्ता स्नाति श्रान्तिमलच्छिदे । चतुर्विदातितीर्थेदाचरित्रामृतसागरे ॥''

§ १७८) श्रीवीसलदेवसाग्रेऽवसरे जायमाने रागानिभज्ञस्य राज्ञो रागसंकेताः कृताः संति श्रीनागलदेव्या । श्रीरागस्य शरीरं, वसंतस्य कुसुमं, भैरवस्य भेरीरवः, पंचमस्यांगुलिपंचकं, मेघरागस्याकाशः, नद्दनारायणस्य चकं, कानडा कर्णः, धनासी धान्यं, नाटसारि पासकः, सोरठी पश्चिमा, गूर्जरी सिंहासनं, देवशाखायां द्वारशाखा-दर्शनम्-एवम् । एकदा कोऽपि वहकारः समागतो देवशाखायामवलगां करोति । राजा रागं न वेति । राज्ञी तु वारं वारं द्वारशाखां दर्शयति । एवं वहकारेणोक्तम्-राज्ञि । भवती चेत् द्वारशाखां विदारयति, ततोऽपि राजा 5 न वेति । इत्युक्ते राजा हसितः ।

§१७९) एकदा श्रीवीसलदेवेन नागलदेव्यग्रे न्यगादि—यन्मां रागपद्धतिं शिक्षय । एवम्रक्ते दिनपंचसप्तका-नंतरं यवनिकांतिरतया देव्या वहुदासिकाभिः प्रत्येकं तदेव कार्यं निजगदे । राज्ञोक्तम्—देवि ! किमेतत् सर्वा अपि दासिकास्तदेव कार्यं निगदंति ! देव्योक्तम्—देव ! काः कियंत्योऽभूवन् ! राज्ञा सर्वा अपि नामग्राहं कथिताः । देव्यूचे—राजन् ! रागपद्धतिरेवमेव ज्ञायते । ततो देव्या वीणामादाय राजा रागान् सर्वानपि शिक्षितः ।

§१८०) अन्यदा मध्यरात्रौ नागलदेवी राज्ञश्वरणसंवाहनं कुर्वाणा श्रांता। ततस्तयोक्तं द्रद्धमहिलीवउलीपुरःयत् त्वं चरणसंवाहनं कुरु । अहं श्रांतासि । ततो मयणसाहारेणोक्तम्-यत् त्वं आत्मानं पखाउजीपुत्रीत्वं न
वेत्सि । पखाउजसत्कं भोजनं कुसणाती निर्विण्णा न । अधुना खिन्ना । ततो रुपितया (रुप्टया ?) तया मयणसाहारस्य नासाच्छेदः कारितः । ततो देविगरौ गतः । राज्ञा सिंहणदेवेन पृष्टः । तेनेत्युक्तम्-अत्र स आगच्छिति
यस्य नासा न स्थात् । इति श्रुतेन नूतना नासा कुतोऽप्यानीय तत्क्षणमारोपिता । लगा । अन्यदा पुनः 15
श्रीपत्तने समागतः । राज्ञा पृष्टः स वक्ति-अन्यस्य समीपे नासा याति । परं सिंहणदेवसमीपे गतापि समागच्छिति । इति हृपेन प्रसादो दत्तः ।

§१८१) श्रीवीसलदेवस्य द्वारमहेन नीराजनावतरणसमये प्रचुराकारणैरागताया नागलदेव्याः कथितमिति— कथं आत्मानं न जानासि? । इयतीं वेलां विलंबसे । इति कथिते कुपिता[ऽत्यर्थ] तद्वचनेन । मारणे गाढाग्रहां मत्वा राज्ञा न मारितः, किं तु मयणसाहारस्य नेत्राकर्पणं कृतम् । तेनापमानेन स मालवपतिनरवर्म्मसमीपं 20 गतः । तेनाविजतेन ग्रास्थासनादि समिप्पतम् । एकवेलं राज्ञा कथितम्—मदन ! वीसलेन राज्ञा तव नेत्रे कथं किंपते ? । गाढाग्रहं पृष्टेन तेनोक्तम्—विवेकनारायण ! गूर्जरधराधिपतिरस्तत्स्वामी विवेकचृहस्पतिः । यथा रणभग्नस्य नृपाधमस्य मुखमसाकीनानि पात्राणि द्वारमहादीनि न पश्यति । अत एवं विहितम् । स नरवर्म्मराज्ञा वीसलेन वारत्रयं भग्नोऽस्ति । श्रुत्वैव स्थितः । [ज्ञातं] चरपरंपरया श्रीवीसलदेवेन । मयणसाहारः समाकारितः । अतीव मानं दत्तम् । एकदा पृष्टम्—कथमीद्दग्वाक्येन नरवर्म्मराज्ञो विपादो न जातः ? । 25 तेनोक्तम्—स उभयवंशविश्चद्धः, न भवाद्यः । यतः—भवान् (भवत्?) पितृपक्षे त्र्णसीदः स पदातिमात्रः । मातृपक्षे महिपीभक्षका जेठेया इति । राज्ञा किमिप न कथितम् ।

- ११८२) एकदा श्रीवीसलदेवस्य दक्षिणे चक्षुपि अंजनीरोगो जातः। तद्यथा दिनत्रयस्य मध्ये वहुभिरुपचारैरपि नोपशमित । ततोऽरिसिंहराजवैद्यस्याकारणं प्रहितम् । तेन समेतेन गिदतं इति—अहो प्रधाना! विहिते भेपजे राज्ञो घटिकाचतुष्टयं यावन्महती व्यथा भविष्यति । तदाहं मार्यमाणो रक्षणीयो भवद्भिः। तैरुक्तम्—भवतु । ३० इत्युक्ते भेपजं दत्तं वैद्येन । ततो विशेपेण वेदना जाता । ततो राज्ञोक्तम्—अम्रुं मारयत । परं स रिक्षतः। अथ घटिकाचतुष्कादनंतरं निरामयेन राज्ञा वैद्यसामंत्रणं प्रेपितम् । प्रधानरुक्तम्—स मारितः। राजातीव दुःखितोऽभृत् । तदनु समानीतो वैद्यः। तत्पुरो राज्ञोक्तम्—मम भेपजं कथय, अन्यथा मारियष्ये। व्यथा

सर्वसाधारणा । त्वं तु क्रुत्रापि यास्यसि । अतोऽहं सर्वविदितं औपधं विधास्ये । तेन पीऌकुलीयकः कथितः । ततो राज्ञा सन्मानितः । वहुद्रव्यं दत्तम् । औपधं सर्वत्र विदितं कृतम् ।

- § १८३) अन्यदा आशापल्यां राजीमतीछिपिकया गुरुपार्श्वे आगमोक्ततपांसि द्वात्रिश्चिनतानि कृतानि । तत आंविलवर्द्धमानतपोऽभिग्रहे गुरुभिरुक्तम्—यत्तपिस कोधो न विधीयते । कोधेन तपःक्षयो भवति । इति क्रिक्षेधसाभिग्रहो गृहीतः । एवं राजश्रीवीसलदेवस्य सदिस महं० सात्कस्य व्यासस्य च होडा जाता । यन्मनुष्यः सकोधो भवत्येव । मंत्रिणोक्तम्—अहमकोधिनं दर्शयिष्यामि । ततो वंठपार्श्वात्तरगखुरै रंगभांडभंगे कृते तस्याः, तया तु तुरगचरणानां शीतलजलेन क्षालनं विहितम् । राज्ञा तदवगत्य तस्याः पंचांगप्रसादः, सर्वांगाभर-णानि दत्तानि । ततस्तया तेन द्रव्येण प्रासादः कारितः ।
- § १८४) मंत्रिणि श्री[वस्तुपाले] दिवंगते पं० सोमेश्वरदेवेन व्यासिवद्यासमर्थिता(०र्थना १) त्यक्ता । ततः 10 श्रीवीसलदेवेन महानप्युपरोधो विहितः । विशेषग्रासलाभोऽपि दर्शितः । परं [तेनोक्तम्−मंत्रीश्री]वस्तुपालसाग्रे व्यासिवद्यां विधाय नान्यस्य पुरो विद्धामि । ततो राज्ञा गणपतिनामा व्यासः कृतः ।
- § १८६) अथ भद्रेश्वरे वसाहजगह्नामा वसित । अन्यदा राजकीयप्रवहणे वाजिपंचकराशिविहितः । आग-15 च्छमानं यानं तटे एव भग्नम् । राजा समुद्रोपकंठे विलोकनाय गतः । तत्र समेतेन मनुष्वेणैकेन प्रवहणमध्य-खरूपं समग्रमपीति कथितम् । याने १४४ घोटका आसन् । तेपां मध्यात् प्रधानाश्वपंचकं वसाहजगह्कस्य । तेपां मध्ये करडाकनामा सर्वोत्तमस्तुरगो विद्यते । ततो वसाहेनोक्तम्-मदीया अश्वाः समेष्यंत्येव । राज्ञोक्तम्-कथमसाकं तुरगा यास्यंति, कथं तवोद्गरिष्यंति । वसाहेनोक्तम्-तवापि ममापि च भाग्यं सदृशं नेति वार्तां कुर्वतोर्द्दयोः समुद्रान्तश्रतुर्भिस्तुरगैः सह करडाकः प्रकटीवभृव । समागतश्र सकलोऽपि लोकश्रमत्कृतः ।
- 20 § १८७) अन्यदा सं० १३१५ वर्षे दुर्भिक्षकाले श्रीवीसलेन चणकत्रुटौ भद्रेश्वरच्यापारिणो नागडस्य लेखः प्रहितः । जगङ्कोऽत्र धृत्वा समानेतच्यः । तेन तस्य लेखं दर्शयित्वा श्रीपत्तने तेन सह गतः नागडः । सर्वा-ण्यिप रंककुटुंवानि तत्रागतानि । तेपां दानं दातुमारच्धम् । ततः स्थालैः ३६०००००० तटा कृता । विशुद्धवे-पाणां विणक्षपुत्राणां मध्ये तं सामान्यवेपस्यं वीक्ष्य राजा नोपलक्षयित । ततो मंत्रिणा दर्शितः । राज्ञोक्तम्-कथ-मीद्दश्च एव वेपः । तेनोक्तम्-राजन् !
- ²⁵ (२६१) तन्वंति डंवरभरैर्महिमा न मन्ये श्लाघ्यो जनस्तु गुणगौरवसंपदैव । शोभाविभूषणगणैरितरांगुलीनां ज्येष्टत्वमेव रुचिरं खलु मध्यमायाः॥

इति अष्टादश्रखंडैः सिंगिणिर्विदेशराज्ञा प्रहिता तस्यापिता । उक्तं च-राजन्! किमर्थमहमाकारितः । राज्ञोक्तम्-चणकहेतोः । तेनोक्तम्-मयानंतगुणं लाभं विचार्य कणकोष्टागाराः सर्वेऽपि रंकहेतोर्दत्ताः । राज्ञो-क्तम्-तर्हि मया वडरंकेन भाव्यम् । एवं हिपतेन मूहकशत १८ चणकसमर्पणं विहितम् ।

[†] अत्र पृष्टसोपरितनभागे एतादशी टिप्पणी—

अट्ट य मृडसहसा वीसलदेवस्स सोल इम्मीरा । एकवीसा सुलताणा पयदिन्ना जगडु दुकाले ॥ नवकरवाली मणिअडा तिहिं अग्गला चियारि । दानसाल जगडूतणी कित्ती कलिहि मझारि ॥ निर्यातदानदाता हरिकांताहृदयहारशृंगारः । दुर्भिक्षसंनिपासे त्रिजगङ्क जगङ्क चिरं जीयात् ॥

३६. विश्वासघातकविषये नन्द्पुत्रप्रवन्थः (B.)

§ १८८) एकदा पाटलीपुरे नन्दो नृपत्तस्य भानुमती देवी । एकदा नृपस्त्वाखेटकं गतः । तत्र भोजनवेला जाता । नृपो देवीदर्शनं विना न धुनिक्ति । इतो वररुचिना देवीभारतीयसादाहेवीरूपं कृतम् । गुह्यदेशे विनदुः पपात । एकवेलमपाकृतः । पुनस्तथैव । तेन चिन्तितमत्रास्ते । राजा देवीं निर्वर्ण्य हृष्टो भुक्तश्र । विन्दुं हृष्ट्रा कुपितो नूनमसावन्तः पुरे विनष्टः । राजा रक्षकेण च्छन्नं वररुचिर्मारितः । आरक्षकेण भूमिगृहे स्थापितस्तस्य पुत्रान् 5 पाठयति । इतो नृपस तनयो राजपाट्यां गतोऽश्वापहतो वनं ययौ । अश्वस्तु मुक्तमात्रो सृतः । कुमारोऽपि फला-स्रादं कृत्वा वासार्थं वृक्षं प्राप्तः । तत्र उपरि रिछोऽस्ति । इतो नरगन्धाद् व्याघः समायातः । कुमारः प्राणभया-बृक्षमारूढः । रिछेनोक्तम्-एहि एहि त्वं ममातिथिः । व्याघ्रस्तु वृक्षमृत्रे स्थितः । रिछेनोक्तम्-व्याघ्रस्य मम वैरमित । त्वया तु न भेतन्यम् । कुमारस्तस्य समीपं गतः । रिछेनोक्तम् स्वस्थीभूय निद्रां कुरु । स रिछांके शिरो दत्त्वा सुप्तः । व्याघ्रेणोक्तम्-भो! रिंछामुं नरं यद्यर्पयसि तदाऽऽवयोः प्रीतिः सात् । आवां स्वजनावेकत्र 10 वनवासिनौ । तेनोक्तम्-नाहं विश्वस्थनः । अधुं युगान्तेऽपि नार्प्पयामि । इतः क्रमारो जागरितः । रिछेनोक्तम्-त्वं जागृहि, शयनमहं करोमि। परमसौ मां याचियप्यति। असौ कपटवानिस्ति। त्वया तु मिलनता न कार्या। एवम्रुक्तवा सकेशान् शासायां वद्धा सप्तः । इतो व्याघ्रेणोक्तम्-भो राजपुत्राम्नं ममार्पय । यथा त्वां जीवन्तं मुआमि । अन्यथा वनात्कथं यास्यसि । असौ मिलनोऽस्ति प्रातस्त्वां हत्वा खाद्यिप्यति । कुमारेण रिङस्तद्वचसा क्षिप्तः । स केशैर्वद्धैः स्थितः, न पतितः । तेन कुमार उक्तः-रे किमिद्म् १ अधुना किम् १ । स चरणयोर्निप-15 त्याह-अहं अछः । तेनोक्तम्-त्वं वचनाद्धष्टः । अतस्ते तत् यातु । तेन सदैन्यमुक्तः-अनुग्रहं देहि । तेनोक्तम्-'विसेमिरा' एवं जल्पसि । यदि कोऽप्यमुं व्याख्यानयिप्यति तदा ते वचः पहुतरं स्थात् । इतः प्रभाते तुरगपदैः सैन्यमायातम् । व्याघ्रस्तु वनं गतः । रिंछोऽपि गतः । कुमारः पुरमायया । परं 'विसेमिरा' एतदेव वक्ति । मान्त्रिकैर्जरप्यमानोऽपि तदेव वक्ति । पण्डितेन आरक्षकः पृष्टः-नृपसभायां का वार्ता १। खरूपं श्रुत्वोक्तम्-मां तत्र नयसि तदा सर्जं करोमि । तेनोक्तम्-चल ।...कथमाकारणं विना गम्यते १ । आरक्षकेण नृपः पृष्टः-देव 120 मम गृहे युवत्येकाऽऽयातास्ति सा सज्जीकरिप्यति । नृपेणाहृता । पण्डितः स्त्रीवेपो नृपसभां गतः । यवनिकान्त-रितः स्थितः । क्रमारो जल्पितस्तेन-

> (२६२) विश्वासप्रतिपन्नानां वञ्चने का विदग्धता । अङ्कमारुख सुप्तस्य हन्तुः किं नाम पौरुपम् ॥ इत्युक्ते आद्याक्षरो मुक्तः ।

25

- (२६३) सेतुं गत्वा समुद्रस्य महानद्याश्च सङ्गमे । व्रह्महा मुच्यते पापान्मित्रद्रोही न मुच्यते ॥ इति द्वितीयाधुरः ।
- (२६४) मित्रद्रोही कृतप्रश्च यो वै विश्वासघातकः । तावत्ते नरकं यान्ति यावबेन्द्राश्चतुर्दश ॥

30

[इति हतीयाक्षरः ।]

(२६५) राजँस्त्वं राजपुत्रस्य यदि कल्याणमिच्छसि ।
देहि दानं द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो ग्रहः ॥

[इति चतुर्थाक्षरः ।]

(२६६) नगरे वसिस हे वालेऽटव्यां नैव यास्यसि। सिंहव्याघमनुष्याणां कथं जानासि भाषितम्?॥ (२६७) देव! द्विजप्रसादेन जिह्वाग्रे मम भारती। तेनाहं नन्द! जानामि भानुमतीतिलकं यथा॥

नृपेणोपलक्ष्य पण्डितो मानितः । आरक्षकस्य प्रसादो दत्तः ।

॥ इति विश्वासघातकविषये नन्दपुत्रप्रवन्धः॥

(G.) सङ्ग्रहे नन्दनृपोह्नेखः।

§ १८९) पाटलीपुरे नंदनामा नृपोऽजिन । महाकृपणः कस्यापि किमिप न दत्ते । ततः सर्वेपां द्वेष्योऽजिन । अत्रांन्तरे कालदोपेण स मृतः । तदनु परकायप्रवेशिवद्यासिद्धिद्वेजेन राज्ञः शवे खात्मा निवेशितः । ततः शवं 10 समुत्थितम् । सकलराजलोकस्य महानंदोऽजिन । सर्वेपां राज्ञा प्रसादो दत्तः । मंत्रिणः सर्वेऽिप तदौदार्थं विलोक्य पुरे द्विजदेहसंस्कारं कारितवंतः । स एव राजा कृतः ।

३७. वलभीभङ्गप्रबन्धः (P.)

§ १९०) मरुमंडले पछीग्रामे काक्-पाताको आतरो । तयोर्लघुर्धनवान् । ज्यायांस्तु तद्वहे यूच्या वर्तते । एकदा प्राव्टकाले लघुक्तिः-केदारास्ते स्फुटिताः। खकर्म निन्दन् कुदालस्कन्धो यावद्याति तावत्कर्मकराः सेतृन् 15 बन्धयन्ति । के यूयम् १ । तैः प्रोचे-भवज्रातुः कर्मकराः । मदीयाः क सन्ति १ । वलभ्याम् । गतस्तत्र सः, गोपुरस-मीपे आभीराणां संनिधो तार्णगृहे स्थितः । अत्यंतं कुश्चतया तै रंक इति नाम कृतम् । इतः कोऽपि कार्पटिको कल्प-प्रमाणेन रैवत्तकेलादलाबुना सिद्धरसक्र्पात् तुंविका भृता । तामादाय कावडिमध्ये गुप्तीकृता मध्ये मार्गस्य याति । तुंवकमध्यादशरीरिणी 'काकूइ तूंबडी' इति वाणीमाकर्ण्य जातविसायभीर्वलभ्यां तस्य च्छिबनो वणिजः सबनि समागतः । तत्र स रंक इति ज्ञात्वा पूर्वनामभीतः सरसमलाचु तत्र स्थापयांचके । स्वयं सोमेश्वरयात्रायां गतः । 20 गलद्धिन्दुनाऽधस्तापिका खर्णमयी । सिद्धरसं मत्वा सर्वं क्रष्ट्वा गृहज्वालनं कृतम् । सर्वजनस्य समक्षं रोदित । खच्छवा प्रकटीकरणम् । लोकैः पर्यवसापितस्तथैव प्रज्वलितं गृहं मुक्तवाऽन्ये गोपुरे गृहं कृतम् । तत्र मोगाः संति । तसिन् साहसादुवास स निर्भयः । क्षेत्रे रात्रौ वसति । पत्नीं प्रति गृहे वक्ति पतामि ३ । प्रातः कथितम् । सा क्षेत्रे खर्यं गृहे । पुनः शब्दे पतेति प्रोक्तः । खर्णपौरुपसिद्धिप्रदः । सत्त्वैक-अगण्यपुण्यप्रभावात् खर्णपुरुप-सिद्धिः । तत्र प्राज्याज्यक्रयः । अन्यदा घृतभांडमक्षीणं प्रेक्ष्य सुस्थके चित्रकवछी दृष्टा । स्त्रियाः कैतवेन 25 गृहीता । कार्पण्यनिधिः । अथ खसुताया रत्नखचितकांचनकंकतिकायां राज्ञा खसुताकृते प्रसभमपहतायां तिहरोधो जातः। "काके शौचं०॥" सोऽपि म्लेच्छान् वलभीभंगाय। यद्द्च्छाखर्णदानम् । तदनुपकृत एकञ्छत्र-धरो निशि राज्ञि सुप्तजाग्रदवस्थे पूर्वसंकेतितनरसमालापः। अस्मिन् खार्मिनो नास्ति विचारलेशोऽपि, न परमपि पृच्छति । रंकवणिजा प्रेरितः सूर्यपुत्रं शिलादित्यं प्रति याति । प्रातः प्रयाणविलम्बं दृष्ट्वा तस्य स्वर्णदानम् । प्रनर्द्धितीयदिने प्रनः "सिंहस्यैकपदं०॥ कः स्थास्यति मे स्वामिनः०।" प्रयाणम् ।

80 § १९१) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता वालविधवाऽर्कसंमुखावलोके सौरं मंत्रं जपित । तेनैव भुक्ता । गर्भः । लज्जमानेन पित्रा वलभ्यां प्रस्थापिता । पुत्रजन्म । सोऽष्टाव्दः । लेखशालापराभृतो पितृनामानवगम्य मर्तुकामो-ऽर्केण करे कर्करोऽर्पितः । सापराधे शिलाऽन्यथा तवैव सा इत्युक्तः । ततः शिलादित्यः । तत्पुरनृपेण परीक्षायै तथाकृते मृते राज्ञि स एव राजा । अर्कदत्ताश्वारूढो नमश्रर इवेच्छाविहारी । जैनः । शत्रुङ्जयोद्धारकः । कदा-चित् सौगतैस्तमिष्ठिष्ठितम् । तद्भागिनेयो मछनामा क्षुष्ठः वेषपरावर्तेन वौद्धपार्थे । खे भारत्योक्तम् के मिष्टाः १ । बछाः । पण्मासान्ते केन सह १ । घृतगुडाभ्याम् । इत्युक्ते तुष्टा भारती । जिताः सौगता निष्कासिताः । शिला-दित्येनाचार्यपदं कारितम् । श्रीमछवादिद्धरिः ।

(२६८) का त्वं सुंद्रि जल्प देविसदृशे किं कारणं रोदिषि
भंगं श्रीवलभीपुरस्य भगवन् पश्याम्ययं प्रत्याः।
भिक्षायां रुधिरं भविष्यति पयो लब्धं भवत्साधुभिः
स्थातव्यं सुनिभिस्तदेव रुधिरं यसिन् पयो जायते॥

10

पुरीसमागताः श्रावकाणां पुरः प्रोच्याशिवं चिलताः । तैश्र समं शकटसहस्न १८ चिलताः । मोढेरपुरे रुधिरं पतद्धहे पयो जातम् । पुरीपरिसरे म्लेच्छाः । रंकेण पंचशव्दवादकान् वहुस्वर्णेन विभेद्य तस्य तुरगस्यारोहण-काले एव कियमाणे पंचशव्दसाराविणे ताक्ष्यवदुड्डीय स दिवम्रुत्पतितः । किंकर्तव्यतामृदः शिलादित्यसौर्नेजन्ने । "भवंत्युपा० ॥" "तावचंद्र० ॥"

(२६९) पणसइरी वासाइं तिन्निसयाइं अइक्रमेऊणं। विक्रमकालाउ तओ वलहीभंगो समुप्पन्नो॥

॥ इति वलभीभङ्गप्रवंधः॥

(G.) सङ्गहे वलभीभङ्गवृत्तम् ।

§ १९३) अथ पातसाहिकटके चिलते यवनव्यंतर एको वलभ्याम्रपागतः । क्वत्रापि प्रवेशं न लभते । कियद्भिदिंनैः किपिशीर्पमेकं रिक्तं वीक्ष्य स्थितः । ततस्तत्र किथहरिद्री द्विजो नित्यमित्रहोत्रहेतोः किपिलगोष्टतमादातुं खां भार्या २० प्रहिणोति । तथा विपण्णतथा तद्व्यंतरावेशेन खरमूत्रमानीयार्पितम् । तेन होमो दत्तः । प्रातर्यावता विलोकयित तावता सुवर्णं दृष्टम् । नित्यमेवं विधत्ते । त्राह्मण्या तु निजसख्या अग्रे कथितम् । एवं परंपरया पुरे सर्वत्र खर[मूत्र]होमोऽजनि । तेन पुरं निर्देवतं जातम् । यवनव्यंतराः प्रसृताः सर्वत्र । ततो यवनकटकमागतम् ।

§ १९४) वलभ्यां श्रीदेवचन्द्रसूरयो रात्रौ सुप्ताः कांचन देवतां प्रत्यक्षां द्वादशवर्परूपां पश्यंति स। पृष्टं च-"का त्वं सुंदरि० ॥" तत्स्वरूपं परिज्ञाय गुरुभिः श्रीसंघस राज्ञश्र निवेदितम् । ततः कियानपि श्रीसंघो निःसृतः । 25

§ १९५) अथ राज्ञोक्तम्-भगवन्! निजन्यंतरैः शुद्धिः कार्या। ततः स्तिभिर्निजन्यंतरद्वयं प्रहितम्। तत् द्वयं वलमानं यवनन्यंतरैर्धतं, क्रिट्टितं च। दिनत्रयं स्थापितं च। तावता गुरूणां उसेरिजीता। दिनत्रयं यावत् कटके चिलते मुक्तम्। ततस्ताभ्यां समग्रमि स्वरूपं श्रीपूज्यानां निवेदितम्। गुरवो गताः। राजा स्थितः। अधिनी-पूर्णिमादिने रथयात्रायां श्रीमालपुरे श्रीमहावीरः, कासद्रहे श्रीयुगादिदेवः, हारीजे श्रीपार्श्वनाथः, श्रीशत्रुंजये वलभीनाथश्राययौ। तद्तु रंकेण सर्वेऽपि यवना रणे क्षिप्ता मारिताः।

15

30

३८. श्रीमाताप्रबन्धः (B.P.)

१९६) पूर्वस्यां लखणावतीपुरी। राजा लखणसेनः। तस्यान्वये राजा रत्नपुद्धः। तस्य राजपाव्यां व्रजतः काचित् स्त्री सगर्भा अक्षतपात्रकरा सम्मुखा जाता। नृपेणाक्षतपात्रनालिकेरोपरि दुर्गा निविष्टा दृष्टा। नृपेण शाक्तिनिकः पृष्टः। तेनोक्तम्—अस्याः मुतोऽत्र नृपो भावी। राज्ञा आरक्षक आदिष्टः—यदेनां प्रछन्नं पुराद्विहिनींत्वा गर्जायां जिल्लापेण नृपादेशाद्विहिनींता। तयोक्तम्—क्ष मां नयसि?। तेनोक्तम्—मारियण्यामि। तया भयमीतयो-क्तम्—अहं वहिर्भूमौ यास्यामि। सा गता। भयाद्वर्भः पपात। सा चीवरेणावेष्ट्याययो। तैर्मारिता सा। स वालो एकया हरिण्या दृष्टः। कृपया स्तन्यं पायितः। सा प्रतिदिनं तं पालयति। छुव्धकेन एकेन वालं स्तन्यं पाययन्ती मृगी दृष्टा। नृपाय निवेदितं वालस्वरूपम्। राज्ञा तलारः पृष्टः। तेनोक्तम्—सा मृत्युवेलायां वहि-भूमौ गता। नृपेण वालस्ततः समानीय पुरपरिसरे मुक्तः। यथा धेनोश्चरणपातेन मरति। इतस्तस्य वालस्य 10 क्षुधितस्य वाक्यमुत्पन्नम्।

(२७०) यो मे गर्भस्थितस्यापि वृत्तिं कल्पितवान् पयः। शेषवृत्तिविधानाय स किं सुप्तोऽथवा मृतः॥

काचिद्धेनुर्नवप्रस्ता तत्रागत्य पाययति । नृपेण चिन्तितं न म्रियते । स धवलगृहे आनीतः । श्रीपुञ्जेति नाम कृतम् । कालेन नृपतिना राज्यं दत्तम् । श्रीपुञ्जस्य राज्यं पालयतः ऋमेण पुत्री जाता । तस्याः शरीरं 15 दिव्यम्, मुखं वानर्याः । ऋमेण प्रौढा जाता । कोऽपि न याचते । तस्याः खेदपराया जातिसारणमुत्पेदे । पाश्रात्य-भवी दृष्टः । तया नगरमध्ये शब्दः पातितः । यः कोऽपि मरुखल्याः समायातः सोऽभ्येतु । एकः पुरोऽभृत् । कुमार्या पृष्ट:-अर्बुदं वेत्सि ? । सर्वं वेबि । तत्र कामिकतीर्थाग्रे कुण्डमस्ति, तस्य तटे वंश्रजाल्यस्ति । तत्र जाल्यां वानरीशिरो लग्नमित । इतो मत्सकाशाद्रव्यमादाय तत्र गत्वा तच्छिरो जलान्तः क्षिप्ता समागच्छ । स तत्र गत्वा यावजले क्षिपति तच्छिरस्तावदेव कुमार्याः श्रीमाताया मुखं दर्शनीयं जातम् । नृपेण पृष्टा-वत्से ! किमि-20 दम् १ । तयोक्तम् - देव! मरुखल्यामप्टादश[शती]देशमध्ये नन्दिवर्द्धनो नाम पर्वतस्तत्र कामिकतीर्थमस्ति । तस्य तीरे वंशजाली। तत्राहं पूर्वभवे वानरीरूपार्श्यरूढा। फालच्युता वंशकीलेन विद्धा मृता। मम शरीरं गलित्वोदके पतितम् । तत्त्रभावादहं तव पुत्री जाता । शिरस्तत्र स्थितम् । अतो मे ईदृशं मुखम् । अधुना जनः प्रेपितः । तेन शिरिस जले क्षिप्ते वदनं स्वभावे जातम् । इतस्तसिन्नरे समायाते परिणयनपराख्नुखी जाता । अतिनिर्व-न्धेन पितरावाष्ट्रच्छच, बहुपरिकरेण अर्चुदाद्रावाययौ । तत्र तपः कर्त्तुं प्रारेभे । इतस्तत्र रसीअउ तपस्वी तपः 25 करोति । स तां दृष्टा क्षुव्धः । पाणिग्रहणार्थं ययाचे । तयोक्तम्-यदि सूर्योदयाद् अर्वाक् द्वादश पाजा अत्र पर्वते करोपि, तदा त्वां परिणये । तेन तपः शक्त्या शीघ्रं चकार । इति कियत्यपि रात्रिशेषे श्रीमातया तपःप्रभावा-रकुकुटः खरः कृतः । स तं श्रुत्वा विभातिमिति कृत्वा क्षुच्धः । हृद्यस्फोटान्मृतो व्यन्तरो जातः । साऽपि सपश्चात्तापा वैथदेवे प्रवेशं कृत्वा देवी श्रीमाता जाता।

॥ इति तपसि श्रीमाताप्रवन्धः॥

30(G.) सङ्ग्रहगतं श्रीमातावृत्तम् ।

§ १९७) पुरा रत्नपुरे रत्नशेखरो राजाऽऽसीत्। तेन दिग्विजयव्यावृत्तेन प्रवेशमहोत्सव.....तीति पृष्टः। ताभिः संतानाभावान्नेति कथितम्। ततः संतानहेतोर्नवांतःपुरिचकी राजा शाक्किनकेन वहिर्निष्कांतः। ततः शाक्किनकेनापन्नसत्त्वां कामपि कामिनीं काष्टभारवाहिनीमुद्रीक्ष्यास्याः सुतस्तव राज्ये भविता एवं जगाद।

ततो विषिण्ण(०पण्ण)मनसा राज्ञा सा गर्चायां क्षेपिता । तया प्रसूय वालो मुक्तः । नवप्रसूता हरिणी तं निज-स्तन्येन जीवयति । अथ टंकशालायां हरिण्यंकिता द्रम्माः पतंति । राजा तथा विज्ञायानीय च गोपुरद्वारि सायं मुक्तः । तत्रस्थो वालः संडेन रक्षितः । ततो राज्ञा समानीय स वालो लालितः श्रीपुंजराजा वभूव ।

श्रीपुंजराज्ञः पुत्री श्रीमाता मर्कटमुखी जाता । तस्या जातिसरणं जातिमिति—पुरा अर्चुदाचले मर्कटी फालां ददाना शाखया विद्धा । कुंडोपिर गिलत्वा देहं पिततम् । शिरो शाखायां विलयमेव स्थितम् । ततो देहं मानवाकारं कुंडपतनप्रभावादजिन । ततस्त्रतागत्य शिरोऽपि तया तत्र क्षिप्तं कुंडे । ततोऽर्चुदे तपस्यंतीं तां तत्र रसीयाकनामा योगी ददर्श। प्रार्थितं तेनेति—यन्मम पत्नी भव । तयोक्तम्—द्वादशपद्या विधेहि एकरात्रि मध्ये । तेन तथाकृते श्रीमात्रा कृतिमकुर्कुटा वासिताः । कृतिमग्रुनश्चरणयोविंलग्नाः । ततो हृदयस्कोटनेन स स्वयं विनष्टः ।

३९. जगदेवप्रवन्धः (G.)

§ १९८) मुद्रलपातसाहिसमीपात्समागतो जगदेवः श्रीसिद्धराजभूपतिना नवलक्षकंकणं परिधापितः । अत्रांतरे 10 केनापि कविना काव्यमिदं न्यगादि─

(२७१) उन्मीलन्मणिरिइमजालजिटलश्चायं रणे कङ्कणं विभ्राणस्तव वैरिवीरकदनकीडाकठोरः करः। हित्वा संयति जीवितानि रिपवो ये खर्गमार्ग्ग गता-स्तानाकप्रमिवाविवेश सहसा चण्डसुतेर्मण्डलम्॥

15

इति पठिते तसै तत्कङ्कणं दत्तम्।

एकदा सभायां अधो विलोक्यमानस्य चिंताप्रपन्नस्य कस्यापि कवेः पार्श्वे जगद्देवेन पृष्टम्-कवे! महती चिन्ता!। तेनोक्तम्-विमर्शनाऽस्ति। शृणु !

(२७२) दरिद्रान् सृजतो धातुः कृतार्थान् कुर्व्वतस्तव।जगद्देव!न जानीमः कः श्रमेण विरंस्यति॥ इति पठिते जगद्देवेन सुवर्णलक्षो दत्तः। 2

जगद्देवेन समागतस्य कस्यापि कवेः पार्थे नवविशेषं देशस्त्ररूपं पृष्टे तेनोक्तम्-देव ! चित्रमस्ति । असत्सार्थे पान्थस्यैकस्य पार्थे सरसः सम्रत्थितेन चक्रवाकेनैकेनेति पृष्टम्-

(२७३) चक्रः पप्रच्छ पान्थं कथय जनपदः कोऽपि संपत्स्यते में वस्तुं नो यत्र रात्रिभेवति स च विचिंखेति नं प्रत्युवाच । नीते मेरी समाप्तिं कनकवितरणैः श्रीजगद्देवनाम्ना सूर्येऽनन्तर्हिते स्यात्कतिपयदिवसैर्वासराद्वेतसृष्टिः॥

25

इत्युक्ते जगदेवेन सुवर्णसहस्रा दश दत्ताः।

कसिन्निप पण्डिते समागते श्रीजगद्देवेन वारं वारं पृष्टे सित जीवेति वारं वारं जल्पित पंडितः, नान्यत् । तेनोक्तम्-कथमेतत् जीवेति वचः १ । कविनोक्तम्-"त्विय जीवित जीवेति ।।"

(२७४) स्वस्ति क्षत्रियदेवाय जगदेवाय भूभुजे । यद्यशःपुंडरीकान्तर्गगनं भ्रमरायते ॥ ३० इति गदिते लक्षदानम् ।

25

. ४०. पृथ्वीराजप्रबन्धः (B.P.)

§ १०९) यथा—शाकंभरीपूर्यं चाहमानान्वये श्रीसोमेथरो नृपत्तस्य तन्जः पृथ्वीराजः, तन्नाता यशोराजः। तस्य शल्यहत्तः श्रीमालज्ञातीयः प्रतापसिंहः, मन्नी कर्इवासः। तयोरुभयोः परस्परं विरोधः। स राजा पृथ्वीराजो योगिनीपुरे राज्यं करोति। तस्य धवलगृहद्वारे न्यायघण्टाऽस्ति। [†]स महावलवान्, धनुर्भृतां धुरीणो नृपः। यशोराजस्तु 5 आशीनगरे कुमारभ्रक्तावित्तः । तस्य वाराणस्याधिपतिना श्रीजयचन्देन सह वैरम्। एकदा गर्जनकात् तुरष्कािष्मतिः पृथ्वीराजेन सह वैरं वहन् योगिनीपुरोपिर चचाल। पृथ्वीराजस्यामात्यो दाहिमाज्ञातीयः कर्इवासनामा मन्नीक्वरोऽस्ति। तस्यानुमत्या नृपस्तुरङ्गमलश्रद्धयमादाय, गजानां पश्चशत्या सम्मुखश्रलितः। तुरष्कसैन्येन सह युद्धं जातम्। भग्नं शाकसैन्यम् । सुरत्राणो जीवन् गृहीतः। स्वर्णनिगडे श्विर्वा योगिनीपुरे समानीय मातुर्वचसा मुक्तः। एवं वार ७ वद्धा बद्धा मुक्तः, करदश्च कृतः। प्रतापसिंहः करमुद्गाहियतुं याति गर्जनके। एकदा 10 मशीतिं विलोकितुं गतस्तत्र स्वर्णटङ्ककलश्चं दुर्वेसादीनां ददौ। मन्त्रिणा नृपायाभिद्धे—देव! गर्जनकद्रव्येण निर्वाहः स्यात्। स तु इत्थं विद्रवति। राज्ञा पृष्टम्। तेनोक्तम्—देवस्य तदा ग्रहवेपम्यं मत्वा मया धर्म्मव्ययः कृतः। ज्योतिर्विदः पृष्टाः। तैस्तु कप्रमुक्तम्। इतः शल्यहस्तो नृपस्य कर्णे विलग्नः—यदेप मन्त्री वारं २ तुरुष्कानान्यति। नृपो रुषः। तद्वस्या मन्त्रिणं इन्तुं बुद्धिमकरोत्। इतः रात्रौ सर्वावसरादृत्थिते मन्त्रिण प्रतोलीद्वारा-वितः स्थते राज्ञा दीपिकाभिज्ञानेन वाणं मुक्तम्। तन्मन्त्रिणः कक्षान्तरे भूत्वा दीपधरस्य करे लग्नम् दीपिका विदाः क्राच्यता । कलकले जाते नृपेण पृष्यम्—रे किमिदम् १। देव! मन्त्रिणः वातकेन वाणमुक्तम्। रे! मन्त्री जीवति देव! क्रुशलम् । इतः पाश्रात्ययामिन्यां चन्दवलिद्दिको द्वारभद्दो नृपं ग्राह—

(२७५) इक्कु बाणु पहुवीसु जु पइं कइंबासह मुक्कओं,
उर भिंतरि खडहडिउ धीर कक्खंतरि चुक्कउ ।
वीअं करि संधीं भंमइ सूमेसरनंदण !
एहु सु गडि दाहिमओं खणइ खुदइ सईंभरिवणु ।
फुड छंडि न जाइ इहु छुव्भिड वारइ पलकड खल गुलह,
नं जाणंड चंदवलदिउ किं न वि छुटइ इह फलह ॥

(२७६) अगह म गिह दाहिमओं रिपुरायखयंकर, क्रुड मंत्र मम ठवओं एहु जं बूय मिलि जग्गर । सह नामा सिक्खवडं जइ सिक्खिविडं वुडझइं, जंपइ चंदवलिहु मज्झ परमक्खर सुडझइ । पहु पहुविराय सइंभरिधणी सयंभरि सटणइ संभरिसि, कइंबास विआस विसट्टविणु मिट्छवंधिवद्वओं मिरिसि ॥

नृपेण मेदभयात् अन्धार्या क्षेपितः । आद्यौ प्रहरिकसमये मं (१) सर्वावसरे मन्त्री समायातः । विस्तितः । 30 भद्दो निष्कासितः । तेनोक्तम्—देव ! पुनर्भवतः कल्याणमतः परं न करोमि । सिद्धसारस्वतोऽहं । तव म्लेच्छैर्वद्ध-स्थाचिरान्मरणं भविष्यति । स निर्गत्य वाराणस्यां गतः । राज्ञा श्रीजयचन्देनोक्तम्—मया त्वमाहृतः परं नायातः । देव ! तवापि मृत्युरासनोऽतोऽत्रापि न स्थास्थे ।

 $^{1\} B$ श्रीगोलवालज्ञाः । $^\dagger-^\dagger$ एतदन्तर्गता पंक्तिः B आदर्शे नोपलभ्यते । 2 B नास्ति पदमिदम् ।

§२००) इतः कर्इवासे विद्यत्रिते नृतनो मन्त्री जातः। नृपः प्रतापसिंहस्य भ्रातृन्यमतिविहिनं मत्वा कारायां चिक्षेप। मित्रिणि विद्यत्रितेऽपि न त्यजिति। स सुरत्राणाय मिलितः। तेन कटकं शकानामहतम्। आयातं श्रुत्वा पृथ्वीराजः सम्मुखो निःसतः । तुरङ्गलक्ष ३, गज सहस्र १०, मनुष्य लक्ष १५: एवं.....आशीमतिक्रम्याग्रे कटकं गतम्। इतः सुरत्राणस्य मित्रणो वार्ता जाता। तेन कथा-पितम्-प्रस्ताचे आकारियण्यामि । अथ पृथ्वीराजः प्रसुप्तः दिनानि १० परं कोऽपि न जागरयति । यो 5 जागरयति तं मारयति । इतः प्रधानेन सुरत्राण आकारितः । राजा न जागर्ति । मन्दं मन्दं केऽपि सामन्ता युध्वा मृताः । केऽपि प्रणष्टाः । अश्वसहस्रविश्यमाने [भिगन्या] नृपो जागरितः । खङ्गमाकृष्य धावतः भगिन्योक्तम्-सं जनं मारयसि । कटकं सर्वं तव निद्राणस्य मारितम् । नृपस्त्वाह-अहमञ्चि-.....तिसन् विनष्टे नृषः शाकंभरीं मनसि कृत्य नाटारम्भार्थे आरुह्य प्रणष्टः । भ्रात्रा सह पृष्टि-धावितैस्तुरकैर्न गृह्यते । इत आशी......देशे पर्वतिकाद्वयस मध्ये भट्टोऽस्ति । तव (तत्र?) नृपं प्रेष्य जस-10 राजः स्थितः । तेन किञ्चित्कटकं खलहितम् । स तत्र मारितः । सुरत्राणसाहवदीनेन स मंत्री पुच्छरहितः सर्पवत्कृतः । स्थाने गतः केन गृहीतुं शक्यः १ । तेनोक्तम्-छन्देन । वाद्यान् वाद्यतः, यथा तुरगो नृत्यति । तथा कृते तुरगो नर्त्तितुं प्रवृत्तो न चलति । नृपस्य कण्ठे शृङ्गिण्यः पेतुः । राजा गृहीतः सुरत्राणे [न]। खर्णनिगडे प्रक्षिप्य योगिनीपुरे समानीतो भाषितश्च-राजन् ! यदि जीवन्तं मुश्चामि ततः किं कुरुपे ? । नृपतिः प्राह-मया त्वं सप्तवारान् मुक्तस्त्वं मामेकवेलमपि न मुश्चसि ? । इतो नृपोत्तारकसम्मुखं सुरत्राणः सभायामुपवि-15 शति । नृपः खिद्यते । स प्रधानः समभ्येति-देव ! किं क्रियते, दैवादिदं जातम् । नृपेणोक्तम्-यदि मे शृङ्गिणीं वाणांश्वापैयसि, तदाऽमुं मारयामि । तेनोक्तम्-तथा करिष्ये । पुनर्गत्वा सुरत्राणाय निवेदितम्-यदत्र त्वया नोपविशनीयम् । सुरत्राणेन तत्रायः पुत्तलकः स्वस्थाने निवेशितः । राज्ञः शृङ्गिणी समर्पिता । राज्ञा वाणं सुक्तम् । अयः पुत्तलको द्विधा कृतः । नृपेण शृङ्किणी त्यक्ता । न मे कार्यं सरितमन्यः कोऽपि मारितः । तदनु सुरत्राणेन गर्त्तायां प्रक्षिप्य लोप्टेहितः । सुरत्राणेनोक्तम्-अस्य रुधिरे भूमौ पतिते शिवं स्थात् । तथैव मारितः । संवत् 20 १२४६ वर्षे दिवं ययौ । योगिनीपुरं परावृत्त्यं सुरत्राणस्तत्र स्थितः ।

॥ इति पृथ्वीराजप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे पृथ्वीराजविषयकवृत्तम् ।

§२०१) श्रीयोगिनीपुरे श्रीप्रथिमराज्ञ उपरि अष्टाद्श्यमिर्लक्षेरिश्वानां पातसाहिरागतः। तदा एकाद्शीपारणं विधाय निद्राग्रथिलो राजा प्रसुप्तोऽस्ति। तदा महाविग्रहे जायमाने प्राकारे खंिष्डः पतिता। राजानं कोऽपि भीत्या 25 न जागरयित । कुङ्जिकयांगुष्टमोटनेन जागरितः। तावता तां मारियत्वा पुनः सुप्तः। द्वितीयिदेने वीरचतुष्टयेन जागरितः। खरूपं ज्ञात्वा यावता खयं प्राकारवातायने निविष्टस्तावताऽरिभिविशेषविग्रहो मंदितः। अत्याक्तिन राज्ञा तारादेवी स्मृता। प्रत्यक्षीभूता। तया निश्चि श्रीपातसाहिसमीपे सुक्तः सः। यावता तनमारणाय प्रहारं संचिति, तावता चतुर्भुजो दृष्टः, सुक्तः। द्वितीयवेलायां जटाधारी दृष्टः, सुक्तः। तृतीयवेलायां वृह्या दृष्टः। देव्या भणितोऽपि न मारयित । वस्त-प्रहरणादि गृहीत्वा समागतः। प्रातस्तत्सर्व पातसाहेर्द्शितम्। इति 30 कथापितं च—यथा वस्ताण्यानीतानि तथा मारियप्ये। पातसाहिना सर्वाणि वस्ताणि याचितानि। राज्ञोक्तम्—प्रयाणसप्तके प्रेपयिप्ये। तथा विहिते कटकं तथैव चिलतम्। राजा जीवग्राहं गृहीतः। वंदीकृतस्य तस्यान्यदा भोजनं स्वानेनात्तम्। तद्वलोक्य विपण्णः। आः किमेतत् । मदीया रसवती संदिसप्तश्चत्या समागतवती। सांप्रतिमयमवस्था। ततो मृतो ग्रुद्धेन।

30

४१. जयचन्द्प्रबन्धः (P.)

§ २०२) कान्यकुळादेशे वाराणसी पुरी नवयोजनिक्तीणी द्वादशयोजनायामा । तत्र श्रीविजयचन्द्रांगजो राष्ट्रक्र्टीयो जैत्रचन्द्रो राज्यं करोति । तस्य कर्प्रदेवी परमप्रीतिपात्रम् । अथ नगरवास्तव्य[स्य] कस्यापि शालापतेः पुत्री सुहागदेवी पुरीप्रत्यासन्ने प्रामे परिणीताऽस्ति । सा एकदा भर्ता अपमानिता रुटा पितृगृहं प्रति चचाल । 5 मार्गे यान्त्या गोमयोपरि फणी कृतफणस्तव्छीपें सक्जरीटस्तं दृष्ट्वा चिन्तितवती—यदि कोऽपि दक्षो मिलति तदा प्रच्छामि । इतः पुराद्विद्याथरो नामा द्विजस्तद्यामे भिक्षार्थं त्रजन्मार्गे मिलितः । तया पृष्टं शकुनं वेत्सि ! तेन ओमित्युक्ते, तयाऽभिहितम्—अस्य किं फलम् १ । तेनोक्तम्—इदमतीव सुन्दरम् । इतः सप्तमे दिने त्वं नृपतेः सर्वे-श्वरी भविष्यति । परं मम किम् १ । तयोक्तम्—यदि मे त्वयोक्तम्, तदा ते श्रीकरणम् । तेनोक्तम्—ममाभिज्ञानं नाम च शृण्य—अहं द्विजपाटके उत्तराश्रिते देवथरद्विजभागिनेयो विद्याथरो नाम । सा 'एवं' प्रतिश्रुत्य गता पितृगृहम् । सप्तमे दिने राजपाट्यां नृपेण त्रजता गृहद्वारे वनदेवीव दृष्टा । सानुरागो धवलगृहं गत्वा शालपित्ताहृत्य पुत्रीं ययाच । तेन दत्ता, धवलगृहं नीता । तया नृपो द्विजाय प्रतिपन्नं निवेदितः । राज्ञा विद्याधरा आहृताः । अतसप्तकं मिलितम् । देवी सौभाग्यदेवी प्राह—स विद्याधरो वामनेत्रे काणोऽस्ति । तेपामपि शतत्रयमायातम् । उत्तरसाकं मिलितम् । देवी सौभाग्यदेवी प्राह—स विद्याधरो वामनेत्रे काणोऽस्ति । तेपामपि शतत्रयमायातम् । उत्तरसाकं दिवापदे देवधरस्य भागिनेयः ममानीयताम् । अश्ववारः प्रहिताः । स सजीभृय स्थितोऽस्ति । अश्ववारेव्यति हतम्—भो विद्याधर! राजा आकारयति । तस्य मातुलपल्योक्तम्—रे क स , क राजकुलं; क्यां श्रीकरणं लभ्यसे १ । तेनोक्तम्—यद्भविष्यति तद्रप्रव्यम् । स राजकुले गतः । सर्वमुद्राधिकारी कृतश्च । स महात्यागी नित्यं बाह्यणानामप्रादशसद्दसस्त्रमग्रासने भोजयति ।

§ २०३) अथैकदा राजा जैत्रचन्द्रः कथान्तरे इत्यशृणोत्-यद्धङ्गालदेशे लखणावतीपुरी तत्र लखणसेनो राजा । तस्य दुर्गो दुर्गाद्योऽस्ति । तदनु नृषः प्रतिज्ञामकरोत्-यत् गतमात्र एव दुर्गं गृह्णामि वा यावन्तो दिनास्तत्र लगन्ते ता॰·····कुमारमित्रवाक्यम्-

20(२७७) उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यार्दितः पुरः । मृत्या यामर्त्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥
नृपेण लखणसेनमाहूय सगौरवं परिधाय दण्डं ग्रुक्तवा खराज्ये प्राहिणोत् । श्रीजैत्रचन्द्रोऽपि पश्चाद्वलितः
स्वनगरीमायातः । इति लखम्(ण)सेनपराजयप्रवन्धः ।

तदनु चन्दवलिद्दभद्देन श्रीजैत्रचन्द्रं प्रत्युक्तम्-

(२७८) त्रिण्हि लक्ष तुषार सवल पाषरीअई जसु हय, चऊदसई मयमत्त दंति गजंति महामय।

वीस लक्ख पायक सफर फारक धणुद्धर,
ह्हसडु अरु बलुयान संख कु जाणइ तांह पर।
छत्तीस लक्ष नराहिवइ विहिबिनडिओं हो किम भयउ,
जइचंद न जाणउ जल्हुकइ गयउ कि मूउ कि धरि गयड॥
पतनागतं वर्षद्वयेनोक्तम् । तेनैव पूर्वम्रक्तम्-

(२७९) जइतचंदु चक्कवइ देव तुह दुसह पयाणउ, धरणि धसवि उद्धसइ पडह रायह भंगाणऔं। सेसु मणिहिं संकियं मुक्क हयखरि सिरि खंडिओं, तुद्दओं सो हरघवलु धूलि जसु चिय तणि मंडिओं। उच्छलीं रेणु जसिंग गय सुकवि व(ज)ल्हु सचंडं चवइ, वग्ग इंदु विंदु भुयजुअलि सहस नयण किण परि मिलड्॥

§२०५) अधैकदा सुहागदेव्या नृपो व्याहतः—देव! राज्यं कस्य दास्यथ १। नृपेणोक्तम्—कर्प्रदेव्यात्मजस्य। 15 मम पुत्रस्य कथं न १। त्वं सङ्ग्रहणी, अतस्ते पुत्रोऽयोग्यः। सा त्वर्द्वराज्यस्यामिनी। धनेन परिपूर्णा। तया तदैव मनिस विधाय गर्जनके स्वपुरुपान् प्रहित्य सुरत्राणः सहावदीन आनीतः। योऽन्तरा पृथ्वीराजं विगृह्य योगिनीपुरे स्थितः। तया कथापितम्—मया आहूतः समागच्छेथाः।

इतः पृथ्वीराजे दिवं गतौ श्रीजैत्रचन्द्रेण वर्द्वापनकान्यारव्धानि । गृहे गृहे गृतेनोद्दन्यस्थालनमारव्धम् । तृर्यस्यः प्रवृत्वते । मत्री राजकुले न याति । केनाप्युक्तम्—देव ! पृथ्वीराजमरणं मित्रणो विचारे नायातम् । 20 एवं चतुर्थिदिने मत्री राजकुलं प्राप्तः । राज्ञोक्तम्—मित्रन् ! चिराद् दृष्टोऽसि । देव ! राजकार्यव्यग्नत्या नायातं मया । देव ! केयं खडखडा शाराज्ञोक्तम्—किं न वेत्ति पृथ्वीराजमरणम् शाप्तं विधे वैरिणि मृते वर्द्वापनकानि किं न विधीयन्ते । मित्रणोक्तम्—तिसन् हते विपादं कर्तुं युज्यते हर्षो वा शा । राज्ञोक्तम्—कथम् शा देव ! प्रतोली भवति, तस्यामयोमयानि कपाटानि, अर्गला च अयोमया । यदा सा मज्यते, कपाटौ च पृथ्वप्रवतः, तदा दुर्गस्य किं स्थात् शा देव ! स पृथ्वीराजस्य अर्गलासम् आसीत् । तस्मिन् विनष्टे गृहसूत्रं कर्तुं 25 युक्तं वा वर्द्वापनकम् शा तिष्ठतु वर्द्वापनकम् । देव ! यद्य पृथ्वीराजस्य तत्कत्त्ये आत्मनो ज्ञेयम् । मित्रणा मेलापकः प्रार्त्वः । तया सुरत्राणस्य कथापितम्—यद्त्रेव स्थेयं परत्र न गन्तज्यम् । देव्या नृपो विज्ञप्तः—देव ! मेलापकः किं कुरते शा तर्या सुरत्राणस्य कथापितम्—यद्त्रेव स्थेयं परत्र न गन्तज्यम् । देव्या नृपो विज्ञप्तः—देव ! मेलापकः किं कुरते शा तर्या नृपो व्याहृतः । मित्रिणोक्तम्—देव ! वर्षद्वयं अहं व्ययं करिष्ये । नृपेणोक्तम्—सोऽपि 30 मदीयम् । मित्रणा सामन्तान् प्रेप्य नृपो व्याहृतः । मित्रणोक्तम्—देव ! वर्षद्वयं अहं व्ययं करिष्ये । नृपेणोक्तम्—सोऽपि 30 मदीयम् । मित्रणा सामन्तान् प्रेप्य नृपो व्याहृतः । सामारातिः। सामारं विग्रुच्य जरीदकेन थावितः (१) । नृपस्य कटकेन सह युद्धे जाते सुरत्राणो भग्नः प्रणष्टः । इतः सुरत्राणपत्या पति चिन्तातुरं विलोक्य उक्तम्—देवास्थे स्थामता कथम् शा सुरत्राणोनोक्तम्—युवत्या वार्तया समागताः परं पश्चाहमनं दुर्वटम् । देव ! मम स्वमं जातं यत्—अहन्वत्य वार्तया समागताः परं पश्चाहमनं दुर्वटम् । देव ! मम स्वमं जातं यत्—अहन्वतः वर्वास्ते । सम्ते वर्वास्ते । सम्ते चर्वास्ते वर्वास्ते वर्वास्ते वर्वास्ते वर्वास्ते वर्वास्ते । सम्ते वर्वास्ते । स्वर्वाणोनोक्तम् चर्वास्ते वर्वास्ते । सम्ते वर्वास्ते वर्वास्ते वर्वास्ते वर्वास्ते । सम्ते वर्वासे वर्वासे वर्वासे वर्वासे वर्वासे स्वर्वासे वर्वासे वर्वासे सम्ते वर्वासे सम्ते वर्वासे सम्ते वर्वासे सम्ते वर्वासे सम्ते वर्वासे सम्ते व

म्मद्पुत्रमहमदं यदि सेनान्यं करोपि तदा ते जयः सात् । तदा ते आकारिताः । तेपां पश्चशती मिलिता । देव्योक्तम्—स वामनेत्रे काणोऽस्ति। स आकारितः दलपतिश्व कृतः। इतः शेपमपि कटकमानीतम्। इतः सुहाग्-देव्योक्तम्—देव ! राज्यं कस्य ? । कर्प्रदेव्यास्तनयस्य । यदि मत्सनोर्ददाति भवान् तदाऽद्यापि परचकं चलति । राज्ञोक्तम्—त्वयाऽऽनीतम् ? । तया प्रोक्तम्—अन्येन केन ? । तदा स्त्रीचरितं नीतिं च स्मृत्वा—ज्येष्ठपुत्रमिभिष्व्य, कतामदृष्टव्यमुखाऽऽसीरित्युक्तवा दृष्टा (व्येष्ठा)याः सुतं राज्ये निवेद्य, पतिमारिकायास्तस्याः सुतं वृद्धि (व्हं ?) सहादाय नृपो युद्धाय निस्तसार । महति संयुगे जायमाने नृपेणोक्तम्—रे गलितकंसस्य ६४ जोटकानि निःश्वानानां किं स्फुटितानि ? । [क्यं]न श्रूयन्ते । देव ! वाद्यमानानि सन्ति परं शृङ्किणीगुणैरुपलप्ता-(१रुद्धा)नि । नृपस्तत् श्रुत्वा उदरे शिक्षकां श्विष्टा पुत्रं चाग्रे करिण्यधिरोप्य यम्रनायां करिणमक्षेप्सीत् । स पश्चत्वमाप । ज्येष्ठपुत्रोऽपि निःसृत्य युद्धे विनष्टः । संवत् १२४८ वर्षे चैत्र श्रुदि १० दिने वाराणसीमा-10 दाय सुरत्राणः प्रवेशं कर्त्तु पृष्टनः । कर्प्रदेवी यमगृहं प्रविष्टा । द्वितीया सुहागदेवी लघुपुत्रमादाय प्रतोल्यां स्थिता । सुरत्राणेनोक्तम्—केयम् ? । देव ! यया त्विमहानीतः । सुरत्राणेन वदने निष्ठीवनं कृत्वा एकस्मै धगडाय, या पत्युनी जाता सा मे भविष्यति इति वदता, प्रदत्ता । पुत्रस्तु तुरुष्वः कृतः ।

॥ इति श्रीजैत्रचन्द्रनृपतेः प्रवन्धः॥

(G.) सङ्गहे जयचन्द्रनृपवृत्तम् ।

15 § २०६) अन्यदा कोपकालाग्निरुद्र १, अवंध्यकोपप्रसाद २, रायद्रहवोलादि विरुद्दानि श्रीपरमिद्दनः श्रुत्वा श्रीजयचन्दोऽसहमानस्तदुपरि ससैन्यश्रचाल । तहेशभंगं कुर्वाणः कल्याणकटकनाम्नीं राजधानीमाजगाम स क्रमेण । परं कोऽपि विज्ञप्तिकां कर्तुं न शकोति यत्कटकमागतम् । परं खयं परमिद्दिराजा परसैन्यं दृष्टा दुर्गान्तः । ततो राजा सैन्येन रुद्धः । वर्षमेकं जातम् । पश्चात्परमिद्दिना राज्ञा मछदेवमहामात्येन सह मंत्रं विधाय तत उमापितधरं मंत्रिराजमाकार्य इत्युक्तम् –यत् मंत्रिविद्याधरसमीपं गत्वा तस्य किंचित्कथयित्वा त्वं 20 सैन्यमुत्थापय । ततः स 'आदेशः प्रमाण'मित्युक्त्वा सायं प्रतीहारमुक्तः सन् मंत्रिविद्याधरसमीपमगमत् । उमापितधरमंत्रिणा एकं सुभापितं पत्रे विलिख्य मंत्रिराज्ञो विद्याधरस्याग्रे मुक्तम् । तदिदम् –

(२८०) उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यातुरः पुरः । मूत्त्यां यामर्त्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥
एतदर्थमवधार्य निशीथे एव पल्यंकस्थितो राजा समुद्धत्य क्रोशपंचके मुक्तः । प्रातः राजा दुर्गां न
पश्यति । ततः पृष्टम् । मंत्रिणा विद्याधरेणोचे सर्वं खरूपम् । राजा कुद्धः । ततो विद्याधरः प्राह-राजन् ! कथं
25 ममोपरि कोपं कुरुपे । कणद्यत्तः क्वापि न गताऽस्ति । ततो राजाह-अतोऽहं कुद्धः, यतस्त्वया मम लीला
विनाशिता । अनेन सुभापितेन मम राज्यमपि कथं नार्पितम् । एतद्भणने विरुदानि मुक्तानि । मानं राज्यं च सर्वं
मुक्तम् । इति भणित्वा जयचन्द्रः खस्थानमगमत् ।

४२. वराहमिहिरवृत्तम् (G.)

§ २०७) पुरा वराहिमिहिरो विद्यार्था ज्योतिःशास्त्रं पठन् उपाध्यायगोरक्षणां करोति। तत्र नित्यं लग्नं मण्डियत्वा 30 पठिताभ्यासं करोति । एकदा सिंहलग्नं मण्डितम् । प्रमादाद्विसर्जनं विस्मृतम् । गृहगतेन तेन भोजनसमये स्मृतम् । तत्र गतः । शिलोपि निविष्टः सिंहो दृष्टः । निर्भयेन सता सिंहोदराधो लग्नं विसर्जितम् । सूर्यस्तुष्टः । पण्मासं विमानस्थितेन नक्षत्रग्रहतारागणं विलोक्य समागतेन 'वाराहीसंहिता'ग्रम्रखज्योतिःशास्त्राणि निर्ममे ।

अथ वराहिमिहिरस पुत्रो जातः । ततः पित्रा जातके चतुरशीतिवर्षाणि आयुर्वितितम् । तदनु जिनदीक्षा-दीक्षितश्रीभद्रवाहुपार्थे वर्द्वापनिकाकृते मनुष्यः प्रहितः । तद्वचः श्रुत्वा स्रिमिरुक्तम्—जातस्य सप्तिदेनानि आयु-रिक्ता । सप्तिदिनान्तेऽस्य मार्जारिकया मरणं भविष्यति । तेन सर्वत्र मार्जारिका रिक्ता । निण्णीतवेलायां अर्ग-लिकामार्जारिकया मरणमजिन । ततो विषण्णेन तेन पुस्तकैः सह काष्ट्रभक्षणं प्रारव्धं यावता तावता तत्रागतेन श्रीभद्रवाहुना कथितम्—कथं काष्ट्रसाधनं कुरुपे १। शास्त्राणि न वितथानि । परं या दोरिका भवताऽभिज्ञाने विहि-ताऽभृत् सा कुव्जिकया महाकष्टेन प्राप्ता। तदा वेलाव्यतिक्रमोऽज्ञाने । तया तु सप्तिदनान्येवायुक्ततो मानितम् ॥

४३. नागार्जुनप्रवन्धः (Br.)

§२०८) ढंकपर्वते श्रीशञ्च खारिकरे करेशे राजपुत्ररणसिंहस भोपलानामीं सुतां जाता तुरागो वासुकिर्नागराजः सिपेवे । पुत्रो जातः । नागार्जन इति नाम कृतम् । स च वासुकिना सुत्तलेहात् सर्वासामीपधानां पत्राणि फलानि भोजितः । तत्प्रभावेन सर्वसिद्धिभरलङ्कृतः सिद्धपुरुप इति ख्यातः । पृथिवीं विचरन् पृथिवीस्थान-10 पत्तने सातवाहननृपस्य कलागुरुर्जातः । स च विद्याध्ययनार्थं पादिलप्तकपुरे पादिलप्ताचार्यं विद्यार्थी सेवते । स गुरुः पादतललेपवलेन तपोधनेषु विहरितुं गतेषु श्रीशञ्ज खादिषु देवान्तत्वा स्थानमायाति । आगतानां नागार्जुनश्ररणक्षालनं कृत्वा स्वाद-वर्ण-गन्धादिभिः सप्तोत्तरं शतमौपधानाममीलयत् । तेनोपदेशं विनाऽपि जलेन चरणलेपे कृते कुर्कुटोत्पातमुत्पत्य पतितो वणजर्जरिताङ्गो गुरुभिः पृष्टः—िकमेतत् १। पृज्यपाद-प्रसादः । कथम् १। यथास्थिते उक्ते गुरवस्तस्य कौशल्येन रिक्षताः । गुरुभिरुक्तम्—गुरुत् विना कलाः कथं 15 फलदाः स्युः । प्रसादमाधातु गुरवः । भवतो मिथ्यात्ववासितस्य कलां न दिश्च । श्रावकत्वमङ्गीकृरु । तेन तथा कृते, तन्दुलजलेन लेपं कृत्वा गगने स्थैरं वजिति स ।

१२०९) एकदा स्रेरं विचरता गुरुमुखात् श्रुतम्—यत् रसिसिद्धं विना दानेच्छा न पूर्यते । तदन्त रसं परिकर्मयितुं प्रवृत्तः । खेदन-मर्दन-जारण-मारणानि चके । परं स्थेयं न वधाति । गुरवः पृष्टास्तैरुक्तम्—दृष्ट-निर्दलनसमर्थश्रीपार्श्वनाथस्य दृष्टों साध्यमानः सर्वलक्षणोपलक्षितया महासत्या मृद्यमानो रसः स्थिरीस्य 20 कोटिवेधी भवति । तत् श्रुत्वा स श्रीपार्श्वनाथप्रतिमामन्वेष्टमारेमे । इतश्च नागार्ज्जनेन स्विपता वासुिकध्यातः । प्रकटीभृतः । पृष्टं च—श्रीपार्श्वस्य काश्चिद्दिच्यां प्रतिमां कथय । तेनोक्तम्—पुरा द्वारावत्यां श्रीसमुद्रविजयेन श्रीनेमिनाथमुखात् श्रीपार्श्वप्रतिमा प्रासादे स्थापित्वा पृजिता । पूर्वाहानन्तरं समुद्रेण प्राविता । प्रतिमा तथैव समुद्रमध्ये स्थिता । कालेन कान्तीपुरीवासिनो धनपतिनामकस्य सांयात्रिकस्य यानपात्रं देवतातिशयात् स्विलतम् । अत्र जिनविन्यं तिष्ठतीति दिन्यवाचा निश्चित्य, तत्र नाविकान् निक्षिप्य आमतन्तुभिः सप्तिर्भवद्यो-25 स्तृता प्रतिमा । खपुरे नीत्वा प्रासादे स्थापिता । चिन्तातीतो लाभो जातः । स नित्यं नित्यं पूजां करोति । ततः सर्वातिशयसम्पन्नं तद्विम्यं ज्ञात्वा नागार्जुनो रसिसिद्ध्ये सेर्डानदीतटेऽपहत्यानीतवान् । तस्य पुरतः श्रीशातवाहनस्य नृपस्य चन्द्रलेखां देवीं महासतीं व्यन्तरीसान्निध्यादानीय प्रतिनिशं रसमर्दनं कारयति । एवं तत्र भूयो भूयो गतागतेन देव्या बांघव इति प्रतिपन्नः । तया तेपाभोपधानां मर्दने कारणं पृष्टम्—कोटिवेधी रसोऽसौ । अन्यदा देव्या खपुत्रयोरुक्तम्—यत्सेडीनदीतटे नागार्जुनस्य रसिद्धिभविष्यति । तौ रसलुच्धौ ३० नागार्जुनतिन्तकमागतौ । कपटेन रसं जिघृक्षू छनं अमनतौ यसा रन्धनीगृहे नागार्जुनो भूनोक्त तामालपतः । त्वं नागार्जुनरसवतीं लगारान्ते क्षारेत्युक्तया

र् जैनानां सते देवानां सनुजेन सह सम्बन्धो न युज्यते-टिप्पनी ।

10

तयोक्तम् । ताभ्यां रसिद्धिनिश्चिता । तस्य वधोपायं पृच्छन्तौ अमतः । केनाप्युक्तम्-अस्य दर्भाङ्करान् मृत्युः । नागार्जनेन द्वौ क्रुतपौ भृतौ ढंक्रपर्वतस्य गुहायां क्षिप्तौ । पृष्टचराभ्यां ताभ्यां ज्ञातौः वलमानो दर्भाङ्करेण ज्ञने मृतः । क्रुतपौ देवतया हृतौ ।

> (२८१) अजाते चित्रलिखिते मृते च मधुसूदन!। क्षत्रेषु त्रिषु विश्वासश्चतुर्थी नोपलभ्यते॥

देवतया क्रिपतया, द्वाविप पश्चात्तापपरो-आवाभ्यां किमकारि यः खटिकासिद्धः कलावान् स हतः; तं हत्वाऽऽवाभ्यां किं साधितमिति-चिन्तयन्तौ मारितौ ।

॥ इति नागार्जनप्रवन्धः ॥

४४. श्रीपाद्लिससूरिप्रवन्धः (B.)

(२८२) जयन्ति पाद्छिप्तस्य प्रभोश्चरणरेणवः। श्रियः संवनने वरुयचूर्णतः प्रणताङ्किनाम्॥

§ २१०) तत्र कोशला नाम नगरी । विजयत्रक्षा भूपः । तत्र प्रसिद्धः प्रफुछः श्रेष्ठी । रूपेणाप्रतिमा [प्रतिमाणा नाम] भार्या परं वन्ध्या । अनेकौपधदेवपूजोपयाचितैरपि नापत्यमाप । अन्यदा विखिन्ना श्रीपार्थनाथचैत्ये वैरोद्यादेवीं कर्पूरागुरुभिः सम्पूज्योपवासाष्टाहिकां चक्रे । ततो देवी प्रकटीभूय पुत्रवरं ददौ, इत्याख्यातवती च-15 पुरा निमविद्याधरान्वये श्रीकालिकाचार्यसन्ताने विद्याधरगच्छे श्रुतसम्रद्भपारगश्रीआचार्यनागहित्तगुरुणाम्नेकलव्धवतां पुत्रेच्छया पादप्रक्षालनजलं पित्र । ततः प्रातरुपाश्रये गत्वा तपोधनहत्त्वस्थितं पादोदकं पीतम् । प्रभुनमस्कृतः । धर्मलाभपूर्वमित्यादिदेश-यतो दशहस्तान्तरे पयःपानेन तव पुत्रो दश्योजनान्तरे यम्रनापर-तीरेऽनेकप्रभावनिधानं विद्धिष्यते । तथान्ये तव पुत्रा नव भविष्यन्ति । तयाऽभाणि-प्रथमपुत्रो भवतां दत्तः । गुरुभिर्भणितम्-संघमुख्यो भविता । जातः पुत्रः । प्रभूणामिर्पतः । अष्टवार्षिको नीत्वा शुभलग्ने प्रवन्यां दत्त्वा 20 च मण्डननामगणिसमीपे मुक्तः पठनाय । वर्षमध्ये श्रुतपारगो जातः । अन्येद्युरारनालं गुर्वादेशेनानीयेर्यापथिकीं प्रतिक्रम्य गुर्वग्ने गाथां पठितवान्-

(२८३) अंवं तंवच्छीए अपुष्पिअं पुष्पदंतपंतीए। नवसालिकंजीयं नववहृह कुडुएण में दिश्रं॥

> (२८४) जह जह पएसिणिं जाणुअंमि पालित्तउ भमाडेइ। तह तह से सिरवयणा पणस्सए मुरंडरायस्स॥

अन्ये मंत्ररूपामिमां गाथां जपन्ति, ततः शिरोवेदना याति । प्रभावतो राजा नित्यं भाक्तं करोति । एकदो-पाश्रयागतेन राज्ञा पृष्टम्-एते तपोधना भवतां भणितं दानमानादि विना कुर्वन्ति ? । इति पृष्टे गंगा कुतो बहति ? । तपोधनेन गंगायां गत्वा दण्डकं तारियत्वा-पूर्वाभिम्रस्वी वहति-इति गुरोरग्रे कथितम् ।

(२८५) निवपुच्छिएण भणिओ गुरुणा गंगा कओमुही वहड़ । संपाइअञ्बं सीसो जह तह सञ्बत्य कायञ्बं ॥

इत्थं नृपो गुरुभिः समं तिष्ठन् दिनानि गच्छिन्त न ज्ञातवान् । अन्यदा लाटदेशे ओंकाराख्यनगरे प्रभवो वालैः समं क्रीडिन्ति । देशान्तराहिन्दतुमायातश्रावकाणामुत्तरं कृत्वा सिंहासनोपवेशे पुनरायातश्रावकोपलक्षणे वालः क्रीडितीति सत्यभापणे वालगुरोर्वचसा जहर्षुः । अन्यदा गुरवो मार्गे गच्छत्स शकटेषु तपोधनेषु विहर्तुं गतेषु क्रीडिनसमेतवादिनो विप्रतार्थ पर्टीं प्राष्ट्रत्य सिंहासने सुप्ताः । वादिभिरागत्य पुनर्विभातकथकताम्रच्हस्रः (स्वरः) कृतः । प्रशुभिविंडालस्यरे कृते वादिनो मानहीना जाताः । पथात्तरुक्तं मध्ये कः १ गुरुभिरुक्तम्—देवः । तैरु- 10 क्तम्—को देवः १ गुरुभिरुक्तम्—अहम् । तैरुक्तम्—कोऽहम् । गुरुभिरुक्तम्—विवः । गुरुभिरुक्तम्—करत्वम् । गुरुभिरुक्तम् । गुरुभिरुक्

(२८६) पालित्तय कहसु फुडं सयलं महिमंडलं भमंतेणं। दिहो सुओँ व कत्थिव चंदणरससीअलो अग्गी॥

सूरयोऽविलम्बेनोत्तरं ददुः-

15

(२८७) अयसाभिओगमणदूमिअस्स पुरिसस्स सुद्धहिअयस्स । होइ वहुं तस्स फुडं चंदणरससीअलोअग्गी ॥

इति वादिजयः कृतः।

§२११) अन्यदा श्रीशञ्जुङ्कये तीर्थयात्रां कृत्वा कृष्णभूपरिक्षतं मानपे(खे)टपुरं श्रीपादिलप्तगुरवः प्राप्ताः । तद्तु शत्रु रैवतके संमेतेऽष्टापदे च तीर्थयात्रां चिकीर्पवः सुराष्ट्रादेशमायाताः । तत्र ढंकानामपुरीं विहरन्तः समेतास्तत्र नागार्जनो योगी भावी गुरुशिष्यः । तद्भुतं चेदम्-संग्रामराजपुत्रः, प्रिया सुत्रता, शेपाहि-20 स्वमस्चितपुत्रस्य नागार्जुननामकरणम् । स वर्षत्रयदेश्यः क्रीडन्–सिंहार्भकं विदार्य तन्मांसं खादन् पितृवारितः । यत्क्षत्रकुले नखी न भक्ष्यते । तदायातसिद्धपुरुपेणाख्यातम्-मा विपीद, तव पुत्रो रससिद्धो भावी । तद्तु कलाविद्धिः कुर्वन् संगीतं रससिद्धो जातः । सूरिं तत्रायातं ज्ञात्वा पर्वतभूमौ स्थितः । खशिष्येण पादलेपेच्छुः तृणरत्नपात्रे सिद्धरसं दौकितवान् । गुरुणा सित्वा भित्तावास्फाल्य शतखण्डे कृते शिप्यं विच्छायमुखमावर्ज्य भोजनं दापयित्वा व्यावर्तमानस्य काचपात्रे निरोधं कृत्वा प्राभृतं प्रेपितम् । उद्घाट्य विलोकिते क्षारगन्धेन निरोधं 25 ज्ञात्वा कुम्पको भन्नः । दैवयोगाद्विह्रसंयोगे सा समृत्रा मृत् सुवर्णं जाता । नागार्जनेन ज्ञातम् । तस्य प्रभोर्मलमू-त्रादिसंगेन पापाणादयोऽपि सुवर्ण्णीभवन्ति । अहमेतावन्ति दिनानि यावदनेकौपयोपक्रमं सुधा कृतवान् । अस्य प्रभावे का कथा । ततोऽसौ विनयनम्रो मदं त्यक्त्वा प्रभुपादसेवाचरणक्षालनादिकां देहग्रुश्रूपां करोति । श्रीसरयः साधुषु विहर्तुं गतेष्वाकाशयानेन पूर्वोक्तपंचतीर्थेषु यात्रां कृत्वा नित्यमायान्ति । ततो नागार्जुनः पादलेपीपधानि जिज्ञासुश्ररणक्षालनोदके पीते खादेनीपधानि ज्ञात्वा पादलेपे च कृते ताम्रचूडवदु नैः प्रदेशादु-30 त्पतन् गुल्फे जानौ च पीडितो रक्तक्विन्नो गुरुभिर्दृष्टः । उक्तथ-अहो पाद्रुपे गुरुं विनापि सिद्धः । तेनौ-क्तम्-भगवन्! गुरुं विना कृतः सिद्धिः । गुरुणोक्तम्-अहं तव बुद्धा तुष्टो विद्यां ददामि । यदि मे जिनशासन-भक्ति गुरुदक्षिणां ददासि । यतः-

20

(२८८) दीहरफणिंदनाले महिहरकेसरिदसामुहदलिले । ऑपिअइ कालभमरो जणमयरंदं पुहइपउमे ॥

ततो विश्वहितं जिनधर्ममाद्रियस्व । तेनोक्तम्-पूज्यादेशः प्रमाणम् । ततो गुरुणोक्तम्-आरनालमिश्रतन्दुले-नैकेनौपधानि पिष्ट्वा पादलेपे खगमनसिद्धिः । ततस्तेन कृतज्ञतया विमलाद्रिसमीपे महासमृद्धं श्रीवीरप्रतिमाधि-5 ष्ठितं गुरुमूर्त्तियुतचैत्यान्वितं श्रीपादलिप्ताभिधं पुरं चक्रे । तत्र श्रीवीराग्रे श्रीगुरुभिः श्रीवीरस्तवश्रके । 'गाहाजु-अलेणे'त्यादि । अत्र सुवर्ण्णसिद्धिराकाशयानं च गुप्तमिस्ति । तथा गुरोः श्रीनेमिचरितं श्रुत्वा कौतुकाद्रैवतकाद्रे-रुधः स्वर्णसिद्ध्याकाशयानवलेन सर्वं दशार्णमण्डपादि नागार्जुनश्रके । अद्यापि लोकस्तत्सर्वमप्यालोक्यते ।

> (२८९) जीणें भोजनमात्रेयः, कपिलः प्राणिनां दया । वृहस्पतिरविश्वासः, पंचालः स्त्रीषु माईवम् ॥

एवं तदुक्ते राज्ञा महादाने दत्ते भोगवती वाराङ्गना न स्तौति । केवलं पादिलप्तानेव स्तौति । तं मुक्तवांऽऽकांशगामी विद्यासिद्धो महाकविः सर्वगुणनिधिरन्यो न हि । इति ज्ञाते राज्ञः सन्धिविग्रहकः शंकरो नाम मत्सरी
असहमानोऽवादीत् । ततो मानखेटपुरात् कृष्णभूपतिं मुत्कलाप्य शातवाहनेन श्रीपादिलप्ता आनीताः । नगर15 द्वारे वृहस्पतिर्विद्वान् परीक्षार्थं रौप्यकचोलके घृतं विलीनं ग्रहितवान् । प्रभुभिद्धीरिणीविद्यया तन्मध्ये सूत्रप्रोतां
सूचीं प्रक्षिप्य प्रहिता । इति जये भूपः प्रवेशं महोत्सवेन कारितवान् । उपाश्रये स्थिताः । नित्यं भूपश्ररणोपास्ति
कुरुते । तत्र नन्या 'तरङ्गमाला कथा' कृता, न्याख्याता च । पाश्चालकविः मत्सरेण न स्तौति । मद्भन्थाद्
उद्धत्यानेन कृता । अन्यदा कपटमृत्युना प्रभूणां तद्गुहद्वारे शिविकागमने पाश्चालेन शोकाद् उक्तम्—

(२९०) आकरः सर्वेद्यास्त्राणां रत्नानामिव सागरः। गुणैर्न परितुष्यामो यस्य मत्सरिणो वयम्॥

तथा-

(२९१) सीसं कहव न फुटं जमस्स पालित्तयं हरंतस्स । जस्स मुहनिज्झराओं तरंगलोला नई वृढा ॥

पाश्चाल! तव वचनाद् अहं मृतोऽपि जीवित इति गुरोरुत्थाने महीग्रजा निष्कास्यमानो मित्रं भणित्वा 25 पाश्चालो गुरुभिर्दानमानाभ्यामावर्जितः। ततो गुरवो निर्वाणकलिकाम्, सामाचारीम्, प्रश्नप्रकाशज्योतिःशास्त्रं च कृत्वा आग्रःक्षयं परिज्ञाय नागार्ज्जनेन समं श्रीशञ्च खयं गताः। तत्र नाभेयं नत्वा द्वात्रिशदिनान्यनशनं कृत्वा देहं ग्रुक्त्वा द्वितीयकल्पे इन्द्रसामानिकः सुरो जातः।

।। इति श्रीपादलिप्तगुरूणां प्रवन्धः।।

ं(G.) सङ्ग्रहे पादलिप्तसूरिवृत्तम् **।**

30 ६२१३) एकदा श्रीपादलिप्तसूरयो यात्रायां गगने गच्छन्तः पुरुपाकारच्छायया दृष्टाः । ततो नागार्ज्जनेन वन्दन-हेतोः शार्थिताः । तैरुक्तम्-यात्रां विधाय वलंतः समेष्यामः । तथाविहिते क्टबुद्धा जलेन स्वागतिमपाचरण-प्रक्षालनं कृतम् । तद्वर्ण्णगंधरसास्वादतः सप्तोत्तरशतमौपर्धीनां परिज्ञातम् । ततस्ताः सर्वा अपि संमील्य चरण- लेपोऽकारि । तदनु स दर्दुरवदुत्सुत्य पतितः । एवं गुरुभिर्दृष्टः । गुरुभिरुक्तम्-किमेतत् ? । तेन निजक्टं प्रका-शितम् । गुरुभिः सुशिष्यं विज्ञाय तन्दुलजलेन लेपः कथितः । ततो गगनगामिनी विद्याऽजनि ।

एकदा वर्पासु पौपथशालाद्वारि जले क्रीडमानं शिष्यप्रायं प्रष्टाः कैरिप वादिभिः-श्रीपालित्तय स्रिवरा वसतौ संति १-इति प्रष्टाः स्रयः तानन्यमार्ग्णेण वाहियत्वा खयं सिंहासने कपटनिद्रया सुप्ताः । तैः समागत्य क्रुईटखरो विहितः । श्रीस्रिमिम्मार्जारखरोऽकारि । वचनेन मिक्षताः । ततः प्रष्टिमिति । तद्यथा-'पालित्तय क कहसु फुडं० ॥' ततो गुरुभिरुक्तम्-'अयसाभिओगसंतावियस्स० ॥' एतया नमस्यया पराजिताः । नमो विधाय गताः ।

४५. श्रीअभयदेवसूरिप्रवन्धः (B. Br.)

§ २१४) श्रीनुद्धिसागरद्धिरिमः श्रीजिनेश्वरद्धिरिमश्च वसतिनिवासे कृतेऽन्यदा श्रीजिनेश्वरद्धरयो विहारेण धारापुरीं गताः। तत्र श्रेष्ठी महीधरः, भार्या धनदेवी, तत्पुत्रोऽभयकुमारनामा। अन्यदा श्रेष्ठी गुरुवन्दनाय गतः। 10 संसारमसारमाकण्यं वैराग्यवानभयः पितरमापृच्छ्य दीक्षाग्रहणे ग्रहणासेवनारूपशिक्षाद्वययुतः समग्रिसद्धान्त-पारगामी महाक्रियो जातः। गुरुभिराचार्यपदस्थापने श्रीअभयदेवद्धरिविंहरन् पर्वपपुरे श्रीवर्द्धमानद्दिषु दिवं गतेष्वभयदेवद्धरीणां तत्र स्थितानां महादुर्भिश्चे सिद्धान्तास्तृहृत्तयोऽपि त्रुटिताः। यदवस्थितं तदिप दुःखवोध-त्वात् खिलं जातम्। शासनदेवी रात्रौ प्रश्चं जगौ-यदङ्गद्धयं गुक्त्वा नवाङ्गानां वृत्तं कुरु। द्धिरराह-श्रीसुधर्म-स्थामिकृतसिद्धान्तविवरणे मन्दमतित्वादुत्द्वत्रप्ररूपणादनन्तसंसारित्वम्। परं त्वामनुखङ्किणां करिष्यामि। देव्यो-15 क्तम्-यत्र सन्देहसङ्गाहं सर्त्तव्या। यथा श्रीसीमन्धरस्थामिपार्थाद् सन्देहमङ्गं कुर्वे। प्रश्चभिर्यन्थपूर्णताविधं यावदाचाम्लाभिग्रहोऽग्राहि। सम्पूर्णेषु ग्रन्थेषु शासनदेव्या पुस्तकलेखनाय रत्नखचिता स्वर्णमयी ऊतरी समव-सरणे ग्रुक्ता। सर्वत्र दिशेता कोपि मूल्यं न कुरुते। तथा राजमहाराजश्री[मी]मेन द्रम्मलक्षत्रयदाने पुस्तकानि लेखियत्वा समग्रदेशाचार्यणां दत्तानि।

§ २१५) अथ श्रीअभयदेवसूरयो धवलकके आगताः । आचाम्लतपसा रात्रिजागरणेन च प्रभूणां रक्तविकारो 20 जातः । तदा जनो वदति—यदुत्स्त्रप्ररूपणया शासनदेव्या रुष्टया देहं विनाशितम् । गुरुभिः शोकेनाऽनश-नार्थं रात्रौ धरणेन्द्रः स्पृतः । तेन सर्वरूपेण देहलिहने गुरुभिर्ज्ञातम्—कालेन दृष्टः । धरणेन्द्रेण स्वमे आदिष्टम्— यन्मयाऽयं तव रोगो ग्रस्तः । एकं जिनोद्धारं कृत्वा प्रभावनां कुरु । श्रीकान्तीपुरीयधनेन वणिजा समुद्रान्तरा यानपात्रस्तम्भे व्यन्तरोपदेशेन धनेन मूर्त्तंत्रयमाकृष्टम् । एका चारूपग्रामे । द्वितीया श्रीपत्तने अविलीतले श्रीनेमिनः । तृतीया स्तंभनग्रामे सेडिकानदीतटे तरुजाल्यन्तरा भूमिमध्ये न्यस्ताऽस्ति तां प्रकाशय । अत्र 25 महातीर्थं भविष्यति ।

(२९२) पुरा नागार्जुनो योगी रससिद्धो धियां निधिः। रसमस्तम्भयद्भम्यन्तःस्थविम्वप्रभावतः॥

ततः स्तम्भनकाख्यो ग्रामस्तेन न्यसः। तदेपाऽपि तव कीर्त्तिः स्रात् शाश्वती पुण्यभूपणा। अन्यादृष्टा वृद्धा सुरी मार्गं कथयिष्यति । श्वेतश्वारूपः पुरः क्षेत्रपालोऽपि प्रातः संघस्य पुर आयातः। वाहनसहस्रेकयुताः ३ सरयो वृद्धा-श्वेतश्वानदार्शितमार्गाः सेडीतीरमायाताः। वृद्धा-श्वानौ तिरोहितौ। तत्र गोपालाः पृष्टाः—यत् किमपि पूज्यमस्तीह १। तेपामेकेनोक्तम्—अत्र जाल्यां किमप्यस्ति। यतोऽत्र ग्रामे महिणस्वपद्विलकस्य गौर्नित्यं चतुर्भिस्तनैः क्षीरं क्षरति। गृहे न दुस्तते। तत्र तैः क्षीरं दृष्ट्वोपविश्य श्रीमदाचार्यः 'जयतिहुअण०' इत्यादिवृत्त-

20

25

द्वात्रिंशता स्तवे कृते श्रीपार्श्व प्रकटीभूते, समग्र [सङ्घ] सिहतैर्वन्दिते, देहरोगो गतः। तत्र स्नात्रपूजाद्यं कृत्वा प्रासादार्थं द्रव्यं मीलियत्वा मिहपपुरात् श्रीमछवादिशिष्य आग्नेश्वराभिधो नियुक्तः। कर्मान्तरं कारयामास। श्रुमे ग्रहते श्रीअभयदेवसूरयो विम्यं स्थापयामासः। धरणेन्द्रादेशात् स्तोत्रमध्याद्वृत्तद्वयं मन्त्रगभितं निष्काशितम्। तस्मिन् प्रत्यक्षीभवने, त्रिंशद्वृत्ता स्तुतिर्जाता । सा पट्यमाना क्षुद्रोपद्रविवनाशिनी । ततः प्रभृत्यदस्तीर्थं मनोवाञ्छितपूरणं जातम्। रोगशोकादिदुःखदावधनाधनः। अद्यापि कल्याणके प्रथमकलशो धवलक्षकीयस्य सङ्घस्य। विम्वासनस्य पश्चाद्धागेऽक्षरपंक्तिरतिह्यात् श्रुयते। पूर्वं कथैपा प्रथिता जने।

(२९३) नमेस्तीर्थकृतस्तीर्थे वर्षे द्विकचतुष्टये । (२२२२) आषाढश्रावको गौडोऽकारयत् प्रतिमात्रयम् ॥

(२९४) श्रीमानभयदेवोऽपि ज्ञासनस्य प्रभावकः। पत्तने श्रीकर्णराज्ये धरणोपास्तिज्ञोभितः॥

(२९५) विधाय योगनीरोधं धिकृतापरवासनः। परलोकमलंचके धर्मध्यानैकधीनिधिः॥

॥ श्रीअभयदेवस्रियनधः॥

४६. वाग्भटवैद्यवृत्तम् (G.)

15 §२१६) पुरा मालवके वाग्भटनामायुर्वेदवेदी प्रथमं क्रपथ्येन निजदेहे रोगानुत्पादयति, औपधेन पुनर्नि-वारयति । एवमेकदा जलोदरम्रत्पादितम्, तदौपधं विहितम् । क्रुडंवकस्येति उक्तं च-यन्मम चतुःप्रहरं यावत् जलं याचितमपि न देयम् । दैवयोगेन क्रुडंवस्य तद्वचो विस्मृतौ गतम् । प्रहरचतुप्टयानन्तरं जलोदरे क्षीणेऽपि जलं न पायितः । पिपासापीडितो मृतश्च । अतः-

> (२९६) कचिदुष्णं कचिच्छीतं कचित् कथितशीतलम्। कचिद् भेषजसंयुक्तं कचिद्वारि न वारितम्॥

§२१७) राज्ञः श्रीभोजस्य सिंहद्वारि वाग्भटवैद्यपरीक्षार्थमिशविनीक्कमारौ पिक्षरूपं विधाय नित्यं नित्यं वारत्रयं 'कोऽभुक्' इति रवं विधाय गच्छतः । राज्ञा तदनवगत्य सर्वेऽपि विद्वांसः पृष्टाः । कोऽपि किमपि न कथयित । तदा वाग्भटेनोक्तम्—

(२९७) अशाकभोजी घृतमत्ति योऽन्धसा पयोरसान् शीलति नातिपोऽम्भसाम् । अभुक् विरुट् वातकृतां विदाहिनां मलप्रमुक् जीण्णेभुगल्पशीररुक् ॥

ततोऽिश्वनीकुमाराभ्यां निजरूपमाविर्भूय वाग्भटोऽतिप्रशंसितः।

§२१८) अथ दृद्धवाग्भटजामात्रा लघुवाग्भटेन कृष्णच्छायाप्रवेशदर्शनेन राज्ञः क्षयरोगोत्पत्तिर्निवेदिता । 30 राज्ञोक्तम्-ततो मम वर्पत्रयमेवायुरस्ति । तेनोक्तम्-नैवं राजन्!

(२९८) यावदुच्छुसति प्राणी तावत् कुर्यात् प्रतिक्रियाम् । कदाचिद्दैवयोगेन दृष्टारिष्टोऽपि जीवति ॥ रसं विधाय देवं निरामयं विधासामि । रसे जाते रसं गृहीत्वा राजसदिस समागतः । तत्रागतेन रसक्रपको भग्नः । राज्ञोक्तम्-आः किमेतद्विहितं भवता १ । तेनोक्तम्-राजन् ! किमौपधेन कार्यम् १ । देवो निरामयो जातः । रसगन्धदर्शनेन च कृष्णच्छायामिपात् क्षयरोगो निःसृत्य गतः ।

एकदा श्रीनृपस्य शिरिस शिरोत्तिंरतीय जाता। ततो वाग्भटेनोक्तम्—राजन्! शिरिस दर्दुरी जाताऽस्ति। तत-स्तेन शस्त्रकर्मणा तालु उत्तारितम्। दर्दुरी दृश्यते परं न निःसरित। धर्तुं न शक्यते। तद्गु जलभृतस्थालं ५ धृतम्। तत्रापि नायाति। ततो जामात्रा लघुवाग्भटेन तद्वलोक्य निजरुधिरभृतस्थालं दर्शितम्। तद्गन्धेन सा तत्रागता। राजा निरामयो जातः। ततः पृष्टेन लघुवाग्भटेनोक्तमिति—यदियं रक्तजा, रक्तं विना जले नायाति। ततः प्रमुदितो बृद्धवाग्भटः सकला अपि कलाः शिक्षयति।

४७. रैवततीर्थप्रवन्धः (P.)

§ २१९) अथ श्रीनेमे रैवतकाचलस्थासेत्पत्तिर्यथा-भारते क्षेत्रेऽतीतचतुर्विज्ञतिकायां तृतीयतीर्थङ्करसागर-10 समये उज्जयिन्यां नरवाहनो नृपः । अन्यदा तिसन् पुरे सागरिजनः समवसृतः । स नन्तुं ययौ । व्याख्याया-मनु केवलिपर्पदं वीक्ष्य पृष्टम्-प्रभोऽहं केवली कदा?। खामिनाऽऽदिष्टम्-आगामिचतुर्विश्वतिकायां श्रीनेमिजिन-तीर्थे निर्वाणं ज्ञानं च भविष्यति । इति ज्ञात्वा ततस्तसिन् भवे श्रीसागरतीर्थेश्वपार्थे दीक्षां गृहीत्वा, तपः कृत्वा, पश्चमदेवलोके दशसागरोपमायुरिन्द्रो जातः । तेन तत्र स्थितेनावधिज्ञानेन पूर्वभवं ज्ञात्वा वज्रमयीं मृत्तिकामानीय श्रीअरिप्टनेमिपूजानिमित्तं विम्वं कारितम् । खर्गे दशसागरोपमं यावत्पूजितम् । आत्मनश्रायुःशान्तमविधना 15 विज्ञाय श्रीनेमेर्दीक्षा-ज्ञान-निर्वाणकल्याणकत्रयस्थानं विलोक्य श्रीरैवतकगह्वरे स्वर्गान्नेमिप्रतिमां गृहीत्वा समेतः । तत्र गह्वरमध्ये चैत्ये गर्भगृहत्रयं कृत्वा रत्न-मणि-खर्ण-मयविम्वत्रयं कृत्वा तत्र [स्थापितं]...... काञ्चनवलानकं कृतम् । तत्र वज्रमृत्तिकामयविम्वं स्थापितम् । ततः स इन्द्रः स्वर्गान्युत्वा वहु संसारं आन्त्वा श्रीनेमितीर्थसमये महापछिदेशे क्षिति[पु]रनगरे.....शीनेमित्तत्र समवसृतः । पुण्यसारो वन्दितुं समागतः । श्रीनेमिना उपदेशो दत्तः । श्रीनेमिपार्श्वे धर्मावाप्तिः । पृष्टाः खामिनः पूर्वभववृत्तान्तः 20 रैवतके गत्वाऽऽत्मकृतं नेमिविम्वं प्जयित्वा नमस्कृत्य खनगरे समागत्य, सुतं राज्ये निवेश्य, नेमिपार्श्वे दीक्षां गृहीत्वा, तपसा कर्म्भक्षयं कृत्वा जिंतम् । मोक्षं गतः । श्रीनेमे रैवतकाचले कल्याणत्रिकं सम-जिन । पुण्यवद्भिस्तत्र लेप्यमयं विम्यं चैत्यं च कारितम् । लोके च पूज्यमानं जातं......कसीरदेशात् कल्प-प्रमाणेन रैवतकिंगरी श्रीनेमिं नमस्कर्त समागतः। तत्र विम्बं स्वात्रजलेन गलितं दृष्टा मासद्वयक्षपणं कृतं.....खण्णीमयं विम्वं समानीय स्थापितम् । यतः-25

> (२९९) नववाससएहिं नवुत्तरेहिं रयणेण रेवयगिरिम्मि । संठविअं मणिविंवं कंचणभवणाओं नेऊण ॥

तथा वामनावतारे वामनेन रैवते श्रीनेम्यग्रे वलिवन्धनसामर्थ्यार्थं तपः कृतम् ।

४८. देव्यम्वाप्रवन्धः (B. Br.)

§ २२०) सुराष्ट्रामण्डले कोडीनारपुरे सोमभट्टो द्विजः । स श्रावकस्य देवशर्मद्विजस्य पुत्रीमिन्वकानाम्नीं 30 परिणीतवान् । पुत्रद्वयमस्ति । इत एकदा तस्य गृहे किश्चित्पर्वास्ति । तत्र पाके निष्पने तपोधनौ विहर्तुमायातौ । श्वश्च गृहे नास्ति । अम्वया महाभक्त्या प्रतिलाभितौ । प्रातिवेश्मिकया श्वश्चग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽपूजिते

द्विजेष्वभुक्तेषु श्र्द्राणामनं दत्तम् । एपा वध्ः न सामान्या । तयाऽऽराटिः कृता । सोमभद्दे समायाते उक्तम् । तेन तातादिना ताडियत्वा निष्कासिता । सा सुतद्वयमादाय, एकं कट्यां कृत्वा परमङ्कुल्यां, निःसृता । श्वश्र्वा पुत्रः पृष्ठे सानुतापया प्रहितः—त्विरतं गत्वा समानय । इतः शिश्चः सुतस्तृपितो नीरमयाचत । तया श्रीनेमिचरणौ स्मृत्वा मही पादेन दारिता । दीर्घिका प्रादुर्वभूव । सुतो नीरं पायितः । चृद्धेनोक्तम्—अहं क्षुधितः । तत्राम्रः प्रकटीवभूव । तत्र सहकारछिन्वं गृहीत्वा पुत्रायार्णयत् । इतः पाश्वात्ये प्रियमायान्तं दृष्ट्वा भीता श्रीनेमिपादौ स्मृत्वा कृषे पुत्रैः सह झम्पां ददौ । सोऽपि स्त्री-श्रूणघातिनं स्वं मन्यमानः पृष्टौ झम्पां ददौ । अम्वा रैवतके श्रीनेमिचैत्येऽिषष्टात्री जाता । सोमस्तस्या वाहने सिंहो जातः ।

॥ इति देव्यम्बाप्रवन्धः ॥

४९. उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवन्धः (P.)

10 १२२१) सुराष्ट्रायां गोमण्डलन[ग]रे सप्तशतयोधैः सह सप्तपुत्राष्ट्रतस्त्रयोदश्यतस्त्रयोदशकोटीस्वामी धारानामा श्रावकः सङ्घं कृत्वा तीर्थ[न]मस्यै गतः । विमलाद्रौ युगादि नत्वा रैवततलहद्दिकायां स्थितः। तीर्थं दिग्वस्नैः पूर्वमिषष्टितमस्ति । तैरपि पश्चाशद्वर्पभोगात् पश्चाद्वौद्वान् वादे जित्वा आत्मायत्तं कृतम्। दिगम्बराणां द्वादशवर्पाणि जातानि । श्वेताम्बरीयधाराकेनोक्तं चतुरशीतिमण्डलाचार्याणां समीपे-यद्हं देवं नन्तुं समेतः । तैरुक्तम्-दिगम्बरीभृयागच्छ । तेनाचिन्ति-प्राणान्तेऽपि खगुरुलोपं न कुर्वे । अन्यदुज्जयन्तनतिं 15 विना गृहे न यामि । चिन्तार्त्तो जातः । पुत्रैरूचे-किं कारणम् १ । हे पुत्रास्तीर्थं नन्तुं न लभ्यते । पुत्रैरुक्तम्-दिग्वस्नाधिष्ठिते तीर्थेऽपि किं कार्यम्?। तातेन कथितम्-पूर्वमात्मीयमेव, इदानीमेभिरधिष्ठितम्। एवं तिहं वला-द्पि यास्यामः, चिन्ता न कार्या । तत्पुत्रैर्म्ण्डलाचार्याणां क्थापितम्-यद्यं वलादपि तीर्थं वन्दिप्यामहे । तैर्निजभक्तसंगारस ज्ञापितम् । तेन किञ्चित्सैन्यं प्रहितम् । तैः पुत्रैस्तस्य सैन्येन साकं युद्धं प्रारव्धम् । सप्त पुत्राः सप्तश्चतयोधसहिता मारिताः। सङ्घपतिर्धाराको न भुङ्के । तृतीयोपवासेऽम्विकयाऽभाणि-वत्सः! कन्यकुळा-20 देशे गोपालपुरे आमो राजा । स पूर्वभवे भूण्डपर्वते तपस्वी तपस्तावा नृपोऽभूत् । तस्य पार्श्वे वप्पभिद्वस्त्रयः सन्ति । तैरेते जीयन्ते नान्येन । एतेपां मन्त्रा व्यन्तराश्च सवलाः । इति ज्ञात्वा तत्र गच्छ । धाराकः सङ्घे मुत्तवाऽप्टश्रावकैः सह तत्र गतः । श्रीसरयस्तदा आमराजस्य सभायाश्राग्रे रसेन व्याख्यां कुर्वाणाः सन्ति । धारा-केन नत्वा सङ्घाज्ञा तेपां दत्ता । राज्ञा साक्षेपमैपिष्ट । आचार्यैस्तत्पार्श्वतो वृत्तान्तः पृष्टः । तेन समूलं वृत्तान्त्-मुक्तम् । राज्ञा स्वभावश्रवणरैवतप्रभावाकर्णनहर्पपूरवज्ञादिभग्रहो गृहीतः -श्रीनेमिनितं विना न भोक्ष्ये । तद्भा-25 र्थया कमलादेव्या कथितम्-सोमेश्वरनमस्करणं विना न भोक्ष्ये । ततः सर्वेऽपि चलिताः । लक्ष १ पोठियां, उष्ट्रसहस्र २०, हस्ति ७००, घोटक लक्ष १, पदाति लक्ष ३, श्रावकसहस्र २०। राजा त्रिंशत्तमे दिने स्तम्भ-तीर्थे आगतः । रात्राविन्वकयाऽभाणि-राजन् । श्रीनेमिस्तव सत्त्वेनात्रैष्यति । प्रभाते पारणं कार्यम् । यत्र च गूहली पुष्पप्रकरश्रोपरि त्वया तत्र खनितव्यं हस्तेन नेमिः प्रग(क)टीभविष्यति । प्रभाते तदेव जातम् । नेमिं नतः । राजपल्याऽभाणि-स्वामिन् । पारणं क्रियताम् । त्वां विना कथं करोमि । तत् क्षणात्सोमेश्वरलिङ्गः प्रादु-30 रभूत् । तिहने नदीस्थाने सोमनाथेन च्छिरा (१) नीतो अभिज्ञानाय । तत्रेभ्यानां देवकुलद्वयकृते द्रव्यमिर्पतम् । एतसिनपुरे प्रासादद्वयं कारियतच्यम् । यथां वलमानाः पश्यामः । ततः प्रयाणकं जातम् । सङ्घसमीपे मानुपं प्रहितम् । स्रिरिभर्मण्डलाचार्यपार्थे-यदि युध्यते तदा वहुजीवसंहारो भवतिः अतो वादे जय-पराजयौ ज्ञेयम् । सम्याः कृताः। मासं यावद्वादो जातः। श्रीनृपेण धाराकेन च प्रभूणामग्रे विज्ञप्तम्-वहवो दिना जाताः। प्रभुणाऽ-भाणि-अद्य निर्वाहियण्यामि । एकत्रिशे दिने प्रभुणा भणितं मण्डलाचार्याग्रे-यद्य मण्डले कुमारी उपवेश्या ।

कुमारी यस तीर्थं दत्ते तस तीर्थं जातम् । तैर्भणितम्-एतत्प्रमाणम् । प्रथमं दिग्वस्त्रैर्मण्डले मण्डिता कुमारी । पात्रं नाप्रि तैः । ततः श्रीयप्पमङ्क्षरयो वसतौ ध्याने उपविष्टाः । सङ्घेशो वासान् दत्त्वा प्रहितः । तेन कन्या-इपिं वासाः क्षिप्ताः । ततः पात्रेणाभाणि-

- (३००) इक्कोवि नमुकारो जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स । संसारसागराओ तारेइ नरं व नारिं वा ॥
- (३०१) उर्जितसेलसिहरे दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स । तं धम्मचक्कविद्वे अरिट्टनेमिं नमंसामि ॥

इति गाथाद्वयं तस्या मुखात्सवैरिप श्रुतम् । तिह्नादात्मीयं तीर्थं सञ्जातम् ।
॥ इति उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवेन्धः ॥

५०. वज्रस्वामिकारितशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्धः (P.)

§ २२२) अथैकदा दश्यपूर्वधराः श्रीवजस्वामिगुरवो मधुमत्यां नगर्यां समायाताः । श्रीशञ्ज्जयदेवं नन्तुं गताः । देवं नमस्क्विद्धिभोंजमेकमागतं दृष्टम् । देवार्चकः पृष्टः—रे ! किमिदम् । देव ! प्रत्ययान् पूर्यित । चिन्तितम्— जिनशासनस्य मुख्यमिदं तीर्थम्, परं तत्र कपदीं मिथ्यात्वी जातः; एतन्न सुन्दरम्—इति विचिन्त्य मुहुयानगरे पुनरायातः । चिन्तितं ध्यानवलेन—अस्य तीर्थस्य क उद्धारः कर्त्ता ? । अस्य नगरनिवासी सौराष्ट्रिकप्राग्वाटो भावडशेष्टिपुत्रो जावडः । तं मत्वा देशनामध्ये उक्तम् । तच्छुत्वा जने गते जावडस्तु स्थितः—प्रभो ! यदादिष्टं । अन्यः कोऽप्यहं वा ? । भवानेव । भगवन् ! ममाष्टादश प्रवहणानि कापि सन्ति न वा, तन ज्ञायते । वर्ष १२ जातानि । अधुना भोजनमपि कप्टेन भवति । स एवगृहे गतः । अङ्गशौचं कृत्वा यावदेवपूजायां प्रवृत्तः तावद्वर्थापनिकेनेत्युक्तम्—यत् प्रवहणान्यप्टादश क्षेमेणागतानि । श्रेष्टिना विम्वस्याग्रे जलं मुक्तम् ।

(२०२) ... डूगरवालिंग वलिणि वलि कित्तीसु अन्भडमंज। अत्तागमणु न जाणिउं तुह पनरह मुह पंच॥

20

1

§ २२३) तत्र नृतनकपर्दी स्थापितः । स पूर्वं टीम्बाणाग्रामे-कोऽपि मधुमत्यां कथयति-कोलिक आसीत् । ३० तस्य द्वे भार्ये-एका हा[िंडः] अपरा कुहािंडः । स चीवरं प्रत्यहं वणयित । उभयतत्ताभ्यां प्रान्ताया.....करे मद्यसम्भल्यो वर्तेते । यदा यसाः समीपे स्याति सा तदा तं पाययित । इतश्च सुव्रताचार्यात्तनुगमनिकायां गताः । तैर्देष्ट्वा विमृष्टम् । एप अविरतः । असाग्रः कियत् । घटीद्रयं विमृत्य आहू्य उक्तः-भोस्त्वया अनिच्छता

ग्रन्थिवन्धनं कार्यं तत्र गतेनोन्मोचनं कार्यम् । नमो अरिहंताणं इति कथनीयं मुखे । इत्युदित्वा स्र्यो गताः । इतः शक्कित्वागृहीतसर्पमुखाद्गरलं तन्मद्ये पपात । तेनाज्ञातेन पीतम् । स मृतः, अणपन्नी-पणपन्नीन्यन्तराणां मध्येऽवतीर्णः । इतः कलकलं कुर्वाणाः सर्वेऽपि राजभवनं ययुः । यदस्माकं कोलिको निरपराधो व्रतिभिर्मारितः । तेन अनार्येण स्र्यो धृत्वा वधाय आदिष्टाः । स कोलिकस्तु नमस्कारप्रभावान्मृत्वा न्यन्तरो जातः । प्राग्भवं निरूप्य गुरूणां परिभवं दृष्ट्वा ग्रामोपरि शिलां चकार । राजप्रमुखः सर्वो जन आर्त्तो जातः । इतो न्यन्तरे-णोक्तं मारियण्यामि । कथम् १ । मम गुरून् श्रीव्रं मुश्चत यथा न मारयामि । एते ममोपकारिणः । एतेपां प्रसादान्यया देवत्वं ग्राप्तम् । ततः सर्वेर्गुरवः क्षामिता नृपप्रभृतिभिः । इति च लोकसमक्षं जगौ-

(३०३) मजासी मंसरओ इक्केण वि चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओ सुसाहुवाओ सुरो जाओ॥

10 व्यन्तरस्तु नमस्कृत्य गतः । स यक्षः कपर्दीनाम दत्त्वा श्रीवज्रस्वामिभिस्तीर्थे स्थापितः । इतः पूर्वकपर्दी आयातः । विम्वपराष्ट्रतं दृष्ट्वा आरािं विधाय निस्तृतः । तदा पर्वतस्तु द्विधा जज्ञे । सदाफला वनस्पत्यिप तदा ज्वलिता । अतः कपर्दिना गुरव उक्ताः—प्रभो ! ममापराधं क्षान्त्वा इहैव मां स्थापयत । गुरुभिरुक्तम्—त्वमन्दिः । तव मिथ्यात्वं गच्छतो वारा न लगति । त्वयाऽत्र न कार्यम् । अहमन्यत्र गत उद्धेगकारी भविष्यामि । गुरुभिरुक्तम्—त्वं याहि । ततः स देवपत्तने गतः । तत्र तैव्यन्तरैरपरद्वारे क्षेपितः । तत्र कपर्दिवारिका । ज्ञाता । इतः प्रतिष्ठा जाता । तथा महाध्वजवेलायां श्रेष्ठी सपत्नीक उपरि गत्वा नर्त्तितुं प्रवृत्तः । ततः पूर्वकप्विवारम्य क्षीरोदार्णवे क्षिप्तः । लोके इति ख्यातिर्जाता—भौतिकेनापि पिण्डेन स्वर्गं गतः । एवं द्रम्मलक्ष १९ व्ययेन श्रीयुगादिदेवविम्वं प्रतिष्ठाप्य स्थापितम् ।

॥ इति श्रीशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्धः॥

५१. कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्धः (Br.)

20 § २२४) मधुमत्यां नगर्यां कपिद्नामा कोलिकः । आिड-कुहािडनाम्यों कलत्रे अभक्ष्यापेयसक्तः । तत्प्रस्तावे योगन्धराचार्यास्समाजग्धः । अन्यदा तंगिणकायां गच्छिद्धः पूज्येभीर्यावचनेस्ताड्यमानः कोलिको दृष्टः । आचार्य-भिणतम्—अहो कोलिक ! आगम्यतामस्पत्समीपे । तेन चिन्तितम्—िकमिप याचिष्यन्ति वस्तादिकम् । आचार्येण श्रुतेन विलोकितम्—िकयदायुरस्य । ततः पश्यिन्ति घिटकाद्वयं यावत् । अहो कोलिक ! प्रत्याच्यानस्य प्रथमं पदं नमो अरिहंताणं इति त्वया भणनीयम् । मद्यं पिवताऽभक्ष्यं भक्षयता ग्रन्थिश्छोटनीयः । नमो अरिहं25 ताणमिति भिणत्वा भक्षणपानानन्तरं तथेव ग्रन्थिन्धनीय इति प्रतिश्रुते, स्रिपु गतेषु शकुनिकागृहीतसर्पग्र-साद्वरलं मांसखंडमध्ये पपात । तद्धक्षणादसौ मृतः । अणपन्नी-पणपन्नीव्यन्तरमध्ये प्रवलो व्यन्तरो जातः । अवधिना दृष्टम्—गंठिसहितपसः प्रभावादहं देवो जातः । इतश्च तद्धार्याभ्यां राजकुले गत्वेति कथितम्—महाराज ! पास्तिष्डिभिरावयोर्भर्त्ता मारितः । किमिप कथितं तन्न जानीमः । मिथ्यादृष्टीनां च वचनात् राज्ञा गुप्तौ कृताः स्रयः । तेन व्यन्तरेणात्मश्चरीरमधिष्टाय राज्ञोऽग्रे भणितम्—यन्महाराज ! क्षाम्यन्तां आचार्याः । अन्यथा ३० तव नगरोपरि शिलां पातयिष्यामि । राज्ञा पादयोर्विलग्य स्रयः क्षामिताः । शिला संहता । लोकविदिता गाथा भणित—

(३०४) मंसासी मज्जरओ इक्केणं चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओ सुसाहुवाओ सुरो जाओ॥ इति प्रभूणामग्रे नाटकं रचितम् । पथाद् ईद्दशं चोक्तम्-भगवन् ! मया किं कर्तव्यम् ? । प्रभुणोक्तम् भो ! त्वया पाथात्यभवे वहूनि पातकानि कृतानि, तेषां शुद्धिहेतोः श्रीशत्रुङ्कश्चमहीतीर्थे सङ्घसाहाय्यकारी भव । तस्य कपर्दिनामा यक्षः सङ्घातः । अग्रीयकपर्दिना सह तस्य वर्ष १२ विग्रहेन्द्रसङ्काद्धः। कोऽपि नःपराजीयकेशः हतश्च मधुमत्यां नगर्या प्राग्वाटज्ञातीयश्रेष्टी जाविडः, भार्या सीतादेवी, प्रवहण १८ पूरियत्वा समुद्रमध्ये प्रवहणसहिताचित्रवछी (१) मध्येऽपतत् । क्रमेण वर्ष १८ सञ्जातानि । एकयाऽपि रीत्या निस्सरीतुं न शक्यते । 5 वहूनां देवानां आराधना कृता । पुनः कस्यापि साहाय्यं न जातम् । तदा चिन्तितम्-एकदा व्याख्यानमध्ये श्चेताम्यराचार्येरिति भणितम् । यतः-'कान्तार०' इत्यादि । नृतनकपर्दिना रात्रौ स्वमं प्रदत्तम्-यदहो जावड ! यसिन् पक्षेऽभ्रं दृश्यते तसिन्पक्षे प्रवहणानि चालनीयानि । अग्रे पुनः ऋयाणकं वापितं जावडेन । प्रवहणानि लघुत्वेन न सश्चरन्ति । किसंश्रिद्वीपे समागत्य छगणकर्करैर्भृत्वा पश्चमिद्देने समुद्रं निस्तीर्य मधुमत्यां नगर्यां समा-गतो जावडः । छगणानि सुवर्णाभूतानि, कर्करा रत्नानि सञ्जातानि । तदनन्तरं सङ्घं कृत्वा श्रीशञ्जञ्जये श्रीऋप-10 भदेवनमस्करणाय गतो जावडः। यावत् सात्रं करोति तावद् अग्रीयलेप्यमयविम्वस्य नासिका गलिता। महाविपादो जातः । एतसिन् प्रस्तावे दशपूर्वधरेण श्रीवज्रस्तामिनाऽऽदिष्टो जावडः-अद्य रात्रौ कपर्दियक्षस्य भोगं कृत्वा कायोत्सर्गे स्थीयताम् । तत्करणानन्तरं रात्रौ कपर्दिना भणितम्-यदहो जावड! मम्माणाकरे मम्माणनगरे वाह्ये पूर्वदिशि या राइणिर्विद्यते तस्या अधः फलहिका मम्माणापापाणमयं विद्यते, तां कार-यित्वा इहानय । तस्या घटापने मूल्ये चानयने लक्ष ९ व्यये जाताः । पर्वतोपरि यावन्मात्रं दिनेऽध्यारोहयते 15 तावन्मात्रं रात्रौ वलति । श्रीवज्रस्याम्यादेशात् रथकलचक्रस्याथ एकत्र खयमन्यत्र श्रेष्टिनी स्थिता । तद्भाग्या-देवतासाहाय्याच न निवृत्तो रथकलः । उपरिगतं विम्वम् । वज्रस्यामिगणधरेण प्रतिष्टितम् । अग्रेतनं विम्वम्रत्था-प्यते नोत्तिष्टति । पण्मासावधि भोगकरणेन श्रीवज्रस्वामिध्यानेन सर्वान् व्यन्तरान् आत्मायत्तीकृत्य पण्मासान्ते काप्याघे (!) कपिंदिनि क्रीडार्थं गते, नूतनकपिंदवचनेनाद्यविम्बमुत्थाप्य नूतने स्थापिते, तद्धिष्टायके नूतने कप-दिंनि कृते, आद्य आराटि मुक्तवान् । तदनुभावात्पर्वतो द्विधा जातः । ध्वजारोपणप्रस्तावे जावडो भार्यासहितः 20 श्रासादोपरि नृत्यन् आद्यकपर्दिनोत्पाट्य वैताद्यपर्वते उत्तरश्रेण्यां नीतः । एवं विम्वस्थापनम् ।

(३०५) श्रीविक्रमादिखन्दपस्य कालाद्रष्टोत्तरे वर्पराते व्यतीते । दात्रुञ्जये दौलिदालामयस्य कारापिता जाविडना प्रतिष्ठा ॥ ॥ इति श्रीकपर्दियक्ष-जाविडिप्रवन्थः ॥

५२. लाखणराउलप्रवन्धः (B. P.)

25

§ २२५) शाकम्भरीपुर्यां चाहमानो लक्ष्मणः। स वर्त्तनाय भार्यामादाय एकमन्त्यजं च सहायं कृत्वा देशान्तरं चिलतः। मार्गवशान्तद्वलपुरे सरःपरिसरे देवकुले दिनं विश्रान्तः। इतः सन्ध्यायां द्विजैरागत्योक्तम् –हे पान्थः। पुरस्य मध्ये समागच्छ। अत्र मेदानां प्रतिभयेन रात्रौ कोऽपि वहिर्न तिष्ठति। लाखणेनोक्तम् –वयं पथिका मार्गस्याः। प्रतोल्यः सूर्योदये उद्घाट्यन्ते। अतोऽत्रैव स्थास्यामः। द्विजैरुक्तम् –अप्रमत्तैः स्थेयम्। तेषु गतेषु लाखणः सह सहायेन सज्जीभ्य स्थितः। इतो रात्रौ मेदधाटी प्रसृता। लाखणेन सह सहायेन युद्धं कृतम्। जन २० पतिताः। ३० ताबुभाविष घातार्त्तो पतितौ। प्रातद्विजैरेत्य पत्नी पृष्टा –कस्ते भर्ताः कः सत्ताः। तया दर्शिताबुत्पाव्य नीतौ। पालितौ। रुद्धवातेन तेन द्विजा मुत्कलापिताः। तरुक्तम् – क यास्यसि १। तेनोक्तम् –यत्र निर्वाहो भविष्यति। वयमत्रैव करिष्यामस्त्वयाऽसाकं पुरे मेदोपद्रवो रक्ष्यः। स स्थितः। द्विजैस्तु ग्रासः कृतः। तेन जनाः ५ अन्ये

¹ B ससखायः। 2 B मेदानासुपद्वो रक्षणीयः।

स्थापिताः । प्रतोलीं दातुं न यच्छित । मेदानां स्थानेषु गत्वा तेषु घाट्यां निर्गतेषु पाश्चात्ये उपद्रवं करोति' । तैः कथापितम्—यद्वयं नङ्क्सीमायां नैष्यामः । त्वया नो प्रामेषु नागम्यम् । क्रमेण जनाः '२० स्थापिताः पार्श्वे । समीपप्रामेषु वला विहिताः । मेदानां कथापितम्—मम करदेषु प्रामेषु नोपद्रवः कार्यः । एकदा घाटीमाद्वाय मेदपाटे गतः । तत्र घाटी भग्ना । लाखणो घातजर्जरः कृतः पतितः । इतस्ते यावदुच्छ्वसितुं जनाः । प्रवृत्तास्तावदसिण देव्या गोत्रजया शकुन्तिकारूपं कृत्वोपिर निपत्य रक्षितः । रात्रो उत्थाय मन्दं मन्दं खपुरं गतः । एकदा देव्या व्याहृतम्—त्वां महान्तं विधासे चिन्ता न कार्या । प्रात्मीलवेशसुकेरको वातप्रेरितो सुत्कलः समेष्यित । त्वया कुण्ड्यः कुङ्कुमजलैर्भृत्वा प्रतोल्युपर्धुपविश्य स्थेयम् । अग्रे गच्छतां हयानां छटा देयाः । येषां ता लिग्प्यन्ति । त्वया कृण्ड्यः कुङ्कुमजलैर्भृत्वा प्रतोल्युपर्धुपविश्य स्थेयम् । अग्रे गच्छतां हयानां छटा देयाः । येषां ता लिग्प्यन्ति तेषां वर्णपरावर्त्तो भविष्यति । मध्ये प्रवेशं च विधास्यन्ति । प्रातस्तथैव कृतम् । वहवोऽधाः प्रविष्टाः पुरान्तः । तथा महान्तमेकमश्चं दृष्टा स्थानपालेन गले लिग्त्वोक्तम्—भव भव इति' । तदनु प्रविश्वन्तः स्थिताः । यवाहरायां समागतायां पृष्टम्—असाकमश्चाः प्रविष्टा भविष्यन्ति । लाखणेनोक्तम्—मध्ये समेत्य पश्यतं । तैर-श्वसाधनं निरैक्षि' द्वौ हयौ लब्धौ । तावादाय गताः । येषां छटा लग्नास्तेऽधाः शेषाः स्थिताः । एवमश्वसहस्त-१२ जाताः । महदाधिपत्यं जातम् ।

§ २२६) एकदा स्वर्गृहोपर्युपविष्टेन काचिद्विप्रवधः स्वान्ती दृष्टा । पश्चाद्विजानाह्य प्रोक्तम्—अहं भवतां पुरं त्यक्षामि । तरुक्तम्—कथम् १, तवेह गतस्य किं विनष्टम् १। यदि मे भूमिमप्पयत वाह्ये गृहार्थे वासाय वात्ता 15 तिष्ठामि । द्विजैः पुरस्य वाह्ये वासाय भूरिपता । तत्र धवलगृहमारव्धम् । काष्ट्रदले निष्पद्यमाने, भित्तयः पृथुला जाताः । पृष्टास्तु हस्याः । स्वत्रकारैरिचिन्ति—किमुत्तरं करिष्यामः । वेश्या एका पृष्टा—वयं केनोपायेन निस्तरिष्यामः । तयोक्तम्—न भेतव्यम् । सा वद्धीपनार्थं स्थालमादायाक्षत्रभृत्वा राजकुलं गता । पृष्टा राज्ञा—किमिदम्य । देव । लाखणगृहं वर्द्धितम् । कथम् १ । पश्यत, भित्तयः पृथुलाः पृष्टा न्यूनाः । स तदेव शक्कनं मत्वा तां सत्कृत्य प्राहिणोत् । तत्र राजकुलद्वारे गोत्रदेवीप्रासादो महान् कारितः । तथाऽष्टादश जैनाः प्रासादा विष्यत्वाः, प्राकारश्च । एवं क्रमेण नङ्कराज्यं जातम् ।

§ २२७) एकदा कस्यापि श्रेष्ठिनः पुत्री क्रमारिका दृष्टा। सा पाणिग्रहार्थे याचिता। तया पिता व्याहृतः—मम् श्रावकत्वं प्रयाति, पुत्राश्चामिपमिक्षणः स्युः। अतो यदिति मन्यते—यन्मे पुत्रा मातृशाले वर्द्धनीयाः। इति मानिते सा परिणीता। स्रुते जाते मातृशाले प्रेष्ट्यते । तत्र सर्वे पुत्रास्तस्या वर्द्धिताः । राउलेनोक्तम्—तव पुत्राणां किं प्रासं ददामि । भाण्डागारे मुश्च, तथा वणिजां च पङ्कि दापय। राउलेन तथा कृतम् । वणिग्मः सह विवाहादिकिं सम्बन्धा जाताः । ते भाण्डागारिका जाताः। तस्य सुता आसल-राउलप्रभृतयः ३२ (द्वात्रिशत्) जाताः।
किं वलापर्वतस्य तीरे पृथक् २ स्थापिता दुर्गेपु तदा। तस्यान्वये राउलकेह्ण-केतृनाम्ना शाखाद्वये राज्यद्वर्यं जातम्। नङ्कले सुवर्णिगरौ च*। लाखणपूर्वजाः—वासुदेव विक्रम वह्नभराज दुर्लभराज चन्दण गोऊ अजयरा वीघरा सिंघरा। लाखण-वलिराज सोही माहिन्द अणहिल जीन्दराज आसराज आह्नण कीत् समरसीह उदयसीह चाचिगदेव सामतसीह काह्वडदेव—इत्यादि।

II इति लाखणराउलप्रबन्धः II

¹ B कुरते। 2 B त्वसाकं। 3 B विंशतिः। 4 B जर्जरितः। 5 B असिणि। 6 B तुरगाणां। 7 B भवतु भवतु इत्युक्तं। 8 B वहारया समागतया। 9 B अवलोकयत। 10 B विलोकितं। 11 B एवं सहस्र १ अथानां जाताः। 12 B वेश्मोः। 13 B ब्राह्मणी। 14 B यातस्य। 15 B वासार्थे। 16 B सूत्रधारेः। 17 P 'गृहं' नास्ति। 18 B सुत्रसुर्पयेत पितृगृहे प्रेपगति। 19 B ते तत्र वार्द्धिताः। 20 B ततो राउलेन पंक्तिर्दापिता। 21 B वणिग्भिः सह पाणित्रहः प्रत्राणां कारितः। */एतदन्तर्गता पंक्तिः B प्रतौ न लभ्यते। 22 B वासदेव। 23 B नास्ति। 24 B गाडा।

30

पुर. चित्रकूटोत्पत्तिप्रवन्धः (P.)

§ २२८) कान्यकुञ्जे काञ्यां शम्भलीशो नृपो राज्यं करोति । इतः शिवपुरे कतिचिद्रामाधीशश्रित्राङ्गदो नृपः । एकदा तस्य सभायां कोऽपि योगी समेतः । स नित्यमेति राजानं न वक्ति । पण्मासान्ते नृपेण सेवाकारणं पृष्टः स आह-देव! निर्जनं कुरु । तथा कृतम् । राजन्! मम गुरुणा विद्या दत्ताऽस्ति। तस्याः पूर्वसेवा जाता, उत्तरसेवा तिष्ठति । सा तु त्वां द्वात्रिंशस्त्रक्षणं विना न भवति । राज्ञा मानितम् । देव्यप्टमीदिनेऽसिहस्तेन त्वया क्टाद्रा- 5 वागम्यम् । ओमित्युक्ते स गतः । देच्या पटान्तरितया तच्छुतम् । तया अमात्याग्रे उक्तम् । मत्रिणोक्तम्-यदा नृपो याति तदा मम कथ्यम् । नृपः सन्ध्यायां शिरोत्तिमिपेण तां विसृज्य, यदा चिलतस्तदा देव्या मन्त्री ज्ञापितः । स पश्चाचचारु । नृपोऽन्यग्रे गतो योगिनमैक्षिष्ट । मत्र्यपि च्छनं स्थितः । योगी नृपमग्निकुण्डपार्थे विम्रुच्य स्नानाय गतः । मन्त्री प्रकटीभूय नृपमाह–देव! अयं कपटी । त्वां हत्वा स्वर्णपुरुपं कर्त्ता । अतो गम्यते । नृपः प्राह-नाग् मे मा यातु । मन्त्री आह-यदाऽसौ कथयति फेरकान् देहि तदा त्वया कथ्यम्-अहं न नेब्रि, 10 भवानग्रे भवतु । इत्युक्त्वा मन्त्री वृक्षान्तरितोऽभूत् । योगी समेतः । तेन घ्यानमारव्धम् । अग्निकुण्डमुद्दीपितम् । नृपं प्राह-फेरकान् देहि । त्वमपि मम दर्शय नाहं वेशि । स उत्थाय तथा कर्त्तुं लग्नः । उभावपि त्वरितं धावतः । योगी वैश्वानराभिम्रुखं नृपमप्रेरयत् । तावन्मित्रणा राज्ञा च सोऽन्तः क्षेपितः । स स्वर्णनरोऽभूत् । उभावपि तं लात्वा गृहमागतौ । तत्प्रभावाद्वित्तं जातम् । स पश्चात् पुरस्थानमवलोकयन् पर्वतमधिरूढः । तत्र यावान् दुर्गो दिने निष्पद्यते तावानिशायां पतिति । पूजया तत्रत्यो व्यन्तरस्तुष्टः । तेनोक्तम्-अहं पुरस्य भारं सोढुं न क्षमः । 15 अतः स्थानान्तरे क्रुरु । तत्र जलाद्यं पूरियिष्यामि । पश्चाहुर्गाः पर्वतोपरि अन्यत्र प्रारव्धः । चित्रकूटेति नाम कृतम् । वासे जायमाने उपरि लोका न मान्ति । पश्चात्रृपेणोक्तम्-कोटीध्वजा मध्ये वसन्तु, लक्षेश्वरा वहिः । एवं कोटी ध्वजानां गृहसहस्रम् । एवं पुरे निष्पन्ने काशीश्वरेण शम्भलीशेन दुर्गो वेष्टितः । स स्वर्णपुरुषं याचते । विग्रहे वर्ष १२ जाते राज्ञा घासं शिरासि दत्त्वा खनराः प्रहिताः, मध्यतनं खरूपमादातुम् । यावत्ते घासयुता मन्निगृहाधस्तात् सन्ति तावद्भवाक्षस्थितया मन्निपुत्रया पिता उक्तः-तात! पर्वताधस्तादेते वाणिज्यकारका 20 एतान् दिनान् किं स्थापिताः ?। शुल्कमादाय किं न प्रेष्यन्ते ?। तेन सित्वोक्तम्-एतत्परचकं मत्वा, मया त्वं दुर्गस्यैव मध्ये दत्ता। तव पुत्रोऽपि जातः। परमेतन्न याति। तां वार्त्तां श्रुत्वा तैर्नृपाग्रे उक्तम्। स निराशीभूय गन्तुं प्रवृत्तः। खद्छं प्रेपयत्। स दुर्गमवलोकयन् यदा गन्तुं लग्नः, तावता गवाक्षस्थितया वाकरीवेश्यया सक्तम्य (३०६) गण्डूपदा किमधिरोहित मेरुग्रङ्गं किं वारवेरज(?)गिरौ निरुणिद्ध मार्गम्।

(३०६) गुण्डूपदा किमाधराहात मरुशक्ष कि वारवरजारागरा निरुणाई मागम्। द्याक्येषु वस्तुषु वुधाः अममार्भन्ते दुर्गग्रहग्रहिलतां त्यज राम्भूलीरा!॥

नृपः प्राह-तथा कुरु यथा दुर्ग गृह्णामि । तया प्रोक्तम्-कटकं सन्नद्धं कुरु । अयमत्रत्यो मध्याहे प्रतोलीत्रय-मुद्धात्य दानं दत्ते । यदाहं स्नात्वा केशविवरणं करोमि तदा ढौकनीयम् । सङ्केते मिलिते दुर्गो मेलितः । चित्राङ्ग-दस्तु स्वर्णपुरुपं कण्ठे वद्धा वाप्यन्तः पपात । नृपेण सा खनितुमारव्धा । तत आदेशो जातः-विरम वा कटकं हनिष्यामि । स नृपश्चित्राङ्गदपुत्रं राज्येऽधिरोप्य स्वपुरीं गतः । ततोऽभिषस्यते-'चित्रक्टिमदं भद्रे॰' इति ।

॥ इति चित्रक्टोत्पत्तिप्रवन्धः ॥

५४. श्रीहरिभद्रसूरिप्रवन्धः (B.)

§ २२९) चित्रक्रटे हरिभद्रो द्विजश्रतुर्दशविद्यापारीणो महावादी । तस्य इयं प्रतिज्ञा यस्याहं भणितं न परि-च्छिनद्मि तस्य शिष्यो भवामि । तत्र श्रीवृहद्गच्छे श्रीजिनभद्रस्ररयः कृतचतुर्मासकाः सन्ति । तेषां प्रवर्तनी याकिनी साध्व्यु[पा]श्रयेऽस्ति।एकदा प्रतिक्रमणानन्तरं काऽपि साध्वी आवश्यकं गुणयति । तया गाथा उक्ता−

20

25

(३०७) चिक्केदुगं २, हरिपणगं ५, पणगं चिक्कीण ७, केसवो ६, चिक्की ८। केसव ७, चिक्की ९, केसव ८, दुचिक्कि ११, केसी अ १२, चिक्की अ १२॥

इयं गाथा हरिभद्रेण गुण्यमाना श्रुता । अजानँस्तत्र प्रविष्टः । प्रवर्त्तन्या उक्तम्—कः प्रविश्वत्यत्र १ । तेनोक्तम्—अतिचिगचिगापितम् । प्रवर्त्तन्या उक्तम्—न्तनं लिप्तं चिगचिगायते । प्रसादं कृत्वा अस्या अर्थं कथयत ।

ग्विद् श्रवणेच्छा तदा गुरूणां पार्श्वाद्वगन्तन्या । स गतः । प्रातर्गुरूणां पौपधागारे गतः । उक्तम्—इमां गाथां
न्याच्यानयत । गुरुभिरुक्तम्—िकं प्रतिज्ञायाः १ । तेनोक्तम्—सा तथेव । तिहं एपा सिद्धान्तगाथा पूर्वापरसम्बन्धं
परीप्त्यतेः स च दीक्षां विना तपश्चरणं च विना न भवति । तिहं मे दीक्षां दीयताम् । तदा ब्रह्मलोकः सम्भूय
उक्तवान्—वयं दातुं न दबः । हरिभद्रेणोक्तम्—कथं न दत्थ ।

- (३०८) पक्षपातं परित्यज्य मध्यस्थीभूयमेव च । विचार्य युक्तियुक्तं यद् ग्राह्यं त्याज्यमयुक्तिमत्॥
- (३०९) पक्षपातो न मे वीरे न द्वेषः कपिलादिषु।
 युक्तिमद्वचनं यस्य तस्य कार्यः परिग्रहः॥
- (३१०) दुर्योधनस्वकुलनाद्याकरो वभूव विष्णुईरस्त्रिपुरदाहकरः किलासीत्। क्रोंचो गुहोऽपि दृढदाक्तिहरं चकार वीरस्तु केवलजगद्धितसर्वकारी॥
- (३११) खार्थारम्भप्रणतिशिरसां पक्षपातात् सुराणां द्यात्मानं करजकुलिशैदीनवेन्द्रं निहन्तुम्।
 सि...तिस्त्रभुवनगुरुः सोऽपि नारायणोऽस्मिन् रागद्वेषप्र.....कस्य न स्यात्पशुत्वम्॥
 - (३१२) विष्णुः सम्रुचतगदायुतरौद्रपाणिः शम्भुर्छेलन्नरिशरोऽस्थिकपालमाली । अत्यन्तशान्तचरितातिशयस्तु वीरः कं पूजयाम उपशान्तमशान्तरूपम् ॥
 - (३१३) मातृमोदकवद् वाला ये गृह्णन्त्यविचारितम्। ते पश्चात्परितप्यन्ते सुवण्णग्राहको यथा॥
 - (३१४) नेत्रैनिरीक्ष्य विपकण्टककीटसप्पीन् सम्यग् यथा व्रजति तान् परिहृत्य सर्वान् । कुज्ञानकुश्चितिकुमार्गकुदृष्टिदोषान् ज्ञात्वा विचारयत पर.....वादः ॥ भो ! मया सम्यग् यत्तिदृष्टम् ।
 - (३१५) न वीतरागादपरोऽस्ति देवो न ब्रह्मचर्यादपरं [चरित्रम्]। नाभीतिदानात्परमस्ति दानं चारित्रिणो नापरमस्ति पात्रम्॥

इति द्विजान् सम्बोध्य दीक्षां जगृहे । कृतयोगोद्वहनः सिद्धान्तसारमधीतश्च गुरुणा पदे स्थापितः । श्रीहरिभद्रस्य इति नाम कृतम् । तैश्चतुर्दशशतानि कृतानि सिद्धान्तरहस्यभूतानि [प्रकरणानि] । चिन्तितम्—क एतान् लेखियिष्यिति ? । विणक् दिरिद्री एको दृष्टः । तस्य व्याहृतम्—मत्कृतान् ग्रन्थान् लेखय । गुर्वाज्ञा
प्रमाणिमत्युक्ते, गुरुभिरुपिद्ष्य्म्—अद्य मण्डिपिकायां ये मध्चिष्ठप्टमयाः स्तम्भाः समायान्ति तानादाय गृहे
30 शोध्य पश्चादागन्तव्यम् । तथाकृते स हिरण्यकम्बाभिर्धनवान् जातः । तेन रूप्यपत्रेषु स्वर्णाक्षरैस्तानि लेखितानि । गुरुभिश्चित्रक्र्दोपिर ग्रासादे औपधानि सम्मीत्य स्तम्भः कृतः । तत्र प्रक्षिप्य ग्रुक्तानि । स स्तम्भो न
पानीयेन गलित, न च्छिद्यते, नाग्निना दृद्यते ।

१२३०) एक[दा] सरीणां भागिनेयौ वर्तं जगृहतुः । सरिभिः प्रमाणान्यध्यापितौ । ताभ्यां चौद्धानां प्रमा-णानि दुरववीधानि श्रुतानि । गुरवं उक्ताः-भगवन् ! भवतामादेशेन वौद्धदेशे गत्वा तेपां प्रमाणान्यधीत्य नैनाभिप्रायेण कृत्वा यास्यावः । गुरुभिर्वारितावपि निर्वन्धं कृत्वा चेलतुः । वौद्धदेशे गतौ । तत्राव्यक्तवेपौ विद्यामठे पठितुं प्रवृत्तौ । खस्थाने समेतौ ग्रन्थपरावर्तने प्रवृत्तौ । वौद्धाधिष्टात्र्या तारादेच्या वासुयोगात् पत्रमु-ड्डाप्य लेखशालायां क्षिप्तम् । 'नमो जिनाय' इति दृष्टा छात्रैरुपाध्यायस दर्शितम् । तेनोक्तम् कोऽपि जैनेश्छन 5 मधीते । ततोऽत्र वाटिकाद्वारि जिनप्रतिमां मण्डयध्वम् । सर्वेऽप्युपरि चरणं दत्त्वा वर्जतः । जैनस्तु न यास्ति, तदा ज्ञास्यते । सर्वेऽपि चरणं दत्त्वा निःशङ्कं गताः । उभाभ्यां विमृष्टम्-वयं ज्ञाता असाक्रमेतत्परीक्षार्यं कृतम् । ततो इद्धेन कर्णात् खटिकामादाय वस्भस्त्रं कृतम् । उपरि चरणं दत्त्वा गतौ । निजाश्रयात् शास्त्राण्यादाय निर्गतौ । वौद्धाचार्येर्नुपं प्रत्युक्तम्-यत् देव ! शासनसर्वस्वमादाय द्वौ श्वेताम्वरौ नष्टौ । नृपस्तु अनुपदं जातः । इतो हंसेनोक्तम्-वत्स ! अहं रहितस्त्वं कस्यापि शरणे प्रविशेषाः । हंसस्तु युद्धा मृतः । परमहंसः कसिन्नपि पुरे 10 प्रविक्य शरणे गतः । पृष्ठिलग्नं कटकमायातम् । वहिस्तनेन याचितः-भोः ! त्वमिष वौद्धभक्तः । तद्मं धर्मविद्धे-पिणमर्पय । तेनोक्तम्-शरणागतं नार्पये । यादशस्तादशो वाऽस्तु । परमहंसेनोक्तम्-मम वौद्धाचार्येर्वादोऽस्तु । यद्यहं पराजीयते तदा मार्यः । वौद्धैर्जितो मारितः । इतस्तस्य रुधिरालिप्ता रजोहृतिः कयाचिदेव्या शक्किनकारू-पया चित्रकृटे पौपधागारे परित्यक्ता । गुरुभिरुपलक्षिता । निपद्यादर्शनात् ज्ञातमरणाः शिप्याणां रौद्रध्यानं गताः । चौद्धानामुपरि प्रकुपिताः । इत उपाश्रयात्पाश्रात्ये तैलकटाहिर्मण्डिता । तत्र मन्त्रवलेन आकाशमार्गेण वौद्धा 15 एत्य कटाह्यां पतन्ति पतङ्गवत्। एवं सप्तशतानि। ततो गुरुभिज्ञीतवृत्तान्तैः श्रावक एकः शिक्षां दत्त्वा प्रहितः। स मध्ये प्रवेष्टं न लभते । तेनोक्तम्-गुरूणां श्रीजिनभद्रस्रीणां पार्श्वादहमागतोऽसि । मध्ये मोचितः । तेनो-क्तम्-प्रभी ! अहमालोचनार्थी गुरूणां सकारो गतः । मया प्रायिक्तं याचितम् । गुरुभिरहं भवतां पार्थे प्रहितः । त्रसादं विधाय मम प्रायिक्तं दीयताम् । प्रभो ! मया पश्चेन्द्रियजीवस्य विराधना कृता। साऽत्यर्थं द्यते । गुरुभि-रुक्तम्-सुबहु प्रायश्चित्तमेप्यति । तर्हि भवतां किं भविष्यति यदि मम इयत् । ततो ज्ञातम्-मम गुरुभिर्वृत्तमवग-20 तम् । तदा हि अवाञ्ज्यसीजाताः। श्रावकेणोक्तम्-गुरुभिः कथापितम्, कथं समरादित्यचरितं नावगतम् ?। तेन एकसिन् भवे पिष्टमयः कुर्कुटो हतः, एकविंशतिवारान् पिष्टकुर्कुटसङ्गान्तेन व्यन्तरेण वैरं कृतम्। तत् स्पृत्वा श्रीहरिभद्राचार्या वधानिवृत्ताः । पुनः सङ्घं मील्य प्रायिष्ठं कृतवन्तः । तदनु 'समरादित्यचरितं' वैराग्यामृत-मयं चक्कः । कालेनानशनं कृत्वा दिवं गताः । इति प्रतीतम् ।

(३१६) महत्तराया याकिन्या धर्मपुत्रेण धीमता । आचार्यहरिभद्रेणाष्टकवृत्तिरियं कृता ॥

।। इति श्रीहरिभद्रसूरीणां प्रवन्धलेशः ॥

५५. सिद्धर्षित्रवन्धः (B. Br.)

§२३१) अथ सिद्धपें: [प्रवन्ध] उच्यते-श्रीमालपुरे दत्त-श्चमंकरौ श्रातरौ महर्द्धिकौ श्रीमालज्ञातीयौ। इतथ शुमंकरस सुतः सीधाकः । दत्तस्य सनुर्माधः । स सीधाको वाल्यतोऽपि च्तव्यसनी पित्रा कृष्णाक्षरितः । एकदा रममाणेन हारितम् । पितुर्गृहाचौर्यं विधाय दत्तम् । अन्यदा रममाणेनोक्तम्-द्रम्म ५०० यावत् क्रीड-३० यध्वम् । द्रम्मान् ददामि, शिरो वा ददामि । तैरुपवेशितो च्तकारैः, तेन हारितम् । द्रम्मा याचिताः । रात्रौ श्रीवीरप्रासादे थरणकं दत्त्वा सुप्तेषु च्तकारेषु सिद्धः प्रासादभित्तेर्द्धम्पां ददौ । पौपधागारमध्ये पतितः । गुरु-भिर्व्यकृतः-कस्त्वम् १ । तेन स्वनाम उक्तम् । ग्रहणयोग्यं किमित्ति १ । तेनोक्तम्-तथ्यम्, परं मम दीक्षां यच्छत । पुरु प्रवास ।

20

द्युतकाराः प्रातः शिरो प्रहीष्यन्ति । अतो दीक्षां स्तोककालमप्यस्तु । गुरुभिर्नक्षत्राण्यवलोक्य प्रभावकं मत्वा दीक्षितः । प्रातः श्राद्धास्तं दृष्टा गुरून् न्युः न्युभोऽद्य कल्ये परिवारः किं स्तोकोऽस्ति, यदस्य घटानुकारिमाणि क्यस्य दीक्षा दत्ता ? । भवतु याद्यस्ताद्यो वा । इत उपवेशने स्वाध्यायपुस्तिकां दृष्टा 'उपदेशमाला'मादिमध्यावसानां विलोक्य पाठं ददौ । गुरुभिश्चिन्तितमहोप्रज्ञाऽस्य । इतो द्युतकाराः समायाताः । भो । विहरेहि । किं उपात्वण्डेन छुट्यसे । श्रावकरुक्तम् निं देयम् ? । पश्चशती द्रम्माणाम् । वयं दास्यामः । कस्यापि कारणे दीनोऽसौ मुन्यते । पुनरसाकं पार्श्वे समेण्यति । श्रावकरुक्तम् न्यास्यति ततो यातु । द्युतकारेक्क्तम् निर्वे असाभिर्मुक्तः । ते गताः । स सिद्धान्तमधीतवान् , प्रमाणप्रनथाश्च । सिद्धेनोक्तम् नभगवन् ! वौद्धा महावादिनः श्रूयन्ते । तत्र गत्वा तान्निर्जित्य समेष्यामि । गुरुभिरुक्तम् जैनानामेप धर्मो न यत् कस्यापि सम्मुखं गम्यते । य उपविष्टानां सम-भयति सोऽभ्यतु । सनिर्वन्धात् वजन् स्तरिभिरुक्तः न्यदि तत्र गतः परावर्त्यसे तैस्तदा वयं मुत्कलापनीयाः । 10 इदं किमादिष्टम् ? । बौद्धानां देशे गतः । तेषां स्रक्षं दृष्टम् ।

(३१७) मृद्धी शय्या प्रातरुत्थाय पेया मध्ये भुक्तं पानकं चापराह्णे । द्राक्षाखण्डं शर्करां चार्धरात्रो मोक्षश्चान्ते शाक्यसिंहेन दृष्टः ॥

एवंविधानाञ्चीर्वादांश्च ग्रुश्राव-

(३१८) ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि कामुन्मीत्य चक्षुः क्षणं पद्यानङ्गदाराजुरञ्जनिममं त्रातापि नो रक्षसि । मिथ्या कारुणिकोऽसि निर्द्यणतरस्त्वत्तः क्रतोऽन्यः पुमान् सेर्प्य मारवधूभिरित्यभिहितो बुद्धो जिनः पातु वः॥

(३१९) आत्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति सततं कर्मास्ति कर्त्ता विना गन्ता नास्ति शिवाय चास्ति गमनं बुद्धोऽस्ति बद्धो न च। इत्येवं गहनेऽपि यस्य न मुनेर्व्याहन्यते शासनं खद्योतैरिव भास्करस्य किरणा बुद्धो जिनः पातु वः॥

तथा 'शुष्कां श्रष्कुलीं भक्षयतो भगवतो वौद्धस्य पश्चश्ञानानि समुत्पन्नानि' इत्यादि श्रुत्वा वौद्धाचार्य जगी— यदहं जैनः, परं त्वदर्शनमादिरिष्यामि । तैर्हृष्टेर्पाय निवेदितः—यदसौ जैनः सदीक्षां ग्रहीष्यति । नृपेण गौर्य कृतम् । दुक्तलानि परिधापितः, अलंकृतश्चाभरणैः । प्रातर्लगं वौद्धदीक्षायाः । रात्रौ तेन गुरूणां वचः स्मृतम् । 25 प्रातः पणवन्यं तेपां निवेद्य चलितः । श्रीमाले श्रीजिनसिंहसूरीणां पार्थे प्राप्तः । आचार्य ! मुत्कलाप्यसेः मया तेपां शासनं तन्त्वभूतमवगतम् । गुरुभिरुक्तम्—िकिश्चद्यसानपि ज्ञापय । तेनोक्तम् । गुरुभिः प्रत्युत्तरे दत्ते आह— भगवन् ! नैतद्वचोऽहं ज्ञापितः । अनेन वचसा तान् निर्जित्य समेष्यामि । गुरुभिः पूर्ववद्धं कृत्वा प्रेपितः । तत्र तैः परावर्तितः । पुनर्गुरुसमीपे आयातः । तैस्तु वोधितः । एवं सप्तवेला एहिरे-याहिरांचके । अप्रमवेलायां वौद्धेरुक्तमिहैव तिष्ठ तत्र वा । तेनोक्तम्—चतुरो वादिनो मया सह प्रेपयत । तानादाय श्रीमाले पौपधागारे अवायातः । उक्तं द्वारस्थेन—आचार्य ! ग्रुत्कलाप्यसे । तेरुक्तम्—मध्ये आगच्छ । मध्ये आयातः । नितं विनाप्युपविषः । गुरुत्वो 'ललितविस्तरा'वृत्तेः पुस्तकप्रपवेशने विग्रच्य स्वयं तनुगमनिकायां चलिताः । तेन सोहुण्ठमिनिहितम्—एभिवौद्धाचार्यराक्रान्तानां तनुगमनिका सुलभा एव । स्रुर्यो गताः । स पुस्तिकां वाचिततं प्रवृत्तः । 'सिवमयल'इत्यालापवृत्तमनुचिन्त्य वौद्धैः सह वादं कृत्वा गुरुष्वनागच्छत्स तानिरुत्तरीचके । गुरुष्वागतेषु, अभ्युत्थानं कृतम् । गुरुवो विज्ञप्ताः—एकोऽहमामं आत्मपञ्चमो भृत्वा समागमम् । उक्तं तेन—

(३२०) नमोऽस्तु हरिभद्राय तस्मै श्रीप्रभस्तरये । मदर्थं निर्मिता येन वृत्तिर्ललितविस्तरा ॥ तैः सह प्रवत्राज । पश्रादुपदेशमालावृत्तिः कृता । पश्रात्स्र्रिपदमनुपाल्य समाधिना दिवं गतः ॥

॥ इति सिद्धर्पिप्रवन्धः ॥

५६. शान्तिस्तवप्रबन्धः (P.)

🎉 § २३२) कोरण्टके वीरचैत्ये देवचन्द्रनामोपाध्यायः । तत्र श्रीसर्वदेवाचार्या वाराणस्याः सिद्धिक्षेत्रे गन्तुं मनसः 5 समायाताः । तत्र कियदिनाः स्थिताः । उपाध्यायः पदेऽस्थापि । देवस्रिरिति नाम कृतम् । स्वयं यात्रायां गताः । तत्पद्धे प्रद्योतनसूरयः । ते च विहरन्तो नङ्क्ष्ठे गताः । तत्र श्रेष्ठी जिनद्ताः, प्रिया धारिणी, सुतो मानदेवः स्रीणासुपाश्रये गतः । धर्मे श्रुत्वा प्रवच्यां जग्राह । सर्वसिद्धान्ततत्त्वज्ञो जातः । स्रीश्वरैः पदे स्थापितः । जया-विजयाख्यौ देव्यौ नमतः । अथ तक्षशिलायां पश्चशतीतीर्थपवित्रितायां महान् रोगो जातः । न कोऽपि कस्यापि वेश्मनि याति । पुरीं शून्यप्रायां वीक्ष्य सङ्घेनाचिन्ति-सर्वेऽप्यिष्टायका नष्टाः । इति चिन्तिते शासन-10 देन्या उपदिष्टम्-सर्वे न्यन्तरास्तुरुष्कन्यन्तरैरुपद्वताः । वर्षत्रयानन्तरं तुरुष्कभङ्गो भावी । इति ज्ञात्वा यदुचितं तत्कार्यम् । पुना रोगशान्त्यै उपायोऽस्ति । नङ्कलनगरे श्रीमानदेवसूरीणां चरणोदकेन सिञ्चत समानुपाणिः यथा ड़ामरं नश्यति । एवम्रुक्त्वा तिरोद्धे । तैः सर्वैः सम्भूय वीरदेवनामा श्रावको नड्डले प्रहितः । स तत्र गतः । नैपेधकीं कृत्वा मध्ये गतः। सूरयो ध्यानपरा दृष्टाः। जया-विजयादेव्यौ नमस्कर्त्तमागते, उपवरककोणे उपविष्टे। यदा स मध्ये उपवरकं गतस्तदा [दे]च्यो दृष्टा चमत्कृतः । अहो राजर्पयोऽमी । एतेपां पादोदकात्कथं शान्तिर्भ-15 विष्यति । मयि दृष्टे ध्यानमारव्धम् । स्नरिणा ध्यानं मुक्तम् । ततः सावज्ञं वन्दिताः । देव्यौ तिचत्तं ज्ञात्वाऽदृष्ट-बन्धनैस्तं वबन्धतुः । स प्रभ्रणा मोचितः । आगमनकारणे स्र्रिभिः पृष्टे, श्रावकवीरदेवेनोक्तम्-तक्षशिलासङ्घेनो-पद्रवरक्षार्थं प्रभुपादमूले प्रेपितः । मम वि[क]ल्पो जातः । जयादेव्या उक्तम्-यत्र भवादेशाव्छिद्रान्वेपिणः श्रांवकारतत्र गुरवी नागमिष्यन्ति । स्रिरिभिरुक्तम्-वयमत्रस्थाः शान्ति करिष्यामः । श्रीशान्तिनाथ-पार्श्वनाथ-र्मत्रगर्भे श्री'शान्तिस्तव'मर्पयित्वा प्रहितः । स तस्यां गतः । तस्मिन् पट्यमाने शान्तिजीता । वर्षत्रया[नन्तरं] पुरी 20 तुरुष्कैर्भग्ना । अद्यापि भूमिगृहे तस्यां पित्तलानि विम्वानि सन्ति । ततः प्रभृति एप स्तवः सञ्जातः ।

॥ इति शान्तिस्तवप्रवन्धः ॥

५७. न्याये यशोवर्मनृपप्रबन्धः (.B. Br. P.)

§ २३३) कल्याणकटके पुरे यशोवर्म्मनृपतिस्तेन धवलगृहद्वारे न्यायघण्टा चद्वा। एकदा राज्याधिष्टात्री देवी नृपत्रतपरीक्षार्थ धेनुरूपं कृत्वा वत्सस्य तत्कालजातस्य मार्गे कृत्वा स्थिता। नृपस्नुर्विहिलामारूढस्तत्रायातः। वेगेन 25 विहला वत्सचरणयोरुपरि भृत्वा गता । वत्सस्तु मृतः। धेनुः कोक्र्यते, अश्रूणि मुश्चिति। केनाप्युक्तम् नराज-द्वारे गत्वा न्यायं याचस्व। सा गता। तया शृङ्काग्रेण घण्टा चालिता। नृपस्तु भोजनायोपिवृष्टः। शब्दं श्रुत्वा वभाषे—रे! कोऽयं घण्टां चालयिति?। सेवकैविंलोक्योक्तम्—देव! कोऽपि न, भुज्यताम्। नृपः प्राह—निर्णयं लब्धा भोक्ष्ये। नृपः स्थालं त्यक्त्वा प्रतोल्यां स्वयमायातः। कमप्यद्वा धेनुं प्राह—केन पराभृतासि?। तं मम दर्शय। साउग्रे भूता, नृपः पृष्ठी लग्नः। तया वत्सो दिश्तः। नृपेणोक्तम्—केनेयं वाहिनी वाहिता?। स पुरो भवतु। 30

कोऽपि न वक्ति । नृप आह-तदा मोक्ष्ये यदा स प्रकटीमविष्यति । लङ्घने जाते प्रातः कुमारेणोक्तम्-देवाहम-पराधी । मम दण्डं कुरु । नृपेण वाहिनीमानाय्य सार्ताः पृष्टाः-कोऽस्य दण्डः ?। तरुक्तम्-देव ! राज्यधर एक एव कुमारत्तस्य को दण्डः । नृपः प्राह-कस्य राज्यम्, कस्य सुतः । मम न्याय एव महान् । यद्भवति तहूत । तरुक्तम्-यो यस्य कुरुते, तस्य तद्विधीयते । नृपेणोक्तम्-इह स्विपिहि । स सुप्तः । नृपेणोक्तम्-वाहिनीसुपरि वेगेन वाह-5 यत । कोऽपि न कुरुते । नृपत्तदाह-(B नृपः कामाश्राविण्यामिदमवादीत्-) मे पुत्रस्रहो न, विनश्यतु वा जीवतु । यावतस्ययसुपविश्य वेगेन वाह्यति कुमारचरणयोरुपरि तावदेवी प्रकटीभूय पुष्पपृष्टिं चके । न गौर्न वत्सः । राजन् ! मया तव चित्तपरीक्षणं कृतम् । नृपस्य सुतो व्हाभो न्यायो वा । पुत्रादिष न्यायत्तव व्हाभः । चिरं राज्यं कुरुं ।

॥ एवं न्याये यशोवर्म्भप्रवन्धः ॥

५८. अम्बुचीचनृपप्रबन्धः (Br. P.)

§ २३४) एकदा द्वारिकायां कृष्णो राज्यं करोति । पाण्डविषतृच्यो विदुरः कृष्णेन प्रथानः कृतः । दिनं प्रति १६ गद्याणा ग्रासे कृतास्त्रसापरं न िकमि । एकदा विदुरेणोक्तम्—त्वं मेऽधिकं न ददासि, अतः कस्याप्यन्यस्य पार्थे यास्यामि । कृष्णः प्राह—तव प्राप्तिरियती, नाधिकास्तीति । विदुरेणोक्तम्—प्राप्तिरस्ति परं त्वया वारिता । तिर्हि राजान्तरं त्रज—इत्युक्तः । कृष्णेन स प्रहितः । कृष्णेन सर्वेपां भूपतीनां कथापितम्—यद्विदुरस्य १६ गद्याणाधिकं 15 न देयम् । स सर्वत्र आन्त्वा समायातः । कृष्णाग्ने वभापे—मम त्वं काल इव पृष्ठे लग्नः । तवाज्ञयाऽधिकं कोऽपि न यच्छिति । कृष्णः प्राह—तिर्हे द्विजरूपं कुरु । अहमि तव बहको भविष्यामि । हस्तिकलपपुरेऽम्बुचीचो नृपतिर्महान्त्यागी । परं कर्णयोर्न शृणोति । तृपितस्त्वम् इति वक्ति, वुश्विद्वित्रश्चित्त इति वदिते । तस्य पुरे आवाभ्यां गम्यते । गतौ तत्र । विदुरो भव्यविप्रवेपं चकार, कृष्णस्तु बहुकरूपम् । विदुरेण नृपस्याशीर्वत्ता । नृपेण प्रधानसम्युक्तमालोकितम् । प्रधानरुक्तम् करुशे करं क्षित्वा चीरिकाया आकर्षणं कुरु । विदुरेणाधः करं क्षित्वा कृष्णा, 20 विलोकिता । ग० १६ तत्र लिखिताः । वहकरूपेण कृष्णेनोपरितनी गृहीता । तत्र चीरिकायां कोटिलिखिता । प्रधानरवादि—अकिञ्चित्करोऽयम् । एप च भाग्यवान् । अस्ताकं दाने पोड्या निकृष्टाः । कोटिः सर्वोत्तमा । ततः प्रत्यावृत्तौ । कृष्णेनोक्तम्—

(३२१) न विचा धनलाभाय जनजाड्यसमृद्धे । आत्मानमम्बुचीचं च मां च दृष्ट्वां सुखी भव ॥

25 त्वं विदुरोऽहं कृष्णो नृपस्त्विकश्चित्करः। इति विसृध्य विदुरः खस्थो जातः।

॥ इति अम्बुचीचप्रवन्धः॥

- 649

(P.) सङ्ग्रहगता अवशिष्टा विधि-परोपकारादिविषयकप्रकीर्णप्रवन्धाः।

५९. विधिविषये उदाहरणम् ।

§ २३५) पोतनपुरे नरवाहनो नृपः । सुमित्रो मन्त्री । अन्यदा अन्तःपुरे पुत्री जाता । नृपेणोत्सवे कारिते, पष्टीदिनेऽमात्यस्य विसायो जातः । पष्टीदिने विधिरेत्य ललाटेऽक्षराणि क्षिपति । तदेतत्सत्यं असत्यं वा-इति-सन्देहे, खयं खड़ामाधाय छन्नं स्थितः। अर्द्धरात्रौ स्त्रीरायाता। सा कुङ्कममादायाक्षराणि क्षित्वा यान्ती मन्त्रिणा 5 प्रणामपूर्वं पृष्टा-देवि! प्रसादं कृत्वा कथय, कान्यक्षराणि क्षिप्तानि? । तयोक्तम्-मा पृच्छ । निर्वन्धेन पृष्टा आह-इयं कोरिकसुतस्य पत्नी भविष्यति । इत्युक्तवा तिरोद्धे । प्रातर्मत्त्री विपण्णेस्तं वृत्तं नृपाय आचरूयौ । नृपेणोक्तम्-तस्य सुतो जातमात्रोऽस्ति, स वालोऽपि व्यापाद्यः । इत्युक्ते मित्रणोक्तम्-देव ! वालहत्यां कः करोति । तदैव व्यापादियिष्यामः । क्रमेण कन्या विद्विता, सोऽपि विद्वितः । राजगृहे कर्माणि कुरुते । पोडशवापिके तसिन्नमात्येनोक्तम्-देव! स डिम्भः कथं व्यापादनीयः?। इतः कस्मैचिन्नृपपुत्राय कन्या दत्ता। पण्मासान्ते 10 लग्नं मत्वा नृपेण स भूर्जीनपीयत्वा (१) विधिनिमत्रणाय उक्तः-रे वत्स! विधि निमन्यागच्छ । तेनोक्तम्-खामिन्! सा कास्ते । तन जाने-मित्रणोक्तम् । लङ्कायां स चलितः । अग्रे गच्छन् कसिंश्वित्पुरे श्रेष्टिहट्टे उपविष्टः। तेन पृष्टम्-क यास्यसि ? । तेन स्वभावोक्तौ गृहे नीत्वा श्रेष्टिना भोजितः । उक्तम्-विध्यग्रे मम सन्देशो वाच्यः-मदीयं भवनं कथं ज्वलति ?। तेनोक्तम्-कथयिष्ये। तं श्रुत्वाऽग्रे गच्छन् पुरमेकमुद्धसं दृष्टा मध्ये प्रविष्टः। शोभा-भिरामं पत्र्यन् राजाङ्गणे नृपसिंहासनाऽग्रे निविष्टः । सन्ध्यायां पुरशोभा जाता । नृपः समाययौ । तेन नम-15 स्कृतः । कोऽसि त्वम् १ । खरूपे उक्ते स०-मम सन्देशो विध्यप्रे वाच्यः-यन्मे पुरं प्रातर्दिशो दिशं कथं याति १ । तच्छुत्वा प्रा[त]श्रलितः । समुद्रोपकण्ठे गतः । चिन्तातुरो मत्स्येनैकेन च्याहृतः-भो मनुष्य! कोऽसि त्वम् ? स्वभावोक्तौ तत्रापि तेनाप्युक्तम्-यदि मे सन्देशं कथयसि तदा तत्र नयामि । तेनोक्तम्-यद । तेनोक्तम्-मदीय जठरे दाघः कथम्?। स पृष्ठिमिधरोप्य उपकण्ठे ग्रुक्तः। तेनोक्तम्-वलनं कथम्?। सप्तप्रहरान् प्रतीक्षयिष्ये। इति श्रुत्वा स गतः। इतः प्रतोलीराक्षसेषु धावितेषु तेनोक्तम्-विधेः खरूपं समर्प्य वलनेष्यामि । तैर्मध्ये मुक्तः । स 20 रावणनृपालयसप्तमभूमौ कुचेलां कोद्रवदलनपरां विधि राक्षसनिवेदितां ननाम । खरूपेऽपिंते सा हृष्टा जाता । वत्स! त्वं गच्छ। लगसमये एप्यामि। सन्देशान् पृष्टा समुद्रोपकण्ठे गतः। तत्र तं मत्स्यं दृष्टा, तेन पृष्टः-मत्स-न्देशं कथय । पूर्वभवे त्वं विद्यापारगो ब्राह्मणः । विद्यादाने कृपणो जातः । मृत्वा मत्स्यो जातः । पूर्वभव-विद्या तव देहो दह्यते । यदि विद्यां ददासि, तदा ते स्वास्थ्यं भविष्यति । सोऽपि जाति स्मृत्य तस्यैव विद्या-मुदात् । पुनः पुरतटे नीतः स विद्यावान् । पुनः ग्रून्यपुरे सन्ध्यासमये नृपाय मिलितः । तेन ग्रून्यताकारणे 25 पृष्टे, उक्तम्-अत्रैव पुरे तव पिता दुर्गरोघे सन्नह्य वहिनिःसृतः । धारातीर्थे मृतः । मस्तर्कं विना त्वया अपि संस्कारः क्रेतः। करोटिका कालदण्डचण्डालगृहेऽस्ति । तया डिम्मानि ख्वापानं कुर्वन्ति । पश्चात्तव तातो च्यन्तरो जातः । स यथा यथा तां करोटिकां ताप्यमानां पञ्यति तथा तथा कुद्धः सन् पुरं शून्यं विधत्ते । रात्रौ तया शीतया जातया खास्थ्यं करोति । नृपेण तामानीयात्रिसंस्कारः कृतः । तसिन् पुरे खास्थ्ये जाते, खपुत्रीं दुन्चा बहुपरिकरः प्रेपितः । पुनः श्रेष्टिपुरे गतः । श्रेष्टिनातिथ्ये कृते वार्त्ता पृष्टा । तेनोक्तम्-वित्तवानपि त्वं 30 क्रुपणस्तव गृहे देवगुरुसुहासिण्यादयो निःश्वस शापं यच्छन्ति-ज्वलत्वस गृहम् । तेन सत्यं मत्वा दानेश्वरो जातः । खपुत्रीं दत्त्वा प्रेपितः । इतो लग्नदिने स खपुरे गतः । जनैर्वरो मत्वा मध्ये नीतः । केनाप्यलिक्षितेन

किञ्चिन्नोक्तम् । हस्तमेलकवेलायां पुरे पूर्ववरः समाययो । स केनाप्यसत्कृतो मध्ये समागतः । विवाहं मत्वा युद्धसञ्जो जातः । इतो विधिना समेत्य नृप उक्तः—राजन् । मा विपीदः भो मित्रन् । त्वमपि मा विपीद । किं विसरिस त्वया पृष्टाऽहम् १ । मयोक्तं पूर्व मद्वाक्यमन्यथा कथं भवति । एपाऽस्यैव भवतु । अन्यां परिणाप्य द्वितीयः प्रेपितः । इति विधिर्यद्विधत्ते तद्भवति, मनुष्यकृतं न भवति ।

5

20

६०. परोपकारविषये उदाहरणम् ।

(३२२) नीचाः शरीरसौख्यार्थमृद्धिव्यापाय मध्यमाः । कसौचिदञ्जतार्थाय यतन्ते पुनस्त्तमाः ॥

§ २३६) कश्चित्परोपकारी न्यायी पुमान् अन्यायनगरे गतः । तत्र राजाप्रभृति सर्वेऽप्यन्यायिनो वसन्ति । तेन खजीवनार्थं विक्रेतुं कोहलकानि समानीतानि । विक्रेतुं लगः । 'ईछ' सम्बन्धेन नवकोहलकानि गतानि । 10 चत्वारो विलोक्यन्ते । खेटके पतितः । स आत्मानं विक्रेतुं कामोऽपि न छुटति । तेन पुरुपेण चिन्तितम् कथं अथापि प्रतीकारं करोमि १ । रमशानभूम्यां गतः । तत्र मृतकानां दाघं दातुं न ददते । मृतकमहत्त्वानुमानेन द्रव्यं याचते । लोकेः पृष्टम् कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । तस्य द्रव्यं ददाति । ततोऽनन्तरं दाघो भवति । तेन कियद्भिदिनैर्द्रम्माः सहस्रदशो मेलिताः । राज्ञः (०ज्ञा १) पुरोहितः पृष्टः । तन्द्रम्यां समागतः । द्रम्मानां सहस्रं याचते । पश्चश्चत्या निर्वाहः । राज्ञोऽग्रे लोकेन रावा कृता । राज्ञा शन्दितः । स मुक्तकेशः कौपीनवासाः 15 प्रत्यक्षपिशाच इव दृष्टः । पृष्टः कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । कोऽपि राज्ञीशालको वर्तते कसिन्नगरे १ । तेनोक्तम् नंव कोहलां ईछ तेरं एवं कुत्रापि वर्तते । तेन समस्ता द्रम्मा राज्ञः समर्पिताः । तस्य राज्ञा व्यापारो दृक्तः । नगरेऽन्यायो रिक्षतः । समस्तलोकानामुपकारकरो वभूव ।

६१. उद्यमविषये उदाहरणम् ।

(३२३) उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः। पुरुषस्य चोपविष्टस्य देवता न च सिद्धिदाः॥

§ २३७) केनापि पुंसा देवी चाम्रण्डा आराधिता। परितोपं गता क०-याचख। तेन कथितम्-यचिन्तयामि तत्प्राप्तिः। तव भविष्यति-इति कृत्वा देवीभवनानिःसृतः। चिन्तितम्-मम शरीरे सर्वाङ्गीणानि आभरणानि भवन्तु। जातानि। गृहस्रोपिर व्रजन्मार्गे सार्थेन सह चौरैर्दृष्टः। सार्थो गृहीतः। स उपविश्य स्थितः। केऽपि नंष्ट्रा गताः, केऽपि योधिताः। स लकुटैः कुट्टियत्वा गृहीतः। आभरणानि गतानि। शरीरे दूमितो गाढं देवीं 25 भञ्जनाय लोढीं गृहीत्वा गतः। देव्या कथितम्-कथं मां भञ्जसे १। त्वया चौरात् कथं न रक्षितः १। यदि युद्धं कुरुत त्वं तदा स्कन्धाभ्यामवतरामि, यदि पलायनं कुरुत तदा पादाभ्यामवतरामि। उपविश्य स्थितस्तदाऽहं किं करोमि १। देव्या स भङ्गं कुर्विनिपिद्धः। ततः स्वगृहे गतः। यदि उद्यमः क्रियते तदा सिद्धिर्भवति।

६२. दानविषये उदाहरणम् ।

(३२४) पश्चाइत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा न वा खलु । खहस्तेनैव यद्त्तं तद्त्तमुपतिष्ठति ॥

(३२५) सचस्तृप्यति भोक्तारं यस्योहेशेन दीयते। सत्यं वदामि कौन्तेय! यो ददाति स भुञ्जते॥

5

§ २३८) कयाचित्रोपितमर्हकया पत्यागमनकारणं विलोकयन्त्या दिना घनतरा गताः। भर्तुः पार्श्वात्पश्चा-देको जनस्तस्याः समाचारदर्शनार्थं समायातः। सा अन्यासक्ता दृशः। तया चिन्तितम् अहमनेन ज्ञाता। स पुनरिप भर्चारं प्रति चलनाय लग्नः। तस्य चलतो ह्रौ मोदकौ समर्पितौ सम्बलार्थम्। एको विपमिश्रितो द्वितीयो न । यथैप विपमिश्रितमोदकभक्षणेन विनश्य भर्तुरग्रे गृहस्त्ररूपं न कथयति। स चलितः। तस्यव ग्रामगोन्द्रके निर्विण्णो भर्क्ता तस्या उपविष्टो दृशः। क्षुधाऽऽक्रान्तः। तत्र ह्रौ जनाचुपविष्टौ। तेनैको मोदकस्तस्या भर्तृयोग्यं 10 दृत्तः। एकस्तेन भक्षितः। विपमिश्रितमोदकभक्षणेन लहितः। मृच्छां प्राप्तः। तावता दृण्डपाशिकैर्धृतः ससस्या। लोको मिलितः। तस्योपद्रोतुं लग्नः। मारणार्थं नीतो जनः। भार्यायाः ग्रुद्धिर्जाता। मोदकभक्षणेन दृरदेशादायातो मम भर्क्ता विनष्टः। स जनो मारणार्थं नीतोऽस्ति। तया चिन्तितम् नम विरूपदानतस्तात्कालिकं फलं जातम्। अहमेनं जनं ग्रुश्चापयामि। तया तत्र गत्वा कथितः –याद्यं दानं दृत्तम्, तस्य तात्कालिकं फलं दृष्टं तादशम्। जनो ग्रुश्चापितः। लोकानामग्रे कथितम् –याद्यं दीयते ताद्यं प्रत्यक्षं दृश्यते; याद्य दृत्तं 15 ताद्य लव्धम्। तस्याः सत्यकथनेन विषं जित्वोत्तारितम्। स निरामयो जातः। तदनन्तरं सा तस्य विपये एकचित्ता गृहस्थधम्मं पालयति। याद्यदीयतेऽन्यस्य तादक् प्रत्यक्षं दृश्यते –इति भावः।

(३२६) अपलपति रहसि दत्तं प्रत्ययदत्तेन संशयं कुरुते। तस्य हि नश्यति सर्वं मूलतस्तानिशम्यैताम्॥

६३. कर्णवाराविषये उदाहरणम् ।

20

§ २३९) देवदत्तेन व्यवहारिणा प्रवहणगतेन एकस्थात्मीयवणिक्पुत्रस्य हस्ते चत्वार्यमूल्यकानि रह्नानि गृहें कलत्रयोग्यानि प्रहितानि । तेन विणक्पुत्रेण चतुर्प्रामपूं(क्)टजनानां लश्चां दत्त्वा साक्षिणः कृताः । यदा देवदत्तः समायाति तदा युष्माभिरिति कथनीयम्—वयं साक्षिणः कृत्वा, तव कलत्रयोग्यानि चत्वारि रह्नानि प्रक्तियद्भिदिनैः प्रवहणे समायाते देवदत्तः कुशलेनागतः । कलत्रपार्श्वे पृष्टम्—मया तव योग्यानि चत्वारि रह्नानि प्रहितानि, आनय तानि, प्रविलोक्यन्ते; रह्नपरीक्षकाणां दर्श्यते । तया कथितम्—मया पोग्यं केनचित्र समर्पितानि । 25 विणक्पुत्रः पृष्टः । तेन कथितम्—मया चतुरो नगरमध्यस्थान् व्यवहारिणः साक्षिणः कृत्वा तव प्रियायोग्यानि समर्पितानि वयं साक्षीकृत्य निश्चयेनासिन्त्रथें न सन्देहः । तेन चिन्तितम्—अहमनेन विणक्पुत्रेण साक्षिभिश्च [मुपितः] कोऽपि नगरमध्ये न यो न्यायान्यायं विलोकयति । कर्णवारां सत्यां कुरुते । केनचिज्ञनेन कथितम्—कर्णवारी मृतः । पुनस्तस्य लघुपुत्रो विद्यते एकः । देवदत्त-स्तस्य गेहे गतः । पुत्रस्य मात्रा स आवर्जितः । तया कथितम्—कर्मर्थं समायातः ? । कर्णवारां प्रच्छनाय । 30 तया कथितम्—अरे वत्स ! तव पिता नगरमध्यस्थां समग्रां कर्णवारां कुर्वन् लोकानां मध्याद्रहुतरं द्रव्यं समान-यत् । त्वं किमपि न कुरुपे । अन्यन्तां लघुं भिणत्वा कोऽपि न मन्यते । मातरहमपि तस्य पुत्रो भवामि । समग्रं निर्णयं करिष्ये । यतः—

(३२७) सिंहशिशुरिप निपतित मदकुलझङ्कारभूषिते करिणि। न पुनर्नेखमुखविलिप(लिखि)तभूतलकुहरस्थिते नकुले॥

तस्य समीपे देवदत्त उपिवष्टः। कर्णवारा कथिता। व्यवहारिणश्चत्वारोऽप्याकारिताः। पृथक् पृथगुपवेशिताः। तेपां समीपे पृ०, तैः क०-वयं साक्षीकृत्य तस्य प्रियायोग्यं समिपतानि। भव्यम्। तेन स्ववुद्ध्या पडस्र्धीलोअको विभन्य चतुर्णां समिपतः। कथितं च-यावन्मात्राणि सन्ति तावन्मात्राणि कुर्वन्तु । चत्वार्यपि रत्नानि तैः कूट-साक्षिमिरन्याद्यानि २ कृतानि। तेन कर्णवारीपुत्रेण कथितम्-भोः विणक्पत्र । रत्नानि सकालेऽपि समर्पय, मा राजग्रान्यो(ह्यो) भव। एते क्टसाक्षिणश्च राजग्राह्या भविष्यन्ति। ततस्तेन श्रेष्टियोग्यानि रत्नानि समिपितानि। पादयोश्च पतितः। कर्णवारीपुत्रस्य पदं जातम् । अतः सत्यां कर्णवारां कुर्वतां द्रव्यप्राप्तिर्यश्च इह लोके प्रतिकेऽपि। श्रेष्ट्यपि रत्नानां सौष्ट्यं विलसित्वा स्वर्गभाग्जातः।

॥ इति कर्णवाराविषयकप्रवन्धः॥

(G.) सङ्ग्रहगता अवशिष्टाः प्रवन्धाः ।

§२४०) श्रीवाक्पतिराजकविना भारतं कर्त्तुं शारव्धम् । तावता निश्चि द्वैपायनः समागतः । तेनोक्तम्−िकिमर्थं पादमवधारिताः । तेनोक्तम्−तव पार्श्वे याचितुम् । किम् १ यत् त्वं भारतं मा कृथाः । पुस्तकमर्पय । तेन तथा-कृतम् । गीर्वाणवाण्यपि निपिद्धा । ततो गौडवधनामा शाकृतग्रन्थो विहितः ।

15 § २४१) श्रीसारंगदेवप्रधानो राज्ञा रामदेवेन पृष्टो निजखामिनः कीर्तिस्फूर्तिं अवादीत्। राज्ञोक्तम्—सर्वं भव्यम्, परं पानं करोति । पानकः शशाङ्ककलङ्कः । तेनोक्तम्–देव! सत्यम्, परं मातृ-भगिनीं जानाति । रामदेवस्य पितृव्यसुता छखाईराणी अन्तःपुरेऽस्ति । इति श्रुत्वा लजितः ।

१२४२) अथ अभयदेवनामा द्विजः प्रभासे सरस्वत्यां स्नानं विधाय समागत्य च श्रीसोमेश्वरं नमस्कृतः । तद्वर्मशिलायाः पुरः शफरी जीवन्ती पतिता तस्यैव शरीरे लग्ना मृता च । तेन सानुकम्पेन प्रायिश्वतं पृष्टम् । 20 केनापीति गदितम्-सुवर्णरूपमयी दीयते शफरी । तेन न मानितम् । ततः सर्वत्र प्रायिश्वत्तहेतोर्श्रमन् श्रीस्तम्भित्यि गुरुर्जीववधमांसभक्षणप्रायिश्वतं सिद्धान्ते वाचयन्नभूत् । तेन श्रुतम् । यद्यस्य जीवस्य यावन्तीन्द्रियाणि भवन्ति, तद्वधे तावन्मतश्रतोपवासा विधीयन्ते । तन्मानितम् । ततो दीक्षात्ता । श्रीअभयदेवस्त्रयो जाताः ।

§ २४३) क्रम्भीपुरे यशोधनो व्यवहारी। तस्य पुत्रो विद्यानन्दो विस्तरेण परिणीतः। दीपालिकायामागता वधूः। तेनोक्तम्-कथा कथ्यतामिति। तया लज्जया नोक्तम्। सा मुक्ता। ततः पित्राऽपरां परिणायितः। पूर्व25 वदुक्ते सापि मुक्ता। पुनः पित्रा दूरं गत्वा कन्यां याचियत्वा परिणायितः। तया पृष्टया कथितम्-कीदृशीं कथां कथयामि अनुभूतां, श्रुतां वा, दृष्टां वा। तेनोक्तमनुभूताम्। एवमुक्ते तया मन्दं २ द्रव्यं पितृगृहे प्रविष्टं कृतम्। एकदा निश्चि गृहं ज्वालितम्। तदनु निर्धनतयात्मचतुर्थकुदुम्वं निःसृतम्। किष्मन्निप नगरपाद्रे सम्वलिमिणेण पिता गतः, मातापि गता, सोऽपि तां विहाय गतः। सा तु द्रव्यवलेन राजकुमारवेपं विधायावलगां जग्राह। तस्य पिता महिपवित्तोऽजनि। माता मासोपवासिन्यजनि। स कोरिको जातः। त्रयमपि तया संगृहीतम्। वर्षान्ते अवतम् । अद्यापि कथां कथयामि नो वा। जातम्। एवं पुनः व्यवहारी जातः विहितो भार्यया।

§ २४४) केनापि राज्ञा वाह्यालिगतेन कथित्पुमान् करीरशिखरस्थानि करीराणि विचिन्वन्नुदितः-रे सुप्राप्यानि अम्नि विहाय कथं कप्टप्राप्यानि चिनोपि। तेनोक्तम्—सुप्राप्यानि पश्चादपि प्रहीष्यामि, पूर्वमहमसाध्यानि साथिरिष्यामि। राज्ञा तुप्टेन च्यापारो दत्तः। स महासुखं सुद्धे। एकदा प्रातः पृष्टः—कथसुन्मना इव दृश्यसे १। तेनोक्तम्— सुसुमशय्यायां वृन्तेन दूमितोऽसि। ततो राज्ञा उन्मत्त इति सर्वमादाय च्यापारात्रिर्वासितः। एवं यावत—

जा जा पडड़ अवत्थडी०॥

5

§ २४५) राजा-ऽमात्य-तलारक्ष-च्यवहारिणां पुत्राः मित्राणि च कर्म-बुद्धि-विक्रम-च्यवसायान् मन्यन्ते । विवादे जाते देशान्तरं प्रति चिलताः । एकेन च्यवसायप्रयोगात् कस्यापि हट्टे द्रव्यमुपार्जितम् । द्वितीयेन [धाटीतो(१)] प्रामो रिक्षतः । तृतीयेन बुद्धिवशात् तटस्थेन सरोवरमध्यकीर्तिस्तंभपाशो दत्तः । चतुर्थस्य कर्म-वशात् पदाभिपेको जातः ।

(३२८) यद्भविष्याधिको धीरैव्यवसायी प्रकीर्तितः। तसाद्प्यधिको लोके भाग्यवान् राजिलो यथा॥

10

§ २४६) कर्मोपक्रमप्रशंसकं नरद्वयं राज्ञा केनापि क्षे प्रक्षिप्तम् । दिनत्रयं जातम् । राज्ञा तयोमोदकदशकं प्रहितम् । उपक्रमवता गृहीतम् । मोदकपश्चकं कर्मप्रशंसकस्यापितम् । तन्मध्ये रत्नपश्चकमभूत् । राज्ञा तौ वाह्यनि-प्कासितौ । भाग्याधिकेन रत्नानि दर्शितानि । अतो भाग्यमेव श्रेयः ।

§ २४७) वसन्तपुरे जितशत्रुराजा सभां सचित्रां कारयन्निति । अत्रान्तरे चित्रकरदारिका भक्तमादायागता । 15 इतश्च घुद्धो वाह्यभूमो गतः । ततस्तया तत्र कीडया भ्रवि वर्हिवर्ह चित्रितम् । ततो विलोकनायागतेन नृपेण पिच्छभ्रान्त्या करः क्षिप्तः । नखावली भग्ना । सा हसिता । राज्ञोक्तम्-कथम् १ । तयोक्तम्-चत्वारोऽपि मूर्खाः । एकश्चतुष्पथे घोटकं त्वरयन् दृष्टः । द्वितीयो मम पिता, यो भक्ते समागते वहिर्गन्ता । तृतीयो राजा, यः समभूमि मित्पतुर्वृद्धस्य चित्रार्थं ददाति । तुर्यस्त्वम् । ततस्तेन सा परिणीता । ततः सा राज्ञोऽग्रे कथां कथयित—राजन् । शृष्णु । कोऽपिअन्तःपुराणां आभरणानि भूमिगृहे स्वर्णकारपार्श्वात् कारयति । तेन तत्र 20 स्थितेन कथितम् । संग्रति अस्तमनं जातम् । स कथं जानाति । राजन् । राज्यन्थत्वात् ।

द्वितीयदिने—राजन् ! व्यवहारिस्ता काचित् पित्रा मात्रा आत्रा मातुलेन च चतुर्षु स्थानेषु दत्ता । लग्नदिने चत्वारोऽपि वरा विवादं विद्वयते । सा विवादं विज्ञाय मृता । एकेन सह गमनं कृतम् । द्वितीयेन तस्या अस्थीनि तीर्थे प्रक्षिप्तानि । एकः पिण्डं ददाति । तुर्यो मृतसंजीविनीविद्याग्रहणार्थं देशान्तरे गतः । तेन कृत्रापि कृदमानं वालकं चुछके क्षिप्तवती कापि नारी दृष्टा । तेनोक्तम्—आः किमेतद्विहितम् १ । तया पुनर्जीवितः । तेन 25 तत्र विद्यामादाय सापि जीविता । पुनश्रतुर्णां वादो मारुयकेन भगः । येन जीविता स पिता । येनास्थीनि तीर्थे क्षिप्तानि स आता । यः सहोत्पनः सोऽपि आता । पिण्डदाता भर्ता ज्ञेयः ।

तृतीयदिने-केनापि राज्ञा चौरद्धयं [पेटीमध्ये निःक्षिप्य नद्यां] प्रवाहितम् । कसिन्नपि नगरे केनापि राज्ञा निष्कासितम् । पृष्टम्-कियन्ति दिनानि जातानि । ताभ्यां तुर्यं दिनं [कथितं] कथं ज्ञातम् १ । राजन् १ चातु-र्थिकज्यरप्रभावतः ।

पु॰ प्र॰ स॰ 15

चतुर्थं दिने-कस्यापि राज्ञोऽन्तः पुरद्वयम् । एकया महे गन्तुकामया निजाभरणपेटिका कस्याश्रित्रिजसख्याः समर्पिता । तया हारश्रोरितः । तया समेतया पेटिकां दृष्टा कथितम्-मम हारः केनापि चोरितः । राजन् ! कथं ज्ञातः ? । काचमयपेटित्वात् ।

पश्चमिद्ने-कस्थापि राज्ञो रत्नचतुष्टयम्-नैमित्तिको, रथकारः, सहस्रयोधी, वैद्यश्च विद्यते । अन्यदा तस्य राज्ञः 5 सता विद्याधरेणैकेनापजहे । ततो राज्ञोक्तम्-य आनेष्यति स परिणेष्यति । इत्थमुक्ते नैमित्तकेन मार्गो दर्शितः । रथकारेण गगनगामी रथश्चके । सहस्रयोधिना स जितः । सा राजपुत्री विद्याधरमारिता वैद्येन सज्जीकृता । एषां को भर्ता ? । वादे जायमाने तया काष्टमक्षणं कृतम् । नैमित्तिकेनापि तया सह कृतम् । द्वाविष सुरंगान्त-भूत्वा सुखं स्थितौ ।

§ २४८) कुत्रापि केपामपि आचार्याणां जलोदरमुत्पनम् । केनापि वैद्येन खरूपं विलोक्य पृष्टम्-यूयं किं 10 कुरुथ ? । तैरुक्तम्-ग्रन्थ एकः प्रारम्भोऽस्ति । तत्र सरोवर्णनं कियमाणमास्ते । तदवगत्यौपधं कारितम्, इत्युक्तं च-यन्मरुदेशवर्णनं विधत्त । तथाकृते आचार्याणां जलोदररोगोऽगमत् ।

§ २४९) केचिदाचार्या अतीव विद्वांसः कर्मयोगात् कुष्टिनो जाताः। तत औपधोपचारैरिप रोगमनिवर्तमानं वीक्ष्य श्रीसेरीसके यात्रायां यात्वा देवाग्रे त्रिविधाहारश्रत्याख्यानं विधायोपविष्टाः। दिनसप्तकमजिन। पश्चा- चतुर्थाहारोऽपि त्यक्तः। तदात्वागतव्यन्तरैः स्थितव्यन्तरपार्थे पृष्टमिति—कथं भवतामियन्तो दिवसा महाविदेहे 15 लगाः। तैरुक्तम्—महं तेजःपालकलत्रं भीमगान्धिकगृहे स्तात्वेनोत्पन्नमास्ते। तया परिणयनोचितया पाणि- ग्रहणं परित्यज्य श्रीसीमंधरस्वामिकरेण दीक्षा गृहीता। पित्रा पाणिग्रहणद्रव्यं तत्परित्रज्यायाः समये व्ययितम् । तदुत्सवं विलोकयतामसाकमियन्ति दिनानि लगानि। ततस्तैराचार्याणां कथितमिति—भवान् सप्तमभवे भाव- सारोऽभूत्। तेन रङ्गभाण्डतप्तजलेन वाडिमध्ये नक्कलनालकसप्तकं विनाशितम्। तेन कर्मणा त्वं सप्तमभवेऽसिन् कुष्टी जातः। तवाद्यः स्तोकमास्ते। कम्मापि परिक्षीणम्। यदि भणसि ततस्तवारोग्यता दीयते। परमागामिभ- 20 वेऽपि कर्म वेदयिष्यसि। तद्वचो निश्चम्य प्रातः श्रावकानाष्ट्रच्लय स्ररयस्तथैव स्थिताः।

§ २५०) अन्यदा वामनस्थलीवास्तव्यः पण्डितवीसलो लोलीयाणके गतः । तत्र जायमाने जागरणे व्यासे-नैकेन वाहगस्याग्रे लोलीयाणकं व्याख्यातम् । यदद्य मनुष्याणामेकादशसहस्रा उपोपिताः सन्ति । स्नानं कुर्वन्ति च । वीसलेनोक्तम्-िकं स्नानेनामुना १ । पुरे मदीये लघुकासीरे वामनस्थलीनामिन गोलक्षमेकं वाल-ही-ओजेनिनदीद्वये स्नानं कृत्वा तृणमपि स्नादिति ।

25 § २५१) कस्यापि व्यवहारिणः स्वमे मुखे उन्दरिका प्रविष्टा । तेन रोगो जातः । पण्मासाः संजाताः । केनापि मतिमता वैद्येन भोजनं दत्त्वा ऊपालो दत्तः । तदन्तः क्रुत्रिमा मूपिकाः पतिताः । ततो नीरोगो जातः ।

§ २५२) वहूनां विदुपां सभाक्षोभो भवति, इत्यर्थे कथा-पण्डितौ ह्यौ कुत्रापि पठित्वा कसिश्चिदेशान्तरे महित रायतने गतौ । ततो वीजपूरकमेकं भेटाकृते गृहीत्वा भूपसमीपं गतौ । सभां महितीं विलोक्य क्षुभितौ । राज्ञः पुरो वीजपूरकं मुक्तम् । राज्ञोक्तम्-पूर्णं पूर्णं किमेतत् १ । पण्डितेनोक्तम्-राज्ञो भेटायां 'लींवडस'केन 30 भाव्यम् । ततो हिसतः । तावता द्वितीयेनोक्तम्-यत् भवति 'भसाक्षोभः' । § २५३) कच्छदेशे वहुचौरोपद्रवं विज्ञाय राज्ञा जिणहा नामा व्यापारी प्रेपितः।स चौरं मारयत्येव । एकदा चारणेन चौरी कृता । स धृतः आरक्षकेण । चारणं भणित्वा मित्रजिणहाकस्य देवपूजां विद्वतो विज्ञप्तम् । करसंज्ञया मित्रणोक्तम्-मारयत । तदा चारणेनापाठि । 'इक् जिणहा इक्क जिणवरह०' ।

े १९४) एकदा पारणादिनोपरि श्रीयशोभद्रस्ररीणां क्षमाश्रमणानि समागतानि । दाक्षिण्यात्सर्वत्र मानितम् । ततस्तिहिने ग्रामग्रामात् श्रीसङ्घः सकलोऽपि मिलितः । यत्र न यान्ति तत्र ते श्राद्धा विपादं कुर्वते । अतस्तां 5 वहुरूपिणीं विद्यां स्मृत्वा रूपान् विधाय सर्वेषां मनोरथाः पूरिताः ।

§ २५५) रावणविजयं विधाय समेतेन श्रीरामेणायोध्याप्रवेशे समस्तलोकपार्थे 'धान्यस कुशलं गृहे' इत्थं पृष्टम् । लोकानां चेतसीति जातम्-यद्वर्पाणि चतुर्दशयावद्वने स्थितः । अन्नप्राप्तिर्न जाता । अतः प्रथममेवेदं पृष्टम् । इङ्गिते राज्ञा तद्वगत्य महाजनो निमन्नितः। प्रहरद्वये आकारितः । तेषां सुवर्णस्थाले महामूल्यानि रत्नानि सुक्तानि । एकेकस्थाभिसुखमालोकयति । एकेनोक्तम्-देव ! नवीना रसवतीयम् । परं रत्नानि न शक्यंते भोक्तम् । 10 यद्येवं जानीय तदा मम पृच्छायां कथं हसिताः १ । शृणुत-'उत्पत्तिर्दुर्लभा यस्य०' ।

(३२९) अन्नं प्राणा वलं चान्नम् अन्नं जीवितमुच्यते । परमौषधमन्नं हि सर्वमन्ने प्रतिष्ठितम् ॥

§ २५६) खरतराणामाचार्याणां निश्च कोऽपि रंको दुभिक्षे परिश्रमन् शालाद्वारि समागतः पूत्करोति । गुरुभिः श्रुतो वारितोऽपि न याति । ततो गुरुभिर्वहिनिः सृत्य वारितः—अरे ! अन्यत्र याहि । वयं दर्शनिनः । ततो विशेषतश्चरणयोर्लगित्वा स्थितः । ततो गुरुभिस्तपोधनमुत्थाप्य श्रावकस्थैकस्याकारणं प्रहितम् । तस्य भोज-15 नायार्षितः । तेन निजगृहे नीत्वा निजवालकशीताशनं भोजितः । अत्याहारेण विद्विकया मृतः । शुभध्यानेन व्यन्तरोऽजिन । ज्ञानेन ज्ञात्वा पुनरपि रंकवेषं विधाय तथैवागतः । गुरुभिरपि तथैवोत्थाय वारितः । स निजरूषं प्रकटीकृत्येति जगाद—भगवन् ! भवतां प्रसादेन ममेदशी संपत्तिरजिन । ततः किमिप याचध्यम् । तैरुक्तम्-वयं किं याचामहे । यस्तवानं दत्तं तानेव हि व्यवहारिणो विथेहि । अपरं यो गुरून् पूजियप्वित तस्य गृहे न दारित्यम्—इत्युक्त्वा मम पूजां कारय सर्वत्र ।

• § २५७) कस्यापि राज्ञो राज्ञी वदति-नृप! मम आतुर्व्यापारं देहि। विपर्जोयम् (१)। राजाह-राज्ञि! व्यापारस्तस्य दीयते, यो व्यापारं कर्ज्ञं जानाति। सा न तिष्ठति। ततो दत्ता हित्तिपदरक्षा। ततश्रतुष्पथे लोकैः सह
कलहं कृत्वाऽऽगतः। ततो राज्ञा कस्यापि पूर्वव्यापारिणो नित्यमवलगां विद्यतः पदअष्टस्य हित्तिपदे रक्षाव्यापारो दत्तः। चतुष्पथे तत्र डालं दत्त्वा यो य आयाति तस्य तस्याग्रे वदति—अत्र राज्ञो गज्ञ्ञाला भविताः
अत्र पुनः पद्वहित्तिन आलानस्तम्भो भावी। एवं भणतस्तस्य व्यवहारिभिरुक्तम्—इह मा कृथाः, अस्पद्वहाणि 25
पातियिष्यन्ति। इति च्छन्न कृत्वा द्रव्यं गृहीतम्। प्रातर्लक्षसंख्यधनान्यादाय राज्ञोऽग्रे मुक्तानि। पृष्टं च नृपेण।
भणितो यथार्थः। हिंपतिन भूपेन महान् व्यापारो दत्तः।

परिशिष्टम्. १.

प्रबन्धचिन्तामणिग्रम्फितकतिपयप्रबन्धसंक्षेपः ।

§ २५८) अवन्तिदेशे प्रतिष्ठानपुरे विक्रमो राजपुत्रो भद्दमात्रयुतो रोहणे तदासन्नपुरे क्रम्भकारगृहे खनित्रम् । प्रातः खनीपार्थे भट्टेन मातुर्प्टतिः । हा दैविमिति । सपादलक्षम्ल्यं रत्नम् । वलन् भट्टेन क्रशलम् । तत्करा-,5दाच्छिद्य खनीकण्ठे-

(३३०) धिग् रोहणगिरिं दीनदारिद्र्यव्रणरोहणम् । दत्ते हा दैवमित्युक्ते रत्नान्यर्थिजनाय यः॥
ततो अवन्तिदेशपार्थे पटहस्पर्शेन राजा । मुहूर्त विनापि सो दभ्यौ । कोऽपि कोपी सुरः प्रतिदिनं नृपं
हन्ति । निशीथे भोजनादीनि पल्यङ्के निजदुक्तुलाच्छादितोच्छीर्पकम् । दीपच्छायामाश्रित्य कृपाणपाणिः । तुष्टोऽहमग्निवेतालो भक्त्या । नित्यं देयम् । प्रतिपन्नम् । आसुःप्रश्ने खखामिप्रश्नः । शतमेकं नोनाधिकम् । यतः—
(३३१) सा नित्यं कला तं नित्यं ओसहं तं किं पि नित्यं विन्नाणं ।

10 (३३१) सा नित्थ कला तं नित्थ ओसहं तं किं पि नित्थ विन्नाणं । जेण धरिज्ञइ काया खज्ञंती कालसप्पेणं॥

रणेन जितो अग्निवेतालः सिद्धः। यतः-

(३३२) सत्त्वैकतानवृत्तीनां प्रतिज्ञातार्थकारिणाम् । प्रभविष्णुर्न देवोऽपि किं पुनः प्राकृतो जनः ॥
§२५९) प्रियङ्गमञ्जरी कन्या पं० वेदगर्भः । आम्रसंवन्धे कोपितः । पतिविलोकनाय वने, तृपा, पञ्चपालः,

15 करचण्डी । योग्यं ज्ञात्वा गृहे आनीतः । पण्मासीं वपुःसमारणा । खस्ति० । प्रधानमुहूर्ते नृपसभायाम् ।

शोभात् । उश्वरद । नृपविस्थयम् । पण्डितः प्राह-

(३३३) उमया सिहतो रुद्धः शंकरः शूलपाणियुग् । रक्षतात् तव राजेन्द्र ! टणत्कारकरं यशः ॥
ततो नृपेण खपुत्रीं० । पण्डितोक्तं मौनमेव क्ष० । तया परीक्षार्थं पुस्तकशोधने विन्दुमात्रारिहतान्यक्षराणि ।
नखच्छेदिन्या मिहपीपाल एव निर्णीतः । अतःप्रभृति जामातृशुद्धिः । चित्रभित्तौ मिहपीनिवहे दर्शिते तदाह्या20 नोचितानि वचांसि । मिहपीपाल एव नि० । कालीदेवीमारराध । पुत्रीवैधच्यभीतेन नृपेण दासी० । देच्येव तुष्टा ।
तज्ज्ञात्वा राजसुताऽऽगता तत्र । अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः १ । कुमारसंभवादिकाच्यत्रयम् । कालिदासप्रवन्धः ।

§ २६०) श्रे॰ दान्ताककारितावासगृहीतश्यमेन पतामीत्युक्ते सुरे पत इत्युक्ते नृपे पतितं कनकपुरुपं प्राप्त-वान् । [सुवर्ण] पुरुपसिद्धिः ।

§ २६१) अन्यदा कोऽपि विदेशी साम्रद्रिकज्ञः । अपलक्षणराजा पण्णवतिदेशस्वामी । कर्नुरात्रम् । कृपाणि-25 कामाकः । अं० दर्शयामि तव । ३२ लक्षणाधिकं नावगतम् । पारितोपिकम् । सत्त्वपरीक्षाप्रवन्धः ।

§ २६२) अथ परकायप्रवेशं विना सर्वमफलम् । श्रीपर्वते भैरवानन्दयोगिपार्श्वे पूर्वे तत्रागतविष्रेण सह प्राप्य वलन्तौ खदेशे मृतपद्वहित्तिनमालोक्य-

(३३४) वर्ष्मपाहरिके द्विजे निजगजस्याङ्गेऽविद्याद्वियया, विप्रो भूपवपुर्विवेद्या रूपतिः कीडाद्युकोऽभूत्ततः । पह्छीगात्रनिवेद्यानात्मनि रूपे व्यामृद्य देव्या मृतिम् , विप्रः कीरमजीवयन्निजतनुं श्रीविकमो लब्धवान् ॥

-परवपुःप्रवेशविद्यासिद्धिः।

१ नृपाभावे च देशं विनाशयित । (टिप्पनी)। २ प्रथमं धूमं ततो ज्वालां ततः साक्षात् सः। (टिप्पनी)। मेघदूत, रघुवंश। (टिप्पनी)।

15

20

§ २६३) श्रीविकमनृपो राजपाटिकायां श्रीसङ्घसहितं श्रीसिद्धसेनाचार्यं सर्वज्ञपुत्र इति । परीक्षार्थं मानसं नमस्कारम् । आचार्येण-

(३३५) धर्मलाभ इति प्रोक्ते दूरादुच्छितपाणये। सूरये सिद्धसेनाय ददौ कोटिं नराधिपः॥ राज्ञा दीयमाने निरीहतया नाद्दतराचार्येर्भूरनृणी विधीयतामनेन कनकेन ततस्तथैव कृतम्'।

§ २६४) अन्यदा कोऽपि निःखः करात्तायसकृशदरिद्रपुत्रकः। उपालन्धेन भूपेन दत्तदीनारलक्षमादाय गतः। 5 राजा तं पुत्रकं कोशे नि०। यामत्रयेणागतगजाश्वलक्ष्मयो निशि० सत्त्वादनुमता जग्धः। चतुर्थयामे सत्त्वनामा पुरुषः। छुर्यात्मघातं यावत्। तावत् तस्मिन् तुष्टे स्ललिते च पूर्वगता अप्याजग्धः। गमनसङ्केतव्याघातिना सत्त्वेन विप्रछव्धानां न गतिर्योग्या वः। विक्रमादित्यसत्त्वप्रवन्धः।

§ २६५) अथ श्रीभोजो नित्यं भावनाभावितः प्रातः रैटङ्ककान् ददौ ।

(३३६) रोदिको मन्त्री-आपदर्थं धनं रक्षेत्। राजा-भाग्यभाजः क चापदः। मन्त्री-दैवं हि कुप्यते कापि। राजा-सन्तितोऽपि विनञ्चति॥

सभाभारपट्टे । पश्चशतीपण्डिताग्रे राजा-

(३३७) इदमन्तरसुपकृतये प्रकृतिचला यावद्स्ति सम्पद्यम्। विपदि नियतोदयायां पुनस्पकर्तुं कुतोऽवसरः॥

(३३८) निजकरनिकरसमृद्ध्या धवलय सुवनानि पार्वणदाज्ञाङ्क !। सुचिरं हन्त न सहते हतविधिरिह सुस्थितं कमपि॥

(३३६) अयमवसरः [सरस्ते सिल्लैस्पकर्त्तुमर्थिनामनिद्यम्। इदमपि सुलभमम्भो भवति पुरा जलाभ्युदये॥]

(३४०) कतिपयदिवसस्थायी पूरो दूरोन्नतश्च भविता ते । तटिनितटहुमपातनपातकमेकं चिरस्थायि ॥

(३४१) यदनस्तमिते सूर्ये न दत्तं धनमर्थिनाम् । तद्धनं नैव पश्यामि प्रातः कस्य भविष्यति ॥
-इति सकृतं श्लोकम् ।

§ २६६) अन्यदा राजा राजपा० । [काष्टवाहं प्रति-]
(३४२) कियन्मात्रं [जलं विप्र! जानुद्वं नराधिप!। कथमीदगवस्था ते न सर्वत्र भवादशाः॥]
(३४३) लक्षं लक्षं पुनः [लक्षं मत्ताश्च दश दन्तिनः। दत्तं भोजेन तुष्टेन जानुद्वप्रभाषिणे॥]²⁵
§ २६७) अन्यदा निशीथे राजा-

(३४४) यदेतचन्द्रान्तर्जलदलवलीलां प्रक्तस्ते तदाचष्टे लोकः शशक इति नो मां प्रति तथा। चौरः- अहं त्विन्दुं मन्ये त्वद्रिविरहाक्रान्ततरुणी-कराक्षोलकापातव्रणशतकलङ्काङ्किततनुम्॥

30

पुकदा रात्रो नष्टचर्यायां तैलिकेन द्वीपदी पुनः २ प्रातः पृष्टः क०-अम्मीणउ संदेसडउ नारय कन्ह कहिन्न । जग दालिदिहि दुत्थिउ वलिवंघणह सुद्दन ॥

२. जाड लच्छि धणकणकल्यि अन मयगल मयमत्त । तरल तुरंगम जाड सवि तड म न जायसि सत्त ॥

३. हिमसमयो वनवह्निजवपवनस्तिडच ते विभव्म । हन्त सहन्ते यावत् तावद् हुम ! कुरु परोपकृतिम् ॥

5

(३४५) अमुष्मे चौराय प्रतिनिहितमृत्युप्रतिभिये प्रभुः प्रीतः प्रादादुपरितनपादद्वयकृते । सुवर्णानां कोटीदेश दशनकोटिक्षतगिरीन् करीन्द्रानप्यष्टो मदमुदितगुञ्जन्मधुलिहः॥

> (३४६) तत्कृतं यन्न केनापि तइत्तं यन्न केन चित्। तत्साधितमसाध्यं यत् तेन चेतो न दूयते॥

इति दर्पान्धे पुरातनो मन्त्री कोऽपि श्रीविक्रमादित्यधर्मवहिकायां प्रथमं काव्यम्-

(३४७) अष्टौ हाटककोटयस्त्रिनवतिर्भुक्ताफलानां तुर्लं पश्चाद्यान्मदमत्तगन्धमधुपक्रोधोद्धराः सिन्धुराः॥ तारुण्योपचयप्रपश्चितदृद्यां वाराङ्गनानां द्यातं दण्डे पाण्ड्यनृपेण ढोकितमिदं वैतालिकस्यार्पितम्॥

इत्याकण्यं निर्गर्वनृपः ।

§ २६९) आगतसरस्वतीकुटुम्बम् । दासी-

(३४८) वापो विद्वान् [वापपुत्रोऽपि विद्वान् आई विदुषी आई ध्यापि विदुषी । काणी चेटी सापि विदुषी वराकी राजन् मन्ये विद्यपुक्षं कुटुम्बम् ॥] ज्येष्ठं प्रति समस्यापद्म्-'असारात्सारम्रद्वरेत' । दानं वित्ता० ।

तत्पुत्राय−

हिमालयो नाम नगाधिराजः, प्रवालशय्या शरणं शरीरम्-इति भूपवाक्यम् । (३४९) तव प्रतापज्वलनाज्जगाल, हिमा०। चकार मेना विरहातुराङ्गी, प्रवाल०॥ ज्येष्ठभार्यां प्रति—'कंवणु पियावउं खीरु'।

(३५०) जईय रावणु जाइयउ दहमुह इक्क सरीरु। जणि वियंभी चिंतवइ कवणु पियावउ खीरु॥

§२७०) अन्यदा गूर्जरदेशविद्यत्ताज्ञानाय श्रीमीमं प्रति गाथा-

(३५१) हेलानिद्दलियमहेभकुंभप्रयाडियपयावपसरस्स । सीहरस मएण समं न विग्गहो नेय संधाणं॥

(३५२) अंधयसुआण कालो भीमो पुहवीइ निम्मिओ विहिणा। जेण सयं पि न गणियं का गणणा तुज्झ इक्कस्स ॥ श्रीगोविंदाचार्यकृता गाथेयम् । अन्धधृतराष्ट्र १०० सुता हता भीमेनेति ।

```
§ २७१) दामरसन्धिविग्रही । अत्यन्तक्ररूपः ।
                  यौष्माकाधिपसन्धिविग्रहपदे दूताः कियन्तो द्विज!,
         (३५३)
                      मादक्षा वहवोऽपि मालवपते। ते सन्ति तत्र त्रिधा।
                   प्रेष्यन्तेऽधममध्यमोत्तमगुणप्रेक्ष्यानुरूपक्रमं
                      तेनान्तर्गतमुत्तरं प्रददता धाराधिपो रञ्जितः॥
                                                                                             5
  § २७२) अन्यदा शीतर्ती निशि कंचिन्नरं प्रेक्ष्य प्रातः-कथं शीतं सोढम् १-त्रिचेल्या । राजा-का सा १
                 रात्रौ जानु[र्दिवा भानुः क्रुशानुः सन्ध्ययोर्द्रयोः।
                   राजन ! शीतं मया नीतं जानु-भानु-कृशानुभिः॥]
  § २७३) भूपतितकणाशं रोरं प्रति–
         (३५५)
                  नियउयरपूरणङा असमत्था तेहिं किं पि [ जाएहिं।
                                                                                            10
                  सुसमत्था वि हु जे न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि॥
                  परपत्थणापवन्नं मा जणि ! जणेसु एरिसं पुत्तं ।
                  मा उयरे वि धरिज्ञसु पत्थिय मंगो कओ जेण ॥
   राज्ञोचे-कस्त्वम् ? तेनोचे- ] राजशेखरनामाहम् । तस्य हिस्तिनीदानं कृतम् । पुनस्तेनोक्तम्-
         (३५७) शीतत्रा न पटी०, निर्वाता न क्रटी०, वृत्तिर्नार मटी०,
                                                                                            15
                 श्रीमद्भोज तव प्रसादकरटी भंक्तां ममापत्तटी॥
   § २७४) अर्जुनसाध्यो दुःसाधो राधावेधो भोजेन साधितः । हद्दशोभायां तैलिकेन स्रचिकेन खविज्ञानेन
निर्गर्वः कृतः ।
(३५८) भोजराज! मया ज्ञातं राधावेधस्य कारणम् । धाराया विपरीतं हि सहते न भवानपि ॥

§ २७६) सर्वदेवांगजौ शोभन-धनपालौ । तदुपाश्रये श्रीवर्द्धमानस्रितः निमित्रतः प्राह-

(३५९) भजेन्माधुकरीं [ वृत्तिं मुनिम्लेंच्छकुलादिष । एकाव्नं नैव भुश्चीत वृहस्पतिसमादिष ॥ ]
(३६०) अपमानात्तपोवृद्धिः सन्मानाच तपःक्षयः। अर्चितः पूजितो विप्रो दुग्धा गोरिव गच्छति॥
(३६१) पुनराप्याय्यते घेनुस्तृणैरसृतसंभवैः । एवं जापतपोभिश्च पुनराप्याय्यते द्विजः ॥
   -याज्ञवल्क्यः । संतोपतुष्ट आरव्धस्नाने धनपाले विहर्तुमागतसाधुभ्यां दिधसंवन्धेन बुद्धे-'कतिपयपुर-
खामी॰'।
   वोधात्पूर्वं शोभनम्रनिम्-गर्दभदन्त भदन्त! नमस्ते। मर्कटकास्य वयस्य! सुखं ते।
   § २७६) अन्यदा नृपो मृगया० । एण वेधे । धनपालः-
      (३६२) रसातलं यातु तवात्र पौरुषं क्रनीतिरेषा चारणो ह्यदोषवान्।
               निहन्यते यद बलिनापि दुर्वलो हहा महाकप्टमराजकं जगत्॥
   (३६३) किं कारणं तु धनपाल! मृगा यदेते व्योमोत्पतन्ति विलिखन्ति सुवं वराहाः?।
                                                                                            30
            देव! त्वद्ख्यचिकताः अयितुं स्वजातिमेके मृगाङ्गमृगमादिवराहमन्ये॥
(३६४) वैरिणोऽपि हि मुच्यन्ते [प्राणान्ते तृणभक्षणात्। सदैवैते तृणाहारा हन्यते पदावः कथम्॥]
   संन्यस्तमृगयो नृपो नगरं प्रति०।

    निधानसंबन्धे प्रतिबोधः सर्वदेवस्य । शोभनस्य दीक्षा (टिप्पनी) ।
```

(३६५) नाहं खर्गफलोपभोग[तृषितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया, सन्तुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साघो न युक्तं तव । खर्गं यान्ति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रवं प्राणिनो, यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा वान्धवैः ॥]

⁻⁵ पुना राजप्रश्नः–यूर्पं कृत्वा० ।

(३६६) सत्यं यूपं तपो ह्यग्निः कर्माणि समिधो मम । अहिंसामाहुर्ति दद्यादेष यज्ञः सनातनः ॥
-इति शुकसंवादादर्हद्वर्गीभिमुखो राजा ।

§ २७७) अन्यदा सरखतीकण्ठाभरणप्रासादे खत्तके रत्या सह हस्ततालदानपूर्व सारं मूर्तिमन्तमालोक्य हासायोक्तः पण्डितः प्राह−

10 (३६७) स एष भुवनत्रयप्रथितसंयमः शंकरो, विभर्ति वपुषाऽधुना विरहकातरः कामिनीम् । अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करं, करेण परिताडयन् जयति जातहासः स्मरः॥

> (३६८) पाणिग्रहे पुलकितं वपुरैशं भूतिभूषितं जयति । अङ्कारित इव मनोभूयस्मिन् भस्मावशेषोऽपि ॥

> > इत्यादिना प्रीतो नृपः।

15 § २७८) यानवणिग्मदनमयपद्धिकायां प्रशस्तिकान्यानि । नृपोक्तः स आह । नीरधौ शिवायतने, मदन-पद्धिकां नियोज्येयं प्रशस्तिः ।

(३६९) अयि खल्छ विषमः पुराकृतानां भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः । सर्वैरपि पण्डितैरस्रोत्तरार्द्धे पूर्यमाणे विसंवदति नृपोक्तो धनपालः—

हरशिरसि शिरांसि यानि रेजुईरिहरितानि छुठनित गृधपादैः॥

20 चेद्विसंवादस्ततः कवित्वनियमः । राजा तदैव यानानि नीरधौ । तथैव कृते पण्मासैः काव्यार्द्धम् ।

§ २७९) तिलकमञ्जरीय्रन्थे वाच्यमानेऽधः कचोलम् । [मामत्र कथानायकं, विनीता स्थाने अवन्ती, शक्रा-वतारपदे महाकालं कुर्वन् यद्याचसे तत्तुभ्यं ददामीति ।]

(३७०) दोमुहय निरक्खर लोहमइय नाराय तुन्झ किं भणिमो । गुंजाहिं समं कणयं तुलंतु न गओसि पायालं॥

25 राज्ञा दग्धा कोपात सा प्रतिः । सुतासान्निध्यात पुनरुद्धरिता ।

§ २८०) कापि पर्वणि स्नानव्यग्रे लोके अलव्धिमक्षो भार्याताडितो विष्रो राजनरैः सभानीतः । राजोक्तः-

(३७१) अंबा तुष्यति न मया न [खुपया सापि नाम्वया न मया। अहमपि न तया न तया वद राजन्! कस्य दोपोऽयम्॥]

सर्वपण्डितानववोधे खबुद्ध्या राजा ज्ञात्वा लक्षत्रयी प्रसादीकृता । कलहमूलं दारिम्यमेव ।

30 § २८१) अन्यदा सर्वदर्शनमुक्तिमार्गे पृष्टे पण्मासावधौ निश्चि श्रीशारदा नृपं प्रति—'श्रोतव्यः सौगतो०।' श्लोकिममं राज्ञे दर्शनिभ्यश्च समादिश्य तिरोहिता।

(३७२) अहिंसालक्षणो धर्मो मान्या देवी सरखती । ध्यानेन मुक्तिमाप्नोति सर्वद्रशनिनां मतम्॥

15

20

§२८२) परोन्नत्यां[†] राज्ञोक्तः श्रीमानतुङ्गस्रिरात्मानमापाद[४४]शृङ्खलावद्धं कारयित्वा प्रति कार्व्यं शृङ्खला-भङ्गः । इत्थं प्रभावना । श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रवन्धः ।

(३७३) उत्थायोत्थाय वोद्धव्यं किमच सुकृतं कृतम् । आयुषः खण्डमादाय रविरस्तमयं गतः॥ (३७४) लोकः एच्छति मे वार्ता रारीरे कुरालं तव । कुतः कुरालमसाकं आयुर्याति दिने दिने ॥ (३७५) श्वः कार्यमच कुर्वीत पूर्वाह्ने चापराह्निकम् । मृत्युर्ने हि प्रतीक्षेत कृतं चास्य न वा कृतम्॥ 5 (३७६) मृतो मृत्युर्जरा जीर्णा विपन्ना किं विपत्तयः। व्याधयो व्याधिताः किन्नु दृष्यन्ति यदमी जनाः॥ ॥ श्रीहर्पस्यानित्यताश्लोक ४ प्रवन्धः॥

§ २८३) श्रीभोजो भीमं प्रति वस्तु ४ । वेक्यया स्पृष्टः पटहः । गणिका १, तपस्त्री २, दानेश्वर ३, द्यूत-कार ४-इति वेश्योक्तम् । श्रीभीमो भोजं प्रति प्रा० । वस्तचतुष्टयप्रवन्धः ।

§ २८४) अन्यदा निश्च वीर०-माणसणा(डा) दस दस दसा सुणीइ लोअपसिद्ध । मह कंतह इक ज दसा अवर ति चोरिहिं लिद्ध ॥

प्रातः कृपयानीय प्रत्येकं लक्षमूल्यं वीजपूरद्वयं प्रच्छनं दत्तम् । तेन तत् खरूपमज्ञात्वा पत्रशाकाहे । तेना-

प्यज्ञाते कस्यापि मेटार्थम् । तेन श्रीमोजाय । (३७८) वेलामहल्लकल्लोलपिल्लियं जइ वि गिरिनईपत्तं।

अणुसरइ मग्गलग्गं पुणोवि रयणायरे रयणं ॥

परेपामदशाः । यतः-

(३७९) प्रीणिताद्येषविश्वासु वर्षाखिप पयोलवम् । नामुयाचातको नृनं नालभ्यं लभ्यते कचित् ॥

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा। प्रसक्तं कर्म तदेव भुज्यते शरीर हे निस्तर यत्त्वया कृतम् ॥

† टिच्पन्याम्-पुरा मयूर-वाणाख्या भावुकशालको राजमान्या । वाणः स्वभगिनीमिलनाय यया । मयूरेण निशि तामनुनीयमानाम-श्र्णोत् ।

'गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूणित इव । प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि क्रधमहो...

भूयो भूयः पठन् वाणः-

कुचप्रतासत्या हृदयमपि ते चंडि ! कठिनम् ॥'

सा लजिता, कुष्टी भवेति शशाप वन्धुम् । शीततौं नृपाये मयूरेण वरकोढीति सोपहासमूचे । तेन खादिराङ्गारकुण्डोपरि सिककं विधाय प्रतिकान्यं सिककपदं श्विरिकया छिन्दन् पंचिभः कान्येनिरालम्बः, सूर्यप्रसादात् पुनर्नवो देहः । राज्ञो विसायः । मयूरस्तदीर्ष्यया पादो पाणी च छित्त्वा पछेऽक्षरे भवानीप्रसादेन नवी पाणी पादौ च जाती। तयोमीहिमा वादश्च। राजादेशात् काश्मीरं प्रति चेलतुः। सरस्वत्यादेशेन जिताजितनिर्णये जितस्य पुस्तकानि अग्नौ ज्वाल्यानि-इति प्रतिज्ञा । धारासमीपे-रे रे शाटकमलनिर्धाटक! नगरे का वार्ता?। अश्वावहं ॥ लोहकार०-मृतका यत्र ॥ कुलाल......लिकया-पर्वताग्रे ॥ नापितस्य-जलनाडी पत्थरि ॥ चित्रकरस्य-विहिता-निर्विपा॰ ॥ सरस्वतीपुरे देन्या समस्यार्पिता-'शतचन्द्रं नभस्तलं।' 'इष्टं चाणूरमह्नेन'। वाणेन शीघ्रं-दामोदरकराघातविद्वलीकृतचेतसा दृष्टं ॥ मयूरस्य सूर्यसान्निध्यात् पुस्तकेष्वदग्धेषु द्वयोर्मानम् । शिवशासनं विनाधन्यत्र कास्तीदशी शक्तिस्ततो......चाहताः श्रीमान-तुङ्गाचार्याः । पु॰ प्र॰ स॰ 16

15

(३८१) लोकं विलोक्य धनधान्यवरेण्यपुण्यं प्राप्य प्रधानवनिताजनिताभिरामम्। किं मूढ! कांक्षसि मुधा वसुधातलेऽस्मिन् रे जीव पीवरतरं सुकृतं कृतं न॥ ॥ वीजपूरप्रवन्धः॥

§२८५) एको न भव्य इति [रात्रौ] पाठितेन शुकेन सभायां [प्रातः] केनाप्युत्तरमददता पण्मासाविधं व्याचित्वा वररुचिर्देशान्तरं अमन् श्वमोचादानासमर्थपशुपालं लात्वा वस्त्रान्तरितस्कन्धारोपितश्वः। नृपसभां नृपप्रश्नः। स प्राह-देव! लोभ एको न भव्यः। यतः-

- (३८२) अहो लोभस्य [साम्राज्यमेकच्छत्रं महीतले । तरवोऽपि निधिं प्राप्य पादैः प्रच्छादयन्ति यत्॥]
- (३८३) तावन्नीतिर्विनीतत्वं मितः शीलं कुलीनता । यावन्नहि जयी लोभः क्षोभं नाभ्येति जन्तुषु ॥ ॥ एको न भव्य-प्रवन्धः ।।
- (३८४) कविषु कामिषु भोगिषु योगिषु द्रविणदेषु जितारिषु साधुषु । धनिषु धन्विषु धर्मधनेषु च क्षितितछे नहि भोजसमो दृपः ॥
- (३८५) किं नन्दी किं मुरारिः किमु रितरमणः किं विधः किं विधाता, किं वा विद्याधरोऽयं किमथ सुरपितः किं नलः किं कुवेरः। नायं नायं न चायं न खलु निह न वा नापि नासौ न चैष, कीडां कर्तुं प्रवृत्तः खर्यमिष च हल्ने भूपितभों जदेवः॥
 - (३८६) क्षुद्राः सन्ति सहस्रदाः खभरणव्यापारमात्रोचताः, स्वार्थो यस्य परार्थ एव स पुमानेकः सतामग्रणीः।

† एतद्रे टिप्पन्यां इमे स्ठोका लिखिता लभ्यन्ते—

देव त्वं जय ! कासि ? छुट्धकवधूः पाणा किमेतत्पर्लं, क्षामं किं सहजं व्रवीमि नृपते यद्यस्ति ते काैतुकम् । गायन्ति त्वदरिप्रियाश्चतिटनीतीरेषु सिद्धाङ्गनाः, गीतान्धा न चरन्ति देव ! हरिणास्तेनामिपं दुर्वलम् ॥ सीतेति नाम । वादी नष्टः ।

चेतोहरा युवतयः स्वजनोऽनुक्लः सद्वान्धवाः प्रणयगर्भगिरश्च भृत्याः ।
गर्जन्त दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गा राजन्! न किंचिदिह नेत्रनिमीलनेऽस्ति ॥ १ ॥
शीतत्रा न पटी न चाग्निशकटी नास्ति द्वितीया पटी, निर्वाता न कुटी प्रिया न गुमटी भूमो च घृष्टा कटी ।
वृत्तिर्नारभटी न तुन्दलपुटी नाथास्ति मे सङ्कटी, श्रीमद्भोज! तव प्रसादकरटी भंक्तां ममापचटी ॥ २ ॥
वक्त्रांभोजं सरस्तत्यधिवसति सदा शोण प्वाधरस्ते, वाहुः काकुःस्थवीर्यस्मृतिकरणपटुद्क्षिणस्ते समुद्रः ।
वाहिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नेव मुञ्जन्त्यभीक्ष्णं, स्वच्छेऽत्र मानसेऽस्मिन् कथमवनिपते तेऽम्बुपानाभिलापः ॥ ३ ॥
आवाल्याधिगमान्मयेव गमितः कोटिं परामुन्नतेरस्तरसंकथयेव पार्थिवसुतः संप्रत्यसौ लजते ।
इत्थं खिन्न इ्वात्मजेन यशसा दत्तावलम्भोऽम्बुधेर्यातस्तीरतपोवनानि तपसे वृद्धो गणानां गणः ॥ ४ ॥
शौर्यं शत्रुकुलक्षयाविध यशो व्रह्माण्डाविधस्त्यागस्तर्कुकवािल्यताविधरियं क्षोणी समुद्राविधः ।
श्रद्धा पर्वतपुत्रिकापतिपदहन्द्वप्रणामाविधः श्रीमद्भोजमहीपतेर्निरविधः शेषो गुणानां गणः ॥ ५ ॥

सुरताय नमस्तुभ्यं जगदानन्ददायिने । अत्र विजया-आनुपङ्गि फलं यस्य भोजदेव भवादशाः ॥ ६ ॥

दुःप्रोदरप्रणाय पिवति स्रोतःपतिं वाडवो, जीमूतस्तु निदाघसम्भृतजगत् सन्तापविच्छित्तये॥

॥ श्रीभोजप्रवन्धः ॥

§ २८६) सपादलक्षप्रहितक्षुरिकातः पालिताव्दयुगशीला वक्नलादेवी वेश्या श्रीभीमेनोहा । तस्याः पुत्रः हर-पालदेवस्तदङ्गजिल्लभ्रवनपालदेवस्तस्य श्रीकुमारपालः । श्रीसिद्धभीतः कियन्त्यव्दानि देशान्तरे व्यतिक्रम्यागतः 5 पत्तने श्रीकर्णश्राद्धे । आलिगकुम्भकारगोपितः । ततः क्षेत्रे स्टूडमध्ये अन्वागतनरैः कुन्ताग्रेण । ततः प्रान्तरं वजन् उंदरदंका २०; ततो दिनत्रयक्षुधार्तः । क्यापि करम्भकेन प्रीणितः । एवं परिश्रमन् उदयनपार्थे शम्यलार्थं स्तम्भतीर्थं पौपधागारं गतः । उदयनपृष्टाः श्रीहेमस्र्रयः—राजायं भावी । द्वयोः प्रत्येकं राज्यप्राप्तिपत्र-मित्रिणा शम्यलादिना प्रीणितो मालवे । कुण्डिगेश्वरप्रासादे ।

(३८७) पुत्रे वाससहस्से सयंमि वरिसाण नवनवइ अहिए। होही कुमरनरिंदो तुह विक्कमराय सारिच्छो॥

गाथामालोक्य जातप्रत्ययः । श्रीसिद्धस्तं श्रुत्वा तमाचोरितरव्याकवाहडेन नामा(१) पत्तने मुहडासाप्रताप-मछपत्नी वा० ऊमादे वंधुर्वणिगद्दे ।

(३८८) पुत्रादिप प्रियतमैकवराटिकाणां मित्रादिप प्रथमयाचितभाटकानाम्। 15 आजानुलम्बितमलीमसञ्चाटकानां वज्रं दिवः पततु मूर्धि किराटकानाम्॥

प्रातर्भावुकेन राजसभां नीतः । संवृतांचल एकः । योजितकरोऽन्यः । क्रमारपालः पश्चाशद्वर्पदेश्यो राज्यम् । हता राजवृद्धा विश्वासघातकत्वात् । नर्मादिपरभावुकाङ्गभङ्गो नेत्रकर्पणम् । यतः-

(३८९) आदौ मयैवायमदीपि नूनं तन् नो दहन्मामवहेलितोऽपि । इति भ्रमादङ्गुलिपर्वणाभिस्पृदोत नो दीपमिवावनीपम् ॥

(३९०) प्रभासमृद्धिरेवैषा जीवितं राज्यसंपदः । यथाम्भः कमलकोभायै तैलं वा दीपदीधितेः॥

शास्त्रम् । ततः प्रोढिमा । आलिगकुम्भकारस्य सप्तशतग्रामितचित्रक्रृटीयपट्टी । श्रीउदयनाङ्गजो महामात्यो वाहडदेवः । कर्पका अङ्गरक्षपदे ।

§ २८७) श्रीपत्तने लातानशनाम्याविमानभङ्गे विषैरित्यस्यया श्रीहेमस्रिर्मालवे । 'आपण पइं प्रग्नु॰' इति चिंतापराः । श्रीउदयनोक्तागमाः कृतज्ञमौलिना श्रीकुमारेणोक्तम्-नित्यं आगन्तव्यम् । श्रीहेम॰-ग्रंजीम॰ ॥ 25 राजा एको वासः । इति प्रेत्य शुभायेति । ततः सदा गमनागमने । कोऽपि मत्सरी । विश्वा॰ ॥ सिंहो॰ ॥ रात्रौ भोजने । अधामधा॰ ॥ मृते स्वज॰ ॥

(३९१) पयोदपटलच्छने नाश्नन्ति रविमण्डले। अस्तं गते तु भुञ्जाना अहो भानोः सुसेवकाः॥

यद्मश्रन्द्रगणिनासने प्र०।राजा-जीवं विना कथं प्र०१। गुरवः-भवतां गजाद्या रिपौ सज्जी०, उत नित्येवायं राजव्यव०। तद्गुणरिञ्जतेन पूर्वप्रतिपन्नराज्ये दीयमाने प्रभुः । राजप्रति०॥ संनिहीगि०॥ इति प्रीणितो ३० राजा। श्रीहेमस्रिचरित्रं पृष्टः श्रीउदयनः प्राह-

§ २८८) धन्धुके [मोढकुले] चाचिग-चाहिणिपुत्रश्राङ्गदेवोऽष्टाव्दः श्रीदेवचन्द्रस्रिसिसत्रागते रममाणो दृष्टः।

३ संवत् ११९९ वर्षे कार्तिक शुदि २ रवी हस्ते पट्टाभिषेकः।

लक्षणानि वीक्ष्य-यद्ययं क्षत्रियकुले तदा सार्वभौमः, यदि विणिग्-वित्रकुले तदा महामात्यः, चेद्र्यनं प्रतिप्द्यते तदा युगप्रधान इवेति विचार्य तत्पुरसङ्घं मेलयित्वा गृहं गताः । चाचिगे प्रामान्तरे मात्रा खागतादिना
श्रीसङ्घर्तोपितः । श्रीसङ्घो मत्पुत्रार्थमागत इति हपिश्रुणि मुश्चन्ती खं रत्नगर्भ मन्या विपण्णा । यतस्तित्यता
मिथ्यात्वी। ग्रामेऽपि नास्ति । खजनानुमता माता गुरुभ्यो निजं पुत्रं ददौ । आचार्यः प्रश्ने ओमित्युचरन् गृहीतः ।
तत् ज्ञानान्मुक्ताहारः पुत्रदर्शनाविधं चाचिगः । उदयनः खावासे वांधवभक्त्या प्री० । तदनु चाङ्गदेवं तदुत्सङ्गे
निवेश्य पश्चाङ्गप्रणामपूर्वं दुक्तुलत्रयं लक्षत्रयं च ढोिकतवान् । चाचिगः प्राह-क्षत्रियमूल्ये १०८०, अश्वमूल्ये
१७५०, सामान्यस्थापि विणिजो मूल्ये नवनवित कलभा इति । त्वं लक्षत्रयं ददत् स्थूललक्षायसे । मत्सुतोऽनर्घस्तवभक्तिरनर्घतमा तिर्हे अस्य मूल्ये भक्तिरस्तु। द्रव्यं न लािम। मन्त्री-साधु साधुः युक्तं बृहि। चािचगःयूयमेव प्रमाणम् । ततो गुरुभ्यो द०।

10 (३९२) धनधान्यादिदातारः सन्ति कचन केचन । पुत्रभिक्षाप्रदः कोऽपि पुनरत्र न दृश्यते ॥ दीक्षया कुलयुगोज्ज्वलनम् । यतो महाभारते-

(३९३) तावद् भ्रमन्ति संसारे पितरः पिण्डकांक्षिणः। यावत् कुछे विद्युद्धात्मा यती पुत्रो न जायते॥ श्रीहेमस्ररिपादाः।

§ २८९) श्रीसोमेश॰ राजादेशात् । यत्र तत्र समये॰॥ १॥ भववी॰॥ २॥ राज्ञाऽऽरात्रिकाद्यनु तमेकान्ते 15 देवगर्भागारे—मत्समस्त्वत्समः शंभ्रसमो निह । भाग्यवशादेतत्रयसंपत्तिः । शिवदं देवं बूहि । आचार्याः— ईशमेव प्रादुःक्तवें । यथा तन्मुखेन शिवमार्गं वेत्सि । नृपाश्चर्यम् । आवयोरेकाग्रयोः सर्वं सुकरम् । मया ध्यानं त्वया धूपोत्क्षेपः । जलाधारोपरिहेमाभः । दुरालोकश्चक्षुपातिरूपः । असंभाव्यस्कर्पः । तपस्ती प्रादु॰ । राज्ञः स्तुतिः । नृपेणादेशं देहीत्युक्ते, मोहनिशादिनमुखात्तनमुखादिति तद्वाणी । राजन्तरं महर्षिः सर्वदैवतावतारः । ज्ञानमयः । एतिहृष्ट एवासन्दिग्धो मोक्षः । तिरोद्धे । श्रीहेमाचार्यो राजन्तिति यावद् बूते, राजा तावन्ननाम 20 पादांभोजम् । तदादेशात्त्यक्तं मांसमद्यम् । ततः पत्तने बोधः । आज्ञावर्तिपु॰ । तृतीयव्रताधिकारे मृतकद्रव्य-द्वासप्तिलक्षमितं पद्वं पाटितवान् ।

§ २९०) सुराष्ट्रासुंसुमाररणे आखुनानीतदशायां काष्ट्रशासादोऽपनीय नन्यपापाणरचनायां कृताभिग्रहो रण-भग्न उदयनो देवद्रन्यं २ याचन् स्वजनैरुक्तं वाहडामडसुतौ करिष्यथः । पात्राभावे तद्वेपधारिणं वण्ठं ननाम । आराधना ।

(३९४) जिने वसति चेतसि त्रिभुवनैकचृडामणौ कृतेऽनदानसद्विधौ सकललोकवद्वाञ्जलिः । समस्तभवभावनाप्रतिकृतिं समभ्यस्यतः स चान्त्यसमयक्षणः क्विदुपैति पुण्येऽहनि ॥

खर्गः । वण्ठोऽपि तद्भावनाद्रैवतेऽनशनः । ततः खजनैः पत्तने उक्तौ वाहड-आम्बडौ कृताभिग्रहौ । वर्षत्रयेण संपूर्णः प्रासादः । मम्माणिविम्बम् ।

१ ९९ लक्षाः स्युः-टिप्पनी । २ देशेषु अष्टादशसु १४४४ प्रासादाः का० । मारि निवारयामास ।

20

25

(३९५) त एव जाता जगतीह जन्तवः खकीयवंदास्य त एव भूषणम्। य एव देवे च गुरौ च वान्धवे यथाखमौचित्यविधानतत्पराः॥

> मोक्षार्थं खधनेन शुद्धमनसा पुंसा सदाचारिणा। वद्धं तेन नरामरेन्द्रमहितं तीर्थेश्वराणां पदम्, प्राप्तं जनमफ्लं कृतं जिनमतं गोत्रं समुद्योतितम्॥ ॥ श्रीशञ्जज्ञयोद्धारः॥

§ २९१) कपर्दिनानुमतेन केनापि सभायां कामन्दकीनीतौ-

(३९६) पर्जन्य इव भृतानामाधारः पृथिवीपतिः । विकलेऽपि हि पर्जन्ये जीव्यते न तु भूपतौ ॥ राज्ञोक्ते 'मेघस राज्ञ उपम्या ।' इति संसद्धर्षे । श्रीकपर्दिनोक्तम्-उपमा १, औपम्यं २, उपमेयं ३ । ततो 10 नृपेण वर्षेण व्याकरणं काव्यम् । विचारचतुर्भुत्वप्रवन्धः ।

§ २९२) 'रोम्णां ग्रहणमाकरे' मूलपाठे पं० उदयचन्द्रः प्राह-'प्राणितूर्योङ्गाणा'मिल्येकत्वम्। ततो रोम्णो ग्र०॥

§ २९३) घृतपूरयोग्यायोग्ये । एकभिडवन्धप्रासादाः ३२ कारिताः । प्रायश्चित्तप्र० ।

§ २९४) उन्दरद्रच्येणोन्दरयसही कारिता। करम्भसम्बन्धे करम्बकविहारः । सपादलक्षीयमारितयूकच्यवहा-रिसारेण यूकावसही ।

§ २९५) नृषेणोक्त आलिगनामा प्रधानपुरुषः प्राह-श्रीसिद्धेऽप्टनवित्युणाः, द्वौ दोषौ । त्विय द्वौ गुणौ, दोपा अप्टनवितिरित्युक्ते, असमाधौ छुरिकां चक्षुः । श्रीसिद्धस्य गुणाः ९८ रणासुभटता-स्त्रीलम्पटताभ्यां तिरो-हिताः । तत्र कार्पण्यादयो दोपा रणग्रूरता-परनारीसहोदरताभ्यां तिरोहिताः । आलिगप्र० ।

> (३९७) यूकालिक्षशतावलीवलवल्रह्मोलोल्लल्कम्वलो दन्तानां मलमण्डलीपरिचयाहुर्गन्धरुद्धाननः । नासावंशनिरोधनाद्गिणिगिणत्पाठप्रतिष्ठास्थितिः स्रोऽयं हेमडसेवडः पिलपिलत्खिल्लः समागच्छिति ॥

अशस्त्रो वधः । पौपधागारपार्श्वे । श्रीयोगशास्त्रं श्रुत्वा-

(३९८) आतङ्ककारणमकारणदारुणानां वक्त्रेषु गालिगरलं निरगालि येषाम् । तेषां जटाधरफटाधरमण्डलानां श्रीयोगशास्त्रवचनामृतमुज्जिहीते ॥

॥ वामराशिविप्रप्रवन्धः ॥

§ २९६) सुराष्ट्रातश्रारणी─ (३९९) लच्छि वाणि मुहकाणि ए पइं भागी मुहु मरउं। हेमसूरि अत्थाणि जे ईसर ते पंडिआ ॥ नृपेण दत्तसहस्तप्रभुपादानां प्रा० आरात्रिकानं०─

(४००) हेम तुहाला कर मरू जिह अचन्भुअरिद्धि। जे चंपह हिठा मुहा तीह उपहरी सिद्धि॥

त्रिःपाठे लक्षत्रयम् । चारणप्रवन्धः ॥

§ २९७) यात्रामनोरथे नृपे युगलिका—डाहलदेशीयः श्रीकर्णस्त्वां प्रति । राजा खेदं गुर्वन्ते । श्रेयांसि० ॥१॥ 5 प्रभुः—प्रारभ्यते० ॥ प्रारभ्य विध्वनिहता । विध्वः० ॥ २ ॥ द्वादश्यामे धर्मेण विध्वापगमः । किंकर्तव्यमूढो नृपः । ताम्बूलत्यागे । युगलिका—रात्रौ प्रयाणे वटलप्रकण्ठहारेण मृतः श्रीकर्णः । द्वासप्ततिसामंतयुतः श्रीसङ्घेन सह सप्तदशहस्तमिते प्रभुजनमभूमिस्वयंकारितविहारे प्रभावनां कृत्वा श्रीशत्रञ्जये । त्वया चरणग० ॥ १ ॥ यत्त्वया जगतीनाथ । न्यहन्यत मनोभवः० ॥२॥ दुक्लक्खउ० ॥३॥ विविधप्रार्थनावसरे—इक्कह पुछह० ॥४॥ पठितनवे चारणे नवलक्षान् ददौ राजा । नृपादेशात् आंवडेन त्रिपष्टिलक्षे रैवतकपद्या । तीर्थयात्राप्रवंधः ।

> (४०१) स्वस्ति श्रीमति पत्तने नृपगुरुं श्रीहेमचन्द्रं मुद्रा स्वःशकः प्रणिपत्य विज्ञपयति स्वामिन् त्वया सत्कृतम् । चन्द्रस्याङ्कमृगे यमस्य महिपे यादस्सु यादःपते-र्विष्णोर्मतस्यवराहकच्छपक्कले जीवाभयं तन्वता ॥

(४०२) नम्रं शिरः कुरु तुरुष्क कलिङ्ग लिङ्गं त्यक्त्वा वनं व्रज गजवजमङ्ग यच्छ । मुश्चायुधं मगध मालव मालपोचैर्नन्वेष गूर्जरपतिः कुपितोऽभ्युपैति ॥

(४०३) मोलिं मालवनायको नमयति खामङ्गलिं जाङ्गल-खामी कुन्तति दक्षिणक्षितिपतिर्गृह्णाति दन्तेस्तृणम् । सिन्धौ सिन्धुपतिर्निमज्जति नगोत्सङ्गे च वङ्गेश्वरो नइयलाद्यु निदाम्य यस्य जियनः प्रस्थानभेरीखरम् ॥

॥ श्रीकुमारपालप्रवन्धः ॥

§ २९९) [मरुवास्तव्यः] श्रीमाल ऊदाको विणग् वर्षायां घृतक्रयार्थम् । [टिप्पण्याम्-रात्रौ व्रजन् कर्म-करैरेकसात्केदारादपरसिन्नीरैः पूर्यमाणे 'के यूयम् १' अम्रकस्याम्रकाः । ममापि कापि सन्ति १ । तैः कर्णावत्यां 25 तवापि सन्ति । शक्तनग्रन्थिः । सक्कडुम्बस्तत्र कर्णावत्यां [वायटीय]प्रासादे छीम्पिकाभोजनं तद्दत्तस्थितिः । लक्ष्मीवृद्धौ नव्यावासखाते निधिः । ततः स उदयनमन्त्री । [टि०-तत्रातीतादिचतुर्विशतिजन ७२ समलंकृतः प्रासादः कारितः ।]

(४०४) कृतप्रयत्नानिप नैति कांश्चन खयं शयानानिप सेवते परान् । द्वयेऽपि नास्ति द्वितयेऽपि विद्यते श्रियः प्रचारो न विचारगोचरः॥

30 तदङ्गजा वाहडदेव १, आम्बड २, चाहड २, सोऌ ४ [अपरमातृकाः]।

15

20

15

25

§३००) सान्तू राजपा० स्वकारितप्रासादे वार्राङ्गनास्कन्धन्यसहस्तं कमि चैत्यवासिनं ददर्श । देवान् विन्दित्वा स नतः । स लिजतः श्रीमलधारहेमान्ते प्रवज्य संवेगात् श्रीशत्रु अये १२ वर्षं तपस्तेषे । (४०५) रे रे चित्त कथं श्रातः प्रधावसि पिशाचवत्। अभिदं पश्य चात्मानं रागत्यागातसुखी भव॥ (४०६) संसारमृगतृष्णासु मनो धावसि किं सुधा। सुधामयमिदं ब्रह्मसरः किं नावगाहसे॥ देववन्दनाय तत्र गतः श्रीसान्तू सं प्रेक्ष्य विस्तयः। सः-

(४०७) जो जेण सुद्धधम्मंमि ठाविओ संजएण गिहिणा वा । सो चेव तस्स जायइ धम्मगुरू धम्मदाणाओ ॥

॥ लजाप्रयन्धः ॥

§ २०१) जित ८४ वादः क्रुमुद्चन्द्रः श्रीदेवस्रिव्यिष्यरत्तप्रभः प्रदोपे गुप्तवेषो रात्रौ क्व० मठे । तेन कस्त्व-मित्युक्ते । अहं देवः । को देवः । अहम् । अहं कस्त्वं श्वा । श्वा कः । त्वम् । त्वं कः । अहं देवः । इति 10 चक्रश्रमदोषात् ।

(४०८) हंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोक्तिसण्टङ्कितैः संसारावटकोटरेऽतिविकटे मुग्धो जनः पास्यते । तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकछेशस्तदा सस्यं कौमुद्दचन्द्रमङ्गियुगर्लं रात्रिंदिवं ध्यायत ॥

(४०९) कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसटाभारं स्पृश्चात्यंहिणा कः कुन्तेन सितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्क्ष्ति । कः सन्नद्यति पन्नगेश्वरशिरोरत्नावनंसिश्चये

यः श्वेताम्बरशासनस्य क्रुरुते वन्यस्य निन्दामिमाम् ॥

श्रीसिद्धराजसभावादावसरे कुमुदः श्रीहेमचन्द्रं प्रति । पीतं तक्रम् । श्वेतं तक्रम्, पीता हरिद्रा । युवयोः को 20 वादी १ । श्रीदेवसूरिभिरयं वालः । अनेन को वादः । त्वमेव वालो योऽद्यापि कटीद० वस्तं न धत्ते ।

(४१०) खद्योतद्यतिमातनोति सविता जीर्णोर्णनाभालय-च्छायामाश्रयते दाद्यी मद्यकतामायान्ति यत्राद्रयः । इत्थं वर्णयतो नभस्तव यद्यो जातं स्मृतेर्गोचरं तद्यस्मिन् भ्रमरायते नरपते! वाचस्ततो मुद्रिता ॥

(४११) नारीणां विद्धाति निर्वृतिपदं श्वेताम्वरपोछसत्-कीर्तिस्फातिमनोहरं नयपथपस्तारभङ्गीगृहम् । यस्मिन् केवलिनो विनिर्जितपरोत्सेकाः सदा दन्तिनो राज्यं तज्जिनशासनं च भवतश्चौलुक्य! जीयाचिरम् ॥ § ३०२) ३६०००० ग्रामकन्यकुङादेशकल्याणकटकपुरे श्रीभूयराजा राजपा० । स्त्रीं प्रेक्ष्य कामार्तः । यतः– (४१२) न पञ्चति दिवा घूकः काको नक्तं न पञ्चति । कामार्तः कोऽपि पापीयान् दिवा नक्तं न पञ्चति ॥

स्वनरेणानायि प्रोक्तस्वनीचत्वार्त्-पूर्वे धृतकरा सा ग्रुक्ता लिखतेन राज्ञा । स्वकरौ छेदितौ गवाक्षगौ निज-5 यामिकैरेव । महाकालाराधनादागतौ करौ । मालवदेशं तसै दत्त्वा तापसः संजातः ।

§ ३०३) कन्य० एकदेश्रगूर्जर० वडीयारदे० पश्चासरग्रामे चापोत्कटवंश्यं झोलिकास्यं वालं वनाऽग्रे आरोप्य माता रन्धनादिः श्रीशीलगुणस्तिभिस्तन्मातुर्श्वतं दत्त्वार्पितो वीरमतिगणिन्या पाल्यमानः। वनराजनामा ८ वर्षः। देवपूजा विना० मूपकान् मार०। गुरुणा निपिद्धोऽपि दण्डयोग्या अमी। तस्य जातके राजयोगं मत्वाऽयं महाराजा भावीति मातुः सम०। [चौर मातुलेन सह] धाट्यादिना चरति। काकरग्रामे धनिगेहं मुण्णन् दिधभाण्डे 10 करे पतिते भ्रक्तोऽहिमति सर्व हित्वा गतः। अन्यदा तद्भगिन्या श्रीदेव्या निश्चि गुप्तवृत्त्या वन्धुवात्सल्यात् स्नानादिनोपकृतो मम राज्ये त्वयैव तिलकं विधेयम्। अन्यदा चौरैः कापि वने रुद्धेन जाम्वाकेन ५ शरमध्यात् २ भग्ने। श्रीवन[रा]जेनोक्तं मे महामात्यो भावीति।

§ ३०४) अथ कन्यकु० तद्राजसुता महणका कंचुकसंवन्धे गूर्जर० पश्चकुलं पण्मासैरुद्राहित २४ लक्षपारुथ-कद्रमान्, ४००० तेजीतुरङ्गान्, [सौराष्ट्रघाटे] लात्वा यान् श्रीवनराजेन हत्वा वर्षं वने स्थित्वा, पुरनिवेशाय 15 भूमिं विलोकयता अणहिलगोपः प्राप्तस्तेन यत्र शशकेन श्वा त्रासितस्तत्र तन्नाम्नाणहिल्लपुरम्। [५० वर्षीयः] प्रतिपन्नभगिन्या तिलकम्। जाम्बाको महामात्यः। आचार्यवचसा श्रीपार्श्वप्रतिमालंकृतं निजाराधकमूर्तियुतं पश्चासरं कारितम्। सं० ८०२।

§ ३०५) श्रीमृलराजा [स्वकारितप्रासाद] धर्मस्थानारक्षं विलोकयन् सरस्रतीतीरे एकान्तरोप० पंचग्रास्या० कांथडिकं तपस्तिनं आरोपिततृतीयज्वरकम्पमानकंथाकं प्रेक्ष्योवाच । सर्वथा कथं न हीयते । मुनिः-अभुक्तं 20 कर्म न० । नृपेण धर्मस्थानरक्षणायाभ्य० सः ।

(४१३) अधिकारात् त्रिभिर्मासैर्मठापत्यात्रिभिर्दिनैः । ज्ञीघं नरकवाञ्छा चेदिनमेकं पुरोहितः ॥ इति निपिद्धो नृपः ।

§ ३०६) श्रीपरमारवंश्यश्रीहर्पभूपो राज० शरवणमध्ये जातमात्रं वालं प्राप्य देव्ये० स मुझ इति नाम । ततः [राज्ञः] सीन्धलः सुतः । मुझे राज्यं रुद्रादित्यो महामात्यः । उत्कटत्वात्सीन्धलो निष्काशितः । गूर्जरदेशे 25 कासद्रासन्ने निजपल्लीं कृत्वोवास । दीपाली निश्चि मग० चौरवध्यभूमिपार्थे शूकरं प्रति वाणम् । शवेन सङ्केतः । सीन्धलेन निवार्य शरेण हतः किरिः । सीं० तव सङ्केतकाले शूकरवधः श्रेयानथाधुनेति । तत्साहसतुष्टः । प्रेतो भूम्यपाति वाणवरं श्रीमुझान्त्यसम्यं प्रकाश्य गतः । मालवे गतः । श्रीमुझसम्पदैकदेशं प्राप्तः । पुनरुत्क० नेत्रे किर्पिते । श्राममेकं दत्तं श्रासार्थम् । पझरगेन भोजः सुतः । तज्ञातकम् ।

मूलार्कः श्रूयते शास्त्रे सर्वकल्याणकारकः । अधुना मूलराजेन योगिश्चत्रं प्रशस्यते ॥ स्वप्रतापानले येन लक्षहोमं वितन्वता । सूचितस्तत्कलत्राणां वाष्पावग्रहिनग्रहः ॥ कच्छपलक्षं हत्वा सहसाधिकलम्बराजमायातम् । संगरसागरमध्ये धीवरता दर्शिता येन ॥

१ टि०-सतीत्वं दासदास्यऽहं सत्यम् । २ राज्यरक्षाये परमारराजपुत्राक्रियोज्य ।

३ टि०-१०९८ वर्षे मूलराज्याभिषेकः।

४ टिप्पन्यां-वयजलदेवनामानं निजं विनेयं तेन राज्ञोऽभ्यर्थनया जात्यघुराणखाष्टी पलानि सृगमद ४ कर्प्र १ द्वान्निराहाराङ्गनाः । पुनं मा० कृत्वा स्थापितः स्वयं ब्रह्मचारी० । राज्ञा परीक्षा । ताम्बूलप्रहारेण कृष्टिनी सज्जां च० इत्यादि ।

५ टि०-गय गय रह गय तुरय गय, पायकडानि भिच । सम्मिट्टिड करि मंतणुं महंता रहाइच ॥

(४१४) पत्रादात् पत्रवर्षाणि मासाः सप्त दिनत्रयम् । भोक्तव्यं भोजराजेन सगौडं दक्षिणापथम्॥

[ज्ञानिपार्श्वात्पुत्रभिक्षां याचितः । अभ्यत्तज्ञास्त्रपद्त्रिंग्रहण्डायुधः, अधीत्य ७२ कलाऽक्त्रपारपारंगतः समत्त-लक्षणलक्षितः स वृष्ट्ये ।] इत्याकर्ण्ये श्रीमुञ्जेनान्त्यजेभ्यः स० । तैः सानुकम्पैरभीष्टदेवं स० ।

(४१५) भान्धाता स महीपतिः कृतयुगालंकारभूतो गतः, सेतुर्येन महोदधौ विरचितः कासौ दशास्यान्तकः।

अन्ये येऽपि युधिष्ठिरप्रभृतयो यावत् भवान् भूपते,

नैकेनापि समं गता वस्रमती मन्ये त्वया यास्यति ॥

इति राज्ञे सम० । श्रीमुद्धाः खेदादि० । यौवराज्ये भोजः ।

§२०७) अथ तिलङ्गदेशपतैलपनृपरणे वद्धो मुझः । कारायां तद्भगिन्या सह भार्या सं०। मृणालवती स्मुखं दर्पणे विलोकयन्ती विपण्णा मुझेनाभाणि ।

> (४१६) पभणइ मुंज मुणालवइ जुवण गियउं म झूरि। जह सकर सयखंड थिय तोइ स मींठी चूरि॥

इति तां मो॰ । निजप्रधानदापितसुरङ्गासङ्केते राजा तां प्रतीक्षमाणस्तया स्वभातुः कथितम् । तैलपेन प्रति-कुटं भ्राम्यमाणो सुद्धः-

(४१७) सड चित्तहं [सट्टी मणहं वत्तीसडी हियाहं। अम्हे ते नर ढाढसी जे वीसस्या त्रीआहं॥ 15

(४१८) झोली त्रुटी किं न मूचउ किं न हुउ छारह पुंछ। हींडह दोरी दोरीचउ जिम मंकडु तिम मुंजु॥

एकसिन् दिने एकां भिक्षोत्तरं क्वाणां स्त्रीं प्राह मुझ:-

(४१९) भोली मूधि म गबु करि पिक्खिव पहुसयाइं। चऊदसहं वहत्तरहं मुंजह गयह गयाई॥

[इत्थं सुचिरं भिक्षां आमियत्वा भूपादेशात्] अन्यदा वथकाले [नरैकक्तमिष्टदैवतं सरेत्युक्तं] सुझेन-(४२०) लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे वीरश्रीवीरवेश्मिन । गते सुझे यशःपुझे निरालम्बा सरस्वती ॥ श्रुलीग्रोतं नित्यं दिधलिप्तमौलिं तैलपः कारयामासामपीदिति ॥

§ ३०८) कियतां कार्पटिकानां त्वं राज्यं ददासीति भवान्योक्तो भवस्तां गां पङ्कमग्नां कृत्वा नृरूपस्तटस्थः पान्थान् उ० । तैरासन्नश्रीसोमेश्वरदर्शनोत्कैरुपहसितः । केनापि कृपावता पथिकवृन्देनोद्धरणप्रारम्भे सिंहरूपेण श्रमभुना त्रासिते कश्चिदेकोऽवज्ञातभयस्तस्याः पार्श्वे स्थितः । स एव योग्यो राज्यस्थेत्युक्ता गौरी भवेनेति । 25

१ टि०-इदं काव्यं पत्रके आलिख्य नृपतेः समर्पयामास । तद्दर्शनात् नृपतिः खेदमेदुरो भ्रूणहत्याकारिणं स्वं मन्यमानः । श्रीभोजो-न्मानितयुवराज्यादिना । मुक्षस्तु तिलद्धदेशीयराज्ञा तैलपदेवनाम्ना सह योद्धं गतः । तेन भग्नो वद्धश्च विदंव्य निपातितश्च ।

२ तन्न गतोऽसी वृद्धां मां त्यक्ष्यतीति विमृशनया ।

३ टि॰-आपद्गतं इसिंस किं द्रविणानंधमुग्ध, लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीह किम्ब चित्रम् । किं त्वं न पश्यिस धटीर्जलयम्रचके, रिक्ता भवन्ति भरिताः पुनरेव रिक्ताः ॥ १॥

§ ३०९) कश्चित्कार्प० श्रीसोमेश्वरयात्रायां यान् पथि लोहकारौकिस निशि भार्यया खपितं छुर्या हत्वा कार्पिटक्झीपें छुरी मुक्ता बुम्बापातः। तलारकैस्तस्य करौ छिन्नौ। तेन दैवोपालम्भे निशि श्रीसोमेशः पूर्व एकेनाजा
कर्णयोर्धता परेण मारिता। ततः साऽजेयं नारी, येन मारिता स पितः। त्वया कर्णौ धृतौ। तवागमे उछसितकोपे त्वत्करौ गतौ। ततो मे उपालम्भः कथिमिति।। कृपाप्रवन्धः।।

- - (४२१) रम्येषु वस्तुषु मनोहरतां गतेषु रे चित्त ! खेदमुपयासि कथं वृथा त्वम् । पुण्यं कुरुष्व यदि तेषु तवास्ति वाञ्छा पुण्यैर्विना नहि भवन्ति समीहितार्थाः ॥ तद्दानात्त्वं श्रीशातवाहनः । देवग्रसञ्जपेण ह० ।
- 10 (४२२) मीनानने प्रहसिते भयभीतमाह श्रीशातवाहनमृपिर्भवतात्र नद्याम्। यत्सक्तुभिर्मुनिरकार्यत पारणं प्राक् दैवाद्भवन्तमुपलक्ष्य झपो जहास॥

जातस्पृतिः । अहोदानम् । यतः-

- (४२३) दानपात्रमधमर्णमिहैकग्राहि कोटिग्रणितं दिवि दायि। साधुरेति सुकृतैर्यदि कर्तुं पारलौकिकक्रसीदमसीदत्॥
- 15 (४२४) पूर्वेपुण्यविभवव्ययवद्धाः सम्पदो विपद् एव विसृष्टाः । पात्रपाणिकमलार्पणमासां तासु शान्तिकविधिर्विधिदृष्टः ॥

ततः प्रभृति पात्रदानादि ॥ श्रीशातवाहनपात्रदानप्रवन्धः ॥

§ ३११) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता रूपवती वालविधवार्कसन्मुखावलोके तेनैव सुक्ता, गर्भे, वने मुक्ता । पुत्रजन्म । साष्टाव्दः। लेखशालिकपराभूतो मातृपार्थे पितृनामानवगम्य मर्तुकामोऽर्केण करे कर्करोऽर्पितः। साप-20 राघे शिलान्यथा तवैव शिलेत्युक्तः । ततः स शिलादित्यः । तत्पुरनृपेण परीक्षाये तथा कृते मृते राह्नि स एव राजाः अर्कदत्ताश्वारूढो नभश्रर इवेच्छाविहारी महाप्रतापी जैनमुनिवासितः श्रीशत्रुञ्जयोद्धारकः। कदाचित्सौगतैः श्रेताम्वरपराभवे श्रीशत्रु अधिष्ठितम् । तद्भागिनेयो मछनामा क्षुष्ठः । वेपपरावर्तेन वौद्धपार्थे पठन् निशीये खे यान्त्या भारत्योक्तः के मिष्टाः। वह्याः। पुनः पण्मासान्ते निश्येव केन सह । घृतगुडाभ्यामित्युक्ते तुष्टायां भारत्यां जिताः सौगता निःकाशिता देशात् शिलादित्ये सभापतौ। तत आचार्यपदं श्रीमछवादिम्ररिः॥ मछवादिप्रवन्धः॥

25 § ३१२) श्रीमालपुरे माघपण्डितः । पित्राऽपि [टि०-क्रुमुदपण्डितेन] खपुत्रापन्निराकरणाय वर्पशतिदन-मितनाणकहारकान् दत्त्वा भोगायानेकशो दत्त्वा च विपेदे । तिद्दिक्षयांगतश्रीभोजं सवलं रञ्जयामास । मरकत-बद्धा भूमिर्दिन्या । काचबद्धा सञ्चारकभुः । दैवज्ञोक्तप्रान्ते पादे श्वयथुः । पुण्यक्षये देशमोचः । यतः–

१ टिप्पण्यां—भोजान्ते भोजनम् । शीतर्तो प्रावरणम् । प्रच्छादककदशनं भोजितः छादितश्च रात्रौ स्तोकान्नं स्निग्धम्* । प्रतलमा-च्छादनम् । शुपिरत्रम्बकस्तम्भान्तःप्रविद्यक्षितापेन न शीतार्तो राजा ।

^{*} टिप्पण्या उपरि टिप्पणी-५०० गवां दुग्धं २५० पानं यावत् ४ गावः । तापिते तस्मिन् कण्डारकेण शालिविधीयते पाके शकैरा-दिना संस्कृते स्तोके परिवेषिते राजा तृसः ।

(४२५) देशं स्वमिष मुश्चिन्त मानम्लाने महाशयाः । दिवावसाने व्रजति द्वीपान्तरमहर्मणिः॥ धारायां गतः । पुरतक्षप्रहणकार्षणपूर्वं श्रीभोजात्कियद् द्रव्यमानेयमित्युक्ता भार्या गतोपलक्षिता नृपेण । विपादः । पुरतकाद्यपत्रे काव्यम्-

(४२६) क्रमुदवनमपित्र श्रीमदम्भोजखण्डं त्यजित मुद्रमुळ्कः प्रीतिमांश्रकवाकः। जदयमहिमरिक्षमर्याति शीतांशुरस्तं हतविधिललेतानां ही विचित्रो विपाकः॥

अस्येव काव्यस सर्वोर्वामृल्यम् । परं लक्षं १, सा मार्गे याचकः । नाक्षराणि ० – प्रस्मृतः किमथवा ।। गृहागता पत्या प्रशंसिता । अन्यदा भिक्षा ० – अर्था न सन्ति न च मुं ।।

(४२७) दारिद्र्यानलसन्तापः शान्तः सन्तोपवारिणा । दीनाशाभङ्गजन्मा तु केनायमुपशाम्यति ॥

व्रजत व्रजत प्राणाः ।। ततो मृतः । नृषेण तज्ञातेभित्नुमाल इति ॥ पण्डितमाघप्रवन्धः ॥

§३१३) डाहलदेशे देमतराज्ञी महायोगिनी गणकवचसोत्तिमतगर्भा १६ यामान् यावत् श्रीकर्णजन्म । 10 अप्टमयामे सापि मृता । मुखे हारावाप्तिर्नयन० ॥ श्रीकर्णप्रवन्धः ॥

६३१४) श्रीसिद्धराजीपरोधेन श्रीहेमन्याकरणं १ वर्षेण सम्पूर्णम् ।

(४२८) भ्रातः पाणिनि ! संवृणु प्ररुपितं कातस्रकन्था वृथा मां कर्पाः कटु शाकटायनवचः क्षुद्रेण चान्द्रेण किम् । कः कण्ठाभरणादिभिर्यटरयत्यात्मानमन्येरपि

श्रयन्ते यदि तावदर्थमधुराः श्रीसिद्धहेमोक्तयः॥

६३१५) मालवान्महास्थाने श्रीसिद्धराजा जनपा० घ्वजं प्रेक्ष्य कृपितः। विप्राः-देव अयं घ्वजारोपः पुरापि। यतो नगरपुराणे-

(४२९) पत्रादादों किल मूलभूमेर्दद्योर्द्धभूमेरपि विस्तरोऽस्य । उद्येस्त्वमष्टेव तु योजनानि मानं वदन्तीति जिनेश्वराद्देः ॥

20

15

ततो जैनप्रा० घ्वजाः।

§ ३१६) डाहलदेशीयनृपसमसागता । 'आयुक्तः प्राणदो लोके ।' प्रिता श्रीप्रश्निः ।

§ ३१७) जाम्त्रान्यिश्रीसज्जनदण्डेशेनोद्ग्राहितवर्षत्रयसुराष्ट्राद्रच्येण काष्ट्रप्रासादमपनीय श्रीनेमित्रासादो-द्वारः। चतुर्थवर्षे आनायिते सज्जने नृपेण द्रच्ये मार्ग्यमाणे तत्रत्यागतच्यवहारिभिर्दीयमाने । द्रच्यं पुण्यं वावधा-रयतु स्वामीत्युक्ते सज्जने राजा पुण्यमग्राहीत् । ततः पुनरप्यधिकारः । तीर्थद्वये योजन १२ ध्वजा दत्ता । 30

१ टिप्पण्याम्-अर्था न सन्ति न च मुद्यति मां दुराशा त्यागास सङ्ग्चिति दुर्केलितः करो मे । यात्रा च लायवकरी स्वयंधे च पापं प्राणाः स्वयं मजत कि परिदेवितेन ॥

धुाक्षामः पविको सदीयभवनं पृष्टन् कृतोऽप्यागतस्तर्हिक गेहिनि किंचिदस्ति यदयं भुद्धे धुधापीहितः । वाचासीत्वभिधाय नास्ति च पुनः प्रोक्तं विनेवासरैः स्थूटस्यूटविटोटलोचनगरुद्वाप्पाम्भसां विन्दुभिः ॥

श्रीमालेषु धनवत्मु सत्मु धुधाविनष्टे पुरुपरत्ने भिछमा० ।

२ टिप्पणी-दण्ड-गुण्ड-उम्मनानि सोमेश्वरे ट्युा सिदेशस्य गिरिनारे हुपः ।

न्दपच्यापारपापेभ्यः स्वीकृतं सुकृतं न यैः। तान् धृलिधावकेभ्योऽपि मन्ये मृहतमान्नरान्॥

॥ इति श्रीरैवतकोद्धारप्रवन्धः ॥

§ ३१८) अन्यदा श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरयात्रां कृत्वा वलन् रैवतं गन्तुमिच्छुर्विप्रैर्मात्सर्याछिङ्गाकारमिति 5 निपिद्धः श्रीशत्रञ्जये आकृष्टकृपाणिकैविंप्रैनिंपिद्धो रात्रौ कार्पिटकवेपेणारुरोह । सरोमाश्चं देववन्दनम् । द्वादश्च-ग्रामोद्घाहितं दत्तम् ।

§ ३१९) श्रीपत्तने आभडवणिग् कांस्यकारगृहे घर्घरादिना ५ विशोपकैराजीविकः । श्रीहेम० पार्श्वे २ प्रति-कामन अधीतरत्वप॰ परिग्रहं प्रमाणीकुर्वन् प्रभुभिः सामु॰ द्रमा ३ [लक्षाः-टि॰] मोकला मोचिताः। अन्यदा कापि ग्रामेऽजावर्ज चरन्तं प्रेक्ष्य कण्ठे पापाणं मूल्येन लात्वा मणिकारपार्श्वादुत्तेजितं श्रीसिद्धराजमुक्-10 टावसरे लक्षद्रच्येण दत्तम् । तेन 'द्रच्येणागतमाञ्चिष्ठाठामानि क्रीत्वा तद्विक्रयावसरे सांयात्रिकैर्जलचौरभयात्तद-न्तर्निहिता हैमकाम्ब्यः । ततः श्रीसिद्धराजमान्यो जैनप्रासादादि ॥ वसा० आभडस प्रवन्धः ॥

§ ३२०) अन्यदा श्रीसिद्धराजेन धर्मतत्त्वादिषृष्टेषु सर्वदर्शनिषु निजस्तुतिपरनिन्दकेषु आकारितश्रीहेमस्ररिः १४ विद्यारहस्यं विमस्य पौराणिककथा-

पुरा कश्चिद् व्यवहारी पूर्वोढां पत्नीं हित्वा सङ्घहिणीकृतसर्वस्वः पूर्वया वशीकरणायाभ्यर्थितगौडदेशीयेनोक्तम्-¹⁵ रिक्मबद्धां गामिव तव पतिं करोमीत्युक्त्वाऽचिन्त्यौपधं दुच्वाऽऽहारान्तर्देयम् । तथाकृते पतिगीः । तत्प्रतीकारम-जानन्ती विश्वविश्वाक्रोशान् स० । निजं निन्दन्ती एकदा मध्यन्दिने तापाक्रान्तापि शाड्वलभूमिपु तं चारयन्ती कस्यापि तरोस्तले विश्रान्ता विलपन्ती खे वाणीम० । तत्रागतो विमानारूढो भवो भवान्या तहुःखकारणं पृष्टो यथावस्थितं निवेद्य च तस्यैव तरोञ्छायायां पुंस्त्वहेतुमौपधं तित्रवन्धादादिञ्य ति० । सा तदन्र तच्छायां रेखा-ङ्कितां कृत्वा तन्मध्यवर्तिन औपधाङ्करान् लात्वा मुखे क्षि०। तेनाप्यज्ञातीपधेन स गौर्नरः। यथा तदज्ञातमेप-20 जाङ्करः समीहितकार्यसिद्धिं चकार, तथा कलियुगे मोहात् तिरोहितं पात्रपरिज्ञानम् । ततः सर्वदर्शनाराधनेन तदपि मोक्षदं भवतीति निर्णयः।

तथा, द्वैपायन-युधिष्ठिरभीमसंवादे पात्रपरीक्षायाम्-

मुर्वस्तपस्वी राजेन्द्र! विद्वांश्च वृषलीपतिः। उभौ तौ द्वारि तिष्ठेते कस्य दानं प्रदीयते॥

सुखासेव्यं तपो भीम! विद्या कष्टदुरासदा। 25 युधिष्टिर:-(४३२) विद्वांसं पूजियष्यामि शरीरैः किं प्रयोजनम् ॥

श्वानचर्मस्थिता गङ्गा क्षीरं मद्यघटस्थितम्। भीम:-(४३३) अपाचे पतिता विद्या किं करोति युधिष्टिर ॥

१ टिप्पण्याम्-पत्नी प्रसूता दुग्धं न प्राप्नोति वालकः सीदति तद्रथमजां गृहीतुकामो गतः। नीलं जलं धृतेव.....ज्ञातं रत्नम्। गृहीता सा सटोकरा तन्मध्यरलम् ।

२ टिप्पण्यां-विसा० आभटेन पूर्वे निर्धनेन ९ लक्षाः परिग्रहपरिसाणे मुत्कलाः कृताः । पुनर्धने जाते तपोधनानां १ घृतघटं प्रति-दिनं सञ्जकारोऽवारितः । सदा साधर्मिकवात्सल्यम् । प्रतिवर्षे सर्वदर्शनार्चा । एवमप्रशस्तिप्रासाद-प्रतिमा-पुस्तकादि गुप्तवृत्त्या साधर्मिकादि दानादिपुण्यानि कृतानि । ८४ वर्षायुःमान्ते धर्मन्ययविहकायां ९८ लक्षदर्शने खेदः । पुनः सुतैः २ लक्षे सप्तक्षेत्रयां दुःचा अप्टलक्षीं च मानयित्वा कोटिः पूर्णीकृता । पुनः सुतास्तादशा एवाऽभवन् ।

हेपायनः- (४३४) न विद्यया केवलया तपसा वापि पात्रता । यत्र वृत्तिममे चोभे तिह्न पात्रं प्रचक्षते ॥

एवं गुणोपेतपात्रभक्तया मुक्तिः। इति प्रभुनिवेदिते श्रीसिद्धराजः सर्वधर्मान् आ० ॥ सर्वदर्शनमान्यताप्रवन्धः॥

§ ३२१) मांगृः क्षत्रियः पाराच्यो भूम्याम् । भोजने घृतकृतपः । दाढायां सोहल १, अपाटने पथ्ये यवागृः ५ माना । अर्द्धाहारे कं वैद्येनोक्ते पुनः ५ माना । निपिद्धः । नृपेण निरा० । समयोचितम् । स्नानावसरे गजः 5 श्वानेन । तद्वलेन पीडितो मृतः ॥ मांगूप्रवन्धः ॥

§ ३२२) ओतुना खद्धशुकसाकमृतश्रीजयकेशिराजानं श्रुत्वा निजतातपुण्याय श्रीमयणछदेवी श्रीसोमे॰ । त्रिवेदिनं विश्रं जलन्यासावसरे शाह—यदि भवत्रयपातकं लासि, तदा ददामि नान्यथेति । गजादि तसै । सोऽपि ददानस्तयोक्तः शाह—त्वं पूर्वाजितपुण्येनेदशी जाता । दानादिना भवेन भवः श्रेयस्करः । भवत्या भवत्रयपातकं मे पापघटं लात्वाधमः कश्चिद्विष्ठः स्वं तदापकं च भवाम्भोधौ पातयति । मया तु वित्तमेतदादाय पुनर्ददता 10 लब्धादएगुणं पुण्यमिति ॥ पापघटप्रवन्धः ॥

§ ३२३) श्रीसिद्धे निश्चि सुप्ते वण्ठो पराक्रम-कर्मणि प्रा० ।

(४३५) यदिह क्रियते कर्म तत्परत्रोपभुज्यते । मूलसिक्तेषु वृक्षेषु फलं शाखासु जायते ॥

नृपेण तदाकर्ण्य कर्मवि० । अपरिदेने खप्रशंसकस्य लेखः । असै वण्ठाय शताश्वसामन्तता देयेति । सान्त्-पार्धे निश्रेण्या अङ्गभङ्गे मञ्चकेन गृहे, अपरो लेखं लात्वा गतः । प्रातःसामन्तता इति श्रुत्वा राजा कर्मेव व०। 15 यतः—नेवाकृति० ॥

(४३६) यथा घेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दति मातरम् । तथा पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनु धावति ॥

(४३७) नमस्यामो देवान्ननु हतविधेस्तेऽपि वदागाः

विधिर्वन्ध्यः सोऽयं ननु विहितकर्मैकफलदः।
फलं कर्मायत्तं तिकममरैः किं च विधिना
नमः सत्कर्मभ्यो विधिरपि न येभ्यः प्रभवति॥

॥ कर्मप्राधान्यप्रवन्धः ॥

§ ३२४) जातस्मृतिः श्रीमयणछदेवी श्रीसोमेशयात्रायां ‡वाहुलोडपुरद्वासप्ततिलक्षपाटितपट्टा सपादकोटिम्ल्यां हेमपूजां तुलापुरुपादिना सर्वान् प्री० । (४३८) सङ्ग्रहेकपरः प्राप समुद्रोऽपि रसातलम् । दाता तु जलदः पद्य भुवनोपरि गर्जति ॥ ध

रात्रावगतेशेनागताञ्त्र कार्पटिका पुण्यं याच्यमित्युक्ता दर्पान्धा निजनरानायिता सती याच्यमानाप्यददाना कियद् व्ययितमित्युक्ताह-अहं भिक्षावृत्त्या शतयोजनानिदीकृत्यात्रागता कल्ये कृतोपवासा पारणकदिने कसाद् अपि खलं प्राप्य तत्त्वण्डेनेशं सम्पूज्य तदंशमितथये दत्त्वा पारितम् । त्वं पुण्यवती यसा एवंविधं कुस्माद् अपि सलं प्राप्य कथं लोभः । यदि न कुप्यसि तदा ह्यवे । ममाधिकं पुण्यम् । यतः –

[†] टिप्पण्यां-एकोऽपि यात्रिकः पञ्चराती द्रम्माणां याच्यते । नरस्रीयुग्ममपि एतदेव । पश्चान्मातृ-पुत्रौ हस्ते लगित्वा गच्छतः । इत्यादि विष्ठवं रष्ट्वा मयणछदेपी० ।

(४३९) सम्पत्तौ नियमः शक्तौ सहनं यौचने व्रतम्। दारिक्रो दानमित्यल्पमिप लाभाय कथ्यते॥ दानं दरिद्रस्य ।। निगर्वा जाता ॥ श्रीमयणछदेवीयात्राप्रवन्धः॥

§ ३२५) श्रीसिद्धराजः सागरकण्ठवर्ती । चारणौ-

(४४०) को जाणइ नरनाह चित्तु तुहालडं चक्कवइ। लहु लंकह छेवाह मग्गु निहालइ करणउत्तु॥ 5 (४४१) धाई धोया पाय जेसल! जलनिहि ताहिला। पइं लह्या सविराय इक्क विभिषणु मिल्हि मुहु॥

§३२६) छलान्वेपिणं मालवाधीशमागतं याचितेशयात्रापुण्यं तद्दानेन सान्तृः पराञ्जुखीचकार । आगत-भूपकोपे तत्पुण्यं मया तव दत्तमिति वोधितः ।

(४४२) यस्योवीतिलकस्य निर्मलयदाःसन्दोहसन्दोहितां सामग्रीमवलोक्य लोलनयनः कैलासदीले वसन् । कास्थीनि क वृपः क निर्जरनदी केन्दुः क भोगिप्रसुः पप्रच्छेति शिवां समाधिविगमे देवः शिवः साद्धतम् ॥

(४४३) मद्रैर्निद्रादरिद्रैः क्ररुभिरुरुभयैः सोपलिङ्गैः कलिङ्गैरङ्गैरुत्सष्टरङ्गैरवगणितधनुर्दण्डतृणैश्च हुणैः ।
सुद्धौः शौण्डीर्यजिद्धौरनुसुतविभवारण्यवाटैर्विराटैर्लाटैः खिचल्ललाटैरजनि गजघटाभोगरुद्धेऽस्य युद्धे ॥

(४४४) मुद्गानुद्गतमुद्गरानुरुगदाघातोद्धतान् व्यन्तरान् वेतालानतुलानलाभविकटान् झोटिङ्गचेटानपि । जित्वा सत्वरमाजितः पितृवने नक्तंचराधीश्वरं वद्धा वर्षरमुर्वरापतिरसौ चक्रे चिरात्किङ्करम् ॥

॥ श्रीजयसिंहप्रवन्धाः ॥

20

10

15

(G.) सज्ज्ञकसङ्ग्रहस्यान्ते पातसाहिनामावितः।

- (१) सं॰ १२६३ वर्षे पातसाहि साहवदीनेन गजणपुरात्समागत्य पृथ्वीराजं लाहउरमून्थउरयोरन्तराले निहत्य दिछी गृहीता । वर्ष ३ राज्यं कृतम् ।
- (२) ततः सं० १२६६ वर्षे मार्गमासे सुरत्राणसमसदीनो दाउदपुरात् ढिह्यां समागतः। वर्ष २६ राज्यं कृतम्।
- (३) ततः संवत् १२९२ वर्षे श्रावणशुदि २ द्वितीयायां कटकादागत्य क्रूटं कृत्वा पूर्वसुरत्राणं हत्वा पातसाहि 5 पेरोजः समजिन । मास ६ राज्यं कृतम् । पश्चादाखेटके गतो यसुनातटे कयलोपरीग्रामे मारितः ।
- (४) ततस्तत्पुत्री दउलती। दिनपश्चकं यावद्राज्यं कृतम्। पश्चात्सा मुख्यैर्लम्पटत्वेन मलिका नाम्नी व्यापादिता।
- (५) ततः परं वर्ष ३ मास ६ ग्रन्यं जातम् । तदा मिलक्त्वडीपुत्र मोजदीन मिलको ढिल्यां समभूत् । सं० १२९६ वर्षे राज्यं वर्षद्वयं यावत्कृतम् । स नानामिलकमेदेन मृतः ।
- (६) ततः पातसाहि पेरोजपुत्रः अलाबदीनो नानामलिकेन राज्ये स्थापितः। वर्ष ३ राज्यं कृतम् । 10
- (७) ततः सं० १२०१ वर्षे आसादमासे पूर्वस्यां दिशि वहडाइचनगरान्मलिक समसदीनः समागतः । तेन दिल्यां वर्ष २१ राज्यं कृतम् ।
- (८) ततः सं० १३२२ वर्षे फाल्गुनमासे त्रयोद्ञ्यां शुक्रवारे नसरदीनसाहिना राज्यं कृतम् । वर्षं एकं यावत् ।
- (९) ततः सं० १३२३ वर्षे चैत्रवदि २ द्वितीयायां ग्यासदीनो राजा जातः । वर्ष २० राज्यं कृतम् ।
- (१०) सं० १३४३ वर्षे चेत्रमासे कोकामलिकभेदेन मोजदीन पातसाहिर्जातः। वर्ष ३ मास ३ राज्यं जातम्। 15
- (११) सं० १३४६ वर्षे फाल्गुनग्रुदि ६ पथ्यां खलचीवंशीय मलिकजलालदीनेन राज्यं कृतम्। वर्ष ६ मास ९। स यमुनातीरे पंभराग्रामसमीपे मलिक अलावदीनेन मारितः।
- (१२) ततः जलालदीनपुत्रो रुक्मदीनो राज्यधरो वभूव । मास ३ राज्यं कृतम् ।
- (१३) सं० १३५२ वर्षे सुरत्राणः अलावदीनो जातः । वर्ष [२१] राज्यं कृतम् ।
- (१४) सं० १३७३ वर्षे माघछदि ११ दिने पातसाहि अलावदीनपुत्रः सहावदीनः पातसाहिर्जातः । मास २॥० 20 राज्यं चकार ।
- (१५) ततः सं० १३७३ वैशाखग्रुदि ३ दिने सुरत्राण अलावदीनपुत्रः कदुवदीनः पातसाहिर्जातः । वर्ष ५ राज्यं कृतम् ।
- (१६) ततः सं० १३७८ वर्षे ज्येष्ठश्रुदि २ दिने कदुवदीन [पुत्रः] पोसरुपानु पातसाहि नसरदीनो राज्यधरः ।
 मास ४ राज्यं कृतम् ।
- (१७) सं० १३७८ वर्षे भाद्रपदं शुदि २ द्वितीयायां देपालपुरस्थानात् तुगलकगातो ढिल्ल्यां नसरदीनं हत्वा ग्यासदीन पातसाहिर्जातः । वर्ष ४ राज्यं कृतम् । लपणावती नगरात्समागतः सुरत्राणः पुत्रेण महमृदेन तुगलावादमध्ये कृटयत्रप्रयोगेण मारितः ।
- (१८) ततः सं० १३८० वर्षे आपादशुदि २ द्वितीयायां महमूदिपातसाहिर्जातः । वर्ष २७ राज्यं कृतम् । वालराजा जात ।
- (१९) ततः संवत् १४०७ वर्षे श्रीपातसाहि पेरोजनामाजिन ।

(P.) सञ्ज्ञकसङ्ग्रहस्य अन्तिमोह्धेखः।

सिरिवत्थुपालनंदणमंतीसरजयतसिंहभणणत्थं। नागिंदगच्छमंडणउद्यप्पहसूरिसीसेणं॥ जिणभद्देण य विक्रमकालाउ नवइ अहियवारसए। नाणा कहाणपहाणा एस पर्वधावली रईआ॥

१४२९ श्रीजिराप० श्रीसावदेवस्र० स्वं चरित्रं न वेडितं पश्चात् ढिल्यां ग० खग्रुपार्ज्य पश्चात् संवत् १४३० भाद्र० मासे श्रीगिरनारे समभाव० त्वा परलो० जगाम ।

संवत् १५२८ वर्षे मार्गसिर १४ सोमे श्रीकोरण्टगच्छे श्रीसावदेवस्रीणां शिष्येण मुनिगुणवर्द्धनेन लिपीकृतः। मु० उदयराजयोग्यम् । श्रीः।

पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहस्य

अकाराचनुक्रमेण पद्यानुक्रमणिका

पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रहे पद्यानुक्रमणिका ।

~~~
-----

	पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क (		पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क
अंधयसुआण कालो	३५२	११८	अस्मिन्नसारसंसारे	२०५	६९
अंवं तंबच्छीए	२८३	९२	<b>33</b>	२५३	૭૬
अंव[ ड ]हुंतु वाणीउ	११९	३९	अहं सारामि तादात्म्यात्	२५१	७६
अंवा तुष्यति न मया	३७१	१२०	अहलो पत्तावरिओ	२०	१२
अकापींदनृणामुवीम्	१	१	अहिंसालक्षणो धर्मः	३७२	१२०
अगहु म गहि दाहिमओँ	२७६	८६	अहो लोभस्य साम्राज्यम्	३८२	१२२
अजाते चित्रलिखिते	२८१	९२	ञाः कण्ठशोपपरिपोप०	৩৩	२८
अत्थि कहंत किंपि न दीसइ	६२	' २२	आकरः सर्वशास्त्राणाम्	<b>२</b> ९०	९४
अत्रास्ति सस्ति शस्तः	१५७	५९	आचार्या वहवोऽपि सन्ति	११६	३७
अथैकदा तं निशि दण्डनायकम्	१४१	ં પર	आतङ्ककारणमकारण ०	३९८	१२५
अद्धां अद्धां नयणलां	३७	१५	थात्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति	३१९	१०६
अधिकारात् त्रिभिर्मासेः	४१३	१२८	आदो मयेवायमदीपि नूनम्	३८९	१२३
अधीता न कला काचित्	२०६	६९	आपदर्थ धनं रक्षेत्	३३६	११७
अनं पाणा वरं चानम्	३२९	११५	आपद्गतान् हससि किम्	३२	१४
अन्नदानैः पयःपानैः	१८५	६२	आयाताः कति नैव यान्ति	२४०	७२
अन्वयेन विनयेन विद्यया	२४६	७३	आयान्ति यान्ति च परे	१९८	६६
अपमानात् तपोवृद्धिः	३६०	११९	आयुर्योवनवित्तेषु	२०७	६९
अपलपति रहसि	३२६	१११	आशाराज इहाजनिष्ट	१५३	ধৃত
अमुप्मे चौराय	३४५	११८	आसन्ने रणरंभे	२२	१२
अम्ह एतलइ संतोस	११२	३५	आस्तां सुधा किमधुना	७३	२७
अयमवसरः [ सरस्ते ]	३३९	११७	आस्यं कस्य न वीक्षितम्	१७२	६०
अयसाभिओगमणदूमिअस्स	२८७	९३	इक्कु वाणु पहुवीसु जु	२७५	८६
अयि खळु विषमः	३६९	१२०	इको वि नमुकारो	२००	९९
अर्था न सन्ति	85	१८	इच्छउ इअरमणोरहाण	२८	\$8
अशाकभोजी घृतमत्ति	२९७	९६	इतोऽविधः परितो मृत्युः	२१५	৩০
अष्टौ महाङ्गाश्च चतुःशतानि	२२५	७१	इदं ज्योतिर्जालम्	२५४	७६
अप्टो हाटककोटयः	३४७	११८	इदमन्तरमुपकृतये	३३७	११७
असक्तन्मूर्खमप्यन्यम्	१५१	4,0	इयं कटिमत्तगजेन्द्रगामिनी	7 34 15	, १५

v silver en	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क	_	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क
इह नृपतिसभायाम्	८९	२९	ि किं कृतेन यत्र त्वं	<b>શ્</b> રે ૦	<b></b>
उचाटने विद्विषताम्	<b>२</b> १२	90	किं नन्दी किं मुरारिः	६५७ ३८५	<i>ૄ</i> ૧૨૨
उजिंतसेलसिहरे	. ३०१	९९	किं वर्ण्यते कुचद्वन्द्वम्	५८५ ६०	, , , , , , ,
उत्क्षिप्य टिट्टिमः पादा	y	9	किमस्तु वस्तुपालस्य	<b>૨</b> ૪ <b>૨</b> .	२२ ७३
उत्तंसकौतुककृते	३४	88	किमिह कलिनरेन्द्रम्	१६८	५९
उत्थायोत्थाय बोद्धव्यम्	३७३	१२१	कियन्मात्रं जलं विप्र!	<b>३</b> ४२	११७
उत्पंख्रत्योतप्छत्य गतिं कुर्वन्		ξ8	कीर्तिः कन्दलितेन्दु०	<b>२</b> २९	, <u>, ,                                </u>
उदयति यदि भानुः	५२	१८	कुमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोज०		१८, १३१
उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति	३२३	११०	कृतप्रयत्नानिप नैति	8 0 8	१२६
़ उन्मीलन्मणिर्श्मिजाल०	२७१	८५	केवलिहुओ न मुंजइ	९२	२९
<b>उपकारसमर्थस्य</b>	२७७	۷۵	केवलिहुओ वि भुंजइ	९३,	રવે
33	२८०	९०	को जाणइ नरनाह!	880	१३४
उमया सहितो रुद्रः	३३३	११६	कोशं विकाशय कुरोशय०	१५३	५७
एकं वासः सुरेशैः	१९६	६४	कचिदुष्णं क्वचिच्छीतम्	२९६	९६
एकस्त्वं भुवनोपकारक इति	२१३,२५०	৩০, ৩৪	क तरुरेष महावनमध्यगः	₹३	\$8
एतस्याः कुक्षिकोणे	۷۵	२९	क्षिस्वा वारिनिधिस्तले	१२३	४२
प्तावतेव चीसल !	२००	६८	क्षुत्क्षामः पथिको मदीय०	४८	१८
एपु श्रीजयसिंहदेवनृपतिः	. १६०	५८	क्षुद्धाः सन्ति सहस्रशः	-३८ <b>६</b>	१२२
एहे टीलालेहिं धार-न	. ११४	३५	खद्योतद्युतिमातनोति	४१०	१२७
ओं आगिलंड जु होई	१२.९	५०	गण्ड्रपदा किमधिरोहति	. રિ૦૬	१०३
79	१३३	५१	गतप्राया रात्रिः .	४३	१५
कं कं देशमहं न गतः	१८३	६२	गम्भीरगेयभरगज्जिरवो	१७५	६१
कः कण्ठीरवकण्ठकेसर०	७५, ४०९	२७, १२७	गयगय रहगय तुरयगय	२५	१४
कतिपयदिवसस्थायी०	३्४०	११७	गया ति गंगह तीरि	१११	३५
क्रिकवलनजाग्रत्पाणि०	२३३	७२	गुरवः परःशतास्ते	१६९	५९
कल्पद्धमस्तरुरसौ	२१०	६९	गाम्भीर्ये जलधिः वलिः	२३७	७२
कविषु कामिषु भोगिषु	३८४	१२२	गुणचन्द्रजयांजनतः	८२	२८
कसिणुजालो य रेहइ	१७	१२	गुणाली जन्महेतूनाम्	१९५	६४
का त्वं सुन्दरि! ज्लप	२६८	८३	गुरुभिंपक् युगादीशः	२१७	00
कान्ते कान्ते शीष्रमागच्छ	. १७०	५९	गोगाकस्य सुतेन	९७	३१
कालिका नहा नहा	६१	२२	गौरी रागवती त्वयि	१८८	६३
का हुउं करिसि गमार	१०८	३५	घटिकाऽप्येकया घट्या	११८	३८
किं कारणं नु धनपाल !	३६३	११९	चिक्कदुगं २ हरिपणगं५	३०७-	१०४
कि कारण पु नगार है कि मुगल मेमिह	<b>२२१</b>	७१	चक्रः पप्रच्छ पान्थम्	२७३	<i>د</i> لار

#### पुरातनप्रबन्धसङ्घहे

	पदाङ्क	प्रधाञ्च		पद्याक्ष	प्रशङ्क
चिन्तामणिं न गणयामि	१९७	६४	तेजःपालोऽनुशास्ति	१५४	৸৩
चौल्लक्यः परमाहितः	२०८	६९	तेहि वि न किं पि	ч	ų
च्यारि जोड नीसाण हय	98	३०	त्रिंसद्विमिश्रा त्रिसती चराणाम	_	७१
च्यारि पाय विचि	۷	१०	त्रिण्हि लक्ष तुपार	२७८	22
जइतचंदु चकवइ	२७९	66	त्वं जानीहि मयास्ति	<b>२३६</b>	७२
जईय रावणु जाइयउ	३५०	११८	दंसेमि तं पि ससिणं	१२१	४१
जयन्ति पादलिप्तस्य	२८२	९२	दन्तानां मलमण्डली	८६	रेंद
जह जह पएसिणि	२८४	९२	दरिदान् सजतो धातुः	२७२	64
जह सरसे तह सुकेवि	१२	११	दहनेन विनाशितं पुरा	१९०	६३
जाकुड्यमात्यसज्जन०	१०१	३४	दानपात्रमधमणेम्	४२३	१३०
जिने वसति चेतसि	३९४	१२४	दामोदरकराघातविहली ०	84	१६
जिम केतू हरि आजु	१२८	५०	दारिद्यानलसंतापः	४२७	१३१
जीतउं छहि जणेहिं	२०३	६९	दिगम्बरशिरोमणे !	७८	२८
जीर्णे भोजनमात्रेयः	२८९	<b>९</b> 8	दिग्वासाश्चन्द्रमोलिः	२३२	७२
जीवादिशेति पुनरुक्तम्	१४६	<b>લ</b> ુલ	दीपः स्फूर्जिति सज्जकज्जल०	२३९	७२
जैसल मोडि म बाह	१०७	ર '૧	दीहरफणिंदनाले	266	98
जो जेण सुद्धधम्मंमि	४०७	१२७	दुःपमाजलधी येन	६९	र्६
झोली तुद्दवी किं <b>न मूउ</b>	२९	<b>१</b> 8	दुर्योधनः खकुलनाशकरो	३१०	१०४
झोली त्रुटी किंन मूयउ	४१८	१२९	[दूसा]जग्र (१) वीर	१२७	५०
झोली इंगरवालणि वलिणि	३०२	९९	देव! दीपोत्सवे रम्ये	48	१९
ण्हाणं कुंकुमकद्दमेहि	१७१	५९	देव ! द्विजपसादेन	<b>२६</b> ७	८२
त एव जाता जगतीह	३९५	१२५	देव! स्वर्नाथ! कष्टं	२५६	৩৩
तत्कृतं यन्न केनापि	३४६	११८	देवाचार्यवलात् युक्तः	८३	२८
तत्र चित्रचरितः	६८	र६	देशं खमपि मुच्चन्ति	४२५	१३१
तन्वन्ति डंबरभैरः	२६१	۷۰	दोमुहय निरक्खर	३७०	१२०
तव प्रतापज्वलनाज्जगाल	३४९	११८	<b>धनधान्यादिदातारः</b>	३९२	१२४
ताण पुरओ य मरीहं	११	११	धर्मलाभ इति प्रोक्त	३३५	११७
ता किं करोमि माए	१९	१२	धांगा दोसु न वहजला	१२६	85
ताविचअ गलगर्जि	७१	२६	धाई धोया पाय जेसल	888	१३४
तावद् अमन्ति संसारे	३९३	१२४	धिगू रोहणगिरिम्	३, ३३०	१, ११६
तावन्नीतिर्विनीतत्वं	३८३	१२२	ध्यानब्याजमुपेत्य	३१८	१०६
तिक्खा द्वरिअ न माणिआ	५३	१८	न कृतं सुकृतं किश्चित्	२०२	६८
तुह मूंडिए घणेहिं	६३	२३	नगरे वसिस हे वाले	२६६	८२
तेजःपाल! कृपालुधुर्यः	१८२	६२	नझेर्निरुद्ध। तरुणीजनस्य	८१	२८

पद्यानुऋमणिका
---------------

		पद्यानुक्रमा	णेका।		१४१
	पद्याङ्क	प्रशङ्क		पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क
नमो यत्प्रतिभाषमीत्	६६	२५	नेत्रेनिरीक्ष्य विषकण्टक०	३१४	१०४
न नद्यो मद्यवाहिन्यः	५९	१९	पइं गरूआ गिरनार	१०४	३४
न पश्यति दिवा घूकः	४१२	१२८	पक्षपातं परित्यज्य	३०८	१०४
न भिक्षा दुर्भिक्षे	४६	१७	पक्षपातो न मे वीरे	३०९	१०४
नमस्यामो देवान्	४३७	१३३	पङ्के पङ्कजमुज्झितम्	४०	१५
न मानसे माद्यति	६४	२४	पञ्चारात् पञ्चवर्षाणि	३८	१५
नमेस्नीर्यकृतस्नीर्थे	२९३	९६	"	8 \$ 8	१२९
नमोऽस्तु हरिभद्राय	३२०	१०७	पञ्चाशदादौ किल	४२९	१३१
नमं शिरः कुरु तुरुष्क	४०२	१२६	पडिवोहिअ महिवलओँ	90	२६
नयणिहिं रोमु निवारि	१४९	५६	पणसइरी वासाइं	<b>२६९</b>	८३
नयनविषयं यातश्चापः	<b>&lt;</b> 8	२८	पभुणइ मुंजु मुणालवइ	४१६	१२९
न लाभयामो ललनाम्	९१	२९	पयोदपटलच्छन्ने	३९१	१२३
नवजरभरिक्षा मग्गडा	५५	१९	परपत्थणापवर्त्रं	३५६	११९
नववाससएहिं नवुचरेहिं	२९९	९७	परिओससुंदराई	१८	१२ १३७
न विद्यया केवलया	४३४	१३३	पर्जन्य इव भूतानाम्	३९६	१२५ ५९
न विद्या धनलाभाय	३२१	१०८	पल्योपमसहस्रेकम्	१६४	£\$
न वीतरागादपरोस्ति	३१५	१०४	पश्चाइतं परैर्दत्तम्	१९२ ३२४	१११
नाखानि खानितटतो	१०२	३४	",	<b>३</b> ६८	१२०
नाद्ते भसितम्	१८१	६१	पाणियहे पुरुक्तितम्	१७९, २४९	६१,७४
नाभिपट्कजगद्भजन्म०	२४४	७३	पाणिप्रभापिहितकल्पतरु०	२८६	९३
नारीणां विद्धाति	४११	१२७	पालित्तय कहसु फुडं पिव खाद च चारुलीचने	44	१९
नासाकं हृदि दर्पसर्प०	७९	२८	पुण्डरीकनिवहैर्विराजितम्	१८९	६३
नाहं स्वर्गफरोपगोग०	३६५	१२०	पुत्रादपि प्रियतमैक०	३८८	१२३
निअडअरपृरणंमि	8	ч	पुनराप्याय्यते धेनुः	३६१	११९
निजकरनिकरसमृद्ध्या	३३८	११७	पुन्ने वाससहस्से	३८७	१२३
नियउयरपृरणहा	३५५	११९	पुरा नागार्जुनो योगी	२९२	९५
नियडयरपूरणासा	१६३	५९	पूर्वं वीरजिनेश्वरे भगवति	१२४	४२
निरीक्य मित्रन् ! द्विज॰	२११	90	पूर्वपुण्यविभवन्यय •	४२४	१३०
निर्नामताम्बुधी मज्जत्	११७	<b>३८</b>	प्रभाधिनाथैर्सुनिभिः	<i>६७</i>	२६
निवपच्छिएण भणिओ	२८५	<b>९</b> ३ १२	प्रभासमृद्धिरेवेपा	३९०	१२३
निव्वढपोरिसाणं	<b>२१</b>		प्रभोः श्रीमानतुंगस्य	३९	१५
नीचाः शरीरसोस्याथम्	३२२	११० इ६	प्राग्वाटवंशाभरणम्	१४०	५२
नीवारप्रसवाग्रमुप्टिकवर्लः	११५		<b>प्रीणिताशेपविश्वा</b> स	३७९	१२१
नृपच्यापारपापेभ्यः	२६०, ४३०	७८, १३२	1 Million of the second		
<u>-</u>					

	पद्याङ्क	<u> </u> দুষাঙ্ক		पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क
फणिपतिमघवाद्या यत्र	१५९	५८	मित्रद्रोही कृतमध	<b>२</b> ६४ `	<b>د</b> لار
वंभ अह नव वुद्ध	७२	२७	मिलिते तद्दलयुगे	१५०	40
विल गरूआ गिरनार	१०९	રૂષ	मीनानने प्रहसिते	४२२	१३०
वाणे गिर्वाणगोष्ठीम्	२४८	७४	मुंज भणइ मिलाणवइ०	२६	१४
वापो विद्वान् वापपुत्रो०	३,४८	११८	"	२७	१४
वीजलिआ वीजी वार	१०५	३५	मुक्त्वापि पुण्डरीकाक्षम्	२४५	७३
वृहस्पतिस्तिष्ठतु मन्दवुद्धिः	९०	२९	मुखमुद्रया सहाऽन्ये	२२८	७१
बौद्धेर्बोद्धो वैष्णवैर्विष्णु०	२०१	६८	मुञ्ज-भोजमुखाम्भोज०	२३५	७२
भजेन्माधुकरीं वृत्तिम्	३५९	११९	<b>मुद्रानुद्रतमुद्ररान्</b>	888	१३४
भाऊ भराहिं काइं	१९३	६३	मुनीनां को हेतुर्जरठ०	१५६	५८
भीमदेवस्य नृपस्य	१३६	५१	मूर्खस्तपस्वी राजेन्द्र!	४३१	१३२
भुज्जीमहि वयं भैक्षम्	९५	३०	मृतो मृत्युर्जरा जीर्णा	३७६	१२१
भूपभ <u>ू</u> पल्लवप्रान्त ०	२१४	७००	मृद्धी शय्या प्रातरुत्थाय०	३१ं७	१०६
भूभृता [ं] निजगृहेषु	१३९	५१	मेरुणा मनुजदुर्रुभेन	१३८	५१
भोजराज! मया ज्ञातम्	३५८	११९	मौिलं मालवनायकः	४०३	१२६
भोली मूधि म गव्वु करि	४१९	१२९	यः सप्ताननसप्तिसोदर०ृ.	२४२	७३
ञ्रातः पाणिनि संदृणु	४२८	१३१	यत्त्वयोपार्जितं वित्तं	१३०	५०
मइं नाईउं सिद्धेश	१००	३४	यथा धेनुसहस्रेषु	४३६	१३३
मंडी मुरकी रइ करउ	१४२	५२	यदनस्तमिते सूर्ये	३४१	११७
मंसासी मज्जरओ	३०४	१००	यदि विदितचरित्रैः	२३४	७२
मग्गुचिय अलहंतो	१६	१२	यदिह कियते कर्म	४३५	१३३
मज्जासी मंसरओ	३०३	१००	यदेतचन्द्रान्तर्जलद ०	३४४	११७
मन तंबोल म मागि	१०६	३५	यद्दाये चूतकारस्य	२०९	६९
मद्रैर्निद्रादरिद्रैः कुरुभि०	४४३	१३४	यद्भविष्याधिको धीरैः	३२८ .	११३
मन्नीश ! गुरवस्तुभ्यम्	१५५	५८	यद्यपि हर्षोत्कर्षम्	88	१६
महत्तराया याकिन्या	३१६	१०५	यन्मयोपार्जितं वित्तम्	२२०	७०
मह वयरियस्स ठाणं	१७४	६०	यशःपुञ्जो मुञ्जो	२४	\$8
मा गोलिणि मन गव्वु	२३	\$8	यशोवीर! लिखत्याख्याम्	१३१	५०
माणसणा(डा) दस दस	<i>७७</i> इ	१२१	यस्योवींतिलकस्य निर्मल०	४४२	१३४
मातृमोदकवद् वाला 🐬	३१३	१०४	यादोऽङ्गशोणितकषायित्०	<i>ে</i>	२९
मानं मुञ्च खामिनी	४१	१५	यावदुच्छूवसति पाणी	२९८	९६
मान्धाता स महिपतिः	४१५	१२९	या श्रीः खयं जिनपतेः	१७८	६१
मा मण्डक कुरुद्वेगम्	३० ़	<b>१</b> 8	यूकालिक्षरातावली 🐪	३९७	१२५
मार्गे कईमदुस्तरे	<b>ર</b> ૦૪ ૄ	६९	यो मे गर्भिखतस्यापि	२७०	<b>58</b> ′

:	पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क		पद्याङ्क -	म्रहाङ्क
योप्माकाधिपसन्धिवित्रहे०	३५३	११९	.विप्णुः समुद्यतगदायुत्	<b>३ं</b> १२	, ू १०४
रम्येषु वत्तुषु मनोहरतां	४२१	 १३०	विस्फारस्फारधन्वा	५६	१९
र्रसातलं यातु तवात्र	३६२	११९	वेलामहल्रक्लोल०	२५ ३७८	१२१
राजँस्त्वं राजपुत्रस्य	२६५	८१	वेषः कोपि तुरुप्क०	८५	. 36
राजा स्वयं हरति माम्	१०	? <b>?</b>	वेसा छंडि वडाइति	₹ <i>१</i>	<b>18</b>
राणा सन्त्रे वाणिया	११०	ર. <b>ર</b> ષ	वैघव्यसदृशं दुःखम्	9	<b>?</b> ?
रात्रो जानुर्दिवा भानुः	३५४	११९	वैरिणोऽपि हिं मुच्यन्ते	३६४	११९
रामनन्दशशिमोलिवत्सरे	९८	३१	वैरोचने रचितवत्यमरेश०	२५७	७७
रे रे यामकुविन्द	<i>२५</i> ९	७७	त्रजत त्रजत पाणा	५०	१८
रे रे चिच कयं भ्रातः	४०५	१२७	शतानि चाष्टादश	<b>२</b> २३	७१
रे रे वातुल्लोकाः	१६७	५९	शत्रुक्षये जिने दृष्टे	१६५	५९
रुझं रुझं पुनः रुझम्	३४३	११७	शशिदिवाकरयोर्घहपीडनम्	५१	१८
रुक्ष्म प्रेयसि केयमाख०	१८७	६२	शीतत्रा न पटी०	३५७	११९
रुर्ध्मां नन्दयता रतिम्	२३०	७१	शूराः सन्ति सहस्रशः	१२२	४२
रुक्सीर्यास्यति गोविन्दे	३६, ४२०	१५, १२९	ंश्रीगर्वोप्मभिरुप्मले <u>प</u> ु	१७३	६०
टच्छि वाणि मुहकाणि	३९९	१२५	श्री चौछुक्य! स दक्षिणः	१२५	८३
रुव्याः श्रियः सुखं स्पृष्टं	२१८	৩০	श्रीमत्कर्णपरंपरागतभवत् <b>०</b>	<b>२</b> १६	७०
लिखतु लिखतु धाता	१७७	έ १	श्रीमत्प्राग्वाटवंशे	<b>\$</b> 88	५३ ·
हिसन्नास्ते भृमिम्	४२	१५	श्रीमानभयदेवोऽपि	२९४	९६
होकं विहोक्य धनधान्य०	३८१	१२२	्श्रीवस्तुपाल तव भाल०	१८६	६्२
<b>लोकः प्र</b> च्छति मे वार्ती	३७४	१२१	श्रीवस्तुपाल! प्रतिपक्षकाल!	२४७	98
वंशार्द्धार्द्धपरिस्फ्रत्यो	२५५	७६	श्रीवस्तुपारुः श्रियमेप	२३८	७२
वाढी तडं वढवाण	११३	રૂષ	श्रीवस्तुपालस्य पत्नी	१४५	ષ્
वर्प्मप्राहरिके द्विजे	३३४	११६	श्रीविकमादित्यनृपस्य	३०५	१०१
वस्तुपालसचिवेन	१९१	६३	श्रीविकमादित्यनृपात्	१३५	५१
वसप्रतिष्ठाचार्याय	६५	२५	श्रीशत्रुञ्जय-रैवताभिष०	१५८	५८
वार्द्धमाधवयोस्सोघे	९९	३३	श्रीसिद्धपुरे रम्ये	९६	३०
वाहनोपधिपाथेय०	१६६	५९	श्रोतव्यः सौगतो धर्मः	५७	१९
विद्याधिव्याधिसंहर्त्री	१३७	५१	श्वःकार्यमद्य कुर्वीत	३७५	१२१
विधाय योगनीरोधम्	२९५	९६	श्वानचर्मस्थिता गङ्गा	४३३	१३२
विषे प्राहरिके नृपः	६	७	श्वेताम्बराः कलितकम्बल०	ره د م	<b>२८</b>
विभुता-विक्रम-विद्या	१४८	५५	पडहडीयां पंगार	१०३	38 830
विमलद्ण्डपतिर्विमल <b>०</b>	१४३	५३	सउ चित्तहं सट्टी मणहं	<i>७१७</i>	१२९
विश्वासप्रतिपन्नानाम्	२६२	८१	स एप भुवनत्रयप्रथित०	३६७	१२०

#### पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रहे

	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क		पद्याङ्क	इष्ठाञ्च
सुवर्णग्रीवामण्डने	२५२	७६	समुद्र त्वं श्वाघेमहि	<b>२</b> ४१	৩३
सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्ग०	१९९	६७	सम्पत्तौ नियमः शक्तौ	४३९	१३४
सेजपालकसहस्रचतुष्कं	२२२	' ७१	सयलजणाणंदयरो ं	१४	१२
सेतुं गत्वा समुद्रस्य	२६३	८१	सरिसे माणुसजम्मे	१३	११
सोऽयं कुमारदेवी कुक्षि०	१४७	ષ્	सा नित्थ कला	३३१	११६
सौरभ्यमालगुणमाल०	१८०	६१	सिंहशिशुरपि निपतति	३२७	११२
स्रायुद्धद्धकरङ्ककुट्टनरता	१६२	५८	सीसं कहव न फुट्टं	२९१	68
सिस्ति क्षत्रियदेवाय	२७४	८५	सुकृतं न कृतं किश्चित्	२१९	७०
खित श्री भूमिवासात्	२२७	७१	सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि	३८०	१२१
खस्ति श्रीब्रह्मलोकात्	२२६	७१	सुखासेव्यं तपो भीम	४३२	१३२
खित श्रीमति पत्तने	४०१	१२६	सुन्दरसरि असुरांह	१३२	५०
खामिन् समुद्रविजयात्मज०	१७६	६१	हंसेर्लव्धप्रशंसे:	२३१	७२
खार्थारं <b>भप्रणतशिरसाम्</b>	३११	१०४	हंहो श्वेतपटाः किमेप	७४, ४०८	२७, १२७
संतः समंतादपि तावकीनम्	१३४	५१	हरिहर ! परिहर गर्व	२५८	७७
संसारमृगतृ ^८ णासु	४०६	१२७	हा कस्स पुरोहं	७६	२७
सङ्ग्रहेकपरः प्राप	४३८	१३३	हारो वेणीदंडो	१५	१२ं
सङ्घो वाग्भटदेवेन	१६१	५८	ह्णवंशे समुत्पने	२	8
सत्यं यूपं तपो ह्यिः	३६६	१२०	हृदि त्रीडोदरे विह	१८४	६२
सत्त्वैकतानवृत्तीनाम्	३३२	११६	हेम तुहाला कर मरू	800	१२६
सद्यस्तृप्यति भोक्तारम्	३२५	१११	हेलानिद्दलियमहेभ०	३५१	. ११८

#### पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रहान्तर्गतविशेषनाम्नां सूचिः।

#### **५**%€ अकाराचक्षरानुक्रमेण ﴾३५

•					
<b>એ</b> ં		अमृतवत्सला	२४	आंडि	900
ओंकार [ नगर ]	९३	भम्बर	३९, ४०, ६२	आत्रेय	९२
अ		अम्बा	५१, ५२, ९८	आदिदेव }	५९
-		अम्बावी <b>देवी</b> प्रासाद	३०	आदिनाथ ∫	५२
अइबुक मिल्लिक	40	अभ्विका	९७	आनाक	५४, ३८
अग्निक वेताल	२	अम्बुचीच	906	आभड ३३, ४३	, ४७, ४८ १२४,
अग्निपखालउ [पछेवडर ]	४६	अयोध्या	99%		१३२
अङ्केवाछिया [ ग्राम ]	६८, ७०	अरिट्टनेमि ]	<b>९९</b>	आ <b>भीर</b>	३६, ८२
अङ्ग [ जनपद ]	१३४	अरिष्टनेमि ∫	९७	आभू	५३
<b>अच</b> लेश्वर	६३	अरिप्टनेमिप्रासाद्	२७	<b>आम</b>	86
अच्छोदक [ सरोवर ]	२४	अरिसिंह [ राजवैदा ]	७९	आमड 🚶	१२४
अजमेरीय [संघ]	39	अर्जुन	998	आस्वड ∫	३२, ४६, १२६
अजयपाल [ राजा ]	४७–४ <b>९</b>		१, ५२, ६३, ६५,	आम्या }	३४
अजय रा	१०२		७, ७०, ८४, ८५	आम्बाक ∫	३४, ४७
अजितसिंह सूरि	94	अर्बुद्वैत्य	৩০	<b>आं</b> वासण	१२
<b>अहारही</b> उ	७८	अलवि	२४	आम्र	४३
अणपन्नी	900	अलवेसरी	२४	आम्रेश्वर	९६
अगहिल [ राय ]	9०२	अलावदीन [ सुरताण ]	१३५	आरासण	३०, ३१
अणहिल गोप	१२८	<b>अवन्तिदेश</b>	99६	आहेत	98
अणहिलपुर \	43	अवन्ती [ नगरी ]	98	आरुति	ર્૪
सर्णाहेलवाड	34	अवन्तीसुकुमाल	90	आलि	२४
अणहिल्लपत्तन 👌	५३	भवलोकनशिखर	३४	आलिंग [ कुम्भकार ]	१२३
अणहिल्पुर् ,	१२, ३३	अशोकचन्द्र	२६	आलिग [ प्रधान ]	१२५
,, पुरी	२७	अञ्चोकवनिका	३०	आलिग [पुरोहित]	३७
अणुपमडी (अनुपमा)	६३	अश्वपति	२ १	आवइयक [ ग्रन्थ ]	903
अनादि राउछ [ तपसी ]	ર્	अश्वराज	५४, ५७	आशराज ]	પુષ
,, सठ	3,5	अश्विनीकुमार	९६	आशाराज 📗	५७
अनुपम देवी ५४, ५७, ६		अश्वेश्वर	३२	आशापञ्ची	₹२, ८०
अनुपम सर	६३	अष्टकवृत्ति [ प्रन्थ ]	१०५	आशी [नगर]	८६, ८७
अनुपमा	40, 44	अष्टादशशती [देश]	८४	आपाड [ श्रावक ]	९६
अन्धय ( अन्धक )	996	अष्टापद [ पर्वत ]	४२, ९३	आसपाल -	३३, ६९
अभय	४२	असणिदेवी	१०२	आसराज	५२-५४, १०२
,, 6	६, ३३, ९५	अहरमद	८९	भासराज-प्रवंध	५३
अभयदेव सूरि ४३, ९५	, ९६, ११२	आ		आसराजवसही	ĘŊ
अभिनवार्जुन	२०			आसाप <b>छी</b>	ર. <b>ર</b> હ
अभिनव राम	6	आकाशयान [विद्या]	<b>98</b>	-	<b>₹</b> 9
अमर [पण्डित, कवि]	७८	आकृष्टिविद्या	४७, ७५	आहदग्राम आहह	र 1 १० <b>२</b>
व्यम्भनमयी	२४	आकेवालीय [ ग्राम ]	১১	ગાયજ	104
पु॰ प्र॰ स॰ 1	y				

	इ	.]
द्दुन्द्रजाल विद्या		३६
	<b>्र</b>	
ईश्वरसूरि	4	४९
4	उ	
<b>उ</b> ज्जयन्त		४२, ९८
उज्जयिनी	9, 2, 92,	· I
	, , ,	३८, ९७
डाजिंत सेल 🕽		99
उज्जिलसिहर ∫		३४
उत्तरमथुरा		99
उत्तररामचरित्रगा	7	<b>૭૮</b>
उद्यचन्द्र		१२५
उदयन ३२,	३४, ४२,	
,	9	१२४, १२६
उदयप्रभ		६४, ७६०
उदयप्पह ∫		१३६
उदयराज		१३६
उदयसिंह } उदयसीह ∫		४९, ५० १०२
उपदेशमाला [ ग्रन	er 7	908
उपदेशमाला-वृत्ति	_	900
उमा		90, 998
उमापतिधर		80
उरंगल [ पत्तन ]		98, 88
	ऊ	
<b>जदा</b> } ( उदय		२६
ऊदाक ∫	• /	२७, १२६
<b>ऊ</b> दावसही		२७
ऊपरमालपर्वत		४४
ऊपरवट [ अश्व ]		६९
<b>ऊ</b> मादे		926
	ऋ	
ऋपभदेव		909
ऋपभग्रासाद		₹0
ऋपभविस्व		30
	ओ	,
ओजेनिनदी	-11	998
ओढरजाति		88
	क	•
कइंवास [ मंत्री ]	71	16 16
कह्यास [ मना ] कच्छदेश		८६, ८७ ११५
कच्छेषर		33
या - छ भ र		14 ,

कटक [ नगर ]	१३५
कडी [प्राम]	४६
कण्टेश्वरी [देवी]	४१, ४२
कण्ठाभरण [ व्याकरण ]	939
कदुवदीन [पातसाहि]	१३ <i>५</i>
क्खुबदाग [ पातसाह ] कन्यकुब्ज	92, ९८
कपर्दि [ मंत्री ]	३७, ४३
	६४,६६,७०,१०१
कपर्दिवारिका	960
कपर्दियक्षप्रासाद	४३
कपिल	९४, १०४
कपिलकोट	93
कपूरी	२४
कमलकेदारा [वापी]	२४
कमलादित्य	ዓሄ
कमलादेवी	९८
कयलोपरी [ प्राम ]	१३५
करणउत्र ( कर्णपुत्र )	<i>₹५</i>
करडाक _	८०
करम्बकविहार	१२५
	, ३४, ३५, १३४
कर्ण [चोछक्यवंशीय ]	९६, १२३
कर्ण [ डाहलदेशीय ]	२३, १२६, १३१
कर्णदेव	३२
कर्णवारी	999
कर्णाट	२७
कर्णाटेश	98
कर्णावती	२७, २८, १२६
कर्मसिंह	४९, ५१
कर्पूरदेवी	66-90
कस्तुरी	२४
कस्मीर	९७
कलिङ्ग	१२६, १३४
कल्याणकटक	१०७, १२८
कांऊ	२४
कांथडिक [तापस]	१२८
काकरग्राम	१२, १२८
काकृ	८२
कातम्र [ व्याकारण ]	१३१
कादिक	६६
कानडा [ राग ]	৩९
कान्ति ]	२३
कान्ती }	२५, ३८
कान्तीपुरी 🕽	२४, ९१, ९५

कान्यकुटज ८८, १०३, १२८ कान्हड देव [ नह्नुला ] ४५, ४६ कान्हाक ४४ कामन्दकीनीति 924 कामल २४ कामला 93 कामिकतीर्थ 68 कालदण्ड 908 कालिका [देवी] २२ कालिकाचार्य 99, ९२ काछिङ्गीयक ४६ काछिदास 90, 08, 998 काली देवी 998 काशी ६, १०३ काइमीर २६ ८३ कासद्गह - [ प्राम ] 926 कासद्रा 93 कासहद काह्नडदेव 903 किराह् २३ कीत् 903 कुञ्जण ३९ कुण्ड( ण्डि )गेश्वरप्रासाद ३८,१२३ **कुन्ती** 46 कुवेर 922 कुमर (कुमारपाल) १२३ कुमरविहार ያው कुमरिक (कुमारपाल) ३८, ३९ कुमारदेव (कुमारपाल) कुमारदेवी ३७, ३८, ३९, ४९,४४-४७, ५२, ५३, ५५,५८, ६५, १२३ . ६० कुमारदेवीसर ४रं 'कुमारपाल कुमारसंभव [काव्य] १०, ११६ कुमुद [ पण्डित ] १३० २७-३०, १२० कुमुद्चन्द्र कुरमीपुर 997 कुमरड (कुमारपाल) ४७ 938 कुरु ६९ कुरुचन्द १९, २१ कुलच∓द 900 कुहाडि ९३, ९४, १०८

कृष्ण

		ાવસાય	गान्ना सूर्यन् ।		700
कृष्णदे <b>व</b>	४५	गाजणपति	४७	चण्डिकास्तुति	१६
केतु	40, 902	गाडर	४९	चतुर्भुज	८७
केदार	६५	गिरनार )	३५, ३८, ५१, ५८	चन्द्रनवाला	२६
केदारयात्रा	३८	गिरिनार∫	938	चन्द्रनवसही	५०
केल्हण	909	गुणचन्द्र	२६, २८	चन्दना	२४
केलाशहास	22	गुणवर्द्धन	१३६	चन्द्रनाचरित	৬५
कोका मलिक	१३५	गुणाकरसूरि	१६	चन्द्वलिह्भ ो	८६
कोडीनार	90	गूडमहाकालप्रास	ाद १०	<b>चन्द्रवलिद्द</b>	ک د <b>د د د د</b>
कोणाग्राम	49	गूर्जर	१२, २१, २७, २९,	चन्दविहिक	
कोरण्टक [ प्राम ]	900	•	५०, ६९, ७९, ११८,	चन्द्रोमाणा [ प्र	
कोरण्टम [ शास ] कोरण्टगच्छ	- 1		१२६, १२८	चन्द्रज्योत्स्रा	२४, २५
कारण्टगच्छ कोरिक	936	गूर्जेरत्रा	१९,२३, २५, २८, ५०	चन्दश्रभ	४३, ६१, ८३
	908, 998	गूजरात	३५	चन्द्रभादितीर्थ	
कोलिक	960	गूर्जरी	७९	चन्द्रावती	५२
कोशला	९, ९२	गोऊ	१०२	चांपलदे	४३
कोङ्कण	४६	गोगा	३०	चाङ्गदेव	१२३, १२४
कीन्तेय	999	गोगाक	३१	चाचरीयाक	७६
.क्षिति [ पुर ]	९७	गोगामठ	५०	चाचिग	१२३, १२४
क्षीरोदवापी	२४	गोदावरी	११, १३, १४, २०	चाचिगदेव	६७, १०२
ख		गोध्रईयाक	४६	चाणूरमञ्ज	9 Ę
खंगार [ नृप ]	३२, ९८	गोध्रा	६९	चान्द्ण	१०२
खंडेराय [ साखुलाक ]	७४	गोध्रियक	६१	चान्द्र	१३१
खरतर	994	गोपगिरि	२०, २६	चापोत्कट	१२, १२८
खर्पर	Ę	गोपालपुर	96	चामुण्ड	१२
ख़रची	१३५	गोमण्डल	९८	चामुण्डराज	६९
स्तापरका	ч	गोछा (गोदाव	ारी ) २०	चामुण्डा	99, 990
खेड [महास्थान]	८२, १३०	गोविन्द	94, 938	चारण	२३, ३४, ३५, ४७, १२५
<b>ग</b>	•	गोविन्द [ चाच	रीयाक] ७८	चारुकीर्ति	9 <b>%</b>
·		गोविन्दाचार्य	996	चारूपग्राम	९५
• -	, ३५, ६६, ९३	गौड [देश]	१९, ९६, १२९, १३२	चालुक्य	५६
गंगाधर	<b>२६</b>	। गौडवध [काव		चाहड	३२, १२६
गगनगामिनी [विद्या]	९५	गोरी गोरी	१२९	चाहमान	८६, १०१
गगनधृछि [नायक]	88	गौर्जर	२ १	चाहिणी	933
<b>ग</b> ज्जणपुर	१३५	ग्यासदीन [पा	तसाहि । १३५	चाहिल	५१
गणपति [ व्यास ]	۷۰	ग्रथिल-भीमदेव		चित्रकवली	८२
गद्य भारत	36	व्रावध-गागउ		1	२६, ३८, ४४, १०३, १०४
गन्धर्वसर्वस्व	२४		घ	चित्राङ्गद	१०३ १०८
गुन्धर्वसेन	9	चूघलमण्डलिय	<del>,</del>		· ·
गन्धवह [ रमशान ]	4	<b>घृतवसतिका</b>	ىلى	421.1.3	\$\$
गयणा [ इन्द्रजालिक ]	3 6		च	चोलुक्य	३७, ४३, ६१, ६९, ७४, १२७
.नाया	<b>३</b> ५	चक्रेश्वरी	৩৫		
गर्जनक	८६, ८९	चगड	93		ভ - য
गांगिल	<b>२९</b>	चण्डप	ч;	छाडाक [ ठब्	
<b>जां</b> गाक	<b>३</b> ६	चण्डप चण्डप्रसाद	<i>५३, ५</i> ९	। छित्तिप	२०
गाङ्गेयकुमार	२०	चण्डमताड			
- 3rd 16					

छिपिका	60	जिनभद्रसूरि	१०३, १०५	तिहुअणसिंह 🕽	<b>३२</b>
छेकभारत	२९	जिनभुवन .	49	तिहुअणसीह }	વેર
	`	जिनमत	9 €	तुगलावाद र	•
ज	1	जिनवहाभसू <b>रि</b>	४३	तुगलकगावाद }	१३५
जइचन्द	66	जिनशास <b>न</b>	96, 00	तुरक ]	८৩
जइतचन्द्  🕽	66	जिनसिंहसूरि -	908	तुरष्क }	१, ८६
जइतलदेवी	48	जिनेश्वरसूरि	९५		९, ५०, ९०, १२६
जगड	४३	जिराप-( छी )	936	तेजःपाल ५२-	-५७, ६२, ६६-७१,
जगङ्ख )	۷۰	जीन्दराज	902	_	७३, ७५, ११२
जगद्दक 🕈	60	जीर्णंदुर्ग <u>े</u>	Ęo	तेजपुर	90
जगदेव जगदेव	२५, ८५	जेटेया	<b>4</b> -	तेजल(तेजःपाल)	६६, ६७
जयकेशी	२९, ३६, १३३	जेसल ( जयसिंह )	२३, ३५, १३४	तेजलपुर	६०, ६५
जयचन्द	۷٤, ٩٥	जेसल ( जनसङ् ) जेसल	24, 43, 14°	तेज्का	48
•	Ę <b>S</b>	जे <b>त्र</b>	88	तैलपदेव	१४, २१, १२९
जयतलदेवी जयतसिंह		जन जेत्रचन्द्र		त्रिपुर	308
·	936	जन्म जैन	८४, ८९ ६८, ८३, १०५	त्रिभुवनपाल	३७, ४४, १२३
जयमङ्गलसूरि ———— १ ——— १	40	जन जैनप्रासाद		त्रिभुवनसिंह	५४
जयसिंघ   सिद्धराय   जयसिंह   सिद्धराज	३१, ४४ २३, २५, ३४	जनशासाद जेनयाचक	२४, ६५ ५९	त्रिभुवनस्त्रामिनी	88
जनावह र विद्याल र	₹७, ४५, ४७,	जनवाचक जेनव्यन्तर		त्रिपष्टिशलाकापुरुपच	
	५७, ०५, ०७,		43	त्रिपष्टिशलाकापुरुपच	रितभण्डार ७७
	900	झ		থ	Ī
जया	५०, १३५	झींझरीयाग्राम	६५	थारापद्गीयप्रासाद	38
जलालदीन [ सुरत्राण ]	70, 147	ट		वारापद्रापनालाप	00
rr		-			_
जल्हु [कई]	33	टीस्वाणाम्राम	९९	ड	_
जसपडह र वस्ती र	રૂ પ્	टीम्वाणायाम	<i>९</i> ९	दउलती	9 રૂપ
जसपडह जसचीर } [ हस्ती ]	40, 49	टीम्वाणाम्राम ड		दउलती दक्षमणी	93 <b>%</b> 26
जसपडह जसचीर जाऊटि	दे <b>५</b> ५०, ५१ ३४	टीस्वाणात्राम ङ डमाणी [प्राम ]	Ę vy	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश]	9३ <b>५</b> २८ 9२६
जसपडह जसवीर जाऊडि जाङ्गल	ફળ <b>પ</b> ૦, પવ ૨૪ ૧૨૬	टीम्वाणाय्राम ड डमाणी [ प्राम ] डाक [ प्राम ]	<i>૬પ</i> ૬ <i>પ</i>	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमश्रुरा	93 <b>%</b> 26
जसपडह जसचीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य	રૂપ પ૦, પ૧ ૧૨૬ ૧૬૧	टीम्वाणाय्राम ड डमाणी [ प्राम ] डाक [ प्राम ] डामर [ सान्धिविग्रहिक	દ્દપ દ્દપ ] ૨૧, ૨૨	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश]	१३५ २८ १२६ १९
जसपडह जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यह [वर्ग]	સ્પ પુરુ, પુવ વર્ વર્ વર્ વર્ સ્વ	टीस्वाणात्राम ड डमाणी [ प्राम ] डाक [ प्राम ] डामर [ सान्धिवित्रहिक डाहरू [ देश ]	<i>૬પ</i> ૬ <i>પ</i>	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमश्चरा दक्षिणापथ दत्त	9३ <b>५</b> ३८ 9२६ 9 <i>9</i>
जसपंदह जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्याक	સંજ <b>૧૦, ૫</b> ૧ ૧૨૬ ૧૬૧ ૨૧	टीम्वाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम ] डाक [ग्राम ] डामर [सान्धिविग्रहिक डाहळ [देश ] ढ	६५ ६५ ] २१, २३ २३, १२६, १३१	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमश्रुरा दक्षिणापथ दस्त दन्तकश्रेष्टि	૧૨૫ ૧૨૬ ૧૧ ૧૧, ૧૧૬ ૧૯, ૧૦૫ ૨
जसपंदह जसवीर जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्बद [वर्ग] जाम्बद		टीस्वाणात्राम ड डमाणी [ प्राम ] डाक [ प्राम ] डामर [ सान्धिवित्रहिक डाहल [ देश ] ड	६५ ६५ ] २१, २३ २३, १२६, १३१ ९१, ९२	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमश्रुरा दक्षिणपथ दत्त दन्तकश्रेष्टि दरिद्वनर ]	934 26 926 93 94, 928 94, 964 2
जसपंडह जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यड [वर्ग ] जाम्याक जायड जायडि	44, 46, 46, 46, 46, 46, 46, 46, 46, 46,	टीम्वाणात्राम ड डमाणी [ प्राम ] डाक [ प्राम ] डामर [ सान्धिवित्रहिक डाहळ [ देश ] डंकपर्वेत ढंका [ पुरी ]	દ્ધ દ્ધ રિવ, રર રર, ૧રદ, ૧૨૧ ૬૧, ૬૨ ૬૨	दउलती दक्षमणी दक्षिमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमश्रुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्टि दरिद्रनर }	934 76 93 93, 93 90, 904 2
जसपंदह जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्याक जायह जायहि जायालिपुर	40, 49 40, 49 969 969 969 978 978 979 979 979 979 979 97	टीम्वाणाद्याम ड डमाणी [ प्राम ] डाक [ प्राम ] डामर [ सान्धिवित्रहिक डाहल [ देश ] डंकपर्वत ढंका [ पुरी ] डिल्ली	६५ ६५ ] २१, २३ २३, १२६, १३१ ९१, ९२	दउलती दक्षमणी दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्टि दरिद्रनर } दरिद्रपुत्तल }	934 36 93 93, 93 99, 904 3 3 46
जसपडह } [हस्ती] जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्यक जायड जायडि जावालिपुर जायालिपुरी	५०, ५०, ५०, ५०, ५०, ५०, ५०, ५०, ५०, ६०, ६०,	टीम्वाणात्राम ड डमाणी [प्राम ] डाक [प्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिल्ली	દ્ધ દ્ધ રિવ, રર રર, ૧રદ, ૧૨૧ ૬૧, ૬૨ ૬૨	दउलती दक्षमणी दक्षिमणीक्षिति [देश] दक्षिणमश्रुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्टि दरिद्रनर } दर्गद्रमुत्तल } दशरथ दशार्णमण्डप	934 926 93 94, 924 94, 904 2 2 44 44 44
जसपंदह जसवीर जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्याक जायह जायह जायह जावाहि जावालिपुर जासिल	स्य प्रव व स्य व स्य व व स्य व स्य व व स्य व स्य व व स्य व त व व व व व व व व व व व व व व व व व व	टीस्वाणात्राम  ड डमाणी [प्राम ] डाक [प्राम ] डाक [प्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] डंकपर्वत ढंका [पुरी ] डिछी तस्रिहला	<pre></pre>	दउलती दक्षमणी दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्टि दरिद्रपुत्तल } दशरथ दशाणमण्डप दशास्य	934 926 93 93, 925 90, 904 2 2 42 42 42
जसपंदह जसवीर जाकुटि जाकुटि जाकुट जाम्य जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्याक जायड जायडि जावाछिपुर जावाछिपुरी जासिल	44 45 45 45 45 45 45 45 45 45 45 45 45 4	टीम्वाणाग्राम  ड उमाणी [ग्राम ] डाक [ग्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] डंकपर्वत ढंका [पुरी ] डिल्ली तक्षिशिला तरंगलोला है कथा ]	<pre></pre>	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमधुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रनर } दरिद्रपुत्तल } दशरथ दशाणंमण्डप दशास्य दशास्य	934 30 93 93, 934 90, 904 30 924 934 934
जसपंदह } [हस्ती] जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्याक जायड जायटि जावालिपुर जावालिपुरी जासिल जिनभद्द	40, 44 40, 44 40, 40 40, 40	टीम्वाणात्राम  ड डमाणी [प्राम ] डाक [प्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] ढंकपर्वत ढंका [पुरी ] ढिछी  तक्षिशिला तरंगलोला ह्रामाला	\$ \\ \$  \$  \text{\$   \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$     \text{\$                                                         \qq\qq \qq \qq\qq \qq \qq \qq \q \qq	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमश्रुरा दक्षिणमश्रुरा दक्षणापथ दत्त दनतकश्रेष्टि दरिद्रपुत्तल } दशरथ दशाणमण्डप दशास्य दाउदपुर दान्ताक	934 926 939 93, 924 93, 904 234 934 934 934
जसपंदह क्षेत्र क्षेत्	40, 32 & 4 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9	टीम्वाणात्राम  ड इसाणी [प्राम ] डाक [प्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] ढंकपर्वत ढंका [प्री] ढिछी  तस्रिश्रला तरंगलोला तरंगमाला ।	<ul> <li>६५</li> <li>६५</li> <li>६५</li> <li>२१, २३</li> <li>२१, १३</li> <li>९१, ९२</li> <li>९३</li> <li>७०, १३५, १३६</li> <li>१००</li> <li>९४</li> <li>९४</li> <li>४८</li> </ul>	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दन्तकश्रेष्टि दरिद्रपुत्तल } दशाणंमण्डप दशास्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य	934 926 939 93, 924 93, 924 934 934 936 936
जसपंदह क्षेत्र विश्व क्षेत्र	4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4	टीम्वाणात्राम  ड डमाणी [प्राम ] डाक [प्राम ] डाक [प्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] ढंकपर्वत ढंका [पुरी ] ढिल्ली तक्षशिला तरंगलोला तरंगमाला तारणगढ } तारणगढ }		दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्टि दरिद्रनर } दर्शरथ दशाणमण्डप दशास्य दशास्य दाउदपुर दान्तक दामोदर दाहिमा	934 926 926 927 927 927 927 924 924 924 924 924 924 924 924 924 924
जसपंदह } [हस्ती] जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्याक जायड जायटि जावालिपुर जावालिपुरी जासिल जिनभद्द जिनहा—°हाक जितराञ्ज जिनचन्द्रसूरि	40, 44 40, 44 40, 44 40, 44 40, 40 40, 40	टीस्वाणात्राम  डिसाणी [प्राम ] डाक [प्राम ] डाक [प्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] ढंकपर्वत ढंका [पुरी ] डिल्ली तक्षिश्रला तरंगलोला है [कथा ] तारणगढ़ तारणहुर्ग है तारणहुर्ग मासाद	\$ \\ \$  \$  \text{\$   \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$  \text{\$    \text{\$   \text{\$   \text{\$   \text{\$                                                   \qq \qq \qq \qq \qq \qq \qq \qq \qq \q	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दन्तकश्रेष्टि दरिद्रपुत्तल } दशाणंमण्डप दशास्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य दशस्य	934 926 926 93, 928 90, 904 22 42 42 42 934 946 96 96 96 97
जसपडह } [हस्ती] जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यढ [वर्ग] जाम्यक जायढ जायढि जायालिपुर जायालिपुर जायालिपुर जायालिपुर जायालिपुर जातालिपुर जातालिपुर जानालिपुर जिनहा—°हाक जिनहा— जिनहाक्षा	40, 30, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 4	टीम्वाणात्राम  डमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिल्ली तक्षशिला तरंगलोला तरंगमाला तारणगढ़ तारणदुर्गभासाद तारादेवी	\$\\ \( \{ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रपुत्तल } दशाणंमण्डप दशास्य दशदपुर दान्ताक दामोदर दाहिमा दिगम्यर	934 926 93 93, 924 94, 904 22 93, 904 24 94 94 94 94 94 94 94 94 94 9
जसपडह } [हस्ती] जसवीर जाकुटि जाकुटि जाकुट जाम्य जाम्यह [वर्ग] जाम्यक जायड जायडि जावाछिपुर जावाछिपुर जावाछिपुरी जासिल् जिनमह् जिनहा—°हाक जितराञ्ज जिनदन्दस्रिर जिनदन्त	4	टीस्वाणात्राम  ड डमाणी [प्राम ] डाक [प्राम ] डाक [प्राम ] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश ] ढंकपर्वत ढंका [पुरी ] ढिल्ली तक्षिशिला तरंगलोला तरंगमाला तारणगढ } तारणदुर्ग } तारणदुर्ग मासाद तारादेवी तिलकमक्षरी [कथा ]	\$\\ \( \{ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रनर } दरार्य दशाणमण्डप दशास्य दशास्य दशास्य दशाहमा दिगम्यर	934 926 939 939 939 939 944 944 944 944
जसपडह } [हस्ती] जसवीर जाकुटि जाङ्गल जाम्य जाम्यढ [वर्ग] जाम्यक जायढ जायढि जायालिपुर जायालिपुर जायालिपुर जायालिपुर जायालिपुर जातालिपुर जातालिपुर जानालिपुर जिनहा—°हाक जिनहा— जिनहाक्षा	40, 30, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 40, 4	टीम्वाणात्राम  डमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिल्ली तक्षशिला तरंगलोला तरंगमाला तारणगढ़ तारणदुर्गभासाद तारादेवी	\$\\ \( \{ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रपुत्तल } दशाणंमण्डप दशास्य दशदपुर दान्ताक दामोदर दाहिमा दिगम्यर	934 926 93 93, 924 94, 904 22 93, 904 24 94 94 94 94 94 94 94 94 94 9

•			,		,,,,
दुर्रुभराज	१०२	धवलक )[पुर]	५२, ६९	नागड ४९, ५	०, ६७,६८, ७७,८०
दुसाज	४९	धवलकः ,,	५४, ५५ ६१, ६७	नागपुर	२६, ६६, ९९
दुसाजुत्र	Чо	धवलक्कर्ज ,, धवलका	२६, २७, ३२, ३३,	नागपुरीय	३१, ७०
देपाक	49ー65	ववलका ) "	६३, ६६, ७५, ९५,	नागर	৬০
देपालपुर	१३५		९६ २६	नागराज	३३, ४३
देमतराज्ञी	939	धवलार्जुन 	४०	नागलदेवी	৬९
देसता	73	धांगा, धांगाक	86	नागहस्ति	<b>9</b> 3
देवगिरि	48, 68	धामदेव	३१	नागार्जुन	९१, ९३–९५
देवचन्द्र	८३, १०७, १२३, १२६	धारा [नगरी ]	१४, १७, १९, २०,	नागिंद	१३६
	i		२१, २३, २६, ३५,	नाटसारि [ राग ]	৬९
देवदत्त	999, 992		४४, ५१, ५२, ९५,	नानाक [कवि]	८०
• देवधर	66		९८, ११९, १३१	नानामछिक	૧૨૫
देवपत्तन	३८,४३,५४,६१,१००	धाराक	86	नामलदेवी	36
देवप्रभ [ सूरि		धारागिरि	२५	नायक	88
देवल [ महं०]	] ३२	धारागिरिवाटिका	४९	नारायण	908
देवशर्मा	९७	धारिणी [विद्या]	9,8	निर्घृणशर्मा -	<b>२</b> 9
देवशासा [ रा	निर्णा ] ७९	धारिणी [ श्रेष्ठिनी ]	900	निर्वाणकलिका [ प्रन	
देवसूरि ]	२५–३१, १०७, १२७	धारू	४३	निहाणा [ प्राम ]	<b>5</b> 9
देवाचार्य ∫	२७,२८, ३१,४३,४४	<b>धतरा</b> ष्ट्र	996	नीत [ठक्कर]	५२
देवाचार्यपौपध	गगार २७	,	न	नीलपट [संप्रदाय]	98
देवादित्य	८२, १३०	नगरपुराण	१३१		२१, ३४, ४३ ५३,
देवेन्द्रस्रि	४७	नटुनारायण	৬९	्याम [याय, ।जग्रा	
दोधकप <b>ञ</b> शर्वा	४९	नडुरु 🖟 📆	900		६५, ६९, ८४, ९१, ९२, ९७
ट्राविंशतिका [		नहुल }[पुर] नहुल	१०१	नेमिचैत्य	33, 30
	. ४६, ७९	नद्भुला(कान्हडदेव)	४५	नेमिप्रासाद नेमिप्रासाद	939
द्वारभट	\$9	नन्द	८१, ८२	नेमिमन्दिर	६३
द्वारवर्ना } द्वारिका ∫	906	नन्दिवर्धन	49	नेह(ड)	५२
द्वपायन इंपायन	११२, १३२, १३३	नन्दिवर्द्धनपर्वत	ሪሄ	नोढा सईद	, ` ৩ই
ह्रपायग		नन्दी	१२२	_	
	घ	नन्दीश्वरप्रासाद	६३		प
धनदेव	94	नमि	५८	पंचम [राग]	৬९
धनदेवी	५४, ९५	नमिविद्याधरान्वय	९२	पंचाल [देश]	९४
धनपति	९१	नयसार [ भट्ट ]	२८	पंचासर [श्राम]	१२, १२८
धनपार	११९, १२०	नरचन्द्र सूरि	६२, ६९	पंपा [सरोवर]	<b>38</b>
धनासी [राग	. ۲	नरदेव	१०२	पखाउज	७९
-	र १६	नरपति	29	पणपन्नी	900
धन्ध	१२३	नरवर्भदेव	२०		] २१, २३, २५,
धन्युषः		नरवस्मी	७९	1	, ३५, ३६, ३८–४०,
धन्ध् परमार	. <del></del> . । २६	नरवाहन	११, ९७, १०९	,	, ४७-५०, ५४, ५५,
धन्याधार [ टे	(रा <u>।</u> ४८, ५४	नरसमुद्र [पत्तन]	२८, २९		, ६५, ६६, ६८, ७५,
धरणिग	₹ €	नळ	१२२	७९, ८०	, ८९, ९५, ९६, १२३,
धरणीश्वर	96	नसरदीन	वेड्प		१२६, १३२
धरणेन्द्र	૪રે	नसरदीनसाही	१३५	पद्म	96
धर्मस्रि	3.4	नांदउदी	96	पद्मलदेवी	५४
धवल [ मंत्री	·]	j			
=					

_		· .	2.27
भरत [राजा, चकी] , ४२, ५८	मयव	५८	महिण्ह पृष्टिलक ९५
भव (शिव) १३२	मङ्गहडपुर	ર્દ	महिरावण ३९
भवानी (पार्वती) १३२	<b>मण्डनगणि</b>	९२	महिपपुर ९६
भाक ५४	मतोडातीर <u>्थ</u>	ĘĘ	महीघर ९५
भाण्डागारिक १०२	मथुरा	99, ९२	
भानुमती ८१	मद्न	৬৬	
भारती १९, ८१-८३	<b>मद्</b> नपाल	<b>પ</b> ર, <b>પ</b> ૪	_•
भारत, छेक ७८	मद्नवहा	<b>२३–२५</b>	
— गद्य ७८	मद्नायतन	v	माइंदेव २३
<del></del> चारु ७८	मद् [देश]	१३२	माक २५, ५४
— (महाभारत) १११	मधुमती	<b>88-909</b>	माऊहर २५ मागध ७१
भावड ९९	मधुस्दन	९२	·
भिल्लमाल १८, १३१	मनोरमा	99	
मीम २१, २३, ५४, ६५, ११८,	सम्माणनगर	909	१३०, १३१ माघकाव्य १७
१२१, १२३, १३२	स <b>स्माणाकर</b>	909	मावकाव्य १७ माणिकड [पछेडड ] ४०
भीमगान्धिक १९४	मम्माणी [खनि]	99	
भीमडाक २१	सयण	\$ <b>¢</b>	. , . , . , . ,
भीमदेव ५१, ५२, ९५	मयणल(ह)देवी	२४, ३५, ३६,	
भीमग्री[य]द्राम ३३, ३४, ६५	11440(0)341	933, 938	माधव ३२, ३३, माधवदेव २४, २५
सुण्डपर्वेत ९८	<b>मयणसाहार</b>	४६, ७९	
भुवनपाल ५६	मयूर [किव]	94, 94	•
भुवनपालेश्वरप्रासाद ५६	सरहट्टदेश   सरहट्टदेश	99	मानखे(पे)टपुर ९३, ९४
भूणपाल ७४	मरु[भूमि]	9२६	मानतुङ्ग सुरि १५, १६, १२१
भूण्डपर्वेत ९८	मरु [ मूल ]   मरुदेवी	99 39	मानदेव सूरि १०७
भूयराज १२८	। मरुपण्डल । मरुमण्डल	٠, دع	मानस [सरोवर] २४
भृगुकच्छ २६, ४०, ७५	मरुस्थली मरुस्थली	<b>३२, ८४</b>	मारव ५९
मृगुपुर ४०, ५६, ६२, ६५,	मरुधार [गच्छ]	920	मालदे ५२
£8, us	-	1	सारुक } ३२, ५० सारुयक
भैरव [राग] ७९	म्लयपर्वेत 	<b>પ</b> ૧ ૧ <b>૨</b> ૫	मालव १७, २०, २३, २४, ३१,
भैरवानन्द्र [योगी] ६	मिलिककृषडी मिलिका	454	३५, ४४, ६७, १०२, ११९,
भोगवती ९४	मालका महादेव	५४, ६५, ९०	१२३, १२६, १२८, १३१
भोगावह ३५	मह्दव मह्दवादि [स्रि	رة, عرب المربية المربي المربية المربية المربي	मालवक १०,२१,९६
भोगीन्द्र १०	महावाद [ सूर ] महिक	40	मालवपति ७९
मानादः भोज[तृप] १४, १७-२३, ५१, ७१			मालवमण्डल २७
च्याज[ रूप ] १९, १९ १९, ११७, ११९,	· -	९, ४०, ४६, ४७ १२	मालवराज्य १३
929, 922, 925-929	<b>सहणक</b>	926	मालवा ३४
_	महणका	90	मालवेश १४
<b>भाजस्थामगारा</b> उ	महमद्	१३५	माल्हणादेवी १७
<b>मा</b> प्रुप	महमूंद —	९७	माहिन्द १०२
माप्छा	<b>महाप</b> छि	928	माहेच १३
म	महाभारत 	<b>६९, ११४</b>	साहेश्वरप्रासाद २४
<b>भं</b> डलीनगरी ^{५४}	महाविदेह 	۷۶, ۱۱۵	माहेश्वरी ३३
<del>स</del> कडाणा ६६, ९९	<b>महाराष्ट्रीय</b>	ટર	मिणालवई १४
भगध १२६	<b>महावीर</b>	-, ,	

#### पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रह

, मुक्ष [ नृष ]	१३, १५-७२,	याकिनी [ साध्वी ]	9०३	रुद्दाइच (रुद्रादित्य)	98
20, [ 2, ]	१२८, १२९	याज्ञवल्क्य	998	रुद्र [ बिव ]	996
<b>मु</b> णालवईं	938	`_ <u>_</u>	६, ८३, १००	<b>रद्रमहाका</b> ल	२४
<b>मुद्र</b> क	१३४	युगादिदेवप्रासाद	, <b>५</b> ३, ५२	रुद्रादित्य [मंत्री]	१३, ४४, १२८
मुद्गलवंदी	60	युगादिदेवभाण्डागार	ઁ ૨૪	रूपवती	930
<u>.</u> सुद्गलपातसाहि	८५	युगादिफलही	৩८	रैवत [गिरि, तीर्थ] ३	४, ४७, ५२, ५३,
<b>सु</b> निचन्द्र	२६, ३१	युधिष्ठिर	१२९, १३२		1, ६९, ८२, १३२
मुनिसुव्रत [देव]	३२	युगंधराचार्य	960	रेवतक [पर्वत] ३	४, ४३, ६१, ९३,
मुनिसुव्रतचैत्य	४५, ६२	यूकावसही	१२५		९८, १२६, १३२
<b>मुनिसुवत</b> प्रासाद	३२	योगशास्त्र	१२५	रेवतकपद्या	१२६
<b>गुरं</b> डनरपति	९२	योगिनीपुर	८६, ८७, ८९	रैवततलहट्टिका	96
मुरारि	१२२	र	i	रोदिक (रुद्दादिख)	্
मुहडासा [ प्राम ]	१२३	रंक [ वणिक् ]	१, ८२, ८३	रोहणगिरि, रोहणाचल	9,99६
<b>मुहुयानगर</b>	99	रघुपति	७२	ਲ	
मून्धउर	१३५	रणसिंह	<b>९</b> १	 छंका	7.0
मूलराज मूलराज	१३, ७७, १२८	रति	920		<b>ર</b> ષ્ ૧૦૧
<b>मृ</b> णालवती	98, 938	रतिरमण (कामदेव)	१२२	लक्ष्मण लक्ष्मी	10 T 9 R S
मेघ [राग]	৩০	रतपुक्ष	८४	ळक्मा ळक्मीध <b>र</b>	94
मेडतकपुर	93	रतपुर	68	छद्मावर छख[म]णसेन	68, 66
मेद [जाति]	१०१, १०२	रत्नप्रभ	१२७	छख्मानसम छखणावतीपुरी	68, 66
मेद <u>्</u> पाट	४४, १०२	रत्न <b>रोखर</b>	83	रुघु <b>चाग्भट</b>	८०, ८ <u>८</u> ९६
मेरी	२४	रसीअंड रे िगोगी 1	८४	रुद्धितविस्तरा [ रृति ]	
मेरु	२०, ५१	रसीअड रसीयाक } [ योगी ]	८५	रुखिता रुखिता	६२, <b>६३</b>
मेलगपुर	३२	राजपुत्रवाटक	४८	लिखे(ल)तादेवी	५४, ६३, ६५
मेवाड	₹9	राउल	५०, ५१	<b>खवणप्रसाद</b>	५४, ६५
मेहता [ श्राम ]	५४	राजविडम्बननाटक	२१, २२	लवणस <b>मुद्र</b>	٠٠, ۲۰
मोगा	८२	राजविहार	३०	<b>लवदोसिक</b>	৩८
मोजदीन [ सुरत्राण ]	६६, ७०, १३५	राजशेखर	998	<b>रुपणावती</b>	१३५
मोदकुल	१२३	राजस्थापनाचार्य [ विरुद ]	Ęo	छहर [ ठक्कर ]	५२
मोढेरपुर	८३	राजिल ————	993	<b>लाखण</b>	909, 902
य		राजीमती	20	<b>ला</b> छल देवी	३३
यक्षदेवकुल	ے	राम (रामचन्द्र) ८,९,	994		१, ६८, ९३, १३४
यक्षनाग	३२	रामकथा	\$	<b>ला</b> डदेश	४०
यसुना [नदी]	<b>લ્વ, ૧</b> રૂપ	रामदेव	993	लापाक	93
यवनव्यंतर	<b>د</b> ۶	रामराज्य	s	लाह <b>उर</b>	१३५
यशःपटह [ हस्ती ]	<b>२</b> ३	रामदोन [ प्राम ]	३२	<b>छी</b> लादेवी	३३
यशश्चनद	१२३	रामायण	6	<b>लीलावती</b>	२४
यशोधन	992	रायविड्डार [ विरुद ]	३२	<b>छी</b> स्	४३
यशोधर	६२	रायविहार	३०	<b>खु</b> खाईं	११२
यशोभद्र	હ્ય, ૧૧૫		, ११५, ११८	ऌणपसा }्रे	48
यशोराज	٤٤	राष्ट्रकृटीय	66	ऌ्रणप्रसाद ∫	५५, ६७
	३, २४, ३५, १०९	रासिछसूरि	६२	<b>त्र्णसीह</b>	৩९ ••২ ••४
	رع, ون, ن، ن م	रुक्मदीन	१३५	<b>ऌ्णिग</b>	५२, ५४

			16, 1151		, ,,
ऌ्णिगवसही 🕡	ष३, ६५	वाणारसी	१५, २०, ६५	विप्णु	६९, १०४
<b>लोलियाणक</b>	998	वादी देवसूरि	30	चीक <b>म</b>	903
लोहिटक े ा उस	m 7 40	वामणी	२४	वीकमओॅ	3
लोहाडक लोहाडिय } [ द्रम	म । ६५	वामदेव	હબ્	वीघरा	१०२
	व	वामन	९७	वीर [जिन]	३२, ४२, ९४, १०४
वईजिलया	86	वामनस्थली	६२, ६८, ११४	वीरणाग	२६
वङ्गेश्वर	१२ <b>६</b>	वामराशि	१२५	वीरप्रतिमा	८३
प _{क्ष} -वर वचनवत्सला	7 ×	वायडज्ञातीय	৬८	वीरदेव	३२, १०७
वज्रस्वामी	<b>९९,</b> १०१	वाय <b>डपुर</b>	३२	वीरधवल	<i>५४-५६, ६५-६७</i> ,
वज्राकर	3,3,7°1	वाराणसी	८६, ८८–९०, १०७		६९, ७८
	६४	<b>वाराहीसंहिता</b>	९०	वीरम	५४, ६५–६७
वटकूपपुर	88	वालही	998	वीरमति	9२८
वटपद्रपुर		वालीनाह	५२	वीरराज ( वीरधव वीराचार्य	ाल) ५७ ४३
वडीयारदेश	१२८	वासुकि	<b>९</b> 9	वाराचाय वीऌ	* <del>*</del> * * * * * * * * * * * * * * * * *
वडूयाग्राम	<b>હ</b> ફ	वासुपूज्यचैत्य	२७	वाछ. वीसल ]	६६–६८, १ <b>१</b> ४
वढवाण	₹ <i>\</i>	विक्रम (विक्रम)	936	वासल वीसलदेव }	40, 40, 110 40, 40, 00-00
वत्थुपाल ( वस्तुपा		विक्रमकाल	٤٤	वीसछिक	• , , , , , , , , , , , , , , , , , , ,
वद्धमाण ( वर्द्धमा	न )	विक्समराय	१२३	<b>वृद्धस</b> रस्वती	२०
वनराज	१२, १२८		४, ६, १०, ११६, ११७	चृपभ [जिन]	ĘS
वयजू	39	विक्रमसेन	۷, ۵	चेणीकृपाण [ बिर	द ] ७८
वयजूका	५४		, ३, ९, ५१, १०१, ११८	वेदगर्भ	998
वररुचि	69	विक्रमार्क	४-७	वैदिक	98
वराहमिहिर	<b>९०, ९</b> १	विखि	४२	वैष्णव	ĘC
वर्द्धमानपुर	ξo	विजयचन्द्र	CC	च्याघ्रपही	48
वर्द्धमानसूरि	६८, ८३, ९५, ११९	विजयब्रह्म	९५	व्यास	ux, uc, co
़ वलभी [पुर ]	८२, ८३	विजयसेनसूरि	५५, ६४, ७५	<b>च्यासविद्या</b>	60
वलही	८३	विजया	900		হা
वसभराज	१०२	विदुर	906	शंकर	९४, ११६, १२०
वसभा	२४	विद्याधर [मंत्री]	८८, ९०, १२२	शंख	५६, ५७, ७४
वसंत [ राग ]	us.	विद्यारधरगच्छ	९२	शक	۷۵
वसन्तपुर	99३	विद्यानन्द	992	शकावतारतीर्थ	१२०
वसाह	<b>३३, ४३, ४४, ४७,</b>	विद्यापुर	६७	शङ्घेश्वर [प्राम]	६९
	86, <i>६</i> 9, 60	विनमि	५८	दा <u>ञ्</u> जेश्वरपार्श्वनाय	ĘC
वस्तुपाल	५२-५५, ५७, ५९,	विभीषण	१३४	शङ्घलु (संडेराज	, ५६
	६१-६४, ६६-७५,	विमल [मंत्री]	५१-५३	शत्रुक्षय [तीर्ये]	३२, ४२, ४३, ५९,
	vv, vc, co	विमलचन्द	२६	<b>ξ9,</b> 9	४-६६, ६८, ७५, ८३,
वस्त्रापथ [ तीर्थ ]	६० <b>३</b> १	विमलवसति	५१	\$9,	93, 99-909, 936,
वांका [ प्राम ]	4 ) 99 <del>2</del>	विमलवसहि	५२	~_	१२७, १३०, १३ <b>२</b> उर
वाक्पतिराज		विमलादि	६३, ९४, ९८	शत्रुञ्जयतलहटि	14
वाग्भट [ मंत्री ]	३२, ४०, ४२, ४३, ५८, ९७	विमानविश्रम	२४	शत्रुअयमाहात्म्य	্ ৬৬
x -	9 <b>ę,</b> 90	विराट [ देश ]	१३४	शत्रुञ्जययात्रा	१०३
वाग्भट [ वैद्य ]	₹, 5° 3°, 5°	विवेकबृहस्पति [	विरुद ] २८, २९	शम्भलीश	908, 938
वाघराग्राम	पर <b>प</b> र	विश्वमञ्	६६	शम्भु	1-0, 110
वाचस्पति	, प्र॰ स॰ 20	•			
go	NA M				

<b>भाकसेन्य</b>	८६
	३१, ८६, ८७, १०१
भाकटायन [ व्याकर	<del>-</del>
<b>भावयसिं</b> ह	908
शातवाह्न	. ९४, १३०
शान्तिकलश	२६
<b>ज्ञान्तिनाथ</b>	. 900
शान्तिस्तर्व	900
शारदा [देवी ] -	ं १२०
<b>शासनदेवी</b>	78
<b>बिलादिय</b>	८२
शिव	90, 98, 86, 86
श्विपत्तन	64
शिवपुर	903
शिवभूति ्र	् २६
शिवमार्ग	१२४
शिवशास <b>न</b> ं	् ४९
शिशुपावकध [ का	
इतिलगुणसूरि	१२, १२८
शुभंकर	904
<b>क्</b> रुक्षारकोडि (सार्ड	t) 80,88
शैव	. ६८
ह्रोभन [ मुनि ]	998
्होभनदेव [ सूत्रध	ार] ५३
श्री [कन्या]	94
श्रीदेवी	११२, १२८
श्रीधर	४२
श्रीपर्वत	६, ६५, ११६
श्रीपाल [ कवि ]	४२, ४३
श्रीपुंजराज	49, 68, 64
श्रीपभसूरि	900
श्रीमाता	५९, ५२, ८४-८६
श्रीमाल [पुर]	१७, १८, ३२, ३४,
	४२,४९,८३, १०५,
	१०६, १२६, १३०
श्रीमालज्ञातीय	904
श्रीराग	७९
श्रीहर्ष [कवि]	986
श्रेणिक [राजा]	, ४२
श्वेतपट	२७, २९
श्वेताम्बर	94, 20, 20, 909,
	१०५, १२७, १३०
श्वेताम्बरीय	२७, ९८
	•

· • •
पं(सं) गार ३४
पं(खं)भराग्राम १३५
पड्दर्शनमाता [बिरुद] ६३
पोसरुपानु (खुशरुखान) १३५
<b>.</b>
सइंभरी (शाकंभरी) ८६
सह्वाडीघाट ६७
सहेद [नोडा] ५६, ७३
संखराज ४६
संखेश्वर १२
संग्रामराजा ९३
संमेत [गिरि, तीर्थ] ९३
संयोगसिद्धि [ बिप्रा ] ४०, ४१, ४७
संस्कृत [भाषा] ६,१०
सगर [चकवर्ती] ५ ५८
संज्ञन [फुलाल] २८
संजान [दण्डनायक] ३४, ४९, १३१
सज्जन [साकरीयाक] ३६
सण्डेरगच्छ ४९
सण्डेराज (खण्डेराज) [शंखलु ] ५६
सत्यपुर २६
संपादलक्षग्रन्थ (महाभारत) ७८
समरसिंह : ४९
समरसीह १०२
समराक ६८
समरादित्य १०५
समरादित्यचरित १०५
समसदीन [पातसाहि] १३५
समुद्रविजय ६१,८१
सरस्वती [देवी] १०, २६, २७, ४३,
997, 976, 978
सरस्वती [ नवी ]
सरस्वतीकण्ठाभरण प्रासाद १२०
सरस्वतीकुटुम्ब ११८
सर्वदेवाचार्य १०७
सहस्रकला २४, ४९
सहस्रकिरण [ताडङ्क] ४०,४१,४७
सहस्राळिङ्ग [सरोवर ] ६७
सहावदीन [पातसाहि ] १३५
साइंदेच २४
साज , २४, ५४
सागर [द्विज] २६, ९७
<u> </u>

साङ्गण-चामुण्डराज 🥶 🕾 诶 🤻
साङ्गण [ डोडिआक ] ३२
साजण (सज्जन) [मंत्री] १ ३४
सातवाहन (११,९१
सात्क [महं०] ८०
The state of the s
933, 938
साभ्रमती ७८
सामंतसीह १०२
सामाचारी [प्रन्थ] ९४
साम्ब , ३२
सारंगदेव ११२
सारस्वतमंत्र ७८
सालाएण '१२
सावदेवस्रि ' १३६
साहचदीन [ पातसाहि ] ८७, ८९, १३५
साहारण ५७
सिंघरा १०३
सिंह 93
सिंहणदेव '७९
सिद्धराज [जयसिंह ] २३-२५,२८,३०,
३४-३६, ३८, ३९, ४७,
८५, १०५, १२३, १२५,
120, 939-938
सिद्धचक्रवर्ती १२७, १३१–१३४. सिद्धचक्रवर्ती २८, २९
सिद्धचंत्रवर्ती १२७, १३१–१३४. सिद्धचंत्रवर्ती १२८, २९ सिद्धनाथ २३, २५
ति संच्या वर्षी २८, २९ सि स्वाथ २३, २५ सि स्वपाल [कवि] ४२, ४३
सिद्धचंत्रवर्ती १२७, १३१–१३४. सिद्धचंत्रवर्ती १२८, २९ सिद्धनाथ २३, २५
तिसंच्यावर्ती २८, २९ सिसंच्यावर्ती २८, २९ सिसंच्याव २३, २५ सिसंच्याक [कवि] ४२, ४३ सिसंच्या
सिद्धचन्नवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धपाल [कवि] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धमाथ २३, २५ सिद्धपाक [कवि] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५
सिद्धचन्नवर्ती २८, १९ सिद्धचन्नवर्ती २८, १९ सिद्धचन्नवर्ती २८, १९ सिद्धचन्नवर्ती १३, १५ सिद्धपाल [कवि] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धपि १०५ सिद्धस्ति १६ ३८, ११७
सिद्धचकवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धचाथ २३, ४५ सिद्धपाल [किव ] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धसारस्वत ८६ सिद्धसेन सूरि ३८, ११७
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धपाल [कवि] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धसारस्वत ८६ सिद्धसेन सूरि ३८, ११७ सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्धहेम [व्याकरण]
सिद्धचकवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धचाथ २३, ४५ सिद्धपाल [कवि] ४२, ४३ सिद्धपाल [कवि] ४२, ४३ सिद्धपि १०५ सिद्धसिन सूरि ३८, ११७ सिद्धसेन सूरि १० सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्धहेम [व्याकरण] १३१ सिद्ध [ योगिनी ]
सिख्यकवर्ती २८, २९ सिख्माथ २३, २५ सिख्माथ २३, ४५ सिख्माथ २३, ४५ सिख्पाल [किव ] ४२, ४३ सिख्पर ३०, ४४, ४५ सिख्पि १०५ सिख्सिन सूरि ३८, ११७ सिख्सेन दिवाकर १० सिख्हेम [व्याकरण ] १३१ सिख् [योगिनी ] ३६ सिन्ध्छ
सिद्धचकवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धचाथ २३, ४५ सिद्धपाल [किवि] ४२, ४३ सिद्धपाल [किवि] ४२, ४३ सिद्धपि १०५ सिद्धसिन सूरि ३८, ११७ सिद्धसेन सूरि १० सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्धहेम [व्याकरण] १३१ सिद्ध [योगिनी] ३६ सिन्धल्ल १५६
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धचाथ २३, ४५ सिद्धपाल [किव ] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपुर २०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धसेन सूरि ३८, ११७ सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्धहेम [व्याकरण ] १३१ सिद्ध [योगिनी ] ३६ सिन्धल १५६ सिन्धल १३, १५
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धपाल [कवि] ४२, ४३ सिद्धपाल [कवि] ४२, ४३ सिद्धपि १०५ सिद्धसिन सूरि ३८, ११७ सिद्धसेन सूरि १८, ११७ सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्धहेम [व्याकरण] १३१ सिद्धहेम [व्याकरण] १३१ सिद्धहेम [व्याकरण] १३१ सिद्धहेम [व्याकरण] १३१ सिन्धह्य १५ सिन्ध्रह्य १२६ सिन्ध्रह्य १३, १५ सिर्युल १३, १५ सिर्युल १३, १५
सिद्ध चक्रवर्ती २८, २९ सिद्ध चक्रवर्ती २८, २९ सिद्ध चक्रवर्ती २८, २९ सिद्ध पाळ [कवि] ४२, ४३ सिद्ध पुर ३०, ४४, ४५ सिद्ध सिद्ध १०, ४४, ४५ सिद्ध सिद्ध सिद्ध १० सिद्ध से विवाकर १० सिद्ध से [व्याकरण] १३१ सिद्ध विवाकर १० सिद्ध हो [व्याकरण] १३१ सिद्ध १३, १५ सिद्ध १३, १५ सिर्म पुळ १३, १५ सिर्म पुळ १३, १५ सिराणा [प्राम ] ५० सिंग्रण २४
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धमाथ २३, २५ सिद्धमाथ २३, १५ सिद्धपाल [किव ] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धसिन सूरि ३८, ११७ सिद्धसेन सूरि १० सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्धहेम [व्याकरण ] १३१ सिद्ध [योगिनी ] ३६ सिन्धल १२६ सिन्धल १३, १५ सिन्धल १३ सिन्धल १३, १५ सिन्धल १३ सिन्धल १३, १५ सिन्धल १३ सिन्धल १३ सिन्धल १३ सिन्धल १४ सिन्सल १४ सिन्धल १४ सिन्धल १४ सिन्धल १४ सिन्धल १४ सिन्यल १४ सिन्धल १
सिद्ध चक्रवर्ती २८, २९ सिद्ध चक्रवर्ती २८, २९ सिद्ध चक्रवर्ती २८, २९ सिद्ध पाळ [कवि] ४२, ४३ सिद्ध पुर ३०, ४४, ४५ सिद्ध सिद्ध १०५ सिद्ध सेन सूरि ३८, ११७ सिद्ध सेन दिवाकर १० सिद्ध हेम [व्याकरण] १३१ सिद्ध होम [व्याकरण] १३१ सिन्ध १५६ सिन्ध १२६ सिन्ध १३, १५ सिराणा [प्राम ] ५० सिराणा [प्राम ] ५० सीवण् २४ सीवा २९
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धपाल [किव ] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धसेन स्रि १०, ११७ सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्ध [ व्याकरण ] १३१ सिद्ध [ व्याकरण ] १३१ सिन्धुल १३, १५ सिन्धुल १३, १५ सिर्णा [ प्राम ] ५० सीता दिवी १०१ सीता दिवी १०१
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धचाथ २३, ४५ सिद्धपाळ [किव ] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धसेन सूरि १०, ११७ सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्ध [व्याकरण ] १३१ सिद्ध [व्याकरण ] १३१ सिद्ध [व्याकरण ] १३६ सिन्धुळ १३, १५ सिन्धुळ १३, १५ सित्युळ १४ सित्युळ १३, १५ सित्युळ १४ सित्युळ
सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचक्रवर्ती २८, २९ सिद्धचाथ २३, २५ सिद्धपाल [किव ] ४२, ४३ सिद्धपुर ३०, ४४, ४५ सिद्धपि १०५ सिद्धसेन स्रि १०, ११७ सिद्धसेन दिवाकर १० सिद्ध [ व्याकरण ] १३१ सिद्ध [ व्याकरण ] १३१ सिन्धुल १३, १५ सिन्धुल १३, १५ सिर्णा [ प्राम ] ५० सीता दिवी १०१ सीता दिवी १०१

सीन्धल	१२८   सेडी [नदी]	<b>a</b> 0 1	****	a.t.
सीमंधर [स्वामी, जिन] २६, ६९,	९५, सेह्यक[हत्ती]	59	स्तम्भनग्राम स्थूलभद्गचरित	<b>૬</b> ષ્
	ا معد ا	80	स्यूलमङ्गमासाद स्वर्गारोहणप्रासाद	३७
सीमंधरप्रासाद	१६ सिरीसक [तीर्थ	] % ⁸		६८
_	, ४८ सेपर	92	स्वर्णिगिरि	49
संदर सर	५० सेहर	92	स्वर्णगिरिदुर्ग	५०
Ţ.	१२४ सोनल	३४, ३५	ह	
<u> सुगति</u>	२४ सोपारक	83	हंस	४३, १०५
सुभाव सुधर्मस्वामी	९५ सोम	५३, ५५, ९८	हंसगति	ં ૨૪
सुधानिधि वापी	२४ सोमचन्द्र	२६	हंसविश्रामवा <b>पी</b>	२४
-	मिल्ला र मन्द्रिय		हजयात्रा	६६
<b>सुन्दरिसरित्</b>	, ,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,	38	हम्मीरी	२४
सुभट	11   27222	90, 90,	हरदेव [ चाचरीयाक ]	96
सुभद्रा	\ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \	8	हरपालदेव	१२३
सुमतिप्रभ [गणी]	<u>चोचेल</u>	933	हरिचन्द्र	२६
<b>सुमाया</b>	To and the Charles I	३५, ३६, ३८, ४७,		१०३–१०५, १०७
3	• • (	<b>६9, ६९, ७२, ७८,</b>	हरिसिद्धि [देवी]	ч
सुमेसर (सोमेश्वर)	- 4	دو, عد, عام, ا	हरिहर	ওও
सुरत्राण ५१, ६६,	933	१२९, १३०, १३२	हर्ष [राजा]	94
3,	<del></del>	•	<b>ह</b> स्तिकल्पपुर	906
सुराष्ट्रा ३४, ५८, ६३, ९३,	30,	८२, १३२	हांसी	, <b>३</b> ०
९८, १२४, १२५,	२४ सोरठी [राग]	७९	हारीज	૮રૂ
सुरुरित •—	२ सोऌ	926	हिंदुक	ĘĘ
सुवर्णनर	१०२ सोहगा	48	हिसादि ]	49
सुवजानार	२ सोहालक [ प्राम ]	48	हिमालय ∫	996
सुवर्णपुरुप	९४ सोही	१०२	हूण	१३४
सुवर्णासेद्धि 		९, ८३, १२०, १३०	हूणवंश	9
सुवता	९९ सीभाग्यदेव	66	हेमचन्द्र [ सूरि ]	३७, ४२, ४३,
सुवताचार्य	२४ सारमन्त्र	८२		१२६, १२८
सुरीला	३२ सौराष्ट्र	१२८	हेमहसेवड	१२५
सुहादेवी	, , ,	४३	हेमप्रभ सूरि	५३
सुहागदेवी ४८, ४९, ८८, ८९	१३४ स्तम्भतीर्थ	४४, ५४, ५५, ६४,	हेमब्याकरण	१३१,
सुह्य —	<b>८६</b>	६५, ७३, ७४, ९८,		(७, ३८, ४४, ४६,
स्मेसर (सोमेश्वर)	96	११२, १२३		४९, ५८, १२३,
सूर्यशतक	४६ स्तम्भन (स्तम्भतीर्थ	i?) {\$		१२४, १३२
सेटउ [ इस्ती ]	९५ स्तम्भनकाचार्य	90	हेमाचार्य	३३, ४४, ४५, ४७
सेंडिका	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •			

### प्रवन्धचिन्तामणिग्रन्थान्तर्गतिवद्रोषनाम्नां सूचिः।

#### ॥ अकाराद्यक्षरानुक्रमेण ॥

47.ps	1	अवन्ति [देश]	9 {		
अ		अवन्ति सुकुमाल [मुनि]	७ (हि॰)	उत्तराध्ययन [स्त्र] बृहद्वृत्ति उदयचन्द्र [पण्डित]	६६ ९०
अकालजलद [विहद]	₹0	अधिनीकुमार	933	उदयन [मंत्री] ५६, ७७, ७	-
भगस्य	६९, ७६	अष्टापद [पर्वत]	915		
भग्नि [राजा]	६२	अष्टापद-प्रासाद	909	्र, ' उद्यन-चैत्य	८६, ८७ <b>, ९</b> ७ ১১
<b>अग्नियेताल</b>	२, ३, ३२		101	उद्यन-पत् उद्यन-विहार	ય
अच्छोद् [सरोवर]	६३	आ		उद्यम्भदेव उद्यप्रभदेव	
अजयदेव । अजयपाछ ( चालुक्य)	९६, ९७	भाकृष्टि विद्या	998	उद्यम्भद्द उद्यमति [राज्ञी]	६९ ५४, ५५
	1	आकेवालीया [ग्राम]	904	उद्यम्तत [राशा] उदा [उदयन]	46 26, 22
अजितनाथ [जिन]	९६	अ(गडदेव	94	उपासकदशा [सूत्र]	<b>5</b> 9
भणहिल्छ [भारयाङ]	93	आगडेश्वर	94	उपासकदशा [सूत्र] उमा	,
अणहिछपुर [पत्तन]	१३, १५, १७,	भानाक (अर्णोराज) [सपाद	- (	उमा उमापतिधर	११२, १२३
	, ४७, ६०, ५४,	आनाक [ब्याघ्रालीय]	58, 96	उमापातवर उर्वेशी	117, 174 90
	, ७८, ८१, ८६,	भाभड [वसाह]	<i>६९-७</i> ०		398
८७,	९१, ९२, १२६	भाभीरराणक [नवघण]	६४	'उवसगाहर' [स्तोत्र]	117
ञनादिभूपति [तपस्ती]	9.3	आम [ ऋपति ]	१२३	<del>न्य</del>	/ <b>5</b> \
अनुपम देवी(	९८, १०३-५	आम्बढ } [मंत्री] आस्त्रमट }	५६, ८०, ८१	•	६ (टि०) ६२
अनुपमा ∫	30, 124		८६-८८, ९७	ऋपभनाथ-प्रासाद	६२
अनुपमासर	900	आर्हत [दर्शन, मत]	४२	ऋपभपञ्चाशिका [स्तुति]	४०
अन्धय [अन्धक]	२८	आलिग [कुलाल]	00, 60	ए	
अन्ध्र [देश]	३१	आछिग (°मिग?) [पुरोति		एकपद [क्षेत्रपाल]	१२३
अभयदेव [स्रि]	१०७, १२०		८२	क	
अभिनन्द [कवि]	१०२	आछिग [प्रधान]	७९, ९१	कच्छ [देश]	<b>१</b>
सम्बा )	909	आॡया [गूर्जराश्ववार]	86	कच्छ ( लक्षराज]	98
अस्विका }	१२३	भावस्यकवन्दनानिर्युक्ति [		कण्डेलीया [पाषाणविशेष]	
<b>अयोध्या</b>	१३	आशराज [मंत्री]	86	कण्टेश्वरी-प्रासाद	93, 94
अरिप्टनेमि-प्रासाद	દ્રક્	आशराज-विहार	909	कण्डाभरण [ब्याकरण]	£9
अरू-धती	२८	भाशा [भिल्ल]	<i>હુ</i> હ	कन्थादुर्ग	94
अर्जुन	३१, ५५	आशापही	<i>u_iu_i</i>		२, ३१, १ <b>२३</b>
अर्जुनदेव [मालवभूपित]	९७	भाशास्वर [दिगम्वर]	998	क्रम्द (कृष्ण)	4 ( )
अणीराज [शाकमभरीश]	७६	आसांविली [ग्राम]	<i>७</i> १		66, 90, 9 <del>9</del>
अर्द्धाष्टम [देश]	८३	হ		कपदि [यक्ष]	१००, १२४ १००, १२४
अर्द्धेद [नाग]	990	इन्द्र [ चपति ]	६२	कपाद [यदा] कपिलकोष्ट [दुर्ग]	98
अर्धुद गिरि अर्धुद गिरि	८०, ९७, १०१	ड		करणउत्तु (कर्णपुत्र=करणोत	
अर्थुद तलहहिका	ર્વ ૧૧	उचा [नगरी]	<i>९५</i>	करणवर्ष (यग्रुय-गरनात	५८ १८
<b>-</b> .	६३	उज्ञयन्त [पर्वत, तीर्थ]	६५, ९३, १००,	चित्राव	59
अहंन् [देव]	38		309	करम्बक-विहार कर्ण [पुराणकालीन] १३, ५५	
अर्हन्तश्री [श्रन्थविशेप]	93	उज्जयन्त-प्रासाद	ڍِب	कण [पुराणकालान] १२, ५५ कणीदेव [डाहलदेशीय] ४९-	_U3
अलका [नगरी]	२, ३, २५, ४१,	उज्जयिनी [नगरी]	८, १३		. 17 ~ 35 3 3 6 8-6 E 1510
अवन्ति [नगरी]	५, २, २, १, १,	उच्झा [प्राम]	৬৭, ৬২	कणद्व [चाडक्यवसाय]	30-39,00
	20, 100, 171	1			

धर्म [वादी]	89	निमि [नाथ, जिन]	६५, १२०	। पृथु	९५
धर्मदेव	9	नेमिनाथ-प्रासाद	99	पृथ्वीराज [ सपादलक्षीय ]	
धर्मवहिका	२७	नेमिनाथविम्म	909	}	999
धर्मदिला	૮૫	प		प्रतापदेवी	૪ૡ
धाता (विधाता)	94	पन्नमाम	१०४	प्रतिष्टानपुर	90
धामणंडिल [ प्राम ]	922	पद्मासर [ग्राम]	१२, १३	प्रधुन्नाचार्थ	ĘS
धारा [नगरी] १३, २०,		पञ्चासरचेत्य	93	प्रवन्धचिन्तामणि [ प्रन्थ ]	
४१, ४५, ४८, ५		पत्तन [अणहिलपुर पाटण	ा] १३, १४, १५,	प्रयन्धवात [ प्रन्थविशेव ]	
धारा [पणली]	<b>३</b> २	}	३-५५, ५८-६२,	प्रभासक्षेत्र	९७ ८९, १०१
धारादुर्ग	40,49	६५, ६६, ६	९, ७७, ८२–८४,	प्रवर नगर	9
धारानाथ	હપ	८७, ८९-९	۹, ९४, ९८	प्राकृत [भाषा]	४४, ८९
धारापति	७६	पत्तन–पाटलीपुत्र	१०६	प्राकृतसूत्र	
धाराश्रेष्ठी	१२२, १२३	पत्तन-सोमनाथ	909		४६
धुन्धुक्क } [नगर]	६३	प्रयाकर	६० ( टि० )	प्राग्वाट [ वंश ]	९८
धुन्धुका ।	<b>५</b> ३	पग्नावती [देवी]	998	प्रियञ्चम <b>अरी</b>	. 3
न		पम्पा [सरोवर]	६३	प्रियवत	६२
नगरमहास्थान	६२	परपुरप्रवेशविधा	६, १०६	फ	
नगरपुराण	६२	परमार्दे [ नृपति ]	९७, ११४–११६	फूलड [ पशुपाल ]	96
नन्द [ नृप ]	१०६, ११८		1८, २१, ५९, ७६	घ	
निद्वर्धन	992	परमार राजपुत्र	99	वष्पभिहसूरि	૧૧૨
नन्दी	३९,	परमाईत [ विहद ]	७७, ८६	<b>यम्बेरानगर</b>	९४
नन्दीश्वरावतार [प्रासाद]	900	पराद्यर [ ऋषि ]	६० (डि०), ८२	वर्षर [ वेताल ]	७३, ७६
नल [ चपति ]	३९	पलीवाम	900	विछ [राजा]	८, १९, ११५
नरवर्गाः	७६	पाटलीपुत्र [ पत्तन ]	904, 996	वलाल [ चपति ]	<b>૧</b> ૫
नरवाहन [खप्तार]	48	पाणिनि [व्याकरण]	६१, १२१	वाउलामाम	९९
नर्मेदा	८७	पाण्डव	४२ (	याण [किवि]	88
नयचक [प्रन्थ]	900	पाण्ड्यमृप	<b>ર</b> હ	बारप [सेनापति]	१६, १७
नवघण (°न)	६४, ६५	पाताक	900	वालचन्द्र [पण्डित]	903
नवाङ्गवृत्ति [ग्रन्थ]	१०७, १२०	पादछिष्ठपुर	900, 998	बाल-मूलराज	९७
नहुप [राजा]	८६	पापखंड [ हाह ]	ر و ح	बाहड (बाग्मट) [मंत्री]	
नाइकिदेवी	९७	पापघट	৬४	वाहडपुर वाहडपुर	८७
नागार्जन [योगी] १९	, ११९, १२०	पारूथक [द्रम्मविशेप]	93	वाहुळोड [ नगर ]	५४, ५७
नाचिराज [कवि]	ष०	पार्थकथा	994	बाहुकोडकर -	٦٥, ٩٥
नाडोल [प्राम]	६० (टि॰)	पार्वेनी	३८	-	
नाणाप्राम	४१	पार्श्वनाथ [जिन, तीर्थ ]	८७, १२०	चीज [ राजपुत्र ]	94
नाभाग [ चपति ]	८६	पार्श्वनाथप्रतिमा	93	चुद्ध [देव]	900
नाभि [ चपति ]	<b>६२, ६३</b>	पार्श्वनाथविग्व	१२०	बृहस्यति [ गण्ड ]	८४, ८५, ९१
नाभिभू [ प्रथमजिन ]	9	पाछिताणक [स्थान]	900	<b>यृहस्पतिमत</b>	908
नारय (नारद)	٥	पाछित्ता (पादछिप्ता०)	चार्ष ११९		६३, ६९, १०७
नारायण	90	पाचक [पर्वत]	900	वद्यपुरी ''	९९
नास्तिक [दर्शन]	६३	पाहिणि	۱ ۶۵ , ۶۵	वस-प्रासाद	६२
नीतिशाख	98	पीवलुका [ तहाग ]	93	<b>बह्या</b>	८५
नीलकण्ठ [ महादेव ]	83	पुण्यसार	999	वाद्य [दर्शन]	६३
नीलकण्ठेश्वर	42	<b>पु</b> ष्कर	<i>७६</i> ।	वाह्मी [देवी, सरखती]	१०२

भ	1	म	1	मारव	९५
भक्तामर स्तोत्र	84	मख(मक्का)तीर्थ	१०३	मालदेव	900
भट्टमात्र	9, 2, ८	मण्डलीकसन्नागार [ विर	- 1	मालव } [देश, मण्डल	] 9९-२२,२५,
भट्टारिका-मीरूआणी	५३	मण्डलीनगर	90	41044 )	, ५१, ५८, ५९,
भहारिका-योगीश्वरी	98	मतिसागर	999	· ·	, ४१, १८, ४१, , ७१, ७४, ७६,
भद्रवाहु [स्रि ]	996, 998	मधुरा [पुरी ]	45	·	८१, ९५, १२१
भरत [ नृपति ]	२, ६३, ८६, ८७	<b>मदनपा</b> ळ	५५, ५६	मारुवपति	ર્વ, ૧૭
भर्तखण्ड	६२	मदनराज्ञी .	٧,٥	मालविक ]	20, 40
भर्तृहरि	939	मदनरेखा	996	माछवी }	५९
भव [ शिव ]	६३, १२३	<b>मदनशङ्करप्रासाद</b>	<b>२०</b>	मालवीय 🕽	86
भवानी	१२३	मध्यदेश	३६, ७२ ६२	मालिम	903
भागीरथी	926	मनु	८७, ५०३	माहेच	95
भारत ( महाभारत )	9, 900	मम्माण [खनी]		मिथिला	\$P
भारती	४२, ५०, १०७		<i>५४, ५७, ६७, ७४</i> ४४	मुझ [राज, नृप] २०-२	
भारूयाड [साखड]	9 9 %	मयूर [किव ]	ĘĘ	मुझाल [मंत्री]	48, 48
भागे <b>व</b>		मरुदेव	4 <del>4</del> 4	,, [महोपासक]	८९ १५
भिछमाल	3 4 6 4 6	महदेवि	4 v 63	मुआलदेव मुआलदेव-प्रासाद	90
भीम, भीमसेन	२८, ९७	मरुदेश मरुमण्डल	५६, १०७		५६
भीम, भीमदेव [ चौछः	ह्य १ ] २०,२५,	मस्तृद	٩٤, ٩٥٥	,, स्वामी ,, मुणालवई (मृणालवती)	73
२८,	३३, ३४, ४५, ४६, ५१–५४, ७७	मळधारी [ विरुद ]	ં ५७	मुनिदेवाचार्य	٤٩
		मह्यादी [स्रि]	900	मुनिसुवत [जिन]	
भीमदेव [चोछक्य २	J	मिलिकार्जुन	८०, ८१, ९५	मुरारि	३९
भीमडीयाक (टिप्पणी	^{(त} ) ५३	महणका	१२	मूलराज [चालुक्य १] १६	-95,25,69,54
भीमेश्वरदेव	-	महाकाल	८, ४१, ६१		٩]
भीरूआणी [भट्टारिका	ુ-ત્રાલાલ , , ૧૦૨	महाकाल-प्रासाद	३० (टि॰), ६१	मूलराज (पार)	પર્
भूणपाल	903	<b>महादेव</b>	८५	मूलराजवसहिका	ঀৢ৽
भूणपालेश्वर-प्रासाद	998	महानन्द	996	मूलेश्वर-प्रासाद	90
भूपल [ कुमारी ]	98, 94	महाभारती कथा	४२	<b>मृ</b> णालवती	२३
भूय [ग] डदेव		महाराष्ट [देश]	P2	मेघनाद	१२२
भूय [ग] डेश्वर-प्रासा	۹۹, ۹۲	महालक्ष्मा [ ५१। ]	<b>७</b> ३ ६०	मेरतुद्गाचार्य	१, ६९
भूयराज	66, 9°3	। सहावार [ ।णग ]	900	मेवाड [देश]	९५
<b>भृ</b> गुपुर	9२३	महावीरचैत्य	88	मोढ वंश	63
भैरव	ષ્ષ	मही नदी	૮૫	मोढवमहिका	८३
भैरवदेवी	Ę	महेश्वर	<b>હ</b> ફ	मोढेरपुरावतार [प्रासाद]	90
भैरवानन्द [ योगी ]	<b>39</b>	महोदय	•	1 -	७३, ११७, ११८
भोगपुर	904	माघ [कवि, पण्डित]	५० ५७ २	<b>∓लेच्छदेश</b>	હર
भोगीन्द	31. 26 36.	माङ्गू [झाठा]	७२	,, मण्डल	906
भोज, भोजदेव	२२, २५, २६, २८,	माङ्ग्रुखण्डल	६७	,, राजा	९७
₹0,	३१-३६, ३९, ४१,	माणिक्य [पण्डित]	69	य	
४३, ४५-	-४७, ४९–५१, ५२, १०४, १०५, १२१	माणिकट पछेवडउ	**		993
בוחות ביים	३४	) भारतङ्गाचाप	६३	यशःपटह [हन्ती]	५९
भोजस्वामि-प्रासाद	४५	मानस [सरोवर]	वर	1	८२, ८८
भोयएव (भोजदेव)	९५	मान्धाता [नृपवि]			
भंभेरी [नगरी]			•		

यशोधवल	५९ ।
यशोभद्र [स्रि]	६८
यशोराज	96
यशोवर्मा	५८–६१, ७४, ७६
यशोवीर	१०१, १०२
युगादिदेव [जिन]	४५, ६६, ८६,
	904, 900
युधिष्टिर	२२, ८२
यूकाविहार	९१
योगराज	१४, १५
योगशास्त्र ८	६, ९०, ९२, १०८
योगीश्वरि [भट्टारिका]-प्र	गसाद १४
र	
रधु [कुल, राजा]	७३, ८६
रङ्क [वणिक्]	902, 908
रणसिंह	998
रति	४०
रतिरमण	39
रत्नपरीक्षा ग्रन्थ	• ६९
रत्नप्रभ [पण्डित]	Ę٠
रतमाल [पुर]	909
रत्नशेखर	908, 990
रताकर [पण्डित]	६७
रतादित्य	94
राज [राजपुत्र, क्षत्रिय]	94
राजघरह [विरुद]	98
राजपितामह [,,]	۷۰, ۵۹
राजमदनशङ्कर [ ,, ]	२०
राजविडम्बन [नाटक]	39
राजशेखर [कवि, अकार	रजलद ] ३०
राजिराज (१)	9
राम [दाशरथी]	१९, २४, ५५, ७३
रामचन्द्र [कवि, प्रवन्ध	
	८९, ९७
रामेश्वर-प्रासाद	89
रावण [लङ्कापति]	२४, २८
राष्ट्रकृट [वंश]	96
रुद	४, ३८, ९०
रुद्रमहाकाल-प्रासाद	६१
रुद्रादिस र अंगी	
रुद्दाद्द्य } [मंत्री]	२१, २२, २३
रेवा [नदी]	९, ७५
रेवत } [पर्वत]	६५, ८७, १०८,
रैवतक } [पवत]	, , , , , ,

	१२२, १२३
रोहक [महामाख]	<b>૨</b> ૫,
रोहण, रोहणाचल	9, २
स्र	•
संक [गढ] (सद्धा)	२३, ५८
लक्खड (लाखाक) ]	98
छक्ष ,,	१६, १९
लक्षराज "	<b>વ</b> ધ્ય
<b>लक्ष्मणसेन</b>	992
लक्ष्मी	३५, १०४
लक्ष्मीवति	१२७
रुप (्ख) णावती [पुरी]	993
लघु भैरवानन्द् [योगी]	६० (टि०)
लघु वाग्भट [वैद्य]	१२२
लङ्का [नगरी] १३, ३२	१, ३९, ६६, ७२
लच्छ (लक्ष्मी)	४५
<b>छ</b> छितसर	900
छवणपसाद [राजा]	९४, ९८, १००,
	१०३, १०४
लाखाक [फुलउत्र]	96, 98
लाछि [छिम्पिका]	५६
लाट [देश]	३१, ९५
लाटेश्वर	9 ६
लीला [ठक्कर, राजवैद्य]	५५
<b>लीलादेवी</b>	94
ॡणिग [मंत्री]	900, 909
ॡणिगवसहि [प्रासाद]	909
व	
वटपद्ग [ग्राम]	९०
वडसर ,,	५९
बढवाण ,,	Ęų
वडीयार [देश]	१२
वनराज	१२, १३, १४
वयजलदेव [तपिखभूपित	] 90
वयजलदेव [प्रतीहार]	९७
वररुचि [पण्डित]	३, ४७
वराहमिहिर [पण्डित]	११८, ११९
वर्द्धमानपुर	६४, ८६, १२५
वर्द्धमानप्रतिमा	908
वर्दमानस्रि	३६, १०९
वङभीपुर	१०७-९, १२२
वलभीभंग	१०९
वहभराज	२०

बस्तुपाल [महामात्य] ९८, १००, १०२, 903,904 वारमट [मंत्री] ७९, ८६, ८७ 97-98 (लघु, बृहत्) [वैद्य] 929 [वैद्यक प्रन्थ] 929 वाणारसी [नगरी] २०, ५०, ७४, 68, 998 वादिवेतासीय [विरुद् ] ξĘ वामराशि [विश्र] 99 चायटीय [गच्छ] 909 वायटीय जिनायतन ٧٤ वाराही ग्राम ७१ वाराहीय व्रूच ৩৭ वाराही संहिता [ग्रंथ] 996 वालाक [देश] v9 वाल्मीकि [ऋपि] ४२ वासुकि [नागराज] 998, 920 वासुदेव ६३ विक (क) मकाल 94, 908 विक्रम [चृष] २, ४, ६, ७, ९ 9,4,20,62,906,929 विक्रमार्क विक्रमादिख विक्रमार्क संबद्सर 93 विग्रहराज 90 ८९ विचार चतुर्मुख [विरुद] विजयसेन सूरि ९९, १०४ विजया [पण्डिता] ४३ विदिशा [नगरी] 93 विद्याधर [मंत्री] ११३, ११४ विद्यापति [महाकवि] 40 विनायक [गणपति] 36 89 विनीता [नगरी] विभीपण 46, 43 विमलगिरि 25, 900 विमलवसहिका 909 विमलवाहन ६३ विरिज्ञ 998 विरहक [ यूक्ष विशेष ] 60 विशाला [नगरी] ३६ विशोपक [देश?] ५३ विश्वल 90 विश्वामित्र ६० (टि०), ८२ विश्वेश्वर ८९

	भवन्यचि <del>न्ताः । । । । । । । । । । । । । । । । । । ।</del>	
	^{श्रवन्} यचिल्लामनिदिशेषनामसृदिः । ^{६३, ८५}   सील्यासम्बद्धाः	
	्राप्त क्रिक्ट के किया है। जिल्ला क्रिक्ट के	
	1 1 1 1 T T = D =	
		_
	१९ हामवाद [आर्नान]	*r, 4,
	1 9 1 1 1	6.5
	1 West 1 (4) (4) 2 Sept. 19 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1 (4) 1	12, 44,
	्राचिया किन्तु । विश्वया	
	१५ सीमन [सनि, परित] ३६,३,०० सामार हत (राहर	
	४२   गोभनदेव [प्रतीहार] प्राप्त का सामग्रहत है। तहा हा	144 4
	्राभनद्व [प्रतीहार] पर सामग्रहन कथा विकास	•
	France County	
	०० शि <del>देवी । । । । । । । । । । । । । । । । । । ।</del>	*(**)
	an eller	
	१९ श्रीपाल विशेष १० सामाराहित । १० श्रीपाल विशेष	- •
	'० श्रीपाल [कृषि] ६ मास्तर्गाम्ह ३ श्रीपाल (क्षा)	
	६ अधिक सिक्यों ६० अस	? * . * ¢
	६ लामाता ११७ व स्थिति (कार्यकार)	• •
	धीमाळ [पुर, नगर]	•
	श्रीमाल [पुर, नगर] हैर, ३०, काहमाल (१९७३) श्रीमालवंश	11
		7.3
1	MICT ( #15=== )	15 15
	्य पुण, ६५, ८४, ८६, भीतपट ) दिन : प्रतिस्थात	.,
शस्मु	्राप्त १९ इ. १०७ - अनावयः ( ) । । । । । । । । । । । । । । । । । ।	÷ •
शाकटायन   शाकरणके c	[न्याकरण] ११६ भेनाम्बरनामन	
1 1764411	1777	11.34
नातशहस्य ।	True 7	3 - 7
शान्तिसूरि	राजा] १६, १७, ७६ पोट्यलक्ष-मामाद्	
ह्या उत्तर १३ ० -	१९९, १२० प(ग)हार [ स्वर] के सिंह प्रकार है (स्वर्)	(;
न्नारदा [देवी]		11.
शासनदेवता	पूर्व सहद निविद्यात । स्ति विद्यार । विद्यार	• 1
शिखविड	१२० सहर [नीवित्तर] मिन्सभी (रिज्यान) सहसर	<b>:</b> 3
शिमा [नदी]		<b>\$</b> }
शिवि विकास	१०६ मान	· · ·
शिलादित्य -	The state of the s	• •
शिव -	90:0	1
(शव		<b>*.</b> •
शिवनिर्मास्य		: 3
शिवपत्तन		
दीवपराण	१९६ मधन विलय (सन्ता) १८, ८५ मस्मित । १३०१ - १६ - १५ - १५ - १५ - १५ - १५ - १५ - १	;
शिवभ <b>क्त</b>	१०६ मध्यम् पत्रम् [सरा] १९०१६, १६० विशेषाम् । १०००	· • <b>:</b>
सिव <i>मव</i> न	१८, ८५ संस्थित है हिंदी हैं है कि किया है है। किया	
प्राथमवन <del>ि</del>		
शिव <del>ङित</del>		7
् शिवा		
विद्युगलबंध [बारव]	१०४ मन्यानिकारमाना हिन्द्रम् । स्टब्स्ट १८०० वर्षे	
शीना [परिस्ता]	ति विकास सम्बद्धाः । जिल्लामा सम्बद्धाः । जिल्लामा विकास सम्बद्धाः । जिल्लामा विकास सम्बद्धाः । जिल्लामा सम्बद विकास समिति समुद्धाः । जिल्लामा सम्बद्धाः । जिल्लामा	
E 11-261 J	४६ सर्वेष्ट्रेय	
	The state of the s	
	:	

सुराष्ट्रा [देश]	६५, ८६, ९२
सुवर्णपुरुपसिद्धि [विर	गा] ५,९३,१०८
सुवत-प्रासाद	८७, ८८
स्नलदेवी	६५
सूहवदेवी .	११३–११४
सेंडड [हस्ती]	८१
सेडी [नदी]	970
सैन्धव [देश]	
सैन्धवा [देवी]	22
सोमनाथ [महादेव]	94, 90, 40, 68
सोमेश्वर [महादेव]	اری در در در در در در
۷٩, ۷	२, ८५, १०१, १२३
सोमेश्वर [कवि]	१०२, १०३, १०५
सोसेश्वर [ प्रधान ]	990
सोमेश्वरपत्तन	१४, १७, ७४, ९१
सोमेश्वर प्रासाद	४४

सोमेश्वरयात्रा ५८, ६	५, १०८, १२३
सोलाक [यहकार]	60
सोलाक [मण्डलीकसत्रागार	] 44, 98
सोहड [मालवरूपति]	ँ ९७
सोगत [मत]	४२, १०७
सोगतमञ्	900
सौराष्ट्र [देश, मण्डल]	१६, ७६, ९५
सोराष्ट्र घाट	१३
स्तम्भतीर्थ ६० (टि०),	७७, ९१, १०३
स्तरभनक [ग्राम]	900, 920
स्थृलिभद्गचरित्र	६० (टि०)
स्मृतिवाक्य	96
स्वर्गारोहण-प्रासाद	904
स्वायम्भु	६२
ह	
हनमान	3 6

•	
हरमीर	<b>دع</b>
हर .	३८-४०, ९९
हरि	38, 80
हरिपालदेव	৬৩
हरिभद्ग सूरि	९८
हर्प [ रूपति ]	
हारीत [ऋषि]	૧ <u>૧</u>
हिमालय पिनेत	] २७
	•
हेमखडु	<b>५</b> इ
हेमड सेवड	९२
हेमचन्द्र सूरि ]	५७, ५९, ६०, ६१, ६४,
हेमसूरि 🕺 }	ξξ, ξυ-υο, vu, co-
हेमाचार्य	८२, ८४, ८५, ८७, ८९,
	९२, ९३, ९७, १०१,
	१२७, १२८
हेमनिष्वत्ति [विश	
	7.7
हहय [वंश]	94

